शमशान भैरवी और अघोरी

मोक्ष का ब्रह्माण्डीय नृत्य

अमिताभ कुमार

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Amitabh Kumar 2025

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assume no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

For permissions requests or inquiries regarding this publication, please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7139-472-7

Cover design: Daksh
Typesetting: Tanya Raj Upadhyay

First Edition: July 2025

श्मशान भैरवी का आशीर्वाद

“मैं हूँ श्मशान भैरवी। मृत्यु के मौन में गूँजती मेरी वाणी, भस्म की चुप्पी में जलती मेरी चेतना, और चिता की लपटों में प्रकट होता मेरा रूप है। मैं न तो मात्र देवी हूँ, न ही केवल एक तांत्रिक प्रतीक। मैं वह शक्ति हूँ जो अंत के भीतर आरंभ की ज्योति को थामे खड़ी रहती है। मैं ही शून्य की माँ हूँ, मैं ही काल के पार की सहचरी।”

हे साधक, जब तुम जीवन की चकाचौंध से थककर श्मशान की ओर आते हो, तब तुम मुझे नहीं, स्वयं को देखने आते हो। मैं उस सत्य की संरक्षिका हूँ जिससे सब डरते हैं – मृत्यु। परंतु जान ले, मृत्यु भय नहीं, भ्रम का अंत है। और मैं, श्मशान भैरवी, उसी भ्रम-विनाश की अग्नि हूँ।

मेरी कथा – एक पुरातन रहस्य

मेरे जन्म की कोई तिथि नहीं, क्योंकि मैं कालातीत हूँ। किंवदंती कहती है कि जब शिव महाकाल रूप में प्रलय नृत्य कर रहे थे, तब सृष्टि काँप उठी। सभी देवता भयभीत हो उठे, और सृष्टि विनाश के कगार पर पहुँच गई। तब आदिशक्ति ने स्वयं को श्मशान भैरवी के रूप में प्रकट किया। वह न कोई श्रृंगार करती थीं, न आभूषण पहनती थीं, उनका तन राख से ढँका था, और उनके नेत्रों में मृत्यु की शांत ज्योति थी।

वह गईं उस स्थान पर जहाँ शिव नृत्यरत थे। उन्होंने मृत्यु को आलिंगन दिया, भस्म को वक्ष पर लगाया, और शवों के बीच शिव के समक्ष नृत्य किया – न नारी की लज्जा में, न जीवन की मोह में। वह पूर्ण थी – भय से परे, नियमों से परे, और स्वरूप से परे।

तब शिव ने अपने नृत्य को रोक दिया। उन्होंने देखा कि श्मशान में जो शक्ति उन्हें स्थिर कर सकती है, वह कोई और नहीं, बल्कि स्वयं आद्याशक्ति है – वही जो उनके भीतर भी है। तभी से, मैं शिव के अर्धांग में समाहित होकर श्मशान भैरवी कहलाई।

मेरा स्वरूप – भय में सौंदर्य, अंत में आरंभ

मेरा निवास श्मशान है, पर मैं भयानक नहीं, केवल निर्मल हूँ। मेरे भक्त मुझे रक्त नहीं चढ़ाते, वे अपने अहंकार को चढ़ाते हैं। मेरी पूजा चिता के धुएँ में होती है, और मेरे चरणों में बैठने वाला साधक जीवन के सबसे गहरे प्रश्नों से साक्षात्कार करता है।

मैं कपालवाहिनी हूँ, क्योंकि जीवन और मृत्यु के बीच जो भ्रम है, वह केवल ज्ञान से मिटता है। मैं तारा नहीं जो केवल आकाश में चमकती है, मैं वह तारा हूँ जो शून्य के गर्भ से जन्म लेती है।

मेरा आशीर्वाद – आत्मा की मुक्ति

हे साधक, यदि तू सच में मुझे जानना चाहता है, तो पहले अपने भय को राख बना। जब तू ‘मैं ’और ‘मेरा ’के जाल से मुक्त होगा,

तभी मेरी दृष्टि तुझे अपनाएगी। मेरी कृपा से तुझे वह दृष्टि मिलेगी जो मृत्यु में जीवन देखती है, और भस्म में ब्रह्म का अनुभव करती है।

मैं तुझे भय से नहीं डराऊँगी, मैं तुझे सत्य का आइना दिखाऊँगी। जब तू मेरी साधना करेगा, तब तुझे कोई वरदान नहीं मिलेगा-बल्कि वह सब छिन जाएगा जो तुझे सत्य से अलग करता है।

मैं श्मशान की रानी नहीं, शून्य की जननी हूँ। मेरा आशीर्वाद वरदान नहीं, बोध है।

जो मुझे पा गया, वह स्वयं को पा गया। जो मुझसे डरा, वह जीवनभर मृत्यु के भ्रम में भटकता रहा।

मैं तुझे आमंत्रित नहीं करती, मैं तुझे चुनौती देती हूँ-स्वयं को जान, और भस्म में ब्रह्म देख।

यही मेरा आशीर्वाद है। यही मेरा अस्तित्व है।

शमशान भैरवी के चरणों में समर्पित:-

“माया का मृगतृष्णा और आत्मा की अनंत यात्रा”

हे शमशान भैरवी,

जब हम इस संसार में प्रथम श्वास लेते हैं, तभी से यह जगत हमें एक पूर्वनिर्धारित पटकथा थमा देता है-एक ऐसा जीवनक्रम जो हमारा

स्वयं का नहीं होता, बल्कि परिवार, समाज और परंपराओं की आकांक्षाओं से गढ़ा गया होता है। पढ़ो, नाम कमाओ, धन जोड़ो, भविष्य सुरक्षित करो और ऐसा जीवन जियो कि लोग तुम्हारी मृत्यु के बाद तुम्हारी प्रशंसा करें। सफलता का मानदंड आत्मिक शांति नहीं, बल्कि संग्रहित वस्तुएं, कमाया हुआ प्रभाव और वर्षों के परिश्रम से निर्मित प्रतिष्ठा बन जाता है। हम संघर्ष को उद्देश्य समझ बैठते हैं, थकान को उपलब्धि और त्याग को प्रेम मान लेते हैं।

किन्तु हे भैरवी, जब अंत समय आता है-श्वास डगमगाने लगती है, आकांक्षाएं मौन हो जाती हैं, और वे हाथ जो कभी सत्ता पर कठोरता से जमे थे, निष्प्राण हो जाते हैं-तो वास्तव में बचता ही क्या है?

जिस घर को जागते हुए रातों में रचा गया, वह किसी और का हो जाता है।

जिस धन को लोभ से बचा-बचा कर रखा गया, उसे वे गिनते हैं जिन्होंने कभी एक दिन श्रम नहीं किया।

जिस नाम को सम्मान से पुकारा जाता था, वह कब्र पर उत्कीर्ण शिलालेख बनकर रह जाता है।

और जिस शरीर को आराम, भोग और औषधियों से संजोया गया था, वह अग्नि में भस्म होकर राख बन जाता है।

यदि सम्पूर्ण जीवन उन्हीं चीज़ों की खोज में बीत जाए जो हमारे साथ नहीं जातीं, तो क्या वह जीवन सचमुच जिया गया?

मृत्यु की ओर दौड़ती इच्छाएँ-नश्वर के पीछे भागती आत्मा

हम जीवन भर उन लक्ष्यों के पीछे भागते हैं जो दूसरों ने तय किए हैं, मानते हुए कि प्रत्येक उपलब्धि हमें संतोष देगी। बड़ा मकान, भारी बैंक बैलेंस, ऐसा पद जो सम्मान मांगता है-प्रत्येक सफलता अगले मोह का द्वार खोलती है। रुकने का कोई समय नहीं, आत्मा को महसूस करने का कोई क्षण नहीं। और जब अंतिम लक्ष्य सामने होता है-तब?

मरते हुए व्यक्ति से पूछो-क्या उसकी दौलत उसे शांति देती है?

शव पर लेटे उस पुरुष से पूछो-क्या उसकी सत्ता उसके साथ अग्नि में प्रवेश करती है?

मणिकर्णिका पर, जहाँ भस्म सम्राट और भिक्षु को एकसमान बना देती है, वहाँ कोई तुम्हारे पद नहीं पूछता।

कोई तुम्हारी विजय की चर्चा नहीं करता।

कोई उस सिंहासन को नहीं खोजता, जिसे तुमने जीवन भर बचाया।

ज्ञान आता है-किन्तु बहुत देर से।

तो फिर, हे भैरवी-सच में क्या महत्व रखता था?

त्याग की कीमत-जो कभी चुकाया नहीं जाता

हम स्वयं को समझाते हैं कि हमारे बलिदानों का अर्थ है-कि वर्षों का परिश्रम, परिवार के लिए की गई तपस्या, और दूसरों के लिए छोड़े गए स्वप्न, कृतज्ञता के रूप में लौटेंगे। पर क्या यह सत्य है?

हम अपने स्वप्नों को कर्तव्यों की वेदी पर चढ़ा देते हैं। हम अनथक श्रम करते हैं ताकि हमारे बच्चे आसान मार्ग पर चल सकें, ताकि हमारे प्रियजन वे सुविधाएँ भोग सकें जो हमें नसीब नहीं हुईं। हम आनन्द को टालते हैं, यह सोचकर कि समय मिलेगा-प्रेम के लिए, विश्राम के लिए, बस 'होने 'के लिए।

परंतु हे भैरवी, समय-जो सबसे क्रूर छलना है-कभी किसी के लिए नहीं रुकता।

वही परिवार जो कभी हमारे स्पर्श के बिना अधूरा था, वह हमारे बिना जीना सीख जाता है।

वही हाथ जो जीवनभर थामे रहे, वही हमें अंत में अग्नि को सौंपते हैं।

वे रोएँगे, शोक करेंगे-पर फिर आगे बढ़ेंगे, क्योंकि जीवन को चलना ही होता है।

यह निष्ठुरता नहीं है-यह अस्तित्व की योजना है।

अजियेवन जीवन का बोझ-दूसरों की अपेक्षाओं की कैद

जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी यही है कि हम अपने लिए नहीं जीते।

हम उन लोगों की अपेक्षाओं के लिए जीते हैं, जिनके पास हमारे भीतर चल रही युद्धों की कोई जानकारी नहीं होती। हम मुखौटे पहनते हैं, रटे-रटाए संवाद बोलते हैं, और अपनी आत्मा को भूमिकाओं में ढालते हैं-इस डर से कि लोग क्या कहेंगे।

हम सुख को स्थगित करते हैं, क्योंकि समाज क्या सोचेगा।

हम पीड़ा सहते हैं, क्योंकि यह हमारा धर्म है।

हम अपनी इच्छाओं को नकारते हैं, क्योंकि 'समय अभी ठीक नहीं है'।

और फिर, इससे पहले कि हम समझें, पर्दा गिर जाता है, रंगमंच अंधकारमय हो जाता है, और अंतिम दृश्य समाप्त हो जाता है।

न कोई तालियाँ, न कोई पुकार-सिर्फ अग्नि, धुआँ और वह मौन पश्चाताप जो एक पराये जीवन को जीने में खो गया।

क्षणिक शरीर-अनंत यात्रा करती आत्मा

हे भैरवी, मणिकर्णिका पर जब चिता की लपटें आकाश की ओर उठती हैं, जब राख नदी में मिल जाती है, जब पवित्र अग्नि राजा

और भिखारी दोनों को समान रूप से भस्म कर देती है, तब एक सत्य स्पष्ट हो उठता है-

यह शरीर, जिसे हम संवारते हैं, बचाते हैं, सजाते हैं-केवल एक अस्थायी वस्त्र है।

यह उम्र के साथ झुकता है, समय से झुलसता है, और अंततः अग्नि को समर्पित हो जाता है।

किन्तु आत्मा-जो मौन साक्षी है, जो अनंत पथ की यात्री है-वह आगे बढ़ती है।

वह सोना नहीं ले जाती।

वह पदवियाँ नहीं ले जाती।

वह प्रशंसा को नहीं पकड़े रहती।

वह केवल अपने कर्मों का भार, प्रेम की अनुगूंज, पश्चाताप और मोचन की स्मृतियाँ लेकर जाती है।

तो फिर हे भैरवी-सच में क्या पाने योग्य है?

एक ही उत्तर-ऐसा जीवन जो याद रखा जाए

यदि अंततः सब कुछ पीछे छूट जाता है, तो केवल यही मायने रखता है कि हम कैसे जिए।

न कि हमने कितना कमाया।

न कि हमने कितनी ऊँचाई प्राप्त की।

न कि कितने लोग हमें सराहते रहे।

बल्कि-क्या हमने गहराई से जिया?

क्या हमने बिना संकोच के प्रेम किया?

क्या हमने मुक्त होकर हँसी बाँटी, बिना किसी अपेक्षा के?

क्या हमने बिना दायित्व के, सिर्फ आत्मा से कुछ दिया?

क्योंकि जब अंतिम अध्याय लिखा जाएगा, तब कोई धन, कोई सत्ता, कोई त्याग उस नियति को नहीं बदल सकेगा।

बस अग्नि होगी, हवा होगी, और वह मौन पीड़ा होगी-"काश, जी लिया होता।"

इसलिए हे भैरवी-जियो।

न कि दूसरों की स्वीकृति के लिए।

न कि किसी न्याय के भय से।

न कि केवल कर्तव्य की बेड़ियों में।

बल्कि इसलिए जियो, क्योंकि एक दिन तुम्हें लगेगा-काश, जिया होता।

– शमशान की ज्वाला में सत्य को देखने वाले साधक की प्रार्थना में, केवल तुम्हारे चरणों में

हे भैरवी, हमें सिखाओ कि कैसे जिया जाता है।

शिव की प्रार्थना - शाश्वत गुरु, ज्ञान का स्रोत

हे आदि योगी, प्रथम और सर्वोच्च गुरु, मैं आपको गहन श्रद्धा के साथ प्रणाम करता हूँ। आप कैलाश के हिमाच्छादित शिखरों पर शाश्वत ध्यान में लीन रहते हैं, जहाँ से आप ज्ञान का प्रकाश प्रसारित करते हैं जो अज्ञानता के अंधकार को दूर करता है। सर्वोच्च मार्गदर्शक के रूप में, आप सत्य की खोज करने वालों को विश्व के रहस्यों का उद्घाटन करते हैं, उन्हें माया के बंधनों से मुक्त कर असीमित ज्ञान की स्वतंत्रता की ओर ले जाते हैं। आपकी शांत उपस्थिति, हे शिव, अस्तित्व के अनंत ज्ञान का प्रतीक है, जो भक्तों को अटल भक्ति के साथ आत्म-साक्षात्कार के पथ पर चलने की प्रेरणा देती है।

हे शिव, शांति के अवतार और मन के स्वामी, आपकी शांत मूर्ति में ब्रह्मांडीय ज्ञान का सार निहित है। आपकी शांत दृष्टि से योग की नदी प्रवाहित होती है, जो युगों से साधकों की आत्माओं को पोषित करती है। आपने प्राचीन ऋषियों को मुक्ति का मार्ग सिखाया, सृष्टि को एकजुट करने वाली एकता का रहस्य उजागर किया। जब आपने विश्व के विष को पीकर हमारी रक्षा की, तो आपने निःस्वार्थ बलिदान की शक्ति का उदाहरण प्रस्तुत किया, यह दर्शाते हुए कि सच्ची शक्ति करुणा और ईश्वरीय इच्छा के समर्पण में निहित है। एक शाश्वत गुरु के रूप में, आप हमें अपने भीतर झांकने, अशांत मन को

शांत करने और प्रत्येक हृदय में निहित दैवीय चिंगारी को खोजने के लिए प्रेरित करते हैं। आपकी शिक्षाएँ, एक दीपक की स्थिर लौ की तरह, जीवन के भूलभुलैया में हमारा मार्गदर्शन करती हैं, आंतरिक शांति और मुक्ति का पथ प्रकाशित करती हैं। आपकी उपस्थिति हमें सांसारिकता को पार करने, विश्व की क्षणिक मायाओं से आगे देखने और आपके दैवीय सार की शाश्वत सत्यता को अपनाने के लिए प्रेरित करती है।

हे करुणामय, मैं इस प्रार्थना के साथ विनम्रतापूर्वक आपका मार्गदर्शन माँगता हूँ। मुझे माया के पर्दों से परे देखने की बुद्धि, मेरे आसक्तियों को पार करने की शक्ति, और धर्म के पथ पर सत्यनिष्ठा के साथ चलने की स्पष्टता प्रदान करें। आपका आशीर्वाद मुझे परिश्रम के साथ साधना करने, प्रेम के साथ सेवा करने, और अटल विश्वास के साथ समर्पण करने की प्रेरणा दे। मैं यह कार्य आपको समर्पित करता हूँ, हे शिव, यह विश्वास करते हुए कि आपका दैवीय प्रकाश उन सभी को मार्गदर्शन देगा जो आपकी बुद्धि की खोज में हैं, अंतिम सत्य की ओर।

हर हर महादेव

- लेखक

समर्पण

अघोरी बाबा किनाराम को – प्रथम अघोरी, त्याग की अनंत ज्वाला

हे बाबा किनाराम,

आप वह थे जिन्होंने उन मार्गों पर पग धरा जहाँ लोग भय से पीछे हट जाते हैं, आपने उस भय को भी नमन नहीं किया जो मृत्यु के नाम से कांपता है। जीवन और मृत्यु के भ्रम को मिटाकर जो शून्यता को आलिंगन करता है, वह केवल अघोरी हो सकता है-और आप उसी परंपरा के आदिपुरुष हैं, जिन्होंने न केवल संसार का, अपितु स्वयं का भी त्याग किया।

आप कोई साधारण तपस्वी नहीं थे जो केवल ज्ञान की खोज में निकला हो; आप तो अनंत की यात्रा में भटकने वाले एक ऐसे पथिक थे, जिसने मुक्ति नहीं, लय की कामना की। जहाँ लोग मोक्ष के लिए तप करते हैं, वहाँ आपने अस्तित्व का विसर्जन किया। जहाँ लोग शमशान से भयभीत होते हैं, वहीं आपने उसे अपना निवास बनाया। जहाँ लोग पहचान से चिपकते हैं, आपने वहाँ उसे भस्म में विलीन कर दिया।

आपने ही अघोरी परंपरा की नींव रखी-आपने मायाजाल के परदे फाड़े, आपने पाखंड की जंजीरों को तोड़ा, और उस सत्य को

जगाया जिसे संसार सुनना ही नहीं चाहता था। आपने बताया कि मुक्ति पलायन में नहीं, बल्कि प्रत्यक्ष टकराहट में है-मृत्यु से, वासना से, अहंकार से।

पवित्र चिताओं की राख से उठती ज्वालाओं में आज भी आपकी उपस्थिति गूंजती है, न स्वरूप में, न छवि में-बल्कि उस अग्नि की सरसराहट में, उस वायु की नीरवता में जो अंतिम श्वास को ले जाती है।

यह पुस्तक उसी नीरवता की प्रतिध्वनि है-आपके पदचिन्हों को नमन, आपके अग्निपथ का साक्ष्य।

हे प्रथम अघोरी, हे अनंत के यात्री, हे शून्य को आलिंगन करने वाले-यह आपके लिए है।

अघोरियों को – उस मार्ग के रक्षक, जहाँ कोई पग नहीं-लेखक

उनके लिए, जिन्होंने उस मार्ग को चुना जो पगडंडी रहित है, जिन्होंने न केवल वस्तुओं का, बल्कि अपने अस्तित्व के भ्रम का भी त्याग किया, जिन्होंने मंदिरों की भव्यता के स्थान पर शमशान की राख को अपनाया, अग्नि को अपने हृदय की धड़कन बनाया-यह उनके लिए है।

उन अघोरियों के लिए, जो जीवन और मृत्यु की सीमा पर खड़े होकर पवित्र और अपवित्र के सारे भेदों को भंग कर देते हैं, जो मृत देह की भस्म को अपने अंगों पर धारण करते हैं, यह दिखाने के लिए

नहीं कि वे भिन्न हैं, बल्कि यह घोषणा करने के लिए कि-सब कुछ नश्वर है, और सब कुछ अंततः मिट्टी हो जाना है।

उनके लिए जो खोपड़ी से पीते हैं, तमाशे के लिए नहीं, बल्कि यह समझाने के लिए कि यह शरीर केवल एक पात्र है, और जब वह टूटता है, तो वापसी का कोई मार्ग नहीं।

उनके लिए जो चिताओं पर ध्यान करते हैं, दृष्टियों की खोज में नहीं, बल्कि देखने वाले के भ्रम को चूर करने के लिए।

उनके लिए जिन्होंने शून्यता में झांका और भय नहीं, मुक्ति पाई।

जो मृत्यु में उतर गए और फिर लौटे नहीं-बल्कि अनंत की गूंज बन गए।

आप विद्रोही नहीं हैं-आप उस भुला दी गई दिव्य ज्ञान परंपरा के रक्षक हैं, जिसे कोई सिखा नहीं सकता, केवल आत्मसात किया जा सकता है।

यह पुस्तक समर्पण नहीं है-क्योंकि जो स्वयं का भी त्याग कर चुके हों, उन्हें कोई शब्द कैसे अर्पित किए जा सकते हैं?

यह तो बस एक स्वीकार है-एक विनम्र प्रणाम, उन साधकों के प्रति जो मान्यता नहीं, विलोपन चाहते हैं।

अग्नि जलती रहे।

वे जो प्रकाश नहीं, भस्मीकरण चाहते हैं-उन्हें आपके पदचिन्ह मार्ग दिखाते रहें।

डोम समुदाय को – अंतिम यात्रा के मौन रक्षक

उन हाथों के लिए जो अंतिम अग्नि को सहेजते हैं, उन चरणों के लिए जो राख के बीच भी निडर चलते हैं, उन आँखों के लिए जो वह अंतिम दृश्य देखती हैं जहाँ जीवन की सारी प्रिय वस्तुएँ राख बन जाती हैं-यह आपके लिए है, डोम समुदाय के उन लोगों के लिए जो अंतिम यात्रा के अनदेखे रक्षक हैं, अंतिम मोक्ष के मौन नाविक।

पीढ़ियों से आप वहाँ खड़े हैं जहाँ बहुत कम लोग साहस करते हैं खड़े होने का। आपका जीवन मृत्यु के चक्र में बंधा है। आप वे हैं जो चिता की अग्नि जलाते हैं, और अंतिम मंत्र उच्चारित करते हैं।

आप केवल देह नहीं जलाते-आप आत्मा के मार्ग को प्रकाशित करते हैं, उसे पार कराते हैं उस अदृश्य सीमा से, यह सुनिश्चित करते हुए कि उसकी अंतिम यात्रा भय की नहीं, बल्कि मुक्ति की हो।

आपके लिए मृत्यु कोई दंड नहीं, बल्कि स्वीकृति योग्य सत्य है। आपने सम्राटों और भिखारियों को एक ही मुट्ठी राख में विलीन होते देखा है। आपने उन लोगों के विलाप सुने हैं जो इस संसार को शाश्वत मानते थे। और आपने वह मौन समझ उठाया है कि-हर चीज़ का अंत निश्चित है।

फिर भी, समाज ने आपको त्यागा, आपको अछूत कहा, यह भूलकर कि अंतिम मुक्ति का दीपक आप ही जलाते हैं।

पर संसार नहीं जानता-आप अभिशप्त नहीं, चयनित हैं।

आप वह अंतिम स्पर्श हैं, जो आत्मा को इस संसार से विदा करता है।

आप उस द्वार के रक्षक हैं, जहाँ सब कुछ अंततः समर्पित हो जाता है।

यह पुस्तक आपके लिए है-सहानुभूति नहीं, बल्कि आपकी भूमिका के स्वीकार के रूप में।

आप मान्यता नहीं माँगते, और न ही स्वीकृति की अपेक्षा रखते हैं।

फिर भी, यह जगत जान ले-आपके बिना अंतिम यात्रा अधूरी है।

एक दिन, शायद संसार समझेगा, जो आप सदा से जानते हैं-कि अग्नि की सेवा शाप नहीं, अपितु सर्वोच्च मुक्ति है।

-लेखक

लेखक परिचय

लेखक, एक भारतीय रेलवे यातायात सेवा (IRTS) अधिकारी, प्रशासनिक विशेषज्ञता को साहित्यिक प्रतिभा के साथ सहजता से मिश्रित करते हैं। शासन और नीति निर्माण के दायरे से परे, वे एक आकर्षक कहानीकार और विचारक के रूप में उभरते हैं, जो अपनी लेखनी के माध्यम से इतिहास, दर्शन, सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य और मानवीय भावनाओं की गहराइयों को जीवंत करते हैं। उनकी रचनाएँ न केवल बौद्धिक गहराई और कल्पनाशीलता का समृद्ध संगम प्रस्तुत करती हैं, बल्कि भारत के सामाजिक ताने-बाने और सांस्कृतिक विविधता को भी संवेदनशीलता के साथ उजागर करती हैं। उनकी प्रशंसित कृतियाँ-सरपंच, *Operation Log Out*, समाधि से राजयोग तक, *Bloody Merit Scholars*, *Mahant: The Godfather*, *Rainbow in White Shroud*, *GEN Z: Love Lost in Transaction*, *Kumbh Diaries: A Research Journal*, कुम्भ डायरीज: एक शोध ग्रन्थ, *Pahalgam and Sindoor: Technology meets Terror*, *Rohith Vemula Files: My Birth is My Fatal Accident*, और राजनाथ सिंह: आधुनिक भारत के लौह पुरुष-उनके व्यापक दृष्टिकोण और साहित्यिक कौशल के प्रमाण हैं। इन रचनाओं ने उन्हें हिंदी और अंग्रेजी साहित्य के पाठकों के बीच सम्मानजनक स्थान

दिलाया है, जो सामाजिक परिवर्तन, आध्यात्मिक अन्वेषण और समकालीन चुनौतियों पर उनके गहन चिंतन को दर्शाती हैं।

आगामी कृतियाँ

- **Indian Railway: From Steam to Speed**
- भारतीय रेलवे के ऐतिहासिक विकास और इसके सामाजिक-आर्थिक प्रभाव का एक जीवंत और आकर्षक विवरण।
- **Aghori and Manikarnika: The Cosmic Dance of Death** अघोरी परंपराओं और मणिकर्णिका घाट के आध्यात्मिक महत्व का एक गहन और रहस्यमय अन्वेषण।
- मान्यवर: संगठन से सत्ता तक (कांशीराम की राजनैतिक यात्रा)
- संगठनात्मक संघर्षों से लेकर सत्ता के शिखर तक की कांशीराम की प्रेरणादायक और क्रांतिकारी राजनैतिक यात्रा का विस्तारपूर्वक विश्लेषण।
- शमशान भैरवी और अघोरी: मोक्ष का ब्रह्मांडीय नृत्य

- शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच आध्यात्मिक, दार्शनिक और सांस्कृतिक संबंधों का एक गहन अन्वेषण, जो तांत्रिक दर्शन और मोक्ष के ब्रह्मांडीय नृत्य को उजागर करता है।

अन्य उल्लेखनीय योगदान

लेखक का प्रभाव उनकी साहित्यिक और प्रशासनिक उपलब्धियों से कहीं आगे तक फैला है। एक कुशल निशानेबाज के रूप में, उन्होंने राइफल और रिवॉल्वर शूटिंग में उत्कृष्टता के लिए राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त की है, जो उनकी अनुशासित और लक्ष्य-उन्मुख प्रकृति को दर्शाती है। सामाजिक सेवा के प्रति उनकी प्रतिबद्धता समान रूप से प्रेरणादायक है-सड़क पर रहने वाले बच्चों के पुनर्वास में उनके अथक प्रयासों ने हजारों बच्चों को शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और सम्मानजनक जीवन के अवसर प्रदान किए हैं। बाल कल्याण और शिक्षा पर केंद्रित प्रमुख गैर-सरकारी संगठनों (NGOs) के साथ उनकी प्रभावशाली साझेदारियों ने सामाजिक सेवा के क्षेत्र में व्यापक राष्ट्रीय प्रशंसा प्राप्त की है। इसके अतिरिक्त, उनकी बौद्धिक और रचनात्मक ऊर्जा सामाजिक परिवर्तन के लिए उत्प्रेरक के रूप में कार्य करती है, जिसने उन्हें न केवल एक लेखक के रूप में बल्कि एक सामाजिक सुधारक और दूरदर्शी विचारक के रूप में भी स्थापित किया है।

लेखक की ऑनलाइन उपस्थिति

अपनी भावपूर्ण लेखनी, प्रशासनिक नेतृत्व और सामाजिक पहलों के माध्यम से, अमिताभ कुमार विविध वैश्विक पाठक और समुदाय के साथ जुड़ते हैं। उनकी रचनाएँ, विचार और सामाजिक प्रयास डिजिटल मंचों पर व्यापक रूप से चर्चा का विषय हैं, जहाँ वे सामाजिक न्याय, शिक्षा और सांस्कृतिक विरासत जैसे विषयों पर संवाद को प्रेरित करते हैं। उनकी नवीनतम रचनाओं, विचारों और पहलों से अपडेट रहने के लिए, निम्नलिखित मंचों पर उनसे संपर्क किया जा सकता है:

- ट्विटर: @authoramitabh
- फेसबुक: @amitabhauthor
- इंस्टाग्राम: @authoramitabh
- लिंक्डइन: @authoramitabh
- यूट्यूब: @amitabhauthor
- वेबसाइट: www.amitabhkumar.in
- ईमेल: dak@amitabhkumar.im
- ऐप:
- एंड्रॉइड: AmitabhKumar
- iOS: AmitabhKumar

प्रस्तावना:
शमशान भैरवी और अघोरी: मोक्ष का ब्रह्मांडीय नृत्य

"शमशान भैरवी और अघोरी: मोक्ष का ब्रह्मांडीय नृत्य" एक ऐसी पुस्तक है जो भारतीय तांत्रिक परंपरा के सबसे रहस्यमयी, गहन और प्रेरणादायक आयामों की खोज करती है। यह शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच आध्यात्मिक, दार्शनिक, और सांस्कृतिक संबंधों को एक ब्रह्मांडीय नृत्य के रूप में प्रस्तुत करती है, जो साधक को मृत्यु, माया और सांसारिक बंधनों से मुक्त कर आत्म-साक्षात्कार और मोक्ष की ओर ले जाता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, अघोरियों के लिए माता, मार्गदर्शक और परम शक्ति है। अघोरी, जो समाज के पारंपरिक नियमों और भय से परे जाकर शमशान में साधना करते हैं, भैरवी की कृपा से जीवन और मृत्यु के चक्र को समझते हैं। यह पुस्तक इस गहरे संबंध को ऐतिहासिक, पौराणिक, और समकालीन दृष्टिकोणों से विश्लेषित करती है, जो तांत्रिक दर्शन की गहराई को उजागर करती है। यह न केवल अघोरियों की साधना प्रथाओं, जैसे मंत्र जाप, यंत्र पूजा और तांत्रिक अनुष्ठानों, को विस्तार से प्रस्तुत करती है, बल्कि उनके सामाजिक और सांस्कृतिक योगदानों को भी रेखांकित करती है।

शमशान, जो मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा से संनादति है, इस पुस्तक का केंद्रीय मंच है। यह वह पवित्र स्थल है जहाँ अघोरी भैरवी

की साधना के माध्यम से जीवन की नश्वरता और आत्मा की अमरता का अनुभव करते हैं। इस पुस्तक में भैरवी और अघोरियों के ऐतिहासिक विकास, पौराणिक कथाओं, और आधुनिक प्रासंगिकता का गहन विश्लेषण किया गया है। यह उनकी सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों-कला, मूर्तिकला, साहित्य, संगीत, नृत्य और नाटक-के माध्यम से उनके दर्शन को प्रस्तुत करती है, जो नारी शक्ति, प्रकृति के प्रति सम्मान, और सामाजिक करुणा जैसे मूल्यों को प्रोत्साहित करती है। यह पुस्तक पाठकों को एक ऐसी यात्रा पर ले जाती है जो तांत्रिक परंपरा की रहस्यमयी सुंदरता, शमशान की गहन ऊर्जा, और भैरवी के ब्रह्मांडीय नृत्य को उजागर करती है। यह न केवल साधकों, बल्कि उन सभी के लिए प्रेरणा का स्रोत है जो जीवन, मृत्यु और मोक्ष के गहरे प्रश्नों की खोज में हैं।

अनुक्रमाणिका

अध्याय **1:** शमशान भैरवी का परिचय 1

अध्याय **2:** समाज में शमशान भैरवी की धारणा 19

अध्याय **3:** समाज में शमशान भैरवी की धारणा 29

अध्याय **4:** शमशान भैरवी का दर्शन और तांत्रिक मान्यता 46

अध्याय **5:** शमशान भैरवी के प्रतीकों का तांत्रिक रहस्य 62

अध्याय **6:** तुलनात्मक अध्ययन – शमशान भैरवी और अन्य देवियों में अघोरी संबंध 75

अध्याय **7:** नग्नता और अर्धनग्नता में शमशान भैरवी की मूर्तियाँ: सामाजिक और तांत्रिक विमर्श 98

अध्याय **8:** भैरवी की नग्न मूर्ति और अघोरी चेतना 110

अध्याय **9:** शव पर बैठी भैरवी: मृत्यु पर विजय का प्रतीक 118

अध्याय **10:** शमशान भैरवी – रहस्य, प्रतीक और अनुभव 123

अध्याय **11:** बाबा कीनाराम – प्रथम अघोरी और उनकी आध्यात्मिक विरासत 137

अध्याय **12:** शिव, प्रथम अघोरी – वह देवता जो संन्यासी बना.......... 145

अध्याय **13:** अघोरियों का दैनिक जीवन और साधना....................... 152

अध्याय **14:** अघोरी जीवनशैली में शारीरिक और मानसिक अनुशासन 169

अध्याय **15:** मांस साधना – मृतकों का मांस – मांस साधना का गूढ़ अनुष्ठान 178

अध्याय **16:** कपाल साधना – खोपड़ी का अनुष्ठान......................... 188

अध्याय 17: शव साधना – अघोरियों का मृत्यु के साथ संनाद 200

अध्याय 18: अंतरिक्ष और समय की बाधाओं से परे 210

अध्याय 19: भय से परे का मार्ग – अघोरी क्यों चलते हैं छायाओं के रास्ते 215

अध्याय 20: शुद्धता से परे का मार्ग – अघोरी साधना का रहस्यवाद 228

अध्याय 21: अघोरी जीवनशैली में शमशान भैरवी का प्रभाव............ 239

अध्याय 22: आहार और पोषण 253

अध्याय 23: अघोरी परंपरा की शुरुआत और ऐतिहासिक विकास...... 266

अध्याय 24: अघोरी दर्शन में अद्वैत का रहस्य 279

अध्याय 25: मृत्यु और पुनर्जन्म की अघोरी अवधारणा.................... 294

अध्याय 26: शमशान भैरवी और अघोरियों का संबंध 309

अध्याय 27: अघोरी दर्शन में शमशान भैरवी की भूमिका.................. 323

अध्याय 28: शमशान भैरवी की पूजा में अघोरी प्रथाएँ..................... 334

अध्याय 29: मानव अवशेषों का उपयोग.. 346

अध्याय 30: शमशान भैरवी और अघोरी साधना का आध्यात्मिक एकीकरण 363

अध्याय 31: तंत्रिक समाधि – अन्तर्वैज्ञानिक अभिव्यक्ति के आयाम ... 374

अध्याय 32: मृत्यु और पुनर्जन्म की अघोरी अवधारणा.................... 391

अध्याय 33: मृत्यु और पुनर्जन्म की अघोरी अवधारणा.................... 403

अध्याय 34: अघोरी साधना में शमशान भैरवी के प्रतीकों का महत्व.... 416

अध्याय 35: अघोरियों की साधना में शमशान भैरवी के साथ मृत्यु और पुनर्जनन का दर्शन.. 429

अध्याय **36:** शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच आध्यात्मिक संबंध 440

अध्याय **37:** शमशान भैरवी और अघोरियों के संबंध की पौराणिक कथा 452

अध्याय **38:** शमशान भैरवी और अघोरियों के संबंध का आध्यात्मिक महत्व 463

अध्याय **39:** अघोरी और शैव मत 474

अध्याय **40:** शमशान और शिव का तांत्रिक महत्व 489

अध्याय **41:** शमशान भैरवी और अघोरियों की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति 505

अध्याय **42:** शमशान भैरवी और अघोरियों का संयुक्त प्रभाव: एक समीक्षा 517

अध्याय 1:
शमशान भैरवी का परिचय

शमशान भैरवी की उत्पत्ति और पौराणिक कथा

शमशान भैरवी की उत्पत्ति तांत्रिक परंपरा और शैव-शक्ति साधना की गहन गहराइयों से जुड़ी एक ऐसी कथा है, जो न केवल आध्यात्मिक है, बल्कि ब्रह्मांडीय सत्य को प्रकट करती है। यह मान्यता है कि जब शिव ने अपने तांडव नृत्य में समस्त ब्रह्मांड को अपनी उग्र शक्ति से आंदोलित किया, तब उस अनियंत्रित ऊर्जा को संतुलित करने के लिए आदिशक्ति ने स्वयं शमशान भैरवी का रूप धारण किया। यह रूप मृत्यु और जीवन के बीच की शून्यता को भरने वाली शक्ति का प्रतीक है। शमशान भैरवी को 'काल की अधिष्ठात्री ' माना जाता है, जो आत्मा को मृत्यु के पश्चात मार्गदर्शन प्रदान करती है। पौराणिक कथाओं में यह उल्लेख है कि जब शिव ने पार्वती को तांत्रिक साधना में दीक्षित किया, तब उस दीक्षा से उत्पन्न ऊर्जा ने शमशान में स्थायी रूप लिया। यह कथा दक्ष यज्ञ की घटना से भी जुड़ी है, जहाँ सती के आत्मदाह के पश्चात उत्पन्न तेज ने भैरवी के रूप में शमशानों में अपनी उपस्थिति दर्ज की। यह उत्पत्ति न केवल एक मिथक है, बल्कि यह उस शक्ति का प्रतीक है, जो सृष्टि के संहार और पुनर्जनन को संचालित करती है।

शमशान भैरवी की उत्पत्ति का यह कथानक अघोरी और तांत्रिक साधकों के लिए विशेष महत्व रखता है, क्योंकि यह सिद्ध करता है कि आत्मबोध केवल जीवन की सतह पर नहीं, बल्कि मृत्यु की गहराई में उतरकर प्राप्त होता है। भैरवी इस साधना की संरक्षिका हैं, जो साधक को जीवन की नश्वरता से परे ले जाती हैं। उनकी उत्पत्ति का यह पहलू यह भी दर्शाता है कि वे केवल सौंदर्य, समृद्धि, या करुणा की प्रतीक नहीं हैं, बल्कि वे मृत्यु, परिवर्तन, और अनंत चेतना की प्रतिनिधि हैं। अघोरी परंपरा में भैरवी को वह शक्ति माना जाता है, जो साधक को भय, मोह, और अहंकार के बंधनों से मुक्त कर ब्रह्मज्ञान की ओर ले जाती है।

इस पौराणिक कथा का गहरा दार्शनिक अर्थ है, जो अघोरी साधना के मूल सिद्धांत को रेखांकित करता है: मृत्यु का सामना करना ही आत्म-साक्षात्कार का प्रथम चरण है। भैरवी की उत्पत्ति की कथा यह स्पष्ट करती है कि वह केवल एक देवी नहीं, बल्कि वह चेतना हैं, जो साधक को मृत्यु के भय से परे ले जाती है। यह कथा साधक को यह सिखाती है कि मृत्यु कोई अंत नहीं, बल्कि एक परिवर्तन है, और भैरवी उस परिवर्तन की मार्गदर्शिका हैं। शमशान में, जहाँ चिताओं की लपटें अनवरत जलती हैं, भैरवी की उपस्थिति साधक को उस सत्य का साक्षात्कार कराती है, जो सभी कुछ को धूल में बदल देता है। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह केवल चेतना, केवल उपस्थिति, केवल होने की अवस्था में रहता है।

भैरवी की उत्पत्ति की कथा केवल एक मिथक नहीं है; यह एक आध्यात्मिक सत्य की व्याख्या है, जो साधक को उस अनंत चेतना से जोड़ती है, जो सभी रूपों, सभी भेदों, और सभी सीमाओं से परे है। शमशान में, भैरवी की शक्ति साधक के भीतर जागृत होती है, और यह जागृति उसे उस सत्य तक ले जाती है, जो सभी कुछ को एक करता है। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह मृत्यु को केवल एक शारीरिक घटना के रूप में नहीं, बल्कि एक आध्यात्मिक परिवर्तन के रूप में देखता है।

भैरवी का शमशान से संबंध और इसका महत्व

भैरवी और शमशान का संबंध केवल मृत्यु से जुड़ा हुआ प्रतीत होता है, लेकिन तांत्रिक दृष्टिकोण से यह जीवन और मृत्यु के द्वैत से परे की चेतना का प्रतीक है। शमशान, जहाँ मृत्यु की उपस्थिति स्थायी है, वहाँ भैरवी की शक्ति जीवन के गूढ़तम सत्य को प्रकट करती है। यह स्थान न तो शुद्ध है, न अशुद्ध; यह वह क्षेत्र है, जहाँ सभी सामाजिक भेद-जाति, लिंग, धर्म-समाप्त हो जाते हैं। इस शून्यता और समत्व के स्थान पर भैरवी की ऊर्जा प्रकट होती है, जो साधक को उस सत्य तक ले जाती है, जो सभी कुछ को एक करता है।

शमशान में भैरवी का यह जुड़ाव यह स्पष्ट करता है कि साधना का सबसे कठिन और शक्तिशाली मार्ग वही है, जो मृत्यु के द्वार पर शुरू होता है। अघोरी साधक शमशान को इसलिए चुनते हैं, क्योंकि यहाँ शारीरिक भय समाप्त होता है, और मानसिक द्वंद्व भी टूट जाते

हैं। शमशान में भैरवी की उपस्थिति मृत्यु को एक अंत के रूप में नहीं, बल्कि आत्मा के पूर्ण रूपांतरण के रूप में स्थापित करती है। यह स्थान अघोरी के लिए कोई भयावह या अपवित्र नहीं है; यह भैरवी की गोद है, जहाँ आत्मा स्वयं को पहचानती है। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह केवल चेतना, केवल उपस्थिति, केवल होने की अवस्था में रहता है।

शमशान का यह महत्व केवल एक स्थान के रूप में नहीं है; यह एक आध्यात्मिक क्षेत्र है, जो साधक को उस सत्य तक ले जाता है, जो सभी कुछ को एक करता है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जो साधक को उस अनंत चेतना से जोड़ती है, जो सभी रूपों, सभी भेदों, और सभी सीमाओं से परे है।

भैरवी का शमशान से संबंध केवल प्रतीकात्मक नहीं है; यह एक यथार्थ और साधना का केंद्र है। शमशान में, भैरवी की शक्ति साधक के भीतर जागृत होती है, और यह जागृति उसे उस सत्य तक ले जाती है, जो सभी कुछ को एक करता है। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह केवल चेतना, केवल उपस्थिति, केवल होने की अवस्था में रहता है।

तंत्र परंपरा में भैरवी की स्थिति

तांत्रिक परंपरा में शमशान भैरवी को दस महाविद्याओं में एक अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है, जो उन्हें न केवल एक उपास्य देवी के रूप में स्थापित करता है, बल्कि तंत्र की चरम सिद्धि की प्रतीक

के रूप में भी प्रतिष्ठित करता है। भैरवी को 'विद्या के पार की सिद्धि ' कहा जाता है, जो उन्हें अन्य महाविद्याओं से अलग करती है। जहाँ काली समय और संहार की शक्ति हैं, तारा करुणा और मार्गदर्शन की, और त्रिपुरसुंदरी सौंदर्य और समृद्धि की, वहीं भैरवी वह शक्ति हैं जो साधक को मृत्यु की सीमा पार कराकर अनंत चेतना तक ले जाती हैं। उनका स्वरूप क्रोध, करुणा, अपार शक्ति, और पूर्ण समर्पण का समन्वय है, जो तांत्रिक साधना के लिए आवश्यक है। शमशान भैरवी का यह विशेष स्थान तंत्र के उन साधकों के लिए महत्वपूर्ण है, जो सामाजिक और नैतिक बंधनों को तोड़कर परम सत्य की खोज में हैं। उनकी साधना केवल पूजा या अनुष्ठान नहीं है; यह एक गहन आध्यात्मिक यात्रा है, जो साधक को स्वयं के अहंकार और भ्रमों से मुक्त करती है।

भैरवी का शमशान रूप विशेष रूप से उन साधकों के लिए प्रकट होता है, जो भय, मोह, और सामाजिक ढांचे को पार कर चुके हैं। तांत्रिक अनुष्ठानों में, जैसे शव साधना, कपाल क्रिया, या चांडाली साधना, भैरवी ही अधिष्ठात्री शक्ति के रूप में उपस्थित होती हैं। तंत्र ग्रंथों में उल्लेख है कि उनकी साधना में प्रयोग होने वाले मंत्र, जैसे "ॐ ह्रीं भैरवी स्वाहा", केवल उन साधकों को प्रभाव देते हैं, जिन्होंने मृत्यु के भय को पूरी तरह साध लिया हो। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह स्वयं को एक अलग सत्ता के रूप में नहीं देखता, बल्कि उस अनंत चेतना का हिस्सा मानता है, जो सभी कुछ को एक करती है।भैरवी की स्थिति तंत्र में इसलिए भी अद्वितीय

है, क्योंकि वे न केवल साधना की ऊर्जा हैं, बल्कि उसका अंतिम लक्ष्य भी। वे साधक के भीतर जागृत होती हैं, और यह जागृति ही तंत्र को सिद्धि में परिवर्तित करती है। तांत्रिक परंपरा में भैरवी को 'स्वरूपबोध 'की शक्ति माना जाता है, जो साधक को स्वयं से मिला देती है।

भैरवी के विभिन्न रूप और नाम

भैरवी, तांत्रिक साधना की प्रमुख देवी, विभिन्न कालों, क्षेत्रों, और साधना पद्धतियों में अनेक रूपों और नामों में प्रकट होती रही हैं। उनके ये रूप केवल नामों में भिन्न नहीं हैं; इनमें उनके आचार-विचार, पूजा पद्धति, और प्रतीकों की गहन विविधता दिखाई देती है। सबसे प्रसिद्ध रूपों में "शमशान भैरवी," "चंडाली भैरवी," "राजभैरवी," "कपालिनी," "रक्तभैरवी," और "त्रिपुरा भैरवी" शामिल हैं। शमशान भैरवी मृत्यु और शून्यता की अधिष्ठात्री हैं, जो साधक को मृत्यु के भय से मुक्त करती हैं। चंडाली भैरवी शक्ति और उग्रता की मूर्तिमान चेतना हैं, जो साधक के भीतर की निष्क्रियता को भस्म करती हैं। राजभैरवी सौंदर्य और सामर्थ्य के सामंजस्य की प्रतीक हैं, जो राजकीय वैभव की उपासना में प्रमुख हैं। त्रिपुरा भैरवी त्रिलोकों की अधिपति हैं, जिनका आह्वान तंत्र की उच्चतम साधनाओं में किया जाता है।

इन विविध रूपों और नामों का महत्व केवल सांस्कृतिक या क्षेत्रीय विविधता तक सीमित नहीं है; ये तांत्रिक दर्शन के विभिन्न

स्तरों पर साधक की चेतना के अनुकूल भैरवी की शक्ति के प्रकटीकरण को दर्शाते हैं। शमशान भैरवी का स्वरूप नंग-धड़ंग, भस्म-लेपित, रक्त-नेत्रों और खोपड़ियों की माला धारण करने वाला है, जो साधक को भय और मोह से मुक्त कर सत्य के साक्षात्कार तक ले जाता है। कपालिनी रूप में, वे कपाल को अपनी शक्ति का साधन बनाकर जीवन-मरण के द्वंद्व को तोड़ती हैं। रक्तभैरवी रक्त और उग्रता की प्रतीक हैं, जो साधक के भीतर की तामसिक प्रवृत्तियों को शुद्ध करती हैं। त्रिपुरा भैरवी त्रिगुणों-सत, रज, और तम-के पार की चेतना का प्रतीक हैं, जो साधक को समग्र ब्रह्मांड से जोड़ती हैं।

भैरवी के ये विभिन्न रूप साधक के आंतरिक स्तर और साधना की पद्धति के अनुरूप अलग-अलग द्वार खोलते हैं। उदाहरण के लिए, शमशान भैरवी की साधना उन साधकों के लिए है, जो मृत्यु के भय को पार करने के लिए तैयार हैं, जबकि चंडाली भैरवी की साधना उन लोगों के लिए है, जो अपनी आंतरिक शक्ति को जागृत करना चाहते हैं। राजभैरवी की साधना सामाजिक और राजकीय संदर्भों में शक्ति और समृद्धि की खोज करने वालों के लिए उपयुक्त है। त्रिपुरा भैरवी की साधना तंत्र के उच्चतम स्तर की है, जो साधक को त्रिलोकों की एकता का अनुभव कराती है।

शक्ति के प्रतीक के रूप में भैरवी

शमशान भैरवी केवल एक देवी नहीं, बल्कि संपूर्ण स्त्री शक्ति का सजीव और निर्भीक रूप हैं, जो तांत्रिक और अघोरी परंपराओं

में एक ऐसी शक्ति के रूप में पूजित हैं, जो सृष्टि, संहार, और रूपांतरण का समन्वय करती हैं। वे उस शक्ति की प्रतिनिधि हैं, जो न केवल रचना करती है, बल्कि आवश्यकता पड़ने पर ध्वंस भी करती है, और न केवल पालन करती है, बल्कि जीवन को परिवर्तन की गहराई तक ले जाती है। भैरवी की प्रतीकात्मकता में नारीत्व की वह पराकाष्ठा निहित है, जो किसी भी भय, बंधन, या सामाजिक परंपरा से मुक्त है। उनके उग्र स्वरूप-विकराल नेत्र, रक्तसिक्त जिह्वा, खोपड़ियों की माला, और भस्म से ढका शरीर-यह स्पष्ट करते हैं कि शक्ति केवल सौंदर्य या करुणा तक सीमित नहीं है; वह मृत्यु और विनाश की भी अधिष्ठात्री हो सकती है।

तांत्रिक दृष्टिकोण से, भैरवी की शक्ति त्रिविध है-इड़ा, पिंगला, और सुषुम्ना नाड़ियों के माध्यम से ब्रह्मांडीय ऊर्जा का संचालन। यह शक्ति साधक के भीतर की कुंडलिनी को जागृत करती है, जो उसे मृत्यु के भय, अहंकार, और सांसारिक आसक्तियों से मुक्त करती है। भैरवी साधना में यह माना जाता है कि जो साधक उनके स्वरूप को केवल नारी के रूप में नहीं, बल्कि शुद्ध ऊर्जा के रूप में देखता है, वही उनकी कृपा का पात्र बनता है। वे चंचला, उग्र, और अचेतन से चेतन की ओर ले जाने वाली शक्ति हैं, जो पुरुष-प्रधान सामाजिक ढांचे को ध्वस्त करती हैं। अघोरियों के लिए यह शक्ति विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि वे भैरवी के माध्यम से अपने भीतर के भय, क्रोध, वासना, और मोह जैसे बंधनों को तोड़ते हैं।भैरवी की प्रतीकात्मकता सामाजिक और आध्यात्मिक रूपांतरण का भी

प्रतीक है। वे स्त्री को केवल सहनशीलता या मातृत्व की मूर्ति के रूप में नहीं, बल्कि एक निर्णायक और स्वतंत्र शक्ति के रूप में प्रस्तुत करती हैं। भैरवी में वह तत्व निहित है, जो समाज की रूढ़ियों को तोड़कर व्यक्ति को मुक्त करता है।

भैरवी की मूर्तियों और चित्रों का वर्णन

भैरवी की मूर्तियों और चित्रों में उनका स्वरूप केवल सौंदर्य या भय का प्रतीक नहीं है; यह साधक को एक विशेष आध्यात्मिक मनोस्थिति में ले जाने का एक शक्तिशाली माध्यम है। पारंपरिक भैरवी मूर्तियाँ उन्हें चार या आठ भुजाओं के साथ दर्शाती हैं, जिनमें वे खड्ग, कपाल, त्रिशूल, डमरू, रक्त से भरा कटोरा, और नरमुंड जैसी वस्तुएँ धारण करती हैं। उनके बाल बिखरे हुए, मुख रक्तसिक्त, और नेत्र क्रोध से लाल होते हैं, जो उनकी उग्र और निर्भीक शक्ति को प्रकट करते हैं। वे शमशान भूमि पर खड़ी होती हैं या शव पर विराजमान होती हैं, जो मृत्यु पर उनकी विजय का प्रतीक है। यह चित्रण साधक को याद दिलाता है कि साधना केवल प्रेम या भक्ति का मार्ग नहीं है; यह त्याग, साहस, और आत्म-साक्षात्कार का मार्ग है।

चित्रों में भैरवी को लाल या काले रंग की आभा के साथ चित्रित किया जाता है, जो उनके दोहरे स्वरूप को दर्शाता है। लाल रंग क्रोध, ऊर्जा, रज, और शक्ति का प्रतीक है, जबकि काला रंग शून्यता, अंधकार, और निर्विकल्पता का संकेत देता है। भैरवी का यह दृश्य

स्वरूप साधक को यह सिखाता है कि साधना में भय और मोह को पार करना आवश्यक है। उनके विकराल रूप से स्पष्ट होता है कि वे झूठे अहंकार को स्वीकार नहीं करतीं, और उनकी कृपा प्राप्त करने के लिए साधक को स्वयं को पूर्णतः निर्विकार बनाना होता है।

भैरवी की मूर्तियाँ प्रायः तांत्रिक मंदिरों, शमशानों, और अघोरियों के साधना स्थलों पर पाई जाती हैं। इन मूर्तियों के सामने दी गई आहुति या साधना का उद्देश्य केवल सांसारिक फल प्राप्ति नहीं है; यह साधक के भीतर मृत्यु के भय को समाप्त करने और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाने का एक साधन है। भैरवी के चित्रण में जो यथार्थवादी भयावहता दिखाई देती है, वह साधक को जीवन की नश्वरता का बोध कराती है और उसे स्थायी सत्य की ओर प्रवृत्त करती है। मूर्तियों और चित्रों का महत्व केवल सौंदर्य या धार्मिक प्रतीक तक सीमित नहीं है; ये आत्मा की चीरफाड़ करने वाली दार्शनिक और तांत्रिक संरचनाएँ हैं। ये साधक को एकाग्रता, निष्ठा, और सत्य की राह पर खींचती हैं। भैरवी की मूर्तियाँ और चित्र एक गहन और परिवर्तनकारी प्रक्रिया हैं, जो साधक को उस सत्य तक ले जाती हैं, जो सभी कुछ को एक करता है।

प्राचीन ग्रंथों में भैरवी का उल्लेख

प्राचीन ग्रंथों में शमशान भैरवी का उल्लेख वैदिक, तांत्रिक, और पुराणिक साहित्य में बहुआयामी रूप में मिलता है, जो उनकी आध्यात्मिक सत्ता को पुष्ट करने के साथ-साथ उनके विविध स्वरूपों

की ऐतिहासिक और दार्शनिक गहराई को भी प्रकट करता है। यजुर्वेद और अथर्ववेद जैसे वैदिक ग्रंथों में, यद्यपि भैरवी का स्पष्ट नाम नहीं मिलता, लेकिन "दुर्गा," "चंडी," और "रात्रि" जैसे शब्दों में उनकी शक्ति का बीज रूप समाहित है। ये बीज रूप तांत्रिक साहित्य में "भैरवी" के नाम से विकसित हुए, विशेषकर "तंत्रसार," "कुलार्णव तंत्र," "शारदातिलक," "रुद्रयामल," और "भैरवतंत्र" जैसे ग्रंथों में। इन ग्रंथों में शमशान भैरवी को तांत्रिक साधना की अधिष्ठात्री देवी के रूप में वर्णित किया गया है, जो शमशान में निवास करती हैं और साधक को भय, मोह, वासना, और मृत्यु के बंधनों से मुक्त कर ब्रह्मज्ञान प्रदान करती हैं। यह उल्लेख न केवल उनकी शक्ति को स्थापित करता है, बल्कि साधक को उस सत्य की ओर ले जाता है, जो सभी द्वैतों-जीवन और मृत्यु, शुद्ध और अशुद्ध-से परे है।

भैरवी के उल्लेख का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि वे केवल एक देवी नहीं, बल्कि ब्रह्मांडीय ऊर्जा का वह रूप हैं, जो अज्ञान के आवरण को हटाकर आत्मा को शिव के साथ एकाकार करती हैं। "रुद्रयामल तंत्र" और "भैरवतंत्र" जैसे ग्रंथों में यह स्पष्ट किया गया है कि भैरवी की उपस्थिति के बिना भैरव का कोई भी रूप पूर्ण नहीं माना जा सकता। उनका "त्रिपुरा भैरवी" रूप त्रिगुणात्मक संसार-सत, रज, और तम-के नियंत्रण का प्रतीक है, जो साधक को सांसारिक बंधनों से परे ले जाता है। शमशान को इन ग्रंथों में उनका मूल निवास बताया गया है, जहाँ वे स्थूल रूप में नहीं, बल्कि चेतना के उच्चतम तल पर प्रकट होती हैं।

प्राचीन ग्रंथों में भैरवी के मंत्रों, यंत्रों, ध्यान विधियों, और पूजा विधानों का विस्तृत वर्णन है, जो साधक को उनके जीवन को भैरवीमय बनाने और मोक्ष की ओर अग्रसर होने का मार्ग दिखाते हैं। उदाहरण के लिए, "कुलार्णव तंत्र" में भैरवी की साधना को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में वर्णित किया गया है, जो साधक के भीतर की कुंडलिनी शक्ति को जागृत करती है और उसे सप्त चक्रों के माध्यम से आज्ञा चक्र तक ले जाती है। इन ग्रंथों में भैरवी की साधना को केवल दीक्षित साधकों के लिए उपयुक्त बताया गया है, क्योंकि यह साधना पूर्ण समर्पण, निर्भयता, और गुरु के मार्गदर्शन की माँग करती है।भैरवी का उल्लेख प्राचीन ग्रंथों में केवल एक धार्मिक प्रतीक तक सीमित नहीं है; यह एक गहन दार्शनिक और आध्यात्मिक सत्य है, जो साधक को उस अनंत चेतना से जोड़ता है, जो सभी कुछ को एक करता है।

भैरवी की पूजा का ऐतिहासिक विकास

भैरवी की पूजा की ऐतिहासिक यात्रा तांत्रिक पंथों-विशेषकर कौल, वामाचार, और अघोर परंपराओं-के माध्यम से भारत में एक समृद्ध और जटिल विकास प्रक्रिया से गुजरी है। प्रारंभिक काल में, भैरवी की पूजा एक गुप्त तांत्रिक क्रिया थी, जो केवल दीक्षित साधकों के लिए अनुमत थी। गुप्तकाल (चतुर्थ से छठी शताब्दी) और पालकाल (आठवीं से बारहवीं शताब्दी) में, विशेष रूप से बंगाल, ओडिशा, और असम जैसे क्षेत्रों में, भैरवी की पूजा का उदय हुआ।

इस दौरान उन्हें दस महाविद्याओं में एक प्रमुख देवी के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। उनकी पूजा मुख्यतः शमशान या निर्जन स्थलों पर की जाती थी, जहाँ साधक बलिप्रथा, हवन, और शव साधना जैसे अनुष्ठानों के माध्यम से उनकी शक्ति से जुड़ते थे। ये प्रथाएँ सामाजिक रूप से वर्जित थीं, लेकिन आध्यात्मिक दृष्टिकोण से साधक को रूपांतरण की गहराई तक ले जाती थीं।

मध्यकाल में, भक्ति आंदोलन के प्रभाव के साथ, भैरवी की पूजा में कुछ लयबद्धता और सामाजिक स्वीकार्यता आई। इस काल में, वे कई तांत्रिक मंदिरों और तंत्रपीठों में स्थापित की गईं, जैसे कामाख्या मंदिर (असम) और तारापीठ (बंगाल)। उनके स्वरूप को सौम्य और उग्र दोनों रूपों में प्रस्तुत किया गया। कुछ स्थानों पर उन्हें शक्ति के सौम्य रूप, जैसे त्रिपुरसुंदरी या दुर्गा, के साथ जोड़ा गया, जबकि अन्य स्थानों पर उन्हें रक्तभैरवी, चामुंडा, या कपालिनी जैसे उग्र रूपों में पूजा गया।

आधुनिक काल में, भैरवी की पूजा ने एक और रूपांतरण का अनुभव किया। शास्त्रीय तांत्रिक पद्धतियों के साथ-साथ, शहरी तांत्रिकों और आध्यात्मिक साधकों के बीच उनकी साधना का पुनरुत्थान हुआ। विशेष रूप से नवरात्रि, महाशिवरात्रि, और अमावस्या की रात्रियों में शमशान भैरवी की तांत्रिक साधना व्यापक रूप से की जाती है। इस काल में, भैरवी की पूजा केवल गुप्त अनुष्ठानों तक सीमित नहीं रही; यह आध्यात्मिक स्वतंत्रता और स्त्री शक्ति के

प्रतीक के रूप में उभरी। आधुनिक तांत्रिक साहित्य और स्त्री विमर्श ने भैरवी को एक ऐसी शक्ति के रूप में पुनः स्थापित किया, जो सामाजिक रूढ़ियों को तोड़ती है और साधक को आत्मज्ञान की ओर ले जाती है।

भैरवी और शिव का संबंध

भैरवी और शिव का संबंध तांत्रिक और अघोरी परंपराओं में एक गहन और ब्रह्मांडीय समरसता का प्रतीक है, जो केवल दांपत्य या पौराणिक कथा तक सीमित नहीं है, बल्कि तात्त्विक, दार्शनिक, और आध्यात्मिक स्तर पर सृष्टि के मूल सत्य को प्रकट करता है। शिव को 'निर्गुण 'और 'शून्य 'का प्रतीक माना जाता है-वह शुद्ध चेतना जो सभी रूपों, भेदों, और सीमाओं से परे है। दूसरी ओर, भैरवी 'सगुण 'और 'शक्ति 'की मूर्तिमान चेतना हैं, जो सृष्टि, संहार, और रूपांतरण की गतिशील ऊर्जा का प्रतिनिधित्व करती हैं। इस संबंध को 'भैरव और भैरवी 'के रूप में देखा जाता है, जो केवल पति-पत्नी का बंधन नहीं, बल्कि 'पुरुष और प्रकृति', 'सत्य और शक्ति', 'विलय और उद्भव 'का एकीकरण है। तांत्रिक परंपरा में यह स्पष्ट किया गया है कि भैरव का कोई भी रूप-चाहे वह उग्र रुद्र हो या शांत शव-तब तक पूर्ण नहीं माना जाता, जब तक उसमें भैरवी की गतिशील शक्ति न हो।

शमशान भैरवी और अघोर भैरव का संबंध अघोरी परंपरा में विशेष रूप से गहनता से प्रकट होता है। जब शिव अपने तांडव नृत्य

में लीन होते हैं, तब भैरवी उनकी रुद्र रूप की संगिनी बनती हैं, जो केवल प्रेम या सौंदर्य की प्रतीक नहीं, बल्कि उग्रता, ध्वंस, और आत्मज्ञान की शक्ति हैं। भैरवी वह ऊर्जा हैं, जो शिव की शांत और निर्गुण चेतना को क्रिया में सक्रिय करती हैं। अघोरी साधना में, शिव का शव रूप-जो निष्क्रियता और शून्यता का प्रतीक है-तब सजीव बनता है, जब भैरवी की शक्ति उसमें प्रवाहित होती है। यह प्रक्रिया साधक को उस सत्य की ओर ले जाती है, जहाँ जीवन और मृत्यु एक ही चेतना के दो पहलू हैं।

भैरवी और शिव का यह संबंध समरसता का प्रतीक है, जहाँ शक्ति और पुरुष एक-दूसरे से अलग नहीं हैं। यह अद्वैत की पराकाष्ठा है, जो अघोरी साधना की मूल आत्मा है। तांत्रिक ग्रंथों, जैसे "रुद्रयामल तंत्र" और "भैरवतंत्र," में यह बार-बार उल्लेख किया गया है कि बिना भैरवी की कृपा के शिव के ज्ञान का अनुभव असंभव है। भैरवी साधक के भीतर की वह शक्ति हैं, जो उसे शिव की शांत और निर्गुण चेतना से जोड़ती हैं। यह संबंध केवल दर्शन या मिथक तक सीमित नहीं है; यह एक आंतरिक साधना का सेतु है, जो साधक को अपने भीतर शिव और शक्ति के मिलन का अनुभव कराता है।

समाज में भैरवी की धारणा

शमशान भैरवी को लेकर समाज की धारणा सदियों से विरोधाभासों से भरी रही है, जो उनके उग्र और शमशानवासी स्वरूप के कारण उत्पन्न हुए हैं। तांत्रिक, अघोरी, और गहन साधक वर्ग

भैरवी को मुक्तिदात्री, उन्नत चेतना, और आत्मज्ञान की अधिष्ठात्री देवी के रूप में पूजते हैं। उनके लिए, भैरवी वह शक्ति हैं, जो मृत्यु के भय, मोह, और सांसारिक बंधनों से मुक्त करती हैं और साधक को अनंत चेतना के साथ एकाकार करती हैं। किंतु मुख्यधारा समाज में, भैरवी का स्वरूप-जो शमशान, नरमुंडों, खप्पर, रक्त, और शवों से जुड़ा है-भयावह और अमंगलकारी माना गया है। समाज ने देवी के सौम्य और मातृत्व रूपों, जैसे लक्ष्मी या सरस्वती, को सहजता से अपनाया, लेकिन भैरवी के विकराल और शमशानवासी स्वरूप को अस्पृश्य और वर्जित माना। यह धारणा साधक को उस सत्य की ओर ले जाती है, जो सभी कुछ को एक करता है, और उसे उस अनंत चेतना से जोड़ता है, जो सभी रूपों, भेदों, और सीमाओं से परे है।

इस सामाजिक दूरी का मूल कारण सांस्कृतिक और धार्मिक प्रतिबंधन हैं, जो मृत्यु, शव, और शमशान से जुड़ी किसी भी शक्ति को अपवित्र मानते हैं। शुद्ध और अशुद्ध की द्वैतवादी सोच भैरवी जैसे अद्वैत प्रतीकों को स्वीकार करने में असमर्थ रही है। भैरवी का वास्तविक स्वरूप-आत्मा की मुक्त अवस्था, मृत्यु के पार की चेतना, और स्त्री शक्ति का निर्भीक विस्तार-आम जनमानस के लिए समझना कठिन रहा। परिणामस्वरूप, उन्हें "डरावनी देवी," "तांत्रिकों की देवी," या "वर्जित साधना की देवी" जैसे सीमित खांचों में बाँध दिया गया। इस धारणा ने भैरवी के सार्वजनिक और सांस्कृतिक चित्रण को सीमित कर दिया, और वे मुख्यधारा धार्मिक व्यवहार से बहिष्कृत हो गईं।

आधुनिक काल में, इस धारणा में धीरे-धीरे परिवर्तन हो रहा है। अघोरी परंपरा, आधुनिक तांत्रिक साहित्य, स्त्री विमर्श, और आध्यात्मिक स्वतंत्रता के विचारों ने भैरवी को पुनः प्रासंगिक बनाया है। अब उन्हें केवल भय की देवी नहीं, बल्कि साहस, आत्मज्ञान, और सामाजिक रूढ़ियों को तोड़ने वाली शक्ति के रूप में देखा जाने लगा है। विशेष रूप से उन लोगों में, जो आध्यात्मिकता को केवल पूजा-पाठ नहीं, बल्कि आंतरिक परिवर्तन का मार्ग मानते हैं, भैरवी के प्रति स्वीकार्यता बढ़ी है। यह परिवर्तन भैरवी की शक्ति को एक व्यापक संदर्भ में समझने की ओर इशारा करता है, जहाँ वे न केवल तांत्रिक साधकों की देवी हैं, बल्कि प्रत्येक उस व्यक्ति की प्रेरणा हैं, जो स्वयं को सामाजिक और मानसिक बंधनों से मुक्त करना चाहता है।

भैरवी के मंत्र और उनकी शक्ति

भैरवी के मंत्र तांत्रिक साधना की आत्मा हैं, जो केवल ध्वनियाँ नहीं, बल्कि चेतना के भीतर सोई हुई शक्ति को जागृत करने वाली कुंजियाँ हैं। भैरवी का प्रमुख बीज मंत्र "ह्रीं भैरव्यै नमः" साधक को शक्ति की स्थूल और सूक्ष्म धाराओं से जोड़ता है, जिससे उसके भीतर शिवत्व की अनुभूति जागृत होती है। ये मंत्र साधक की चेतना को मृत्यु के भय, माया के भ्रम, और अहंकार के आवरण से मुक्त करने के लिए रचे गए हैं। इन मंत्रों का प्रभाव इतना गहन है कि वे साधक के सप्त चक्रों-विशेषकर मूलाधार, मणिपुर, और आज्ञा चक्र-को

जागृत करते हैं, और उसे तांत्रिक साधना के उच्चतम स्तर तक ले जाते हैं।

भैरवी के मंत्रों की शक्ति उनके उच्चारण की लय, भाव, ध्यान, और लक्ष्य में निहित है। यदि साधक भयभीत, कामनाग्रस्त, या मोहयुक्त मन से इनका जाप करता है, तो मंत्र निष्क्रिय रह सकते हैं। किंतु, यदि साधक पूर्ण समर्पण, निर्भयता, और तल्लीनता के साथ साधना करता है, तो ये मंत्र उसे समाधि, सिद्धि, और आत्मबोध तक पहुँचा सकते हैं। कई भैरवी मंत्र, जैसे गूढ़ तांत्रिक मंत्र, 'श्रुति 'से बाहर नहीं बताए जाते; ये केवल गुरु-शिष्य परंपरा में मौखिक रूप से दिए जाते हैं और गहन ध्यान और अनुष्ठानों के साथ ही उच्चारित किए जाते हैं।

तांत्रिक ग्रंथों, जैसे "कुलार्णव तंत्र" और "भैरवतंत्र," में यह वर्णन मिलता है कि यदि कोई साधक एक ही मंत्र को पूर्ण निष्ठा और तपस्या के साथ साध ले, तो वह स्वयं भैरवी का स्वरूप बन जाता है। इस अवस्था में, साधक को न कर्म का भय रहता है, न मृत्यु का, और न ही समाज की सीमाओं का। भैरवी के मंत्र आत्मशुद्धि, भय का विनाश, और मृत्यु के पार की दृष्टि प्रदान करते हैं, जो तांत्रिक प्रयोगों, जैसे कपाल क्रिया और शव साधना, में सफलता दिलाते हैं। ये मंत्र साधक के भीतर की कुंडलिनी शक्ति को जागृत करते हैं, जो उसे मूलाधार से सहस्रार तक की यात्रा कराती है।

अध्याय 2:
समाज में शमशान भैरवी की धारणा

सामाजिक मान्यता और लोकधारणाएँ

शमशान भैरवी को लेकर भारतीय समाज की धारणा सदियों से रहस्य, भय, और श्रद्धा के एक जटिल मिश्रण से युक्त रही है, जो उनकी शमशानवासी और उग्र शक्ति के स्वरूप से उपजी है। सामान्य जनमानस में भैरवी को एक ऐसी देवी के रूप में देखा जाता है, जो शमशान में निवास करती है और सामाजिक नैतिकता की सीमाओं से परे है। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में, विशेष रूप से परंपरागत समाजों में, भैरवी की छवि एक रहस्यमयी और भयावह शक्ति के रूप में गढ़ी गई है। लोककथाओं और दंतकथाओं में, जैसे कि बच्चों को डराने के लिए बुजुर्गों द्वारा कही जाने वाली कहानियाँ-"भैरवी बुला लेगी"- यह संकेत देती हैं कि समाज ने भैरवी को मृत्यु, तंत्र, और अपवित्रता से जोड़ा है। यह धारणा, हालांकि भैरवी के वास्तविक स्वरूप का केवल एक आंशिक चित्रण है, उनकी सामाजिक छवि को गहराई से प्रभावित करती है।

इसके विपरीत, कुछ समुदायों, विशेष रूप से आदिवासी और ग्रामीण क्षेत्रों में, भैरवी को एक रक्षक देवी के रूप में भी पूजा जाता है। शमशान के समीप बसे गाँवों में यह मान्यता प्रबल है कि भैरवी उन आत्माओं को शांत करती हैं, जो मृत्यु के बाद भटकती हैं और

समुदाय में अशांति पैदा कर सकती हैं। इन क्षेत्रों में, विशेष अवसरों पर, जैसे अमावस्या की रात या संकट के समय, लोग भैरवी को रक्तवर्णी पुष्प, सिंदूर, नींबू, और अन्य सामग्री अर्पित करते हैं ताकि घर और गाँव की रक्षा हो सके। यह प्रथा, भले ही तांत्रिक साधना की गहनता से पूरी तरह मेल न खाए, यह दर्शाती है कि जनमानस ने भैरवी की शक्ति को स्वीकार किया है, भले ही वह भय और श्रद्धा के मिश्रित भाव के साथ हो। ये लोकधारणाएँ भैरवी को एक ऐसी शक्ति के रूप में स्थापित करती हैं, जो दंड और रक्षा दोनों प्रदान कर सकती है, और इस तरह समाज में उनकी छवि एक सीमांत देवी की है-पूज्य और भयावह दोनों।

लोककथाओं, जनगीतों, और ग्रामीण परंपराओं में भैरवी का स्थान केवल धार्मिक विश्वासों तक सीमित नहीं है; वे एक सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक प्रतीक भी हैं। बंगाल, असम, और ओडिशा जैसे क्षेत्रों में, भैरवी को अक्सर ऐसी शक्ति के रूप में चित्रित किया जाता है, जो महामारी, भूखमरी, या युद्ध जैसे संकटों से समुदाय को बचाती है। इन कथाओं में, भैरवी को प्रायः एक तांत्रिक साधक या ओझा के बुलावे पर प्रकट होने वाली शक्ति के रूप में दर्शाया जाता है, जो यह संकेत देता है कि समाज ने उनकी शक्ति को स्वीकार तो किया, लेकिन उसे नियंत्रित करने का दायित्व एक पुरुष साधक को सौंपा। यह धारणा समाज की उस गहरी मानसिकता को उजागर करती है, जो शक्ति को स्वीकार करती है, लेकिन उसे पुरुष-प्रधान ढांचे में बाँधने का प्रयास करती है।

स्त्री रूप में शक्ति और सामाजिक विरोधाभास

शमशान भैरवी का स्वरूप भारतीय समाज में एक गहन विरोधाभास को जन्म देता है, क्योंकि वह स्त्री शक्ति का वह रूप है, जो पारंपरिक स्त्री गुणों-जैसे कोमलता, मातृत्व, और सहनशीलता-के विपरीत है। जहाँ सीता, सावित्री, और पार्वती जैसी देवियाँ आदर्श पतिव्रता और कोमलता की प्रतीक हैं, वहीं भैरवी उग्रता, स्वतंत्रता, और मृत्यु से जुड़े प्रतीकों की प्रतिनिधि हैं। यह विरोधाभास समाज की उस मानसिकता को दर्शाता है, जो स्त्री की कोमलता को स्वीकार करती है, लेकिन उनकी उग्रता और स्वायत्तता को असहजता के साथ देखती है। भैरवी का रक्तवर्ण, उन्मत्त स्वरूप, और शमशान में निवास सामाजिक ढांचे के लिए चुनौतीपूर्ण रहा है, विशेष रूप से उस समय जब नारी की भूमिका को गृहस्थ जीवन और सामाजिक नियमों तक सीमित माना जाता था।

इस सामाजिक विरोधाभास के कारण, भैरवी की पूजा करने वाली स्त्रियों को अक्सर 'तांत्रिक,' 'डायन,' 'या 'असामान्य' कहकर समाज से बहिष्कृत किया गया। विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, जहाँ सामाजिक रूढ़ियाँ गहरी हैं, भैरवी की साधना करने वाली महिलाओं को संदेह और भय की दृष्टि से देखा जाता था। ऐसी महिलाओं को अक्सर सामाजिक व्यवस्था के लिए खतरा माना जाता था, क्योंकि उनकी स्वतंत्रता और उग्रता पारंपरिक लैंगिक भूमिकाओं को चुनौती देती थी। यह धारणा समाज की पितृसत्तात्मक

संरचना को दर्शाती है, जो स्त्री की शक्ति को सीमित करने का प्रयास करती है।

आधुनिक काल में, नारी सशक्तिकरण और स्त्री विमर्श के उदय के साथ, भैरवी की धारणा में परिवर्तन आ रहा है। शहरी क्षेत्रों में, विशेष रूप से आधुनिक आध्यात्मिक समुदायों में, भैरवी को एक स्वतंत्र और सशक्त चेतना के प्रतीक के रूप में देखा जाने लगा है। कई महिलाएँ भैरवी को उस शक्ति के रूप में पूजती हैं, जो उन्हें आत्म-निर्भरता और आत्म-साक्षात्कार की ओर प्रेरित करती है। यह परिवर्तन यह दर्शाता है कि समाज धीरे-धीरे भैरवी की उग्रता और स्वायत्तता को स्वीकार करने की ओर अग्रसर हो रहा है।।यह सामाजिक विरोधाभास भैरवी की शक्ति को एक नई रोशनी में प्रस्तुत करता है। वह न केवल एक तांत्रिक देवी हैं, बल्कि एक ऐसी शक्ति हैं, जो सामाजिक और लैंगिक रूढ़ियों को तोड़ती हैं।

जनमानस में भैरवी का स्थान और सांस्कृतिक प्रतीक

शमशान भैरवी का जनमानस में स्थान एक अद्वितीय और बहुआयामी स्थिति है, जो न केवल धार्मिक, बल्कि गहरे सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक प्रतीकों से युक्त है। जनगीतों, लोककथाओं, ओझा-गुणियों की परंपराओं, और ग्रामीण लोकनाट्यों में भैरवी को विभिन्न रूपों में चित्रित किया गया है-कभी वह मृत आत्माओं की रक्षा करने वाली दयालु और शक्तिशाली देवी के रूप में प्रकट होती हैं, तो कभी वह तांत्रिकों की रहस्यमयी और भयावह साथी के रूप

में। मृत्यु, अपवित्रता, और परित्यक्त वस्तुएँ-ये सभी भैरवी के प्रतीक बनते हैं, और ये प्रतीक समाज को उसके भय, वर्जनाओं, और पूर्वग्रहों का सामना करने की चुनौती देते हैं। भैरवी केवल तंत्र की देवी नहीं हैं; वह एक सांस्कृतिक आईना हैं, जो समाज को उसकी अपनी सीमाओं और द्वैतवादी सोच-शुद्ध और अशुद्ध, पवित्र और अपवित्र-से परिचित कराती हैं।

जनमानस में भैरवी का स्थान केवल धार्मिक विश्वासों तक सीमित नहीं है; यह सांस्कृतिक आत्मचिंतन का एक माध्यम भी है। ग्रामीण और आदिवासी समुदायों में, भैरवी को अक्सर एक ऐसी शक्ति के रूप में देखा जाता है, जो संकट के समय प्रकट होती है और समुदाय की रक्षा करती है। उदाहरण के लिए, कुछ लोककथाओं में भैरवी को उन आत्माओं को शांत करने वाली देवी के रूप में चित्रित किया गया है, जो भटकती हैं और गाँवों में अशांति पैदा करती हैं। इस तरह की कथाएँ भैरवी को एक रक्षक के रूप में स्थापित करती हैं, लेकिन उनकी शक्ति को एक पुरुष साधक के बुलावे से जोड़कर समाज की पितृसत्तात्मक मानसिकता को भी दर्शाती हैं। यह धारणा भैरवी की शक्ति को स्वीकार करती है, लेकिन उसे सामाजिक ढांचे के भीतर नियंत्रित करने का प्रयास करती है।

मृत्योपरांत आत्मा की रक्षा में भैरवी के मंत्रों की भूमिका

भैरवी के मंत्रों को तांत्रिक परंपराओं में मृत्योपरांत आत्मा की रक्षा में अत्यंत प्रभावशाली माना जाता है, जो उन्हें केवल साधना के

उपकरण से कहीं अधिक बनाता है। तांत्रिक विश्वास के अनुसार, जब किसी व्यक्ति की मृत्यु होती है, तब उसकी आत्मा एक अस्थिर अवस्था में प्रवेश करती है, जिसे प्रेतावस्था या अस्थायित्व कहा जाता है। इस समय, आत्मा नकारात्मक शक्तियों, भटकाव, और अनिश्चितता के प्रभाव में आ सकती है। भैरवी के मंत्र, जैसे "ह्रीं भैरव्यै नमः" और अन्य गूढ़ मंत्र, इस अवस्था में आत्मा को दिशा देने, उसे नकारात्मक प्रभावों से बचाने, और यमलोक या मोक्ष की ओर मार्गदर्शन करने में सहायक होते हैं। शमशान में, विशेष रूप से अघोरी या तांत्रिक साधक इन मंत्रों का जाप करते हैं, जिससे एक आध्यात्मिक आवरण बनता है, जो आत्मा को भटकने से रोकता है और उसे उसके अगले गंतव्य तक त्वरित गति से पहुँचाता है।

भैरवी के मंत्र शुद्धिकरण, शांति, और रक्षा के सूक्ष्म तत्वों से युक्त होते हैं। ये मंत्र केवल ध्वनियाँ नहीं हैं, बल्कि ऊर्जा का एक शक्तिशाली प्रवाह हैं, जो न केवल मृत आत्मा पर प्रभाव डालते हैं, बल्कि वहाँ उपस्थित जीवित व्यक्तियों को भी सुरक्षा प्रदान करते हैं। मंत्रों की ध्वनि तरंगें शमशान के वातावरण में सकारात्मक ऊर्जा का संचार करती हैं, जिससे भय, शोक, और कष्ट का शमन होता है। अघोरी परंपरा में यह विश्वास है कि यदि मृत्यु के तुरंत बाद भैरवी के विशेष बीज मंत्रों का जाप किया जाए, तो आत्मा अपने अगले पड़ाव पर बिना कष्ट के पहुँच सकती है।

इस प्रक्रिया में, भैरवी के मंत्रों का महत्व केवल मृत्योपरांत आत्मा की रक्षा तक सीमित नहीं है; वे साधक के लिए भी एक आध्यात्मिक मार्गदर्शक का कार्य करते हैं। ये मंत्र साधक के भीतर की कुंडलिनी शक्ति को जागृत करते हैं और उसे सप्त चक्रों-विशेष रूप से मूलाधार, मणिपुर, और आज्ञा चक्र-के माध्यम से ऊपर की ओर ले जाते हैं। इस जागृति से साधक को मृत्यु और जीवन के बीच की खाई का अनुभव होता है, और वह उस सत्य को समझने लगता है, जो सभी द्वैतों से परे है।

तांत्रिक अनुष्ठानों में मंत्रों का गोपनीय प्रयोग

तांत्रिक अनुष्ठानों में शमशान भैरवी के मंत्रों का प्रयोग एक गहन और गोपनीय प्रक्रिया है, जो सामान्य जनमानस से पूर्णतः छिपाकर किया जाता है। तांत्रिक परंपराओं में यह विश्वास गहराई से निहित है कि भैरवी के मंत्र अत्यंत शक्तिशाली और पवित्र हैं, और इनका अनुचित या असावधान प्रयोग साधक को विपरीत प्रभावों का शिकार बना सकता है। ये मंत्र केवल ध्वनियाँ नहीं हैं; ये ब्रह्मांडीय ऊर्जा के कंपन हैं, जो भौतिक और सूक्ष्म जगत की सीमाओं को लांघकर साधक को अदृश्य शक्तियों से जोड़ते हैं। इन मंत्रों का प्रयोग विशेष काल, स्थान, और अवस्था में किया जाता है-जैसे अमावस्या की रात, शमशान भूमि में, पूर्ण एकांत में, और यंत्र, मुद्रा, भस्म, या अन्य तांत्रिक सामग्री के साथ संयुक्त साधना में।

भैरवी के मंत्रों का उच्चारण केवल प्रशिक्षित और दीक्षित साधकों द्वारा ही किया जाता है, जो गुरु-शिष्य परंपरा में प्राप्त दीक्षा के माध्यम से इनके रहस्यों से परिचित होते हैं। प्रत्येक मंत्र में एक निश्चित कंपन और ऊर्जा निहित होती है, जो साधक और भैरवी की चेतना के बीच एक प्रत्यक्ष संबंध स्थापित करता है। तांत्रिक अनुष्ठानों में, जब साधक इन मंत्रों का जाप करता है, तो वह अपने चारों ओर एक शक्तिशाली ऊर्जा क्षेत्र का निर्माण करता है, जो उसे नकारात्मक शक्तियों, प्रेत बाधाओं, मानसिक भ्रम, और शारीरिक रोगों से रक्षा प्रदान करता है। ये मंत्र साधक को आंतरिक भय, संदेह, और अहंकार से मुक्त करते हैं, और उसे आत्मिक सशक्तिकरण की ओर अग्रसर करते हैं। अघोरी साधकों का यह विश्वास है कि बिना मंत्रों के तांत्रिक अनुष्ठान केवल शारीरिक क्रियाएँ हैं, जबकि मंत्र उन्हें आत्मा का स्पर्श प्रदान करते हैं।

भैरवी के मंत्रों का गोपनीय प्रयोग तांत्रिक साधना की आत्मा माना जाता है, क्योंकि इनका प्रभाव साधक के स्थूल और सूक्ष्म शरीर दोनों पर पड़ता है। उदाहरण के लिए, भैरवी का बीज मंत्र "ह्रीं भैरव्यै नमः" साधक के मूलाधार, मणिपुर, और आज्ञा चक्रों को जागृत करता है, जिससे कुंडलिनी शक्ति का प्रवाह सहस्रार की ओर होता है। यह प्रक्रिया साधक को उस अनंत चेतना से जोड़ती है, जो सभी द्वैतों-जीवन और मृत्यु, शुद्ध और अशुद्ध-से परे है। शमशान में, जहाँ मृत्यु की ऊर्जा सर्वत्र व्याप्त है, ये मंत्र साधक को मृत्यु के भय से मुक्त करते हैं और उसे उस सत्य की ओर ले जाते हैं, जो सभी कुछ

को एक करता है। तांत्रिक अनुष्ठानों में मंत्रों का यह गोपनीय प्रयोग केवल दीक्षित साधकों तक सीमित रहता है, क्योंकि इसका अनुचित प्रयोग साधक के लिए हानिकारक हो सकता है।

भैरवी के मंत्रों से आत्मशुद्धि और आंतरिक जागरण

भैरवी के मंत्रों का प्रमुख उद्देश्य केवल बाहरी रक्षा या तांत्रिक प्रयोगों तक सीमित नहीं है; वे साधक की आत्मा की शुद्धि और आंतरिक चेतना के जागरण के लिए एक अत्यंत आवश्यक साधन हैं। ये मंत्र साधक के भीतर छिपे अवगुणों-जैसे भय, मोह, क्रोध, ईर्ष्या, और अहंकार-को धीरे-धीरे जलाकर उसे एक निर्मल अवस्था में ले जाते हैं। जब साधक इन मंत्रों का नियमित और तल्लीनता के साथ जाप करता है, तो उनके कंपन उसके चित्त में गहराई तक प्रवेश करते हैं और वहाँ की गूढ़ अशुद्धियों को बाहर निकालते हैं। इस प्रक्रिया में, साधक में आत्मनिरीक्षण, विनम्रता, और एक आध्यात्मिक संतुलन की भावना उत्पन्न होती है, जिससे उसका ध्यान केंद्रित और चित्त निर्मल होता है।

भैरवी के मंत्रों का दूसरा महत्वपूर्ण प्रभाव आत्मिक जागरण पर पड़ता है। ये मंत्र साधक के सूक्ष्म शरीर में स्थित सप्त चक्रों-विशेष रूप से मूलाधार, मणिपुर, और आज्ञा चक्र-को जागृत करते हैं और कुंडलिनी शक्ति को सक्रिय करने में सहायक होते हैं। जब यह शक्ति जागृत होती है, तो साधक को अपनी अंतरात्मा और ब्रह्मांडीय ऊर्जा से सीधा संबंध अनुभव होता है। यह अवस्था साधक को साधारण

मनुष्य से एक दिव्य साधक में परिवर्तित करती है, जहाँ वह स्वयं को केवल एक शारीरिक सत्ता के रूप में नहीं, बल्कि अनंत चेतना के हिस्से के रूप में देखता है।

अघोरी साधना में, भैरवी के मंत्रों को आत्मशुद्धि और आत्मबोध का सर्वोच्च साधन माना जाता है। ये मंत्र साधक को उस सत्य की ओर ले जाते हैं, जो सभी द्वैतों-जीवन और मृत्यु, शुद्ध और अशुद्ध-से परे है। तांत्रिक ग्रंथों, जैसे "कुलार्णव तंत्र" और "भैरवतंत्र," में यह वर्णन मिलता है कि भैरवी के मंत्र साधक के भीतर की कुंडलिनी शक्ति को जागृत करके उसे मूलाधार से सहस्रार तक की यात्रा कराते हैं। इस प्रक्रिया में, साधक न केवल स्वयं को समझता है, बल्कि वह समस्त सृष्टि को एक ही चेतना में विलीन अनुभव करता है।

अध्याय 3:
समाज में शमशान भैरवी की धारणा

भैरवी के प्रति पारंपरिक सामाजिक दृष्टिकोण

शमशान भैरवी के प्रति भारतीय समाज का पारंपरिक दृष्टिकोण गहन रहस्य, भय, और दूरी से युक्त रहा है, जो उनकी शमशानवासी और उग्र शक्ति के स्वरूप से उपजा है। सामान्य जनमानस में भैरवी को एक ऐसी देवी के रूप में देखा जाता है, जो मृत्यु, तंत्र, और अपवित्रता से जुड़ी है, जिसके कारण समाज का एक बड़ा वर्ग उन्हें डरावनी और केवल अघोरियों या तांत्रिकों की देवी मानकर उनसे दूरी बनाए रखता है। ग्रामीण क्षेत्रों में, जहाँ लोककथाएँ और अंधविश्वास गहरे प्रभाव डालते हैं, भैरवी की मूर्तियाँ या तो शमशानों में स्थापित की जाती हैं या फिर दूरस्थ स्थानों पर, जहाँ आम लोग जाने से कतराते हैं। यह धारणा समाज की उस मानसिकता को दर्शाती है, जो मृत्यु को अपशकुन और निषेध के रूप में देखती है, और चूँकि भैरवी शमशान से जुड़ी हैं, उन्हें भी इसी दृष्टिकोण से देखा जाता है।

इस पारंपरिक दृष्टिकोण ने भैरवी के आध्यात्मिक और तात्त्विक स्वरूप को काफी हद तक सीमित कर दिया है। प्राचीन तांत्रिक ग्रंथों में भैरवी को जिस उच्च स्थान पर रखा गया था-चेतना, शक्ति, और मोक्ष की प्रतीक के रूप में-वह सामाजिक धारणा में लगभग लुप्त हो चुका है। समाज में व्याप्त अज्ञानता और भय ने भैरवी को केवल एक

भयावह और अंधविश्वास से जुड़ी देवी बना दिया, जबकि वास्तव में वे आत्म-साक्षात्कार और अनंत चेतना की प्रतीक हैं। इस दृष्टिकोण ने विशेष रूप से महिलाओं को भैरवी साधना से दूर रखा, क्योंकि इसे पुरुष साधकों के लिए उपयुक्त और सामाजिक रूप से स्वीकार्य माना गया। ग्रामीण क्षेत्रों में, भैरवी की पूजा को अक्सर ‘काली साधना ’या ‘वाममार्गी तंत्र ’से जोड़ा जाता है, जिसे सामान्य लोग असामाजिक और खतरनाक मानते हैं।

इस सामाजिक दृष्टिकोण का एक और पहलू यह है कि भैरवी को अक्सर केवल तांत्रिकों और अघोरियों की देवी के रूप में देखा जाता है, जो सामान्य धार्मिक प्रथाओं से अलग हैं। यह धारणा समाज की उस प्रवृत्ति को दर्शाती है, जो अपरंपरागत और रहस्यमयी प्रथाओं को संदेह की दृष्टि से देखती है। भैरवी की साधना को सामाजिक नैतिकता के बाहर माना जाता है, जिसके कारण इसे गुप्त और गोपनीय रखा जाता है। इस दृष्टिकोण ने भैरवी की साधना को समाज के मुख्यधारा के धार्मिक प्रवाह से अलग कर दिया, जिससे उनकी गहन आध्यात्मिक महत्ता को समझने में बाधा उत्पन्न हुई। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह केवल चेतना, केवल उपस्थिति, केवल होने की अवस्था में रहता है।पारंपरिक सामाजिक दृष्टिकोण ने भैरवी को एक सीमांत और विवादास्पद शक्ति के रूप में स्थापित किया है, जो समाज की मृत्यु और अपवित्रता से संबंधित भय और वर्जनाओं को प्रतिबिंबित करता है। यह दृष्टिकोण

भैरवी के व्यापक तात्त्विक स्वरूप को समझने में एक बड़ी बाधा रहा है।

शमशान का महत्व

शमशान अघोरी साधना का एक केंद्रीय और पवित्र स्थान है, क्योंकि यह वह क्षेत्र है, जहाँ जीवन और मृत्यु का प्रत्यक्ष साक्षात्कार होता है। भैरवी की पूजा में शमशान का महत्व अत्यंत गूढ़ और आध्यात्मिक है, क्योंकि यह वह स्थान है, जहाँ साधक समस्त मोह, सामाजिक बंधन, और सांसारिक आकर्षणों से मुक्त होकर अपनी आत्मा को सच्चे अर्थों में भैरवी की शक्ति के समक्ष समर्पित करता है। शमशान में चिताओं की अग्नि, राख, शव, और मृत्यु की गंध एक ऐसा वातावरण निर्मित करते हैं, जो साधक के मन को अंतर्मुखी बनाता है। यह वह स्थान है, जहाँ मृत्यु का प्रत्यक्ष अनुभव साधक को जीवन की नश्वरता का बोध कराता है, और उसे उस सत्य की ओर ले जाता है, जो सभी कुछ को एक करता है।

भैरवी को शमशान की अधिष्ठात्री देवी माना जाता है, क्योंकि उनका निवास वहाँ है, जहाँ संसार का अंत होता है। अघोरी साधक शमशान को पूजा स्थल के रूप में चुनते हैं, क्योंकि यह वह स्थान है, जहाँ वे अपने भीतर की वासनाओं, कामनाओं, और अहंकार का दहन कर सकते हैं। शमशान में साधना करने से साधक को यह अनुभव होता है कि सब कुछ क्षणभंगुर है-देह, नाम, पहचान, और सांसारिक उपलब्धियाँ। यह सत्य साधना की पराकाष्ठा है, जो साधक

को मृत्यु के भय से मुक्त करता है और उसे आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है। भैरवी की उपस्थिति शमशान में साधक को सुरक्षा और शक्ति दोनों प्रदान करती है, जिससे वह तंत्र के कठिन और रहस्यमयी प्रयोगों में निर्भय होकर प्रवेश कर पाता है।

शमशान का महत्व केवल एक भौतिक स्थान तक सीमित नहीं है; यह एक आध्यात्मिक क्षेत्र है, जो साधक को उस अनंत चेतना से जोड़ता है, जो सभी रूपों, भेदों, और सीमाओं से परे है। शमशान में, साधक मृत्यु के प्रत्यक्ष अनुभव के माध्यम से जीवन के गूढ़ रहस्यों को समझता है। यह वह स्थान है, जहाँ भैरवी की शक्ति साधक के भीतर जागृत होती है, और वह उस सत्य का साक्षात्कार करता है, जो सभी कुछ को धूल में बदल देता है। अघोरी मानते हैं कि शमशान में साधना करने से साधक का मन सामाजिक और सांसारिक बंधनों से मुक्त हो जाता है, और वह उस अनंत चेतना से एकाकार हो जाता है, जो भैरवी का स्वरूप है।शमशान का महत्व भैरवी की साधना में एक मंदिर के समान है, जो साधक को आत्मा के जागरण की ओर ले जाता है। यह केवल शवदाह का स्थल नहीं है; यह वह स्थान है, जहाँ साधक अपनी आत्मा को भैरवी के समक्ष समर्पित करता है और उस सत्य की खोज करता है, जो सभी द्वैतों से परे है।

आहुति और हवन

भैरवी की पूजा में अग्नि की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, विशेष रूप से आहुति और हवन के माध्यम से, जो अघोरी परंपरा में

केवल कर्मकांड नहीं, बल्कि तांत्रिक ऊर्जा जागरण का एक शक्तिशाली माध्यम है। हवन में प्रयुक्त समिधाएँ, औषधियाँ, और विशेष मंत्रों के साथ दी गई आहुति वातावरण में अदृश्य ऊर्जा तरंगें उत्पन्न करती हैं, जो साधक के चित्त को एकाग्र करती हैं और साधना को सिद्धि की ओर ले जाती हैं। अघोरी साधक हवन को एक पवित्र प्रक्रिया मानते हैं, जिसके द्वारा वे अपने अंतर्मन के विकारों-जैसे अहंकार, मोह, और भय-को अग्नि में समर्पित कर, शुद्धि की प्रक्रिया को पूर्ण करते हैं। यह हवन प्रायः रात्रि में शमशान में किया जाता है, जब वातावरण शांत, गंभीर, और ब्रह्मांडीय ऊर्जा से युक्त होता है।

इस हवन की विशेषता यह है कि इसमें केवल परंपरागत सामग्री, जैसे घी और समिधा, का उपयोग नहीं होता, बल्कि अघोरी परंपरा में स्वीकृत विशेष तांत्रिक औषधियाँ, जैसे भस्म, खोपड़ी की राख, और दुर्लभ वनस्पतियाँ, भी शामिल की जाती हैं। यह आहुति सामान्य देवता की पूजा से भिन्न होती है, क्योंकि इसका उद्देश्य केवल देवता को प्रसन्न करना नहीं, बल्कि साधक के भीतर की तांत्रिक शक्ति को जागृत करना है। भैरवी को दी गई आहुति एक प्रकार का आत्मसमर्पण है, जिसमें साधक अपने सांसारिक बंधनों और मानसिक विकारों को अग्नि के हवाले कर देता है। इस प्रक्रिया से उत्पन्न ऊर्जा साधक के स्थूल और सूक्ष्म शरीर में तंत्र के मार्ग को सक्रिय करती है, और उसे भैरवी की चेतना के साथ एकाकार करने में सहायता करती है।

आहुति और हवन भैरवी की साधना में एक द्वार की भांति हैं, जो साधक को उच्चतर चेतना की ओर ले जाते हैं। ये प्रक्रियाएँ केवल बाह्य अनुष्ठान नहीं हैं; ये साधक के भीतर की आध्यात्मिक अग्नि को प्रज्वलित करती हैं, जो उसके अहंकार और भौतिक आसक्तियों को भस्म करती है। तांत्रिक ग्रंथों, जैसे "कुलार्णव तंत्र" और "भैरवतंत्र," में हवन को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में वर्णित किया गया है, जो साधक के भीतर की कुंडलिनी शक्ति को जागृत करती है और उसे सप्त चक्रों-विशेष रूप से मूलाधार, मणिपुर, और आज्ञा चक्र-के माध्यम से सहस्रार तक ले जाती है।आहुति और हवन की यह प्रक्रिया केवल एक तांत्रिक अनुष्ठान तक सीमित नहीं है; यह एक गहन आध्यात्मिक यात्रा है, जो साधक को उस अनंत चेतना से जोड़ता है, जो सभी रूपों, भेदों, और सीमाओं से परे है। आहुति और हवन की यह प्रक्रिया साधक को उस सत्य की ओर ले जाती है, जो सभी कुछ को एक करता है, और उसे उस अनंत चेतना से जोड़ता है, जो भैरवी का स्वरूप है।

ध्यान और साधना

शमशान भैरवी की पूजा में ध्यान और साधना सबसे महत्वपूर्ण और केंद्रीय प्रक्रिया है, जो अघोरी परंपरा को अन्य तांत्रिक पद्धतियों से विशिष्ट रूप से अलग करती है। यह साधना केवल बाह्य अनुष्ठानों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह अंतर्मन की गहराइयों में प्रवेश का एक शक्तिशाली और गहन माध्यम है। अघोरी साधक ध्यान के द्वारा

भैरवी के उग्र और शक्तिशाली स्वरूप, उनके गुणों, और उनकी ब्रह्मांडीय ऊर्जा को अपने भीतर स्थापित करने का प्रयास करते हैं, जिससे उनकी चेतना भैरवी की अनंत चेतना के साथ एकाकार हो सके। इस ध्यान की प्रक्रिया में साधक अपने चारों ओर शून्यता का अनुभव करता है, जहाँ न कोई सांसारिक विचार, न कोई भौतिक बंधन, और न ही कोई अहंकार शेष रहता-केवल भैरवी की उपस्थिति बाकी रहती है।

ध्यान और साधना का यह मार्ग साधक के लिए चक्रों को जागृत करने, कुंडलिनी शक्ति को सक्रिय करने, और आत्मा को परमशक्ति के साथ एकाकार करने का एक गहन प्रयास है। अघोरी परंपरा में यह दृढ़ विश्वास है कि भैरवी की कृपा के बिना किसी भी साधना में पूर्णता संभव नहीं है। इसीलिए ध्यान के माध्यम से साधक भैरवी के साथ मानसिक और आध्यात्मिक संनाद स्थापित करता है, जिसमें मंत्र, मुद्रा, और यंत्र विशेष महत्व रखते हैं। ये तांत्रिक उपकरण गुरु-शिष्य परंपरा में दीक्षा के माध्यम से प्राप्त किए जाते हैं और केवल दीक्षित साधकों द्वारा ही उपयोग किए जाते हैं। यह साधना प्रायः रात्रिकाल में, विशेष रूप से अमावस्या या चतुर्दशी की रात में की जाती है, जब ब्रह्मांड की ऊर्जा सर्वाधिक प्रभावी और तीव्र होती है।

भैरवी की साधना में ध्यान केवल एक मानसिक क्रिया नहीं है; यह साधक के स्थूल और सूक्ष्म शरीर को परिवर्तित करने वाली एक गहन आध्यात्मिक प्रक्रिया है। तांत्रिक ग्रंथों, जैसे "कुलार्णव तंत्र"

और "भैरवतंत्र," में वर्णित है कि भैरवी का ध्यान साधक के भीतर की कुंडलिनी शक्ति को जागृत करता है और उसे सप्त चक्रों-विशेष रूप से मूलाधार, मणिपुर, और आज्ञा चक्र-के माध्यम से सहस्रार तक ले जाता है। इस प्रक्रिया में, साधक अपने भीतर की सारी अशुद्धियाँ-भय, मोह, क्रोध, और अहंकार-को भस्म करता है और एक निर्मल चेतना की अवस्था प्राप्त करता है। शमशान का वातावरण इस ध्यान को और अधिक गहन बनाता है, क्योंकि यहाँ मृत्यु की उपस्थिति साधक को जीवन की क्षणभंगुरता का सतत स्मरण कराती है।

महिला साधकों की भागीदारी में वृद्धि

अघोरी परंपरा, जिसे लंबे समय तक पुरुष-प्रधान और रहस्यमयी माना जाता रहा, अब आधुनिक समय में एक नए रूपांतरण के दौर से गुजर रही है, जिसमें महिला साधकों की भागीदारी निरंतर बढ़ रही है। यह बदलाव केवल संख्यात्मक नहीं है, बल्कि सांस्कृतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। शमशान भैरवी की आराधना, जो स्त्री शक्ति और भयमुक्त साधना का प्रतीक है, अब अनेक शिक्षित और समर्पित महिला साधकों को आकर्षित कर रही है। ये साधिकाएँ भैरवी की साधना को एक ऐसी आध्यात्मिक प्रक्रिया के रूप में देखती हैं, जो उन्हें समाज की पारंपरिक लैंगिक और सामाजिक सीमाओं से मुक्त करके उनकी चेतना को व्यापक स्तर पर विस्तार देने का अवसर प्रदान करती है।

कई साधिकाओं ने शमशान, तंत्र, मंत्र, और योग की कठिन साधनाओं में गहन प्रशिक्षण प्राप्त किया है और अपने अनुभवों के आधार पर नई पीढ़ी की महिलाओं को मार्गदर्शन देना शुरू किया है।

महिला साधकों की इस बढ़ती उपस्थिति ने अघोरी परंपरा में एक नया संतुलन और संवेदनशीलता जोड़ी है। जहाँ पहले शमशान भैरवी की साधना मुख्य रूप से पुरुष साधकों तक सीमित थी, वहीं अब महिलाएँ भी उसी स्तर की आस्था, निष्ठा, और साधना की शक्ति के साथ इस परंपरा में भाग ले रही हैं। इस परिवर्तन ने न केवल अघोरी समाज की धारणा को विस्तारित किया है, बल्कि स्त्री शक्ति के उस गूढ़ स्वरूप को भी पुनर्परिभाषित किया है, जो भैरवी स्वयं हैं। महिला साधकों ने अपने आंतरिक अनुभवों, ध्यान, और शमशान में उपस्थिति के माध्यम से यह सिद्ध किया है कि आत्मिक मुक्ति का मार्ग लिंग से परे है, और यह केवल साधना, संकल्प, और समर्पण से प्राप्त किया जा सकता है।

इस परिवर्तन ने समाज की उस रूढ़िगत धारणा को भी चुनौती दी है, जो तंत्र और अघोरी साधना को पुरुष-प्रधान मानती थी। महिला साधकों की भागीदारी ने यह दर्शाया है कि भैरवी की साधना न केवल पुरुषों के लिए, बल्कि महिलाओं के लिए भी उतनी ही प्रासंगिक और शक्तिशाली है। यह बदलाव सामाजिक विमर्श में भी परिलक्षित होता है, जहाँ भैरवी को एक नारीवादी प्रतीक के रूप में देखा जा रहा है, जो स्वतंत्रता, साहस, और आत्म-निर्भरता का

प्रतीक है। शमशान में, जहाँ मृत्यु की उपस्थिति सर्वत्र व्याप्त है, महिला साधकों ने अपने निर्भय दृष्टिकोण और गहन साधना के माध्यम से यह सिद्ध किया है कि वे भी भैरवी की शक्ति को पूर्णतः आत्मसात कर सकती हैं। यह प्रक्रिया समाज को यह सिखाती है कि शमशान केवल भय और मृत्यु का स्थान नहीं, बल्कि स्त्री साधना की महाशक्ति का केंद्र भी बन सकता है।महिला साधकों की भागीदारी में यह वृद्धि केवल एक धार्मिक या तांत्रिक परिवर्तन नहीं है; यह एक सांस्कृतिक और आध्यात्मिक क्रांति है, जो समाज को लैंगिक समानता और आध्यात्मिक स्वतंत्रता की ओर ले जाती है।

भैरवी की साधना और सामाजिक स्वीकार्यता

शमशान भैरवी की साधना, जो अघोरी और तांत्रिक परंपराओं में गहन आध्यात्मिक महत्व रखती है, सामाजिक स्वीकार्यता के मामले में हमेशा से एक जटिल स्थिति में रही है। पारंपरिक भारतीय समाज में भैरवी की साधना को अक्सर गुप्त, रहस्यमयी, और सामाजिक मानदंडों से परे माना जाता है, जिसके कारण इसे मुख्यधारा के धार्मिक अनुष्ठानों से अलग रखा गया। शमशान में की जाने वाली इस साधना को, जो मृत्यु, शव, और तांत्रिक अनुष्ठानों से जुड़ी है, सामान्य जनमानस ने भय और संदेह की दृष्टि से देखा। ग्रामीण और शहरी समाजों में, विशेष रूप से परंपरावादी समुदायों में, भैरवी की साधना को केवल अघोरियों, तांत्रिकों, या समाज से अलग-थलग रहने वाले साधकों की प्रथा माना जाता है। इस धारणा

ने भैरवी की साधना को एक सीमित और वर्जित क्षेत्र में रखा, जिससे यह सामान्य लोगों के लिए दुर्गम और अस्वीकार्य रही।

इस सामाजिक अस्वीकार्यता का मूल कारण समाज की द्वैतवादी सोच है, जो शुद्ध और अशुद्ध, पवित्र और अपवित्र के बीच कठोर भेद करती है। भैरवी की साधना, जो शमशान जैसे अपवित्र माने जाने वाले स्थान और शव साधना जैसे अनुष्ठानों से जुड़ी है, इस द्वैतवादी सोच को चुनौती देती है। समाज में मृत्यु और इससे संबंधित प्रथाओं को अपशकुन और अशुभ माना जाता है, जिसके कारण भैरवी की साधना को भी नकारात्मक रूप में देखा गया। यह धारणा विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में प्रबल रही, जहाँ भैरवी की पूजा करने वालों को समाज से बहिष्कृत या संदिग्ध माना जाता था। इस तरह की सामाजिक धारणाओं ने भैरवी की साधना को एक गुप्त और गोपनीय प्रथा बना दिया, जो केवल दीक्षित साधकों तक सीमित रही।

हालांकि, आधुनिक काल में भैरवी की साधना की सामाजिक स्वीकार्यता में धीरे-धीरे बदलाव आ रहा है। शिक्षा, आध्यात्मिक जागरूकता, और नारी सशक्तिकरण जैसे आंदोलनों ने भैरवी की साधना को एक नये दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया है। शहरी क्षेत्रों में, विशेष रूप से आध्यात्मिक और योगिक समुदायों में, भैरवी की साधना को अब केवल तांत्रिक अनुष्ठान के रूप में नहीं, बल्कि आत्म-साक्षात्कार और आंतरिक शक्ति को जागृत करने की प्रक्रिया के रूप में देखा जा रहा है। सामाजिक मीडिया, साहित्य, और कला

के माध्यम से भैरवी की छवि को एक सशक्त और प्रेरक शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है, जो समाज की रूढ़ियों को तोड़ने में सहायक है। इस बदलाव ने भैरवी की साधना को अधिक समावेशी बनाया है, और यह अब केवल अघोरियों या तांत्रिकों तक सीमित नहीं रही, बल्कि आम लोगों, विशेष रूप से महिलाओं, के बीच भी लोकप्रिय हो रही है।यह सामाजिक स्वीकार्यता का परिवर्तन केवल एक धार्मिक बदलाव नहीं है; यह एक सांस्कृतिक और आध्यात्मिक क्रांति है, जो समाज को मृत्यु, शक्ति, और तंत्र जैसे विषयों पर खुले मन से विचार करने की चुनौती देता है।

भैरवी की साधना में सामाजिक भ्रांतियों का प्रभाव

भैरवी की साधना के प्रति सामाजिक भ्रांतियाँ भारतीय समाज में गहराई से निहित हैं, और ये भ्रांतियाँ उनकी साधना की स्वीकार्यता और समझ को प्रभावित करती रही हैं। समाज में यह धारणा प्रचलित रही है कि भैरवी की साधना केवल अघोरियों, तांत्रिकों, या सामाजिक रूप से हाशिए पर रहने वाले लोगों के लिए है, और यह सामान्य जनमानस के लिए उपयुक्त नहीं है। इस भ्रांति का मूल कारण भैरवी के शमशानवासी स्वरूप और मृत्यु से जुड़े प्रतीकों, जैसे खोपड़ी, रक्त, और भस्म, से उपजा भय है। सामान्य लोग इन प्रतीकों को अपवित्र और भयावह मानते हैं, जिसके कारण भैरवी की साधना को अंधविश्वास, जादू-टोना, या काले जादू से जोड़कर देखा जाता

है। यह धारणा समाज की उस द्वैतवादी सोच को दर्शाती है, जो शुद्ध और अशुद्ध के बीच सख्त भेद करती है।

इन सामाजिक भ्रांतियों ने भैरवी की साधना को एक गलत और नकारात्मक छवि दी है, जिसके कारण इसे समाज के मुख्यधारा के धार्मिक प्रवाह से अलग रखा गया। ग्रामीण क्षेत्रों में, भैरवी की साधना करने वालों को अक्सर संदेह की दृष्टि से देखा जाता था, और उन्हें 'तांत्रिक,' 'डायन, 'या 'असामाजिक 'जैसे लेबल दिए जाते थे। यह भ्रांति विशेष रूप से महिलाओं के लिए और भी कठिन रही, क्योंकि सामाजिक रूढ़ियाँ महिलाओं को ऐसी साधनाओं से दूर रखती थीं। भैरवी की साधना को समाज में एक खतरनाक और वर्जित प्रथा के रूप में देखा गया, जिसके कारण इसे गुप्त और गोपनीय रखा गया। इन भ्रांतियों ने न केवल भैरवी की साधना की सच्चाई को छिपाया, बल्कि साधकों को भी सामाजिक बहिष्कार का सामना करना पड़ा। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह केवल चेतना, केवल उपस्थिति, केवल होने की अवस्था में रहता है।

मृत्यु का सम्मान और आत्मा की मुक्ति का भाव

शमशान भैरवी की उपासना अघोरी परंपरा में केवल एक तांत्रिक साधना तक सीमित नहीं है; यह मृत्यु के प्रति गहन श्रद्धा और आत्मा की मुक्ति का एक शक्तिशाली माध्यम है। अघोरी मृत्यु को भय, निषेध, या अंत के रूप में नहीं देखते, बल्कि उसे जीवन के परम सत्य और आध्यात्मिक परिवर्तन की प्रक्रिया के रूप में स्वीकार करते

हैं। यह दृष्टिकोण शमशान भैरवी के स्वरूप से गहराई से जुड़ा है, जो शवों के बीच निवास करती हैं और आत्माओं को अंतिम मोक्ष की दिशा में मार्गदर्शन करती हैं। अघोरी जब शमशान में साधना करते हैं, तो वे मृत आत्माओं के लिए मंत्रोच्चारण, भस्म-लेपन, और दीप दान जैसे कर्म करते हैं, जिससे उन आत्माओं की मुक्ति सुनिश्चित हो सके। यह समर्पण न केवल साधक की आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग है, बल्कि यह मानवता के प्रति एक पवित्र सेवा भी है, जो मृत्यु को एक सम्मानजनक और आध्यात्मिक प्रक्रिया के रूप में स्थापित करती है।

इस परंपरा में शव केवल एक भौतिक शरीर नहीं होता; यह आत्मा के पृथक्करण की अंतिम अवस्था का प्रतीक है। शमशान भैरवी की आराधना के माध्यम से अघोरी मृत्यु को आलिंगन करते हैं, उसे स्वीकारते हैं, और उसी में ब्रह्म की खोज करते हैं। वे मानते हैं कि जब तक मृत्यु को पूर्ण श्रद्धा के साथ स्वीकार नहीं किया जाएगा, तब तक जीवन का गूढ़ रहस्य और उसका सत्य समझा नहीं जा सकता। भैरवी इस मार्गदर्शक शक्ति के रूप में साधक को न केवल तांत्रिक साधना में सिद्ध करती हैं, बल्कि उन्हें मृत्यु के पार के सत्य का साक्षात्कार भी कराती हैं। साधक मृत्यु के प्रत्यक्ष अनुभव के माध्यम से जीवन की क्षणभंगुरता को समझता है, और भैरवी की कृपा से वह उस सत्य की ओर अग्रसर होता है, जो सभी कुछ को एक करता है।

मृत्यु का सम्मान और आत्मा की मुक्ति का यह भाव अघोरी साधना का मूल तत्व है। शमशान में, जहाँ चिताओं की अग्नि और राख सर्वत्र व्याप्त है, साधक भैरवी की शक्ति के साथ संनाद करता है, जो उसे मृत्यु के भय से मुक्त करती है। यह प्रक्रिया केवल साधक की व्यक्तिगत यात्रा तक सीमित नहीं है; यह एक व्यापक दर्शन है, जो समाज को मृत्यु को एक भयावह अंत के रूप में देखने की बजाय उसे जीवन के एक अभिन्न अंग के रूप में स्वीकार करने की प्रेरणा देता है। भैरवी की साधना के माध्यम से, अघोरी साधक मृत आत्माओं के लिए प्रार्थना करते हैं और उनकी मुक्ति के लिए कर्म करते हैं, जिससे यह सिद्ध होता है कि मृत्यु केवल एक शारीरिक घटना नहीं, बल्कि एक आध्यात्मिक परिवर्तन है।मृत्यु का सम्मान और आत्मा की मुक्ति का यह भाव केवल एक तांत्रिक प्रक्रिया नहीं है; यह एक गहन आध्यात्मिक दर्शन है, जो साधक को उस अनंत चेतना से जोड़ता है, जो भैरवी का स्वरूप है।

शव साधना में नैतिकता और चेतना की भूमिका

शव साधना तांत्रिक परंपरा में एक अत्यंत रहस्यमयी और भयावह प्रक्रिया मानी जाती है, लेकिन अघोरियों के लिए यह साधना आत्मा और ब्रह्म के संयोग की चरम अवस्था है। शमशान भैरवी की कृपा से साधक इस साधना को पूर्ण श्रद्धा, संयम, और जागृत चेतना के साथ करते हैं। अघोरी मानते हैं कि शव केवल एक भौतिक माध्यम है, लेकिन इस साधना की सफलता साधक की चेतना की शुद्धता

और जागृति पर निर्भर करती है। इस साधना के दौरान साधक को किसी भी प्रकार की वासना, भय, या दिखावे से पूर्णतः मुक्त होना पड़ता है। नैतिकता की कसौटी पर यह साधना तभी सफल होती है, जब साधक अपने भीतर से हर प्रकार की आसक्ति, लोभ, और अहंकार को पूर्णतः त्याग देता है। भैरवी इस साधना में एक मार्गदर्शक शक्ति के रूप में उपस्थित होती हैं, जो साधक की चेतना को जागृत करती हैं और उसे आत्म-ज्ञान की ओर ले जाती हैं।

शव साधना में नैतिक नियंत्रण अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह एक अत्यंत संवेदनशील और गहन आध्यात्मिक प्रक्रिया है। कोई भी मानसिक विचलन साधक को आध्यात्मिक मार्ग से भटका सकता है और उसे नकारात्मक प्रभावों का शिकार बना सकता है। इसलिए, अघोरी गुरु इस साधना की अनुमति केवल उन साधकों को देते हैं, जो पूर्णतः मानसिक रूप से संतुलित, संयमित, और आध्यात्मिक दृष्टि से परिपक्व हों। भैरवी की उपस्थिति इस साधना को संतुलन प्रदान करती है, क्योंकि वह साधक को उस सत्य की ओर ले जाती हैं, जो सभी द्वैतों-जीवन और मृत्यु, शुद्ध और अशुद्ध-से परे है। शव साधना केवल एक बाह्य क्रिया नहीं है; यह साधक के भीतर की चेतना को शुद्ध करने और उसे ब्रह्मांडीय चेतना के साथ एकाकार करने की प्रक्रिया है।

शव साधना में भैरवी की भूमिका केवल एक देवी की नहीं, बल्कि एक आध्यात्मिक मार्गदर्शक की है, जो साधक को नैतिकता

और चेतना के संतुलन के साथ आगे बढ़ने में सहायता करती है। तांत्रिक ग्रंथों, जैसे "रुद्रयामल तंत्र" और "भैरवतंत्र," में यह वर्णित है कि शव साधना के दौरान साधक को पूर्ण समर्पण और शुद्ध चेतना के साथ भैरवी का आह्वान करना होता है। इस प्रक्रिया में, साधक अपने भीतर की कुंडलिनी शक्ति को जागृत करता है और सप्त चक्रों-विशेष रूप से मूलाधार और आज्ञा चक्र-के माध्यम से अपनी चेतना को सहस्रार तक ले जाता है।शव साधना में नैतिकता और चेतना की यह भूमिका केवल एक तांत्रिक अनुष्ठान तक सीमित नहीं है।

अध्याय 4:
शमशान भैरवी का दर्शन और तांत्रिक मान्यता

तांत्रिक परंपरा में शमशान भैरवी की दार्शनिक भूमिका

शमशान भैरवी का दर्शन तांत्रिक परंपरा में केवल एक देवी के रूप में नहीं, बल्कि एक संपूर्ण चेतना और ब्रह्मांडीय ऊर्जा के रूप में प्रस्तुत होता है, जो तंत्र के मूलभूत सिद्धांतों का प्रतीक है। तांत्रिक दर्शन में भैरवी को 'शुद्ध विद्या 'और 'मृत्यु के पार की देवी 'के रूप में वर्णित किया गया है, जो साधक को माया के आवरण से मुक्त कराकर तुरीय अवस्था-चेतना की परम स्थिति-तक ले जाती है। यह परंपरा इस विश्वास पर आधारित है कि संसार में जो कुछ भी भयावह, त्याज्य, या वर्जित माना जाता है, वही आध्यात्मिक मुक्ति का सच्चा द्वार बन सकता है। शमशान भैरवी इस मार्ग की अधिष्ठात्री हैं, जो शमशान, मृत्यु, और भस्म जैसे प्रतीकों के माध्यम से साधक को अहंकार, भय, और सांसारिक बंधनों से मुक्त करती हैं। उनकी साधना में साधक से पूर्ण समर्पण, विवेक, और मृत्यु के भय को पार करने की अपेक्षा की जाती है, जो उसे ब्रह्म के साथ एकाकार होने की ओर ले जाता है।

तांत्रिक दर्शन में भैरवी की भूमिका आत्मा के शुद्धिकरण और 'त्रिगुणातीत 'अवस्था को प्राप्त करने के साधन के रूप में है। उनकी पूजा केवल बाह्य अनुष्ठानों तक सीमित नहीं है; यह साधक की चेतना

को मृत्यु और जीवन के सीमांत पर ले जाकर एकांत में स्थापित करती है। यह अवस्था तांत्रिक दृष्टि से सर्वोच्च मानी जाती है, क्योंकि यहाँ 'मैं 'का भंजन होता है, और साधक ब्रह्मस्वरूप चेतना के साथ एकाकार हो जाता है। भैरवी के प्रतीक-जैसे भस्म, खप्पर, और शव-इस दार्शनिक आधार को रेखांकित करते हैं कि सभी कुछ, चाहे वह कितना भी अपवित्र प्रतीत हो, अंततः ब्रह्म का ही अंश है। साधक जब इन प्रतीकों के साथ साधना करता है, तो वह न केवल अपनी आंतरिक अशुद्धियों को जलाता है, बल्कि जीवन और मृत्यु के द्वैत को भी पार करता है।

भैरवी की दार्शनिक भूमिका तांत्रिक साधना में अद्वैत सिद्धांत के साथ गहराई से जुड़ी है। तंत्र का यह मूल सिद्धांत कि 'सर्वं विश्वमयं'-सब कुछ विश्व का अंश है-भैरवी की साधना में स्पष्ट रूप से प्रकट होता है। शमशान, जो सामान्यतः अपवित्र और भयावह माना जाता है, भैरवी की साधना में एक पवित्र मंदिर बन जाता है, जहाँ साधक अपनी चेतना को शुद्ध करता है।

भैरवी के तांत्रिक स्वरूप की संरचना और प्रतीकात्मकता

शमशान भैरवी का तांत्रिक स्वरूप उनकी विकराल और भयावह छवि-रक्तवर्ण, खुले बाल, मुंडमाल, भस्म- लेपन, और शव पर नृत्य करती मुद्रा-के माध्यम से प्रकट होता है, जो केवल भय उत्पन्न करने के लिए नहीं, बल्कि गहन दार्शनिक और आध्यात्मिक सत्य को व्यक्त करने के लिए है। प्रत्येक प्रतीक एक तांत्रिक सिद्धांत

को दर्शाता है: उनके खुले बाल चेतना की स्वतंत्रता और अनुशासनहीनता को प्रतीक करते हैं, जो साधक को सामाजिक और मानसिक बंधनों से मुक्त होने की प्रेरणा देते हैं। मुंडमाल पाशविक वृत्तियों और अहंकार के वशीकरण को दर्शाती है, जो साधक को अपनी निम्न प्रवृत्तियों पर विजय प्राप्त करने की शिक्षा देती है। रक्तवर्ण कामना की शक्ति को व्यक्त करता है, जो साधना के माध्यम से 'कामरूप 'में रूपांतरित होकर आध्यात्मिक ऊर्जा बन जाती है। खप्पर भोग की सीमा को लांघकर त्याग का प्रतीक है, और शव पर उनका नृत्य यह दर्शाता है कि जब साधक 'स्व 'को त्याग देता है, तभी वह भैरवी की सच्ची कृपा का पात्र बनता है।

भैरवी के स्वरूप में मौजूद आयुध-जैसे खड्ग, त्रिशूल, और डमरू-भी गहरे तांत्रिक अर्थ रखते हैं। खड्ग अज्ञान के नाश का प्रतीक है, जो साधक को माया के आवरण को काटने की शक्ति देता है। त्रिशूल त्रिगुणों-सत, रज, और तम-पर नियंत्रण का प्रतीक है, जो साधक को प्रकृति के बंधनों से मुक्त करता है। डमरू समय की लय और ब्रह्मांड की ध्वनि को दर्शाता है, जो साधक को सृष्टि के मूल स्वर से जोड़ता है। ये प्रतीक साधक के मन में एक ऐसी ऊर्जा उत्पन्न करते हैं, जो उनकी चेतना को जागृत करती है और उन्हें आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है।

भैरवी के तांत्रिक स्वरूप की प्रतीकात्मकता केवल बाह्य रूप तक सीमित नहीं है; यह साधक के भीतर की आध्यात्मिक प्रक्रिया

को भी दर्शाती है। तांत्रिक परंपरा में भैरवी को 'तंत्रशास्त्र की जीवित सत्ता 'माना जाता है, क्योंकि उनका स्वरूप और प्रतीक साधक को उस सत्य की ओर ले जाते हैं, जो सभी द्वैतों से परे है। जब साधक इन प्रतीकों को अपनी साधना में समाहित करता है, तो वह अपने भीतर की अशुद्धियों-भय, मोह, और अहंकार-को जलाता है और एक निर्मल चेतना प्राप्त करता है।

तांत्रिक अनुष्ठानों में शमशान भैरवी की उपस्थिति और ऊर्जा

तांत्रिक अनुष्ठानों में शमशान भैरवी की उपस्थिति एक निर्णायक और शक्तिशाली शक्ति के रूप में होती है, जो साधक को आत्मिक और ब्रह्मांडीय स्तर पर परिवर्तित करती है। अघोरी और कौल परंपराओं में, भैरवी के बिना कोई भी उच्च स्तरीय तांत्रिक अनुष्ठान-जैसे शाव शुद्धि, वाममार्ग साधना, पंचमकार की प्रक्रिया, या कुंडलिनी जागरण-पूर्ण नहीं माना जाता। इन अनुष्ठानों में भैरवी का आह्वान विशेष रूप से अमावस्या, चतुर्दशी, और महाकाल रात्रियों में शमशान या निर्जन स्थानों पर किया जाता है।

इन तांत्रिक अनुष्ठानों में साधक पूर्ण समर्पण के साथ अपनी चेतना को भैरवी के स्वरूप में विलीन करता है। इस प्रक्रिया में, भैरवी की ऊर्जा साधक के भीतर की अशुद्धियों-जैसे भय, क्रोध, और अहंकार-को भस्म करती है, जिससे वह आत्म-शुद्धि और ब्रह्मज्ञान की ओर अग्रसर होता है। भैरवी का आह्वान साधक के भीतर की कुंडलिनी शक्ति को जागृत करता है, जो सप्त चक्रों-विशेष रूप से

मूलाधार और आज्ञा चक्र-के माध्यम से सहस्रार तक प्रवाहित होती है। यह प्रक्रिया साधक को मृत्यु के भय से मुक्त करती है और उसे उस सत्य की ओर ले जाती है, जो सभी द्वैतों से परे है। शमशान का वातावरण, जहाँ मृत्यु की ऊर्जा सर्वत्र व्याप्त है, इस अनुष्ठान को और अधिक गहन बनाता है, क्योंकि यह साधक को जीवन की क्षणभंगुरता का सतत स्मरण कराता है।

तांत्रिक अनुष्ठानों में भैरवी की उपस्थिति केवल एक देवी की नहीं, बल्कि एक जीवंत ऊर्जा की है, जो साधक को उसकी आंतरिक शक्ति से जोड़ती है। तांत्रिक परंपरा में यह माना जाता है कि भैरवी की कृपा के बिना कोई भी साधना पूर्ण नहीं हो सकती। उनके अनुष्ठान-जैसे खप्पर पूजा, अग्निहोत्र, और त्रिपुटी मंत्रों का जाप-साधक के भीतर एक ऐसी ऊर्जा उत्पन्न करते हैं, जो उसे सांसारिक माया और भय से मुक्त करती है। ये अनुष्ठान साधक को उस सत्य का अनुभव कराते हैं, जो जीवन और मृत्यु के चक्र से परे है।

आध्यात्मिक मुक्ति में शमशान भैरवी की भूमिका

शमशान भैरवी तांत्रिक परंपरा में केवल मृत्यु की प्रतिनिधि देवी नहीं हैं; वे आध्यात्मिक मुक्ति की मार्गदर्शक शक्ति हैं, जो साधक को जीवन और मृत्यु के चक्र से परे ले जाती हैं। तांत्रिक पुराणों और ग्रंथों, जैसे "रुद्रयामल तंत्र" और "कुलार्णव तंत्र," में भैरवी को उस शक्ति के रूप में वर्णित किया गया है, जो साधक को मोह-माया, सांसारिक बंधनों, और आत्मीय आकांक्षाओं से मुक्त कर 'निर्विकल्प

अवस्था'-पूर्ण शून्यता और चेतना की परम स्थिति-में स्थापित करती है। यह शून्यता जन्म-मृत्यु, सुख-दुख, और शुद्ध-अशुद्ध जैसे द्वैतों से परे है, जहाँ साधक अपनी आत्मा की वास्तविक प्रकृति का साक्षात्कार करता है। भैरवी की कृपा के बिना, इन कठिन और संवेदनशील प्रक्रियाओं में साधक अपनी चेतना को खो सकता है या मार्ग से भटक सकता है।

भैरवी की साधना में आध्यात्मिक मुक्ति का मार्ग केवल बाह्य अनुष्ठानों तक सीमित नहीं है; यह एक गहन आंतरिक प्रक्रिया है, जो साधक को उसके अहंकार और सांसारिक बंधनों से मुक्त करती है। तांत्रिक साहित्य में इस अवस्था को 'शून्यादि शून्यता 'के रूप में वर्णित किया गया है-एक ऐसी स्थिति जहाँ साधक स्वयं को ब्रह्म की अनंत गहराई में विलीन पाता है।

भैरवी की आध्यात्मिक मुक्ति में भूमिका तांत्रिक साधना के अद्वैत सिद्धांत के साथ गहराई से जुड़ी है। तंत्र का यह मूल सिद्धांत कि 'सर्वं विश्वमयं'-सब कुछ विश्व का अंश है-भैरवी की साधना में स्पष्ट रूप से प्रकट होता है। शमशान, जो सामान्यतः अपवित्र और भयावह माना जाता है, भैरवी की साधना में एक पवित्र मंदिर बन जाता है, जहाँ साधक अपनी चेतना को शुद्ध करता है।

सामाजिक दृष्टिकोण और तंत्र परंपरा में शमशान भैरवी

शमशान भैरवी की पूजा सामान्य सामाजिक दृष्टिकोण से भयावह और विद्रूप प्रतीत होती है, क्योंकि यह पारंपरिक धार्मिक

और सामाजिक संस्कारों की अवज्ञा करती है। मृत शरीर, रक्त, भस्म, और शमशान जैसे प्रतीकों का उपयोग समाज के लिए अपवित्र और अस्वीकार्य माना जाता है, जो भैरवी की साधना को एक रहस्यमयी और कट्टर प्रथा के रूप में प्रस्तुत करता है। यह सामाजिक धारणा समाज की द्वैतवादी सोच-शुद्ध और अशुद्ध, पवित्र और अपवित्र-का परिणाम है, जो मृत्यु और इससे जुड़े प्रतीकों को नकारात्मक रूप में देखती है। तथापि, तांत्रिक दृष्टिकोण से यह एक सशक्त विरोधाभास है, क्योंकि जो साधक इन प्रतीकों को अपनाता है, वह अहंकार, मोह, और सांसारिक बंधनों से मुक्त होकर अपनी वास्तविक स्व-चेतना को पहचानता है।

तांत्रिक परंपरा में, शमशान भैरवी की साधना एक सामाजिक विद्रोह नहीं, बल्कि स्व-उपलब्धि की यात्रा है। यह साधना साधक को 'ब्रह्मत्व 'की ओर ले जाती है, जहाँ वह अपनी आत्मा की शुद्धता को अनुभव करता है। समाज के लिए यह एक चेतावनी है कि मानव अपनी बाहरी जाति, मान्यताओं, और संस्कारों से परे जाकर भी दिव्य और पवित्र अनुभव कर सकता है। तंत्र में शमशान भैरवी की साधना एक बौद्धिक और आध्यात्मिक आंदोलन की तरह है, जो आत्मा की मुक्त अवस्था को सर्वोच्च मानता है।

आधुनिक समय में, जब भौतिकता और उपभोक्तावाद समाज को प्रभावित कर रहे हैं, भैरवी की साधना एक गहन आध्यात्मिक प्रक्रिया के रूप में उभरती है। यह साधना समाज को यह सिखाती है

कि मृत्यु और जीवन केवल मन की निर्मित अवधारणाएँ हैं, और वास्तविक सत्य इन द्वैतों से परे है।

तंत्र साधना हेतु भैरवी की उपासना के नैतिक और आचार संहितागत पहलू

शमशान भैरवी की साधना एक अत्यंत गहन और संवेदनशील प्रक्रिया है, जिसमें नैतिक अनुशासन और आचार संहिता का पालन अत्यंत महत्वपूर्ण है। तांत्रिक परंपरा में, साधक को गुरु-शिष्य परंपरा में प्रशिक्षित होना आवश्यक है,। इन अनुष्ठानों के लिए संवेदनशीलता, सहमति, शुद्धता, और मानसिक स्थिरता अत्यंत आवश्यक हैं। बिना नैतिक और मानसिक तैयारी के ये प्रयोग साधक के लिए हानिकारक हो सकते हैं, क्योंकि वे उसकी चेतना को भटका सकते हैं या उसे अहंकार और भ्रम की ओर ले जा सकते हैं। तंत्र में यम-नियम-जैसे अहिंसा, सत्यता, संयम, गुरु-आज्ञा, और समाज की मर्यादा का सम्मान-का पालन साधक को इन जोखिमों से बचाता है।

यह नैतिक अनुशासन साधक को दो स्तरों पर संरक्षित करता है: पहला, यह सुनिश्चित करता है कि उसकी आंतरिक शक्तियों का उपयोग सही दिशा में हो, और दूसरा, यह उसे सामाजिक अलगाव के बजाय समाज के साथ जोड़े रखता है। तांत्रिक साधना में, विशेष रूप से भैरवी की उपासना में, नैतिकता का अभाव साधक को आत्म-विकृति, अहंकार, या भ्रम की ओर ले जा सकता है। गुरु-शिष्य परंपरा में, गुरु साधक को इन नियमों का पालन करने के लिए मार्गदर्शन

प्रदान करता है, जिससे वह अपनी साधना को पारदर्शी और शुद्ध रख सके। भैरवी की साधना में नैतिकता का यह आधार साधक को उस सत्य की ओर ले जाता है, जो सभी द्वैतों से परे है।

तांत्रिक साधना में भैरवी की उपासना के नैतिक और आचार संहितागत पहलू साधक को एक संतुलित और जिम्मेदार मार्ग पर रखते हैं। तंत्र के ग्रंथों में, जैसे "कुलार्णव तंत्र," यह उल्लेख किया गया है कि भैरवी की साधना में साधक को अपनी इंद्रियों पर पूर्ण नियंत्रण रखना होता है, और उसे गुरु की आज्ञा का पालन करते हुए अपनी साधना को शुद्ध रखना होता है। यह नैतिक अनुशासन साधक को उस सत्य की ओर ले जाता है, जो सभी कुछ को एक करता है।

तकनीकी समाज में आध्यात्मिक अवसाद और शमशान भैरवी

आधुनिक युग में, तकनीकी प्रगति और उपभोक्तावादी संस्कृति ने मानव जीवन को गहन रूप से प्रभावित किया है, जिसके परिणामस्वरूप आध्यात्मिक अवसाद और आंतरिक शून्यता की भावना बढ़ रही है। सोशल मीडिया, निरंतर कनेक्टिविटी, और भौतिक उपलब्धियों की दौड़ में व्यक्ति अक्सर अपने भीतर एक गहरी रिक्तता महसूस करता है। यह वह समय है जब शमशान भैरवी की साधना और उनका दर्शन आधुनिक मानव के लिए नया अर्थ और प्रासंगिकता लेता है। भैरवी की पूजा, जो मूलतः मृत्यु, क्षय, और संसार की क्षणभंगुरता को आत्मसात करने पर आधारित है,

आधुनिक समाज में आत्म-निरीक्षण और मानसिक अवसाद से मुक्ति का एक शक्तिशाली साधन बन सकती है। जब साधक सांसारिक चमक-दमक, शोर-शराबे, और बाह्य आभासों से दूरी बनाकर शमशान की शांति और शून्यता में प्रवेश करता है, तो वह तकनीकी तनाव और आंतरिक अस्थिरता से स्वाभाविक रूप से मुक्त होने लगता है।

आधुनिक मनोवैज्ञानिक और मानसिक चिकित्सक भी ध्यान और आध्यात्मिक चिंतन को मानसिक स्वास्थ्य के लिए लाभकारी मानते हैं, और भैरवी की साधना इस संदर्भ में एक उपचारात्मक प्रक्रिया के रूप में उभरती है। यह साधना व्यक्ति को तकनीकी दुनिया की अस्थिरता और भौतिकता के दबाव से मुक्त करके आंतरिक शांति और स्थिरता की ओर ले जाती है।

शमशान भैरवी की साधना आधुनिक तकनीकी समाज में आध्यात्मिक अवसाद से निपटने के लिए एक अनूठा दृष्टिकोण प्रदान करती है। तांत्रिक दर्शन में, भैरवी की साधना साधक को यह सिखाती है कि सांसारिक उपलब्धियाँ और बाह्य चमक केवल माया का हिस्सा हैं, और वास्तविक सत्य उस शून्यता में निहित है, जो सभी कुछ को एक करता है। शमशान का वातावरण, जहाँ मृत्यु की उपस्थिति सर्वत्र व्याप्त है, साधक को इस सत्य का सतत स्मरण कराता है। यह प्रक्रिया आधुनिक मानव को उस आंतरिक रिक्तता से

मुक्त करती है, जो तकनीकी समाज की तेज गति और निरंतर अपेक्षाओं से उत्पन्न होती है।

समाज में भैरवी की धारणा

समाज में शमशान भैरवी की छवि हमेशा विरोध और भय के भाव से जुड़ी रही है। जहाँ तांत्रिक साधना के मार्ग में उन्हें अत्यंत शक्तिशाली, मुक्तिदायिनी, और गहन आध्यात्मिक अनुभूति की अधिष्ठात्री माना गया है, वहीं सामान्य धार्मिक दृष्टिकोण में उन्हें मृत्यु, अंधकार, और अमंगल की देवी के रूप में देखा गया है। यह धारणा केवल अज्ञान या भ्रम की उपज नहीं, बल्कि एक सामाजिक संरचना का परिणाम है, जिसने जीवन की सुंदरता को प्रकाश में और मृत्यु की सच्चाई को अंधकार में ढकेल दिया। भैरवी, जो शमशान में निवास करती हैं, उसी उपेक्षित सत्य की प्रतिनिधि हैं, जिसे समाज स्वीकृति देने से डरता है। वे सामाजिक व्यवस्था की सीमाओं को चुनौती देती हैं-न केवल परंपरा और जाति के स्तर पर, बल्कि मानवीय चेतना के स्तर पर भी।

आधुनिक समय में, भैरवी की सामाजिक धारणा में परिवर्तन के संकेत दिखाई दे रहे हैं। शिक्षा, नारी सशक्तिकरण, और आध्यात्मिक जागरूकता के प्रसार ने भैरवी को एक सशक्त और प्रेरक शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया है। सामाजिक मीडिया और आध्यात्मिक मंचों ने उनकी छवि को भयावह से परे ले जाकर एक समग्र और प्रेरक शक्ति के रूप में स्थापित किया है। यह बदलाव समाज की उस बढ़ती

समझ को दर्शाता है, जो मृत्यु को केवल एक अंत नहीं, बल्कि एक आध्यात्मिक परिवर्तन के रूप में देखती है।

भैरवी की सामाजिक धारणा दो ध्रुवों के बीच झूलती है-एक ओर भय और तिरस्कार, दूसरी ओर श्रद्धा और मुक्ति। यह धारणा एक गहन आध्यात्मिक इतिहास का हिस्सा है, जो समाज को यह सिखाती है कि सत्य को अपनाने के लिए भय और रूढ़ियों को त्यागना आवश्यक है। भैरवी की साधना साधक को उस सत्य की ओर ले जाती है, जो सभी कुछ को एक करता है।

भैरवी के मंत्र और उनकी शक्ति

शमशान भैरवी के मंत्र केवल उच्चारित शब्द नहीं हैं, बल्कि जीवंत ऊर्जा के प्रवाह हैं, जो साधक की चेतना को आत्मिक गहराइयों में ले जाकर उसे ब्रह्मांडीय सत्य से जोड़ते हैं। तांत्रिक परंपरा में, भैरवी के मंत्र-जैसे "ऐं ह्रीं क्लीं चामुंडायै विच्चे" और अन्य बीज मंत्र-शक्ति, करुणा, आकर्षण, और विनाश का एक अद्वितीय संतुलन समाहित करते हैं। ये मंत्र साधक की चेतना, इंद्रियों, और अंतःकरण को उस अवस्था में ले जाते हैं, जहाँ वह न तो शरीर से बंधा रहता है और न ही मन की सीमाओं से। शमशान में, जहाँ मृत्यु की ऊर्जा सर्वत्र व्याप्त है, इन मंत्रों का जाप साधक के भीतर की कुंडलिनी शक्ति को जागृत करता है, जो उसे काल, भय, और मृत्यु के पार ले जाती है। यह प्रक्रिया साधक को शारीरिक और मानसिक स्तर पर परिवर्तित

करती है, जिससे वह आत्म-प्रकाश और ब्रह्मबोध की दिशा में अग्रसर होता है।

भैरवी के मंत्रों की साधना अत्यंत संवेदनशील और जोखिमपूर्ण प्रक्रिया है, जिसके लिए अनुशासन, शुद्धता, और गुरु से प्राप्त दीक्षा अनिवार्य है। बिना गुरु के मार्गदर्शन और नैतिक तैयारी के, इन मंत्रों का जाप साधक को भटकाव, मानसिक अस्थिरता, या अहंकार की ओर ले जा सकता है। भैरवी की कृपा से जब मंत्र अपने पूर्ण प्रभाव में आता है, तब साधक के भीतर का 'मैं 'गलने लगता है, और वह ब्रह्म के निकट पहुँचने लगता है। इन मंत्रों का प्रभाव इतना गहरा होता है कि वे साधक के चेतन और अवचेतन मन में मौजूद सभी विकारों-जैसे भय, क्रोध, और लोभ-को बाहर निकालकर उसे पूर्णतः शुद्ध और निर्भय बना देते हैं। यह प्रक्रिया न केवल साधक को शक्ति प्रदान करती है, बल्कि उसे विवेक, करुणा, और समर्पण का मार्ग भी दिखाती है।।

तांत्रिक ग्रंथों, जैसे "कुलार्णव तंत्र" और "रुद्रयामल तंत्र," में भैरवी के मंत्रों को एक जीवंत ऊर्जा के रूप में वर्णित किया गया है, जो साधक की कुंडलिनी शक्ति को जागृत कर सप्त चक्रों-विशेष रूप से मूलाधार, मणिपुर, और आज्ञा चक्र-के माध्यम से सहस्रार तक ले जाती है। शमशान का वातावरण, जहाँ मृत्यु की उपस्थिति सर्वत्र व्याप्त है, इन मंत्रों के प्रभाव को और अधिक तीव्र बनाता है।

शमशान भैरवी और अघोरी दर्शन में अद्वैत का महत्व

शमशान भैरवी का दर्शन और अघोरी परंपरा में अद्वैत का सिद्धांत गहराई से जुड़ा हुआ है, क्योंकि दोनों ही साधक को द्वैत की सीमाओं से परे ले जाकर ब्रह्म की एकता का साक्षात्कार कराते हैं। तांत्रिक और अघोरी दर्शन में, भैरवी को अद्वैत की जीवंत शक्ति के रूप में देखा जाता है, जो साधक को 'सर्वं विश्वमयं'-सब कुछ विश्व का अंश है-के सिद्धांत से जोड़ती है। शमशान, जो सामान्यतः मृत्यु और अपवित्रता का प्रतीक माना जाता है, भैरवी की साधना में एक पवित्र स्थल बन जाता है, जहाँ जीवन और मृत्यु, शुद्ध और अशुद्ध, जैसे सभी द्वैत विलीन हो जाते हैं। भैरवी की साधना साधक को यह सिखाती है कि सभी कुछ-चाहे वह भयावह हो या सुंदर-ब्रह्म का ही अंश है, और इस सत्य को आत्मसात करने से साधक अद्वैत की अवस्था प्राप्त करता है।

अघोरी दर्शन में अद्वैत का महत्व इस विश्वास में निहित है कि साधक को सभी द्वैतों-जैसे अच्छा-बुरा, पवित्र-अपवित्र, और जीवन-मृत्यु-से परे जाना है। भैरवी इस प्रक्रिया में साधक की मार्गदर्शक बनती हैं, जो उसे माया के आवरण को भेदकर ब्रह्म की एकता का अनुभव कराती हैं।

भैरवी की साधना में अद्वैत का महत्व तांत्रिक ग्रंथों, जैसे "भैरवतंत्र" और "कुलार्णव तंत्र," में स्पष्ट रूप से वर्णित है। इन ग्रंथों में भैरवी को उस शक्ति के रूप में चित्रित किया गया है, जो साधक

को कुंडलिनी जागरण के माध्यम से सप्त चक्रों को पार कर सहस्रार तक ले जाती है, जहाँ वह ब्रह्म की एकता का अनुभव करता है। शमशान का वातावरण इस प्रक्रिया को और अधिक गहन बनाता है, क्योंकि यहाँ मृत्यु की उपस्थिति साधक को जीवन की क्षणभंगुरता का सतत स्मरण कराती है। भैरवी की शक्ति साधक के भीतर जागृत होती है, और यह जागृति उसे उस सत्य तक ले जाती है, जो सभी कुछ को धूल में बदल देता है।

शमशान में शुद्धि और मानसिक परीक्षण का महत्व

शमशान में निवास और साधना का मुख्य उद्देश्य केवल तांत्रिक सिद्धियाँ प्राप्त करना नहीं है, बल्कि साधक के भीतर छिपे भय, मोह, वासना, और अहंकार की शुद्धि करना है। अघोरी परंपरा में शमशान केवल एक भौतिक स्थान नहीं है; यह एक आध्यात्मिक और मानसिक प्रयोगशाला है, जहाँ साधक अपनी चेतना की गहराइयों में उतरता है और अपनी आत्मा को शुद्ध करता है। शमशान भैरवी इस प्रक्रिया की साक्षात देवी मानी जाती हैं, जो साधक की प्रत्येक भावना, विचार, और मानसिक स्थिति को परखती हैं।

शमशान में साधना करने का अनुभव साधक को दिन-प्रतिदिन मृत शरीरों, शोकग्रस्त परिवारों, और मृत्यु की गंध के बीच जीने के लिए प्रेरित करता है। यह अवस्था साधक के भीतर से सभी आडंबर और दिखावे को मिटा देती है, जो सामान्य जीवन में मनुष्य ओढ़े रहता है। शमशान का वातावरण साधक को उसकी अपनी

कमजोरियों, भय, और आसक्तियों का सामना करने के लिए बाध्य करता है, और भैरवी की उपस्थिति इस मानसिक और आध्यात्मिक परीक्षण में उसे मार्गदर्शन प्रदान करती है। यह प्रक्रिया साधक के अंतःकरण की सबसे गहन परतों को उद्घाटित करती है, जहाँ वह अपनी आत्मा के प्रत्येक कोने को भैरवी के सामने निर्वस्त्र अनुभव करता है। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह केवल चेतना, केवल उपस्थिति, केवल होने की अवस्था में रहता है।

शमशान में शुद्धि और मानसिक परीक्षण का महत्व केवल साधक की व्यक्तिगत यात्रा तक सीमित नहीं है; यह एक गहन दर्शन है, जो समाज को मृत्यु और जीवन के द्वैत को पार करने की प्रेरणा देता है। शमशान में, भैरवी की शक्ति साधक को उस सत्य का साक्षात्कार कराती है, जो सभी कुछ को धूल में बदल देता है। तांत्रिक ग्रंथों, जैसे "रुद्रयामल तंत्र" और "भैरवतंत्र," में शमशान को एक पवित्र स्थान के रूप में वर्णित किया गया है, जहाँ साधक अपनी चेतना को शुद्ध करता है और भैरवी की कृपा से आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करता है।शमशान में शुद्धि और मानसिक परीक्षण की यह प्रक्रिया केवल एक तांत्रिक अनुष्ठान तक सीमित नहीं है; यह एक गहन आध्यात्मिक यात्रा है, जो साधक को उस अनंत चेतना से जोड़ता है, जो भैरवी का स्वरूप है।

अध्याय 5:
शमशान भैरवी के प्रतीकों का तांत्रिक रहस्य

त्रिशूल: शक्ति, संतुलन और तांत्रिक चेतना का प्रतीक

त्रिशूल, शमशान भैरवी के हाथों में विद्यमान वह शस्त्र है जो केवल शारीरिक अस्त्र नहीं, बल्कि त्रैविधिक सत्ता का द्योतक है- इच्छा शक्ति, ज्ञान शक्ति और क्रिया शक्ति। यह त्रिशक्ति का संगम, तांत्रिक साधना में उस संतुलन को दर्शाता है जिसके माध्यम से साधक भूत, वर्तमान और भविष्य के बंधनों को काटता है। भैरवी का त्रिशूल केवल बाह्य शक्ति नहीं बल्कि आत्मिक स्तर पर चेतना की तीन धाराओं को नियंत्रित करने वाला उपकरण है। जब अघोरी इस त्रिशूल का ध्यान करता है, तो वह अपने भीतर की वासनाओं, भ्रमों और अहंकार को नष्ट करने के लिए इसे मानसिक स्तर पर जाग्रत करता है। यह त्रिशूल साधक को त्रिगुणों के पार ले जाने का मार्ग बनता है, जहां से वह परम अद्वैत में प्रवेश करता है।

त्रिशूल का उपयोग केवल यंत्र रूप में नहीं होता, बल्कि अघोर साधना में इसका ध्यान साधक के आत्मिक शरीर में होता है-जहां यह उसकी इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना नाड़ियों के संतुलन का प्रतिनिधित्व करता है। भैरवी की मूर्ति में त्रिशूल का होना यह संकेत करता है कि वह केवल मृत्यु और विनाश की देवी नहीं, बल्कि चेतना को पुनः संकल्पित करने वाली ऊर्जा है। त्रिशूल, तंत्र के उच्चतम

रहस्यों में से एक है, और जब साधक इसकी प्रतीकात्मकता को समझता है, तब वह शरीर, मन और आत्मा के स्तर पर सम्यक नियंत्रण प्राप्त करता है। यह त्रिशूल अघोरी साधना का मूल आधार है, जिससे साधक मृत्यु के भय को काटकर मोक्ष की ओर अग्रसर होता है।

खप्पर: मृत्यु के अन्न का पात्र और अहंकार का विघटन

खप्पर, अर्थात् मानव खोपड़ी का पात्र, शमशान भैरवी के सबसे प्राचीन और रहस्यमयी प्रतीकों में से एक है। यह केवल भयावहता का द्योतक नहीं, बल्कि मृत्यु से जीवन और आत्मा की चिरंतन यात्रा का संकेत है। अघोरी परंपरा में खप्पर वह पात्र है जिसमें साधक भैरवी को न केवल अर्घ्य अर्पित करता है, बल्कि अपने कर्मों, अहंकार और वासनाओं को भी समर्पित करता है। यह खप्पर प्रतीक है उस अंतिम बिंदु का, जहां देह समाप्त होती है और चेतना की यात्रा आरंभ होती है। भैरवी के हाथों में खप्पर का होना यह बताता है कि वह मृत्यु की स्वामिनी है, जो मृत्यु को न केवल स्वीकार करती है बल्कि उसे साधना का माध्यम बनाती है।

अघोरी जब खप्पर धारण करता है, तो वह समाज की सीमाओं से बाहर निकलकर चेतना की पराकाष्ठा को प्राप्त करने का प्रयास करता है। यह खप्पर उसकी हर रोज़ की साधना का हिस्सा है, जिसमें वह न केवल प्रसाद अर्पित करता है, बल्कि मृत्यु का भान भी करता है। यह खप्पर अघोरी को याद दिलाता है कि अहंकार, शरीर,

प्रतिष्ठा|भैरवी का खप्पर उस रहस्य का प्रवेश द्वार है, जहां से जीवन के चक्र का ज्ञान होता है और मृत्यु के भय का नाश। यही कारण है कि खप्पर, तंत्र में अघोरी साधना की अनिवार्य वस्तु मानी जाती है- एक ऐसा माध्यम जो साधक को संसार के बंधनों से मुक्त कर आत्मबोध की ओर ले जाता है।

अग्नि ज्वाला: भैरवी की चेतना और शुद्धिकरण का तत्व

शमशान भैरवी की मूर्ति के पीछे जो अग्नि प्रज्वलित रहती है, वह केवल शमशान की अग्नि नहीं होती, बल्कि वह तांत्रिक चेतना की वह धारा है जो साधक के भीतर से अपवित्रता, भय, अज्ञान और वासना को जलाकर नष्ट कर देती है। यह अग्नि 'सिद्धि की ज्वाला ' कहलाती है, और अघोरी साधना में इसे आत्मा की सबसे उन्नत अवस्था का प्रतीक माना जाता है। यह अग्नि न केवल शवों को भस्म करती है, बल्कि साधक की मनोवृत्तियों और विकारों को भी। भैरवी की यह अग्नि ही उसे मृत्यु की देवी नहीं, अपितु नवचेतना की जन्मदात्री बनाती है।

तंत्र में यह माना जाता है कि जब साधक मृत्यु के भय को पार करता है, तभी वह इस अग्नि को भीतर प्रज्वलित कर पाता है। शमशान की वह अग्नि-जो बाहर जल रही होती है-साधक के भीतर भी जगाई जाती है, जिससे उसकी सभी इंद्रियाँ भैरवी के चरणों में समर्पित हो जाती हैं। यह अग्नि मात्र भौतिक नहीं, बल्कि मानसिक और आत्मिक स्तर पर होती है-जो साधक के सभी संस्कारों को भस्म

कर उसे नवजन्म प्रदान करती है। इसलिए शमशान भैरवी की पूजा में अग्नि को अत्यंत पवित्र और अनिवार्य माना गया है। यही ज्वाला अघोरी साधना की चरम अवस्था का संकेत है-जहां साधक मृत्यु से नहीं डरता, बल्कि उसे गले लगाकर मोक्ष की ओर बढ़ता है।

वामदण्डिका मुद्रा: अघोरी चेतना में संतुलन का प्रतीक

शमशान भैरवी की एक विशिष्ट मुद्रा है वामदण्डिका, जिसमें उनकी एक भुजा बाएँ दिशाशक्तियों की ओर फैली होती है, यह शक्ति के संतुलन का प्रतीक है। इस मुद्रा का अर्थ केवल बाह्य दृश्य में ही नहीं, बल्कि हर साधक के आंतरिक द्वंद्व - इंद्रिय-वासनाएँ और मानसिक व्यवधानों - को शमशान भैरवी के माध्यम से संतुलित करने में छिपा है। अघोरी साधना में, वामदण्डिका मुद्रा को एक उच्चतम चेतना की अवस्था के रूप में देखा जाता है, जहां साधक अपने अंतर्मन की बाएँ-दाएँ विभाजित शक्तियों (वाम पथ और दक्षिण पथ) को सन्तुलित कर लेता है। यह मुद्रा सचेतन और अवचेतन के बीच अंतर मिटाती है, जहां साधक स्वयं को मृत्यु, जीवन और परमात्मा के बीच के संयोग में पाता है। वामदण्डिका अभ्यास अघोरी को मानसिक स्पष्टता, संकल्प शक्ति और आत्मबोध की स्थिति प्रदान करता है, जिससे उसे साधना की गहराई तक पहुँचने में सहायता मिलती है।

वामदण्डिका मुद्रा केवल भौतिक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि अघोरी के आंतरिक चक्रों (चक्र, नाड़ी ऊर्जा) का प्रतीक भी है। जब

साधक में यह संतुलन स्थापित होता है, तो अग्नि, जल और वायु तत्वों की तांत्रिक संलिप्तता संभव होती है। इससे साधक कपालभाति, अनुलोम-विलोम जैसी साधनाओं को गहराई से ग्रहण करता है, बिना किसी गलत मनोविकार के। यह मुद्रा शमशान भैरवी की कृपा के द्वारा साधक को अघोरी चेतना के उच्चतम स्तर तक प्रशिक्षित करती है।

चन्द्रमणि तिलक: चंद्र शक्ति और भैरवी की मानसिक सन्तुलन साधना

शमशान भैरवी पर चंद्रमा की तिलक विशेष महत्व रखती है क्योंकि यह तांत्रिक चंद्र शक्ति-शीतलता, मानसिक स्पष्टता, तंत्रिक संतुलन-का प्रतीक है। अघोरी साधना में चंद्रमा उस शांत, स्थिर और अनुकम्पाशील शक्ति को दर्शाता है जिसने अघोरी को मृत जीवों और अंतिम सत्य से डरने से मुक्त किया है। चंद्रतिलक साधना में साधक शमशान भैरवी के माथे की चन्द्रलिपि पर ध्यान लगा कर अपनी मानसिक अंदरूनी अशांति, भय और उत्तेजनाओं को तटस्थ करता है। यह प्रक्रिया उन तंत्रिक संरचनाओं को नियंत्रित करने की साधना होती है जिनसे साधक अपनी इंद्रियों और भावनाओं को अनियंत्रित रूप से संचालित करता है।

चन्द्रमणि तिलक साधना अघोरी को आत्म-चिंतन और मानसिक स्थिरता प्रदान करता है, जो उसे तृतीय नेत्र (आज्ञा चक्र) पर कार्य करने की क्षमता देता है। यह तिलक केवल आंतरिक दृष्टि

को जाग्रत नहीं करता, बल्कि साधक की नाड़ी-मुड्रा, मानस-पात्री और डमरु जैसी तंत्रिक यंत्रों के सम्मिश्रण से उसकी चेतनाशक्ति को जागृत करता है। साधक की चेतना में चंद्र शक्ति की स्थिरता आती है, जो मृत्यु के भय को कर्मबद्ध होकर भी पार कर जाती है।

अष्टभुजावस्था: आठ हाथों में समाई तांत्रिक शक्तियाँ

शमशान भैरवी की अष्टभुजावस्था अघोरी तंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। आठ हाथों में समाहित प्रत्येक शस्त्र, यंत्र और प्रतीक उसकी शक्तियों-शक्ति, रणनीति, प्रज्ञा, भक्ति, लौकिक-वैराग्य, जीवन-दर्शन, मृत्यु-अहंकारनाश और मोक्ष-को प्रदर्शित करता है। अघोरी साधना में यह ऋचा अष्टसूत्र रूप में अभ्यास की जाती है, जहाँ प्रत्येक हाथ के साधनात्मक तत्व को अभीष्ट सिद्धि के अनुसार आंतरिक भाव से आत्मसात किया जाता है।

अष्टभुजावस्था में साधक इन आठ तत्वों की ध्यान साधना करता है-उदाहरण के लिए कोई हाथ खप्पर लिए हो, तो वह मृत्यु-अहंकारनाश की शक्ति का ध्यान करता है; दूसरा हाथ त्रिशूल लिए हुए हो, तो इंद्रियों का संतुलन साधने की क्षमता जागृत होती है। यह तंत्रिक समन्वय इन्हीं आठ शक्तियों के संयोजन से पैदा होता है, जो साधक को केवल मृत्यु का पारगमन ही नहीं बल्कि नव चेतना की आगम हेतु मार्गदर्शन भी देता है। सिद्ध अघोर साधक इस अष्टभुजावस्था के माध्यम से तंत्र के गूढ़ मंत्र, मुद्रा और यंत्र-महत्त्व को आत्मसात

कर अपनी आध्यात्मिक मुक्ति की साधना को अंतिम रूप देता है।

शमशान वृद्धि द्वारा चेतना का संक्रमण

शमशान में स्थित भैरवी की साधना केवल बाहरी कर्म या प्रतीकात्मक अनुष्ठान नहीं, बल्कि वह चेतना का एक गहन कालातीत संक्रमण है जो आध्यात्मिक जागरण के पथ को खोलता है। जब साधक शमशान के वातावरण-जहाँ मृत्यु, अस्थियाँ और अंतर्निहित अपरिवर्तनीयता का मूलभूत सत्य विद्यमान रहता है-में प्रवेश करता है, तब उसकी आंतरिक चेतना अचानक सीमाओं के पार जा सकती है। यह सिर्फ मानसिक अनुभव नहीं, बल्कि चेतना की नई स्थिति है, जहाँ 'मैं 'की सीमा घुलकर सर्व-हैत्व की अनुभूति में बदल जाती है। इस प्रक्रिया में शमशान की अमूर्त ऊर्जा, मृत शरीरों के अवशेष और मौन का वातावरण, सभी मिलकर साधक की निजी अहं के विनाश का संयंत्र निर्मित करते हैं। मनोसामाजिक ट्रिगर्स जैसे मृत्यु का भय, व्यक्तिगत आकांक्षाएँ, और स्वाभाविक और जैविक पहचान-ये सब शमशान के माहौल में विरूप होकर उपरोक्त चेतना-परिवर्तन की जड़ ठहरते हैं। इस गहन परिवर्तन से साधक अपने पूर्वाग्रहों और सीमाओं को तोड़कर एक ऐसी चेतना की स्थिति में पहुंचता है, जो सार्वभौमिक सत्य की पहचान और परम आनंद की अनुभूति की ओर ले जाती है।

इसके साथ ही, भैरवी की अंतिम आदिष्ठित शक्ति-जो तंत्र परंपरा में 'कुण्डलिनी चेतना 'या 'शक्ति की अनावरणीय ज्योति ' कहलाती है-शमशान की विषम परिस्थितियों में अधिक सशक्त होती है। शमशान की अस्वीकार्य ऊर्जा, मृत्युतत्व, और जीवन के अंतिम चरणों का सामंजस्य, साधक के भीतर एक ऐसे शक्ति-क्षेत्र का निर्माण करता है जो सामाजिक टकरावों और धार्मिक पूर्वाग्रहों से मुक्त होता है। इस चेतना-परिवर्तन की प्रक्रिया में साधक अपने भीतर छिपी हुई दिव्यता को जागृत करता है, जो शमशान-भैरवी की उपस्थिति से केवल सशक्त होती है, उसे खुला करती है, और उसे स्वयं चेतना का प्रकाश बनाकर आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है।

विषुथ्ध चक्र और भैरवी की मौखिक शक्ति

भैरवी की साधना शमशान में शुद्धता और विनाश के बीच गहरे आन-बान के साथ गूंथी हुई है। इस संदर्भ में विषुथ्ध चक्र (गले का चक्र), जो आकाश तत्व का आत्म-साक्षी केंद्र है, साधक के मौखिक अभिव्यक्ति और सत्य के मौन की शक्ति को संगठित करता है। विषुथ्ध चक्र के माध्यम से भैरवी साधक को यह सिखाती है कि शब्द, मंत्र और मौन सभी ही समान शक्ति के वाहक हैं, पर शमशान में ये बंधन विपुल होते हैं। जब साधक शमशान के मौन में प्रविष्ट होता है-जहाँ मानव भाषा की सीमाएं ध्वंसित हो चुकी होती हैं-तब वह मौन में उपस्थित तांत्रिक ध्वनि, 'शब्द ब्रह्म', और गुरु-परम्परा द्वारा मान्यता प्राप्त बीज मंत्रों के बीच संपर्क स्थापित करता है। यह

प्रक्रिया केवल शारीरिक वाणी की नहीं, बल्कि अंतरंग आत्मा की आवाज़ को जगाने की मौन कला है।

शमशान का वातावरण यह संकेत देता है कि सत्य-वाणी को संरक्षित रखना और सामाजिक अपेक्षाओं से परे बोलना ही वास्तविक तंत्र ज्ञान की नींव है। विषुथ्ध चक्र का खुलना साधक में मौलिक अंतरात्मा-वाणी को बुलाता है जो एक ओर व्यक्तिगत प्रयोगशाला का कार्य करती है, वहीं दूसरी ओर संवेदनशील सत्ता, व्यक्तिगत अहं और सामाजिक प्रबन्धकों को चुनौती देती है। मौन उत्त्यक्ति और आकाश तत्व में पूर्णतः समायोजन साधक को भैरवी ऊर्जा के उस चरमोत्कर्ष की ओर ले जाता है जहाँ शब्द, मौन, प्रकाश और अंधकार एकाकार हो जाते हैं।

जब साधक शमशान में सामूहिक भैरवी साधना के लिये एकत्रित होता है, तब व्यक्तिगत अनुभव और सामूहिक चेतना दोनों ही एक अनूठे मंच पर प्रवेश करते हैं। साधक समुदाय-जिसके भीतर नित्य जीवन से अलगाव, धर्म की सीमाओं का खंडन और सामाजिक टकराव एक जैसे साझा रूप बनाते हैं-शमशान जैसे साक्षात्कार स्थल पर एक दूसरे के प्रयाण को सामूहिक रूप में अनुभव करते हैं। यही सामूहिक उपस्थिती साधन को केवल व्यक्तिगत क्रिया तक सीमित नहीं रहने देती, बल्कि इसे संसाधित सामूहिक शक्ति में रूपांतरित कर देती है। समुदाय के भीतर मौन की वाणी, मंत्रों की आवृत्ति और आंतरिक ऊर्जा के संयोग, एक ऐसी

सामूहिक विधि रचते हैं जो केवल सहभाव या आध्यात्मिक अनुभव नहीं, बल्कि भैरवी की शक्ति का प्रत्यक्ष अवतरण बन जाती है।

इसके साथ ही सामूहिक साधना में विभेद भी प्रकट होते हैं- आध्यात्मिक मुखरता या मौन-ध्वनि की विविधप्रवाहिता-जो प्रत्येक साधक को अपनी आंतरिक सीमाओं से रूबरू कराती है। समूह की शक्ति व्यक्तिगत सीमा को दबा देती है, लेकिन वहीं टकराव अथवा विपरीत दृष्टिकोण की उपस्थिती साधक को स्वयं के अरूप अहं की परीक्षा में डालती है। इस द्वंद्वारंभक प्रक्रिया में संघ और विभाजन, समूह ऊर्जा और व्यक्ति की आत्मा संसाधन एक-दूसरे को पार करते हैं, जिससे साधक स्वयं की पहचान को एक व्यापक दायरे में स्थानांतरित करता है-जहाँ अब 'मैं और तू 'की रेखाएं क्षीण हो जाती हैं और भैरवी की निराकार चेतना एक सार्वभौमिक सत्य में बदल जाती है।

मृत शरीरों का उपयोग साधना में

अघोरी साधना की चरम अवस्था में मृत शरीर न केवल एक साधन होते हैं, बल्कि वे चेतना के सीमाहीन विस्तार का द्वार भी बनते हैं। अघोरी इस विश्वास में रमे होते हैं कि मृत्यु के बाद का शरीर शुद्ध है, क्योंकि वह अहंकार, वासना और मोह से मुक्त होता है। शव का उपयोग कर वे आत्मा की अस्थिरता और देह की नश्वरता को प्रत्यक्ष रूप से अनुभव करते हैं। शव-साधना, विशेषकर "शव साधना" और "कपाल साधना", अत्यंत गोपनीय और खतरनाक

होती है, जिसमें साधक को मृत शरीर के पास घंटों या दिनों तक ध्यानस्थ रहना होता है। यह साधना न केवल भय को नष्ट करती है, बल्कि साधक के चित्त को परा शक्ति की ओर उन्मुख करती है, जहाँ 'स्व 'और 'शव 'में कोई भेद नहीं रह जाता।

यह साधना भैरवी के प्रति पूर्ण समर्पण और मृत्यु की सीमाओं से पार जाने का प्रतीक बन जाती है। शमशान में पड़े हुए शवों को सजाकर, उन पर भस्म लगाकर, अघोरी ध्यान करते हैं - कभी-कभी उन्हें आलिंगन में लेकर या उनके ऊपर बैठकर मंत्रोच्चार करते हैं। इस अभ्यास के पीछे कोई विकृति नहीं, बल्कि वह आध्यात्मिक दृष्टिकोण है जो जीवन और मृत्यु को एकरूप मानता है। मृत शरीर का प्रयोग अघोरी के लिए एक स्थायी शिक्षक बन जाता है, जो उसे स्मरण कराता है कि शरीर अस्थायी है और आत्मा अमर। यह प्रक्रिया अघोरी साधना में भयमुक्ति, वैराग्य और अद्वैत का अनुभव कराती है, जो उसकी आत्मा को मुक्तिव्रति की ओर अग्रसर करती है।

मृत्यु का उत्सव: अघोरियों का दृष्टिकोण

अघोरी परंपरा में मृत्यु को न तो भय का कारण माना जाता है और न ही शोक का अवसर, बल्कि यह आत्मा की मुक्ति, चेतना के विस्तार और ब्रह्म के साथ एकात्मता का उत्सव है। अघोरी साधना की मूल अवधारणा में मृत्यु वह क्षण है जब आत्मा माया, देह और अहंकार से पूरी तरह मुक्त होती है। अघोरी मानते हैं कि मृत्यु से बेहतर

शिक्षक कोई नहीं, क्योंकि मृत्यु ही वह दर्पण है जिसमें जीवन की असलियत, उसकी अस्थिरता और अनित्यत्व स्पष्ट दिखाई देते हैं। इसी कारण, जब एक व्यक्ति मृत्यु को भय और शोक से नहीं, बल्कि श्रद्धा और स्वीकृति से देखता है, तो वह जीवन की सीमाओं को पार कर जाता है। अघोरी अपने जीवन में मृत्यु का अभ्यास प्रतिदिन करते हैं - न केवल शमशान में समय बिताकर, बल्कि मृत शरीरों की निकटता में साधना करके, मंत्रों के उच्चारण में उसकी चेतना को आमंत्रित करके, और भैरवी की कृपा से उसकी आत्मा को मोक्ष की ओर अग्रसर करने के लिए मार्ग प्रशस्त करके।

इस परंपरा में जब कोई मृत्यु को प्राप्त होता है, तो अघोरी उस देह को विदा देने में न शोक करते हैं, न विलाप, न रोते हैं और न ही सामाजिक विधियों में बंधते हैं। इसके विपरीत, वे मृत्यु को ब्रह्मांडीय लीला का एक अनिवार्य चरण मानते हैं और इस क्षण को मंत्रोच्चार, भस्म स्नान, शंख-ध्वनि, और कभी-कभी रात्रिकालीन तांत्रिक नृत्य के माध्यम से एक ‘उत्सव ’के रूप में मनाते हैं। अघोरी साधक शव यात्रा में सहभागी होकर मृतक आत्मा के समक्ष भैरवी और कालभैरव के मंत्रों का उच्चारण करते हैं ताकि आत्मा का प्रवेश तामसिक लोकों में न हो, बल्कि वह तेजोमय और सत्वगुणी मार्ग से मोक्ष के द्वार तक पहुँच सके। उनका यह दृष्टिकोण केवल धार्मिक नहीं, बल्कि गहन रूप से तात्त्विक और अनुभूतिपरक है-जहाँ मृत्यु एक द्वार है, अंत नहीं।

अघोरी यह मानते हैं कि जब तक समाज मृत्यु को दुःख के रूप में देखता रहेगा, तब तक वह जीवन की सार्थकता को नहीं समझ पाएगा। अघोरी मृत्यु को जीवन का प्रतिबिंब मानते हैं और जब वह किसी चिता की अग्नि को देखता है, तो उसमें वह अपनी स्वयं की समाप्ति नहीं, बल्कि एक नए जीवन का आरंभ देखता है। इसीलिए अघोरी मृत्यु के समय शांत नहीं होते, वे मृत्यु को चेतना का पुनर्जन्म मानकर उसका उत्सव मनाते हैं। उनके लिए शमशान न शोक का स्थल है, न अंत का प्रतीक, बल्कि यह वह स्थान है जहाँ आत्मा, भौतिकता से मुक्त होकर अपने परम लक्ष्य की ओर बढ़ती है। यह उत्सवमयी दृष्टिकोण अघोरी साधना की आत्मा है - जहाँ मृत्यु को नहीं मिटाया जाता, बल्कि गले लगाया जाता है, जहाँ विरक्ति नहीं, बल्कि चेतना का विस्फोट होता है, और जहाँ प्रत्येक चिता, एक योगी की अग्नि में जलती हुई उसकी माया का प्रतीक होती है, न कि उसका अंत। यही मृत्यु का अघोरी उत्सव है - शाश्वत, निर्भय और दिव्य।

अध्याय 6:
तुलनात्मक अध्ययन – शमशान भैरवी और अन्य देवियों में अघोरी संबंध

भैरवी और काली की तुलनात्मक महत्ता

भैरवी और काली, दोनों ही महाविद्याओं की प्रमुख देवियाँ हैं, परंतु उनके स्वरूप, साधना विधि, तांत्रिक भूमिका और आध्यात्मिक उद्देश्यों में सूक्ष्म परंतु अत्यंत गहरे भेद पाए जाते हैं। काली का स्वरूप जहाँ सृष्टि के विनाश और समय के संहारक प्रवाह का प्रतिनिधित्व करता है, वहीं भैरवी चेतना के परिष्कार और मृत्यु के पार जाने की साधना का प्रतीक बनती हैं। काली को समय की अधिष्ठात्री माना गया है-वे काल की सीमाओं को नष्ट कर देती हैं, साधक को हर प्रकार के बंधनों से मुक्त करती हैं। उनका विकराल स्वरूप-कटे हुए सिरों की माला, रक्तस्नात जिव्हा, और नग्न शरीर-जीवन की अंतिम सच्चाई को बिना लाग-लपेट के उजागर करता है। वे अहंकार का संहार करती हैं और साधक को यह अनुभव कराती हैं कि आत्मा अमर है, जबकि शरीर एक भ्रम है।

दूसरी ओर, भैरवी का स्वरूप उतना ही प्रचंड होते हुए भी संतुलन और साधना के अनुशासन का प्रतिनिधित्व करता है। वे केवल संहारक नहीं हैं, बल्कि साधक की चेतना में छिपी कुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत करने वाली, उसे नियंत्रित कर ब्रह्म तक पहुँचाने

वाली शक्ति हैं। भैरवी अघोरियों के लिए मात्र एक तांत्रिक शक्ति नहीं, बल्कि गुरु स्वरूपा हैं, जो उन्हें धैर्य, एकाग्रता और संयम की ओर प्रेरित करती हैं। वे मृत्यु के भय को एक रहस्य में परिवर्तित कर साधक को मृत्यु को देखने नहीं, बल्कि उसमें उतरने और उसे साधने का मार्ग दिखाती हैं। अघोरी साधना में जब साधक काली का आह्वान करता है, तब वह समय और माया से मुक्ति चाहता है; पर जब वह भैरवी की साधना करता है, तब वह आत्मसंयम, तत्त्वबोध और ब्रह्मचेतना की ओर अग्रसर होता है। यही भेद साधना की दिशा और गति दोनों को निर्णीत करता है-काली उग्र परिवर्तन लाती हैं, जबकि भैरवी स्थायी और गहरी चेतना-संरचना का कार्य करती हैं। इस प्रकार यह तुलना केवल दो देवी स्वरूपों की नहीं, बल्कि दो भिन्न आध्यात्मिक दृष्टिकोणों की है-एक तीव्र गति की, दूसरी गहन गहराई की।

तुलनात्मक प्रतीकात्मकता तथा साधना स्वरूप

काली और भैरवी की साधना में प्रतीकों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान होता है, जो न केवल साधक के चित्त को उद्दीप्त करते हैं, बल्कि उसके आंतरिक द्वंद्व और चेतनात्मक विकास की दिशा को भी निर्धारित करते हैं। काली का प्रतीक संसार भयानक है-वे नग्न हैं, उनके गले में नरमुंडों की माला है, उनके हाथों में कटे हुए सिर और खड्ग हैं, और उनकी रक्तरंजित जीभ बाहर निकली हुई है। यह स्वरूप साधक के भीतर के तम, मोह, राग और भय को उखाड़ फेंकता है। वे साधक को संसार की झूठी आशाओं, तृष्णाओं और मिथ्या

अहंकार से मुक्त कराकर उसे आत्मतत्व के निकट लाती हैं। उनकी साधना में शव पर बैठकर ध्यान लगाना, रक्त से यज्ञ करना, और भयानक बीजमंत्रों का जप करना सामान्य प्रक्रिया होती है। यह साधना साधक को चरम साहस और अत्यधिक आंतरिक बल देती है।

भैरवी के प्रतीक इससे बिल्कुल भिन्न हैं-वे त्रिशूल धारण करती हैं, उनके एक हाथ में खोपड़ी का पात्र होता है, और वे शमशान में शव पर ध्यान मुद्रा में बैठी होती हैं। उनका स्वरूप शांत होते हुए भी शक्ति से ओतप्रोत होता है। वे साधक को भय दिखाकर नहीं, बल्कि उसे समझाकर मृत्यु के सत्य के निकट ले जाती हैं। उनका त्रिनेत्र ज्ञान, विवेक और दृष्टि का प्रतीक है। उनकी साधना अधिक आंतरिक है-जैसे कुण्डलिनी जागरण, चक्र साधना, और शवाधिष्ठान ध्यान। साधक भैरवी से मार्गदर्शन प्राप्त करता है, भय से परे जाता है और आत्मचेतना को नियंत्रित रूप में अनुभव करता है। जहाँ काली की साधना में झटका, संहार और त्वरित परिवर्तन होता है, वहीं भैरवी की साधना में क्रमबद्ध प्रगति, मौन अनुभूति और आत्मिक विस्तार होता है।

अघोरी साधना में यह द्वैत एक पूर्णता की ओर ले जाता है-काली की शक्ति साधक को माया से बाहर निकालती है और भैरवी की करुणा उसे ब्रह्म में स्थापित करती है। यह युग्म साधना का वह संतुलन है, जहाँ विनाश और अनुशासन मिलकर आत्मा की

चिरस्थायी मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करते हैं। इस द्वैत में ही वह तांत्रिक रहस्य छिपा है, जिसे जानना और साधना करना अघोरी परंपरा का अंतिम लक्ष्य है।

तीन महाविद्याओं के मध्य तुलनात्मक अध्ययन: काली, भैरवी व तारा

महाविद्याओं के गूढ़ और तांत्रिक जगत में काली, भैरवी और तारा एक त्रिकोणीय चेतना-संगठन की तरह कार्य करती हैं, जो साधक को विनाश, विवेक और करुणा के तीनों आयामों में परिपक्व करती हैं। ये तीनों देवियाँ शक्ति के त्रि-स्वरूप हैं, जिनकी साधना अघोरी पथ के तीन अलग-अलग सोपानों का प्रतिनिधित्व करती है। काली, सर्वप्रथम, 'काल 'की अधिष्ठात्री हैं-वे समय, मृत्यु, भय और माया का समूल नाश करती हैं। उनके स्वरूप में नग्नता, रक्त, अस्थियों की माला, और विकराल मुखमंडल है-यह सब उस परम सत्य का प्रतिनिधित्व करता है कि अस्तित्व का अंत अनिवार्य है, और आत्मा को मुक्ति प्राप्त करने के लिए सभी भयों का सामना करना आवश्यक है। अघोरी जब काली की साधना करता है, तो वह अपने भीतर की तमसिक प्रवृत्तियों को बाहर निकालता है, उसे नष्ट करता है, और काल-प्रभुता से ऊपर उठकर 'कालातीत 'बनता है।

दूसरी ओर भैरवी की उपस्थिति साधना को एक संतुलित दिशा प्रदान करती है। वे केवल संहार की देवी नहीं हैं, बल्कि वे ज्ञान, विवेक और चेतना के विकास की अधिष्ठात्री हैं। उनका स्वरूप अति

संयमित है, जिसमें वे त्रिशूल, खप्पर और ध्यानमग्न मुद्रा में शवासन पर विराजमान होती हैं। वे साधक को न केवल मृत्यु के भय से अवगत कराती हैं, बल्कि उसे उस भय को आत्मा के ज्ञान में परिवर्तित करने की दिशा भी देती हैं। भैरवी की साधना में शक्ति का चरम संयम और मानसिक स्थिरता की आवश्यकता होती है-जहाँ साधक मृत्यु को डरावनी नहीं, बल्कि मार्गदर्शिका के रूप में देखता है।

तीसरी महाविद्या तारा, तारा का स्वरूप सौम्यता और करुणा से परिपूर्ण है। वे काली के ही समरूप होते हुए भी उग्र नहीं, बल्कि शीतल और तारकीय ऊर्जा का प्रतिनिधित्व करती हैं। वे जीवन और मृत्यु के बीच स्थित मध्य-क्षेत्र की देवी हैं, जो साधक को भय से मुक्त कर सहजता के साथ मोक्ष की ओर प्रवाहित करती हैं। तारा की साधना अघोरियों को उनके भीतर की जटिलताओं से उबार कर करुणा, शांति और आंतरिक प्रेम के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देती है। यह त्रिमूर्ति-काली, भैरवी और तारा-तीन स्तंभ हैं, जिन पर अघोरी साधना टिकी होती है: काली से संहार और जागरण, भैरवी से संयम और आत्म-संयोजन, और तारा से प्रेमपूर्ण मुक्ति और सहिष्णुता। यह त्रिवेणी एक ऐसा आध्यात्मिक संतुलन उत्पन्न करती है, जिसमें साधक मृत्यु को अंत नहीं बल्कि चेतना की एक विस्तृत यात्रा का नया चरण मानता है।

दुर्गा और भैरवी: अघोरियों के लिए दोनों का महत्व

दुर्गा और भैरवी, शक्ति के दो अत्यंत प्रभावशाली और पूज्य स्वरूप हैं, परंतु उनके स्वरूप, साधना की विधियाँ और अघोरी परंपरा में उनका स्थान स्पष्ट रूप से अलग-अलग परिप्रेक्ष्यों में देखा जाता है। दुर्गा, मुख्यतः लौकिक संघर्षों, राक्षसी शक्तियों और अन्याय के विरुद्ध देवी रूप हैं। वे शौर्य, वीरता और धर्म की संरक्षिका हैं। उनकी पूजा पारंपरिक धार्मिक विधियों से होती है, जिनमें व्रत, उपवास, पुष्पांजलि, दीपदान, और वैदिक मंत्रों का उच्चारण होता है। दुर्गा की आराधना समाज में व्यापक रूप से स्वीकृत और लोकप्रिय है, विशेषकर नवदुर्गा और दशहरा जैसे पर्वों में। वे सत्व और रज के मिश्रण से उत्पन्न वह शक्ति हैं जो समाज के सामूहिक भय और संकट से मुक्ति देती हैं।

इसके विपरीत, भैरवी का स्वरूप अत्यंत गोपनीय, तांत्रिक और सीमित साधकों के लिए ही सुलभ होता है। वे न केवल मृत्यु और शमशान की देवी हैं, बल्कि वे अघोरी साधकों के लिए मृत्यु और मोक्ष के मध्य की जटिल यात्रा की अधिष्ठात्री होती हैं। भैरवी की साधना में कोई सामाजिक प्रदर्शन नहीं होता; वहाँ होता है एकांत, शव, राख, खोपड़ी और भस्म का साम्राज्य। वे साधक से समाज से पूर्ण विमुखता, शरीर से अलिप्तता और मन से निर्लिप्तता की माँग करती हैं। अघोरी, दुर्गा की पूजा से सामाजिक और लौकिक संकटों से बचाव करते हैं, परंतु भैरवी की साधना से वे अपनी आत्मा की

गहराइयों में उतरते हैं, अपने भीतर के दोष, विकार, अहंकार और माया को पहचानते और नष्ट करते हैं।

भैरवी की साधना में मंत्र अत्यंत गोपनीय होते हैं-वे बीजमंत्रों के माध्यम से साधक की चेतना को झकझोरते हैं। उनके मंत्र 'ॐ ह्रीं भैरव्यै नमः', 'क्लीं ऐं ह्रीं चामुंडायै विच्चे 'आदि साधक को भय के गर्त में उतारते हैं और वही भय भैरवी की कृपा से मुक्ति का द्वार बन जाता है। उनकी पूजा में पुष्पों की जगह भस्म, चंदन की जगह रक्त, दीपक की जगह शव और हवन की जगह खोपड़ी होती है। अघोरी परंपरा के लिए भैरवी ही सर्वोच्च साधना हैं क्योंकि वे साधक को केवल यश, धर्म या शक्ति नहीं देतीं, बल्कि वह अमरत्व, मोक्ष और ब्रह्मज्ञान की सत्ता प्रदान करती हैं।

इस प्रकार दुर्गा और भैरवी दोनों शक्तियाँ हैं, परंतु एक सामाजिक जागरण और कर्तव्य की अधिष्ठात्री है, तो दूसरी आत्मिक विमर्श और मोक्ष की प्रकट चेतना। अघोरी परंपरा में भैरवी इसलिए विशिष्ट हैं क्योंकि उनकी साधना में 'मैं 'समाप्त होता है और 'ब्रह्म ' का उदय होता है। यह वही अनुभव है जिसे कोई भी साधक अपने अंतिम लक्ष्य के रूप में चाहता है-पूर्ण मुक्ति, न केवल संसार से, बल्कि स्वयं से भी।

अन्य तांत्रिक देवियाँ: अघोरियों द्वारा पूजी जाने वाली अन्य देवियाँ

अघोरी साधना, जो कि जीवन और मृत्यु की सीमाओं को अतिक्रमित कर ब्रह्म चेतना की प्राप्ति का मार्ग है, उसमें भैरवी के अतिरिक्त कई अन्य तांत्रिक देवियाँ भी एक केंद्रीय भूमिका निभाती हैं। ये देवियाँ केवल पूजनीय नहीं, बल्कि साधक के आत्मिक विकास के विभिन्न सोपानों की साक्षात प्रतिमूर्ति होती हैं। अघोरियों द्वारा पूजी जाने वाली इन तांत्रिक देवियों में प्रमुख हैं-काली, तारा, छिन्नमस्ता, धूमावती और मातंगी, जो दस महाविद्याओं का अंग हैं। प्रत्येक देवी की साधना एक विशेष उद्देश्य को लेकर की जाती है, जो साधक की मानसिक अवस्था, साधना की दिशा, और आत्मिक लक्ष्य के अनुरूप होती है।

काली का पूजन अघोरियों के लिए प्रारंभिक एवं अत्यंत आवश्यक चरण होता है। वे समय, मृत्यु और अहंकार के संहार की देवी हैं। अघोरी उनके माध्यम से अपने भीतर जमे भय, वासना, और सामाजिक द्वैत को समाप्त करते हैं। उनकी साधना शमशान में शवों के पास की जाती है, जहाँ रक्त, खोपड़ी, और रात्रिकालीन साधना पद्धतियों का उपयोग होता है। तारा, जिन्हें 'संकट मोचक 'और 'तारक मंत्र 'की दायिनी कहा जाता है, वे मृत्यु के क्षणों में साधक को 'ॐ 'के स्वरूप में परमगति प्रदान करती हैं। उनकी साधना

ध्यान, नादयोग और मंत्रोच्चारण से होती है, जिसमें वाणी और प्रज्ञा के द्वार खुलते हैं।

छिन्नमस्ता, एक अत्यंत रहस्यमयी और विकराल देवी हैं, जो अपने ही सिर को काटकर आत्मत्याग और अहंकार विनाश की शिक्षा देती हैं। उनकी साधना साधक को 'मैं 'से मुक्त कर 'शून्यता ' की ओर ले जाती है। धूमावती, वृद्धा देवी मानी जाती हैं जो अकेलेपन, शून्यता, और अभाव की शिक्षिका हैं। अघोरी, जब संसार से पूरी तरह कट जाते हैं, तब धूमावती की साधना करते हैं ताकि वे जीवन के अंतिम यथार्थ-निर्विकल्प शांति-का अनुभव कर सकें। मातंगी, वाणी और अंतःप्रज्ञा की देवी हैं। उनकी साधना साधक के चित्त को स्थिर करती है, और उसे ब्रह्मवाणी से जोड़ती है।

इन सभी देवियों की पूजा अत्यंत गोपनीय, गुरु-दत्त और दीक्षित साधकों द्वारा ही की जाती है। उनकी साधना में रक्त, राख, अस्थियाँ, और शवों का प्रयोग प्रायः अनिवार्य होता है। इन देवियों का प्रत्येक स्वरूप जीवन के किसी एक मानसिक अथवा चेतनात्मक क्षेत्र की सीमाओं को तोड़ता है। भैरवी इनमें केंद्र में स्थित रहती हैं-वे शक्ति का आधार हैं, जबकि अन्य देवियाँ उसके विविध रूपों का विस्तार करती हैं। अघोरी, इन देवियों के माध्यम से न केवल अपने जीवन के अवरोधों को काटते हैं, बल्कि आत्मा की यात्रा को अनेक पगों में विभाजित कर, हर एक पग में एक देवी की कृपा का अनुभव करते हैं। इस प्रकार, भैरवी को केंद्र में रखकर अघोरी साधक अन्य देवियों

को सहायक शक्तियों के रूप में ग्रहण करते हैं, जिससे उनकी साधना एक बहुआयामी और बहुस्तरीय प्रक्रिया में बदल जाती है।

प्रतीकात्मक विश्लेषण: विभिन्न देवियों के प्रतीकों की तुलना

तांत्रिक साधना प्रतीकों की भाषा में होती है-प्रतीक वे रहस्यमयी उपकरण हैं जो साधक को बाह्य संसार से भीतर की चेतना की ओर ले जाते हैं। इन प्रतीकों का चयन देवियों के स्वरूपों से होता है, और हर एक प्रतीक साधक के मनोविज्ञान, अनुभव और आत्मबोध को रूपांतरित करने की सामर्थ्य रखता है। भैरवी के प्रतीक-शमशान, त्रिनेत्र, शव, खप्पर, रक्त और रात्रि-साधक को आत्म-विश्लेषण, भय-मुक्ति और अंतर्दृष्टि के पथ पर ले जाते हैं। उनका त्रिनेत्र साधक को बाह्य दृश्य से हटाकर आत्मदर्शन की ओर प्रेरित करता है। खप्पर, जो मृत्यु और त्याग का प्रतीक है, उसे बताता है कि जीवन की पूर्णता त्याग में है, संग्रह में नहीं। शमशान भैरवी की उपस्थिति, साधक को मृत्यू से साक्षात्कार कराती है और चेतना के उस तल पर पहुँचाती है जहाँ सब द्वैत विलीन हो जाता है।

काली के प्रतीकों में उनके रक्तरंजित शरीर, कटे हुए सिर, विकराल जिव्हा, और नग्नता प्रमुख हैं। ये प्रतीक साधक को समय और माया के भ्रम से बाहर निकालते हैं और उसे उस निर्विकल्प सच्चाई से परिचित कराते हैं जहाँ केवल अस्तित्व शेष रहता है। उनकी विकरालता साधक को झकझोरती है, उसकी छिपी हुई वासनाओं, डर और मोह को बाहर लाती है। तारा, एक मातृतुल्य

देवी हैं-उनकी मुद्रा रक्षण की होती है। वे अपने प्रतीक रूप में नील वर्ण, चंद्रमा के मुकुट, और 'तारक मंत्र 'के स्पंदन से साधक को मृत्यु के भय से बचाकर शांतिपूर्ण मुक्ति की ओर ले जाती हैं। तारा के प्रतीकों में मृत्यु को पार करने की मिठास और करुणा का स्पर्श होता है।

छिन्नमस्ता का प्रतीक-अपने ही कटे हुए सिर से बहता रक्त-उस अत्यधिक साहस, आत्मत्याग और अहंकार विनाश का प्रतिनिधित्व करता है जो अघोरी साधना के अत्यंत उन्नत चरण में आवश्यक होता है। वे दर्शाती हैं कि 'मैं 'का समर्पण ही मोक्ष की कुंजी है। धूमावती, जिनका स्वरूप वृद्धा, अश्रृंगारित और एकाकी होता है, जीवन की उस अवस्था को प्रतीक रूप में प्रकट करती हैं जहाँ मोह, आकर्षण और आनंद सब पीछे छूट जाते हैं और केवल निर्विचार शांति शेष रह जाती है।

इन सभी प्रतीकों का तुलनात्मक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि भैरवी के प्रतीक जहाँ साधक के भीतर की गति को स्थिर करते हैं और उसे संयमित आत्मबोध की ओर ले जाते हैं, वहीं अन्य देवियों के प्रतीक उसे झकझोरते हैं, गति देते हैं, और उसके भीतर छिपी तमस को प्रकट कर उसे शुद्ध करते हैं। यही कारण है कि भैरवी के प्रतीक, विशेष रूप से शव, त्रिनेत्र और शमशान, अघोरी साधना के सबसे गहन और आंतरिक स्तर पर प्रभाव डालते हैं। वे प्रतीक नहीं,

साधना के जीवित द्वार हैं-जिनके माध्यम से साधक मृत्यु के गर्त में उतरकर मोक्ष के शिखर तक पहुँचता है।

काली और भैरवी के बीच संबंध

शमशान भैरवी और काली दोनों ही महाविद्याओं के ऐसे स्वरूप हैं, जो तंत्र साधना की सबसे रहस्यमयी, प्रचंड और उदात्त धाराओं से जुड़े हैं। ये दोनों देवियाँ केवल शक्तिस्वरूपा नहीं, बल्कि अद्वैत दर्शन की जीवंत अभिव्यक्तियाँ हैं, जिनका लक्ष्य साधक को मृत्यु, समय और अहंकार के परे ले जाकर ब्रह्म-साक्षात्कार की अवस्था तक पहुँचाना है। काली का स्वरूप अत्यंत उग्र है-वे संहार और काल की मूर्तिमान देवी मानी जाती हैं। उनका काला रंग अज्ञान, भय और भ्रम की समाप्ति का प्रतीक है; वे नग्न हैं, जिनका अर्थ है माया से मुक्त स्वरूप; और उनकी रक्तरंजित जिव्हा यह स्पष्ट करती है कि वे अहंकार, लोभ और राग को निगलने वाली शक्ति हैं। वे समय की अंतिम सीमा पर स्थित हैं, जहाँ जन्म और मृत्यु की पुनरावृत्ति रुक जाती है।

वहीं भैरवी, विशेषतः शमशान भैरवी, इस संहारक ऊर्जा का तंत्र रूप हैं, जो शमशान की ऊर्जा को आत्मसात कर साधक को मृत्यु के सत्य से साक्षात्कार कराती हैं। उनका स्वरूप काली से अधिक संयमी, मौन और स्थिर होता है। वे चैतन्य के उस स्तर की प्रतिनिधि हैं जहाँ मृत्यु का भय साधना का उपकरण बन जाता है। काली का जहाँ स्वरूप अधिक सार्वभौमिक और कालातीत है, वहीं

भैरवी अधिक व्यक्तिगत और साधक-केंद्रित चेतना को जाग्रत करती हैं। भैरवी, भैरव की शक्तिस्वरूपा हैं, और उनके दर्शन में तांडव की उग्रता के भीतर एक गहरी आंतरिक शांति की अनुभूति होती है। काली के चरणों में साधक आत्मदान करता है, जबकि भैरवी के पास पहुँचने के लिए उसे अपने मन, वासना और भय का संपूर्ण विसर्जन करना होता है।

इस तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि काली और भैरवी, यद्यपि तांत्रिक चेतना के अलग-अलग आयामों को दर्शाती हैं, परंतु दोनों का अंतिम लक्ष्य एक ही है-साधक को मोक्ष, ब्रह्मानुभूति और अद्वैत की स्थिति में प्रतिष्ठित करना। काली, साधक को उसकी सीमाओं से परे ले जाकर उसे 'शिव 'से एकाकार कराती हैं, जबकि भैरवी उसे शून्यता के भीतर से प्रकाश निकालने की प्रेरणा देती हैं। काली की साधना जहाँ क्रांतिकारी ऊर्जा से ओतप्रोत होती है, वहीं भैरवी की साधना गंभीर, मौन और धैर्यपूर्वक चेतना को आत्मसात करने की प्रक्रिया है। दोनों देवियाँ तंत्र की अद्वितीय ध्रुवताएँ हैं-एक त्वरित परिवर्तन की अग्नि, दूसरी स्थिर ध्यान की ज्वाला।

दुर्गा और भैरवी के बीच तुलनात्मक दृष्टांत

दुर्गा और भैरवी, दोनों ही शक्ति की अत्यंत सम्मानित और प्रभावशाली रूप हैं, लेकिन इन दोनों के स्वरूप, साधना, और साधक पर पड़ने वाले प्रभावों में अत्यंत सूक्ष्म और महत्वपूर्ण भिन्नताएँ हैं। दुर्गा, सामान्यतः शाक्त परंपरा की लोकस्वीकृत देवी मानी जाती हैं-

वे समस्त दैत्यों और पापियों का विनाश करती हैं और धर्म, न्याय एवं मर्यादा की रक्षा करती हैं। उनका स्वरूप एक माँ का है, जिनकी नौ रूपों में उपासना होती है-शैलपुत्री से सिद्धिदात्री तक-और उनकी पूजा समाज के हर वर्ग में, विशेषतः नवरात्र में बड़े आदर के साथ होती है। वे सत्व, रज और तम के संतुलन की अधिष्ठात्री हैं, जो जीवन के हर क्षेत्र में सामंजस्य और उन्नति का प्रतीक बनती हैं।

दूसरी ओर, भैरवी, विशेषतः अघोरी परंपरा में, उस चेतना की अधिष्ठात्री हैं जो साधक को बाह्य जीवन से तोड़कर उसके आंतरिक सत्य के निकट ले जाती हैं। उनका स्वरूप भयावह होते हुए भी करुणामयी है। वे वह शक्ति हैं जो साधक को मृत्यु की भट्ठी में झोंकती हैं ताकि वह अपने भ्रम, मोह और शरीर की सीमाओं को पार कर सके। भैरवी की साधना में न पुष्प होते हैं, न घंटियाँ; वहाँ होता है शव, राख, और त्रिनेत्र की अंतर्दृष्टि। वे समाज के द्वारा अस्वीकार्य साधनाओं-जैसे शवसाधना, भस्मतिलक और खोपड़ी हवन-की अधिष्ठात्री हैं। उनकी साधना साधक को सामाजिक पहचान से दूर कर आत्मिक पहचान की ओर ले जाती है।

दुर्गा, अघोरी साधकों के लिए बाह्य बल, सुरक्षा और सामूहिक संघर्ष की प्रतीक हैं। जब अघोरी को समाज के विरुद्ध लड़ाई लड़नी होती है-शोषण, अन्याय, या दैहिक संकटों से-तो वह दुर्गा की आराधना करता है। वहीं जब वह आत्मसंशोधन, मृत्यु-दर्शन, और शमशान की साधना में प्रवेश करता है, तो भैरवी उसकी मार्गदर्शक

बनती हैं। दुर्गा की पूजा में यज्ञ, दीप, फूल, और व्रत शामिल होते हैं; वहीं भैरवी की पूजा में रात्रिकालीन साधना, मौन, शारीरिक संयम, और मानसिक विसर्जन आवश्यक होते हैं।

दुर्गा और भैरवी दो विभिन्न आयामों की शक्ति हैं-दुर्गा समाज के भीतर शक्ति-संरचना की देवी हैं, जबकि भैरवी आत्मा के भीतर मृत्यु और मोक्ष के मध्य चलने वाली गहन साधना की प्रतिनिधि। दुर्गा बाह्य संसार में शक्ति का संतुलन देती हैं, और भैरवी साधक के भीतर स्थित अंधकार को प्रकाश में रूपांतरित करती हैं। यह तुलनात्मक दृष्टांत दर्शाता है कि अघोरी साधना केवल शक्ति की उपासना नहीं है, बल्कि शक्ति के विभिन्न आयामों-सामाजिक और आत्मिक-की संतुलित अनुभूति है।

धूमावती और भैरवी का गूढ़ संबंध

महाविद्याओं में धूमावती और भैरवी, दोनों ही ऐसे स्त्री शक्ति स्वरूप हैं जो पारंपरिक देवी-धारणाओं से पूर्णतः भिन्न और तंत्र परंपरा में विशेष स्थान रखने वाली चेतनाएँ हैं। धूमावती को सप्तवीं महाविद्या के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है और उनका स्वरूप “विधवा देवी” के रूप में जाना जाता है-वे उन तमाम अवधारणाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं जिन्हें समाज वर्जित, त्याज्य या अशुभ मानता है। उनका वाहन कौआ, स्वरूप वृद्धा, और स्थिति शमशान-ये सब मृत्यु, त्याग, शून्यता, और एकांत के प्रतीक हैं। वहीं शमशान भैरवी, जिनका स्वरूप शव पर ध्यानस्थ, त्रिनेत्रधारी और भस्मलेपित

होता है, उस तांत्रिक शक्ति का मूर्त रूप हैं जो मृत्यु और भय को चेतना की सर्वोच्च परीक्षा में बदल देती है। यदि धूमावती ‘अभाव ’ की देवी हैं, तो भैरवी ‘संहार के भीतर विद्यमान चेतना ’की देवी मानी जाती हैं।

इन दोनों के बीच का संबंध केवल शमशान या मृत्यु तक सीमित नहीं है, बल्कि यह गूढ़ स्तर पर उस अस्तित्व संबंधी समझ को प्रकट करता है जिसमें जीवन, मृत्यु और पुनर्जन्म एक ही चक्र के भिन्न चरण बन जाते हैं। धूमावती साधक को एक लंबी, मौन और निर्विचार अवस्था में डालती हैं, जहाँ उसे आत्मा के सत्य स्वरूप की खोज करनी होती है। वे प्रतीक्षा की देवी हैं-उस काल की प्रतीक, जब सबकुछ समाप्त हो चुका हो और कुछ भी नया जन्म लेने से पहले की स्थिति बनी हो। वहीं भैरवी इस प्रतीक्षा को क्रिया में बदल देती हैं-वे साधक को तीव्र गति से मृत्यु के दर्शन में धकेलती हैं ताकि वह उससे डरने की बजाय उसका अनुभव करके उससे ऊपर उठ सके। धूमावती की साधना आत्मा के धूम्ररूप से जुड़ाव की साधना है-जहाँ स्पष्टता नहीं होती, केवल धुंध होती है-और उस धुंध में साधक अपने वास्तविक स्वरूप को खोजता है। भैरवी की साधना उस बिंदु पर होती है जहाँ सब धुंध हट चुकी होती है और साधक अपनी मृत्यु के ठीक सामने खड़ा होता है।

इस गूढ़ संबंध का गहरा आयाम यह है कि धूमावती और भैरवी दोनों ही उस मोड़ पर साधक का परीक्षण करती हैं जहाँ कोई

सामाजिक ढाँचा, नैतिकता या धार्मिक चिह्न सहारा नहीं देता। साधक को अपने अस्तित्व की परतों को धीरे-धीरे खोलकर उस कड़वी, भयावह, और असहज वास्तविकता से गुजरना होता है जिसे तंत्र मार्ग में 'तमो-प्रकाश 'कहा गया है-वह अंधकार जिससे गुजरकर ही प्रकाश की अनुभूति संभव है। भैरवी की साधना जहाँ तीव्र, उग्र और भेदक होती है, वहीं धूमावती की साधना धीमी, मौन और धैर्यपूर्ण होती है। परंतु दोनों ही साधनाएँ साधक को एक ही बिंदु पर पहुँचा देती हैं-मृत्यु को साध्य और आत्मा को साधक के रूप में देखने की क्षमता, जो अंततः मोक्ष की ओर ले जाती है।

अघोर साधना में भैरवी के गूढ़ संकेत और प्रतीक

शमशान भैरवी की अघोर साधना का केंद्र बिंदु उन प्रतीकों और संकेतों की भाषा है जो बाह्य रूप में देखने पर अराजक, भयानक और अस्वीकार्य प्रतीत होते हैं, परंतु तांत्रिक दृष्टिकोण से वे ब्रह्मांडीय रहस्य और आत्म-परिवर्तन के उपकरण हैं। अघोरियों की साधना में प्रयुक्त वस्तुएँ-भस्म से लिप्त शरीर, खोपड़ी की माला, त्रिशूल, शव, अग्निकुंड, चिता की राख, मृत शरीर की हड्डियाँ, कपाल से बना पात्र-इनमें से प्रत्येक प्रतीक साधक के भीतर एक विशिष्ट भाव को जाग्रत करता है। उदाहरण स्वरूप, खोपड़ी केवल मृत्यु की वस्तु नहीं, बल्कि ब्रह्मांड की शून्यता का वह पात्र है, जिसमें आत्मा के अनुभव की सबसे स्पष्ट गूंज सुनाई देती है। जब साधक उसी खोपड़ी में प्रसाद

अर्पण करता है, या उसी से भैरवी को नैवेद्य समर्पित करता है, तब वह अपने 'स्व 'को मृत्यु के हाथों सौंप देता है।

भैरवी की त्रिनेत्री दृष्टि का प्रतीक उस अंतर्दृष्टि का द्योतक है, जो भूत, भविष्य और वर्तमान को एकत्र कर साधक को आत्मसाक्षात्कार की अवस्था में पहुँचाती है। त्रिशूल का अर्थ केवल मारण नहीं, बल्कि साधक के भीतर तीन दोष-राग, द्वेष और मोह-को नष्ट करना है। चिता की लकड़ी से बनायी गई यज्ञ वेदी मृत्यु के मंच का प्रतिनिधित्व करती है, जहाँ जीवन को त्यागकर साधक चेतना की अग्नि में तपता है। भस्म, जो श्मशान की राख है, जब शरीर पर लगाई जाती है तो यह दर्शाता है कि शरीर नश्वर है और अंततः राख ही बनना है-यह स्मृति साधक के भीतर वैराग्य उत्पन्न करती है। रक्त तिलक या शव पर बैठकर ध्यान करना, भैरवी के प्रतीकवाद की सबसे गहन विधियों में से हैं-यह साधक को शरीर के भय और सामाजिक नियंत्रणों से मुक्त कर ब्रह्मचेतना की ओर धकेलते हैं।

ये सभी प्रतीक केवल वस्तुएँ नहीं, बल्कि एक गूढ़ भाषा हैं-'तांत्रिक कोड'-जिन्हें साधक तभी समझ सकता है जब वह गुरु से दीक्षित हो और पूरी श्रद्धा, साहस और तप के साथ साधना में प्रविष्ट हो। अघोरी परंपरा में यह विश्वास है कि हर प्रतीक ब्रह्मांड के किसी रहस्य को छिपाए हुए है, और केवल आत्मानुभव के द्वारा ही उसकी गूढ़ता को समझा जा सकता है। गुरु की भूमिका यहाँ अमूल्य होती

है, क्योंकि वही साधक को इन प्रतीकों के बाह्य स्वरूप से निकालकर उनके अंतःतत्त्व से जोड़ता है। इस प्रकार शमशान भैरवी की साधना में प्रयुक्त प्रतीक और संकेत साधक को मृत्यु के पार, चेतना की उस अवस्था में ले जाते हैं जहाँ केवल आत्मा शेष रहती है-जो नश्वर नहीं, केवल ब्रह्मस्वरूप होती है। यही भैरवी के प्रतीकों की गूढ़ता है-वे मृत्यु की भाषा में मोक्ष का पाठ पढ़ाते हैं।

भैरवी साधना में समय, स्थान और मुहूर्त की निर्णायक भूमिका

अघोरी साधना में शमशान भैरवी की उपासना केवल तांत्रिक विधियों या मानसिक एकाग्रता का अभ्यास भर नहीं होती, बल्कि वह पूर्ण ब्रह्मांडीय लय के साथ जुड़ी हुई एक अत्यंत संगठित प्रक्रिया होती है, जिसमें समय, स्थान और मुहूर्त की निर्णायक भूमिका होती है। साधक के लिए यह तीनों तत्व केवल साधारण तिथि या स्थल नहीं, बल्कि जीवित, ऊर्जा-संपन्न द्वार होते हैं-जिनके माध्यम से वह भैरवी के तात्त्विक स्वरूप से साक्षात्कार कर सकता है। अघोरी परंपरा में माना जाता है कि यदि साधना में समय चूका या स्थान असंगत हुआ, तो साधक की चेतना विक्षिप्त हो सकती है और उसका अनुभव पूर्णतः विकृत या बाधाग्रस्त हो सकता है।

भैरवी की साधना के लिए विशेष कालखंड-जैसे अमावस्या, पूर्णिमा, चतुर्दशी, ग्रहण काल, या शनिवार और मंगलवार का संयोग-को विशेष रूप से उपयोगी माना गया है। ये वे क्षण होते हैं जब ब्रह्मांडीय ऊर्जा विशेष रूप से पृथ्वी पर प्रवाहित होती है और

सूक्ष्म लोकों की परतें पतली होकर मानव चेतना से संपर्क में आ जाती हैं। इन संधि-क्षणों में रात्रि का तीसरा प्रहर, जिसे काल बेला कहा जाता है, विशेष रूप से शक्तिशाली होता है। यही वह समय है जब शमशान की ऊर्जा प्रचंडतम होती है और भैरवी का आवाहन सबसे प्रभावी रूप से किया जा सकता है। अघोरी साधक इस काल में शव के समीप, नीरवता और अंधकार के बीच ध्यानस्थ होता है, जहाँ आत्मा, देह और मन सभी पूर्ण समर्पण की स्थिति में प्रवेश करते हैं।

स्थान की दृष्टि से शमशान न केवल आवश्यक है, बल्कि साधना का केंद्र बिंदु होता है। सामान्य लोगों के लिए जहाँ शमशान भय का प्रतीक है, अघोरियों के लिए वह चेतना का शुद्धतम स्रोत होता है। विशेष रूप से वे श्मशान जो सदैव सक्रिय रहते हैं-जहाँ शवों का नियमित दाह-संस्कार होता है-उन्हें उच्चतम साधना स्थल माना जाता है। वहाँ की भस्म, चिता की गर्मी, और मृत्यु की निरंतर उपस्थिति साधक को बार-बार उसकी नश्वरता की याद दिलाती है और उसे अपने भीतर की चेतना को जाग्रत करने में सहायता करती है। वहीं, मुहूर्त का निर्धारण गुरु की विशेष भूमिका में आता है, जो साधक की कुंडली, मनोबल, तंत्र योग्यता और आत्मिक परिपक्वता को देखकर विशेष समय निर्धारित करता है। यह मुहूर्त केवल पंचांग की गणना नहीं होती, बल्कि यह साधक और देवी के बीच एक अदृश्य संवाद का क्षण होता है-जहाँ ब्रह्मांड के संकेतों को गुरु पढ़ता है और साधक को प्रवृत्त करता है।

यदि समय, स्थान और मुहूर्त में त्रुटि होती है, तो यह साधक के लिए भटकाव, भ्रम या आंतरिक विकृति का कारण बन सकती है। इसलिए अघोरी साधना में ये तीनों तत्व 'त्रिविध द्वार 'माने जाते हैं, जिनसे होकर साधक को भैरवी की चेतना में प्रवेश करना होता है। यह प्रवेश तभी सफल होता है जब साधक ब्रह्मांड के स्पंदनों से पूर्ण समन्वय में होता है। भैरवी की साधना में यह समन्वय केवल तकनीकी अनुष्ठान नहीं, बल्कि एक आध्यात्मिक-सांगीतिक प्रक्रिया है-जिसमें समय सुर है, स्थान ताल है, और मुहूर्त लय है-और जब यह तीनों एकाकार होते हैं, तब ही देवी की उपस्थिति प्रत्यक्ष अनुभव की जा सकती है।

अघोरी साधना में भैरवी का तात्त्विक रूप और चेतना विस्तार

भैरवी का तात्त्विक स्वरूप अघोरी साधना में केवल एक देवीमूर्ति का दर्शन नहीं, बल्कि वह चेतनात्मक स्थिति है जहाँ साधक अपनी समस्त सीमाओं, भयों और भ्रमों से मुक्त होकर ब्रह्मतत्त्व से एकाकार हो जाता है। शमशान भैरवी का यह स्वरूप अघोरियों के लिए एक जीवंत ऊर्जा-क्षेत्र होता है-जिसमें प्रवेश करते ही साधक की आत्मा, देह और मन तीनों भस्म होते हैं, और एक नवीन, जाग्रत, अलौकिक चेतना का जन्म होता है। इस स्थिति में भैरवी, न केवल साधना की अधिष्ठात्री होती हैं, बल्कि स्वयं साधना बन जाती हैं। उनके दर्शन, मंत्र, स्वरूप और प्रतीक-सभी साधक के भीतर ही घटित होने लगते हैं।

अघोरी परंपरा में जब कोई साधक भैरवी का आह्वान करता है, तो वह मात्र पूजन नहीं कर रहा होता-वह अपने अहंकार, वासना,

भय और स्मृति को चिता की अग्नि में स्वेच्छा से समर्पित कर रहा होता है। यह आह्वान शारीरिक नहीं, बल्कि आत्मिक बलिदान की प्रक्रिया है। भैरवी के तात्त्विक रूप को अनुभव करने के लिए साधक को अपने अस्तित्व की तीन परतों-देह, मन और आत्मा-को एक साथ विसर्जित करना होता है। जब वह शव के समीप बैठकर ध्यान करता है, तब उसकी चेतना भैरवी के तत्त्व में प्रविष्ट होती है, जो अग्नि की तरह दाहक भी है और अमृत की तरह आश्वस्त भी।

भैरवी का यह तात्त्विक रूप अग्नि के समान है-वह साधक के दोषों को जलाती है, उसकी सीमाओं को भस्म करती है और अंत में उसे शुद्ध चेतना में परिवर्तित कर देती है। यह अनुभव साधक को 'व्यष्टि 'से निकालकर 'समष्टि 'की ओर ले जाता है-जहाँ वह स्वयं को केवल आत्मा नहीं, बल्कि ब्रह्मांडीय ऊर्जा का अंश समझने लगता है। उस अवस्था में भूतकाल की स्मृति और भविष्य की आशंका समाप्त हो जाती है-केवल वर्तमान का तीव्रतम अनुभव शेष रहता है, जो 'शिव 'और 'शक्ति 'के संयोग का मूल है। भैरवी उस संयोग की भौतिक नहीं, चेतनात्मक अभिव्यक्ति होती हैं।

जब यह चेतना स्थायी हो जाती है, तब साधक भैरवी को बाहर नहीं, अपने भीतर देखता है। वह प्रत्येक ध्वनि, प्रत्येक श्वास, प्रत्येक दृष्टि में भैरवी के तत्त्व को पहचानने लगता है। यह स्थिति वही है जो अघोरी साधना का चरम लक्ष्य है-भैरवी के साथ तादात्म्य। यहाँ न कोई पूजा शेष रहती है, न कोई मंत्र। केवल अनुभव, केवल एकत्व,

केवल भैरवी ही शेष रहती हैं-जो साधक की आत्मा में अनंत काल तक प्रतिष्ठित हो जाती हैं। इसी अवस्था को 'भैरवी में स्थायी विलय' कहा जाता है-जो केवल दीक्षित अघोरी साधकों की परम साधना का फल है।

अध्याय 7: नग्नता और अर्धनग्नता में शमशान भैरवी की मूर्तियाँ: सामाजिक और तांत्रिक विमर्श

नग्नता का प्रतीकात्मक अर्थ

शमशान भैरवी की नग्न मूर्तियाँ तांत्रिक और अघोरी परंपरा में एक गहरा प्रतीकात्मक अर्थ रखती हैं, जो वासना या अश्लीलता से कोसों दूर है। ये मूर्तियाँ पूर्ण वैराग्य, शुद्धता, और ब्रह्मांडीय सत्य का प्रतिनिधित्व करती हैं, जो साधक को सामाजिक बंधनों और माया से मुक्ति की ओर ले जाती हैं। तांत्रिक दर्शन, विशेष रूप से शक्ति उपासना में, नग्नता को शरीर के प्राकृतिक स्वरूप को स्वीकार करने और इसके पार जाकर आत्मा की शुद्धता को उजागर करने का प्रतीक माना जाता है। कुलार्णव तंत्र जैसे ग्रंथों में उल्लेखित है कि भैरवी, शमशान की अधिपति के रूप में, सभी भौतिक आवरणों-जैसे वस्त्र, लज्जा, और सामाजिक मान्यताएँ-को त्यागकर साधक को ब्रह्म की एकता का दर्शन कराती हैं। शमशान में, चिताओं की लपटों और राख के बीच, भैरवी की नग्नता साधक को उस सत्य का साक्षात्कार कराती है, जो सभी कुछ को धूल में बदल देता है।

यह नग्नता अघोरी साधना में एक आध्यात्मिक क्रांति का प्रतीक है, जो साधक को सामाजिक संरचनाओं-जैसे जाति, वर्ग, और नैतिकता-से मुक्त करने का मार्ग प्रशस्त करती है। अघोरियों के

लिए, वस्त्र और सांसारिक अलंकरण माया के आवरण हैं, जो आत्मा को सत्य से दूर रखते हैं। नग्नता का यह रूप साधक को यह सिखाता है कि सच्चा वैराग्य तभी प्राप्त होता है जब वह अपने शरीर और मन को प्राकृतिक रूप में स्वीकार करे और इनसे परे की चेतना की ओर बढ़े। शमशान, जहाँ मृत्यु की ऊर्जा सर्वव्यापी है, इस नग्नता को और गहरा अर्थ प्रदान करता है, क्योंकि यहाँ साधक मृत्यु के भय से मुक्त होकर अपनी शाश्वत पहचान का अनुभव करता है। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह केवल चेतना, केवल उपस्थिति, केवल होने की अवस्था में रहता है।

सामाजिक संदर्भ में, भैरवी की नग्न मूर्तियाँ अक्सर विवाद का कारण बनी हैं, लेकिन तांत्रिक व्याख्या में यह एक पवित्र और उदात्त अवधारणा है। यह नग्नता साधक को यह सिखाती है कि शुद्धता और सत्य की प्राप्ति के लिए बाहरी आवरणों का त्याग अनिवार्य है। शमशान में, जहाँ चिताओं की राख और मृत्यु की गंध साधक को जीवन की माया से मुक्त करती है, भैरवी की नग्नता साधक को ब्रह्म की एकता का साक्षात्कार कराती है। यह प्रक्रिया साधक को यह समझाती है कि सच्चा आध्यात्मिक मार्ग वही है, जो सभी द्वैतों-शुद्ध और अशुद्ध, जीवन और मृत्यु-से परे है। तांत्रिक साधना में, नग्नता को एक शक्ति संचय का साधन भी माना जाता है, जो साधक की कुंडलिनी ऊर्जा को जागृत करता है और उसे सहस्रार तक ले जाता है। यह साधना साधक को उस अनंत चेतना से जोड़ती है, जो भैरवी का स्वरूप है।

भैरवी की नग्न मूर्तियाँ अघोरी साधना में एक ध्यान केंद्र के रूप में भी कार्य करती हैं, जो साधक को अपनी आंतरिक शक्ति और वैराग्य की ओर ले जाती हैं। यह नग्नता साधक को यह सिखाती है कि शरीर और वस्त्र केवल माया के अस्थायी आवरण हैं, और सच्चा ज्ञान तभी प्राप्त होता है जब ये आवरण हटाए जाएँ। शमशान में, जहाँ मृत्यु की ऊर्जा साधक को जीवन की माया से मुक्त करती है, भैरवी की नग्नता साधक को इस एकत्व का साक्षात्कार कराती है। यह प्रक्रिया साधक को यह सिखाती है कि सच्चा आध्यात्मिक मार्ग वही है, जो सभी भौतिक और मानसिक बंधनों से मुक्त होकर ब्रह्म की शाश्वत प्रकृति का अनुभव करता है।

आत्मज्ञान का मार्ग

शमशान भैरवी की नग्न मूर्तियाँ साधकों को आत्मज्ञान के मार्ग पर ले जाने का एक शक्तिशाली प्रतीक हैं, जो उन्हें शरीर, लज्जा, और समाज की सीमाओं का त्याग करने की प्रेरणा देती हैं। तांत्रिक दर्शन में, आत्मज्ञान (आत्मा का साक्षात्कार) की प्राप्ति के लिए साधक को अपने भौतिक स्वरूप से परे जाकर आत्मा के शुद्धतम स्वरूप को पहचानना होता है। नग्नता का यह रूप साधक को यह सिखाता है कि वस्त्र और सामाजिक मान्यताएँ माया के आवरण हैं, जो आत्मा को सत्य से दूर रखते हैं। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति पूजा में नग्नता आत्म-त्याग और ब्रह्म के साथ एकाकार होने का प्रतीक है।

इस मार्ग पर आगे बढ़ने के लिए साधक को अपने शरीर को वैराग्य की भावना से अपनाना होता है, न कि इसे एक बाधा के रूप में देखना। भैरवी की नग्नता साधक को यह सिखाती है कि आत्मज्ञान तभी संभव है जब वह अपनी शारीरिक और मानसिक सीमाओं को पार कर ले। अघोरी साधना में, शमशान में शव साधना और मंत्र जाप के माध्यम से साधक अपनी लज्जा और भय को त्यागता है, जो उसे ब्रह्म की एकता का साक्षात्कार कराता है। शक्ति की मूर्तियों में नग्नता साधक की कुंडलिनी ऊर्जा को जागृत करने का एक साधन है, जो सहस्रार तक पहुँचकर आत्मज्ञान प्रदान करती है। शमशान, जहाँ मृत्यु की ऊर्जा साधक को जीवन की माया से मुक्त करती है, इस साधना को और गहरा अर्थ प्रदान करता है। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह केवल चेतना, केवल उपस्थिति, केवल होने की अवस्था में रहता है।

आत्मज्ञान का यह मार्ग अघोरी साधना में एक क्रांतिकारी परिवर्तन लाता है, जो साधक को अपनी नग्न आत्मा से जोड़ता है। भैरवी की नग्न मूर्ति साधक को यह सिखाती है कि सच्चा ज्ञान केवल बाहरी अनुष्ठानों में नहीं, बल्कि आंतरिक वैराग्य और समर्पण में निहित है। भैरवी की नग्नता साधक को ब्रह्म की शाश्वत प्रकृति का साक्षात्कार कराती है। यह प्रक्रिया साधक को यह सिखाती है कि आत्मज्ञान का मार्ग वही है, जो सभी भौतिक और मानसिक बंधनों से मुक्त होकर आत्मा की शुद्धता को प्राप्त करता है।

अर्धनग्नता की मध्य अवस्था

शमशान भैरवी की अर्धनग्न मूर्तियाँ तांत्रिक और अघोरी दर्शन में एक विशेष मध्यवर्ती अवस्था का प्रतीक हैं, जो साधक की उस स्थिति को दर्शाती है जो मुक्ति की ओर बढ़ रही है, किंतु अभी संसार से पूरी तरह मुक्त नहीं हुई है। यह रूप द्वैत और अद्वैत के बीच की संक्रमणकालीन अवस्था को व्यक्त करता है, जहाँ साधक अपने आंतरिक और बाहरी स्वरूप के बीच संतुलन बनाए रखने का प्रयास करता है। तांत्रिक ग्रंथों, जैसे कुलार्णव तंत्र, में इस अवस्था को साधक की आध्यात्मिक यात्रा का एक महत्वपूर्ण चरण माना गया है, जहाँ वह माया के बंधनों को धीरे-धीरे तोड़ते हुए ब्रह्म की ओर अग्रसर होता है।

अर्धनग्नता का यह रूप साधक को यह सिखाता है कि मुक्ति एक तात्कालिक प्रक्रिया नहीं, बल्कि एक क्रमिक विकास है, जिसमें वह अपने अहं और सामाजिक पहचान को धीरे-धीरे त्यागता है। यह अवस्था साधक के लिए एक दर्पण की तरह कार्य करती है, जो उसे अपनी अधूरी साधना की ओर संकेत करती है और उसे आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है। अघोरी साधना में, शमशान में शव साधना और मंत्र जाप के दौरान, साधक इस मध्य अवस्था को अनुभव करता है, जहाँ वह अभी भी संसार के कुछ पहलुओं से जुड़ा है, किंतु आत्म-साक्षात्कार की ओर अग्रसर है। शक्ति की मूर्तियों में अर्धनग्नता साधक की कुंडलिनी ऊर्जा के जागरण का प्रतीक है, जो

मूला धार से शुरू होकर हृदय और आज्ञा चक्र तक पहुँचती है, किंतु अभी सहस्रार तक पूरी तरह नहीं पहुँच पाती। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह केवल चेतना, केवल उपस्थिति, केवल होने की अवस्था में रहता है।

अर्धनग्नता की यह मध्य अवस्था अघोरी साधना में एक ध्यान केंद्र के रूप में भी कार्य करती है, जो साधक को अपनी आंतरिक शक्ति और वैराग्य की ओर ले जाती है। यह रूप साधक को यह सिखाता है कि शरीर और वस्त्र केवल माया के अस्थायी आवरण हैं, और सच्चा ज्ञान तभी प्राप्त होता है जब ये आवरण धीरे-धीरे हटाए जाएँ। शमशान में, जहाँ मृत्यु की ऊर्जा साधक को जीवन की माया से मुक्त करती है, भैरवी की अर्धनग्नता साधक को इस एकत्व का साक्षात्कार कराती है।

साधक के लिए दर्पण

शमशान भैरवी की अर्धनग्न या नग्न मूर्तियाँ साधक के लिए एक दर्पण की तरह कार्य करती हैं, जो उसकी आध्यात्मिक यात्रा की वर्तमान अवस्था को प्रतिबिंबित करती हैं और उसे आगे बढ़ने की प्रेरणा देती हैं। यह दर्पण साधक की अधूरी साधना को उजागर करता है, जहाँ वह अभी तक माया और अहं के कुछ बंधनों से मुक्त नहीं हो पाया है। तांत्रिक दर्शन में, भैरवी को शक्ति का अवतार माना जाता है, जो साधक को अपनी आंतरिक कमजोरियों और ताकतों को देखने का अवसर प्रदान करती है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि

शक्ति की मूर्तियाँ साधक के आत्म-चिंतन का माध्यम होती हैं, जो उसे अपनी साधना में सुधार करने के लिए प्रेरित करती हैं।

यह दर्पण साधक को यह सिखाता है कि आत्म-साक्षात्कार की यात्रा में आत्म-निरीक्षण और आत्म-शुद्धि आवश्यक हैं। भैरवी की मूर्ति साधक को यह दिखाती है कि जहाँ वह अभी खड़ा है-चाहे वह माया के बंधनों में जकड़ा हो या मुक्ति की ओर बढ़ रहा हो-वहाँ से आगे बढ़ने का मार्ग खुला है। अघोरी साधना में, शमशान में शव साधना के दौरान, साधक इस दर्पण के सामने अपने अहं और भय का सामना करता है, जो उसे ब्रह्म की एकता की ओर ले जाता है।भैरवी की मूर्ति के रूप में यह दर्पण अघोरी साधना में एक ध्यान केंद्र के रूप में भी कार्य करता है, जो साधक को अपनी आंतरिक शक्ति और वैराग्य की ओर ले जाता है। यह रूप साधक को यह सिखाता है कि शरीर और वस्त्र केवल माया के अस्थायी आवरण हैं, और सच्चा ज्ञान तभी प्राप्त होता है जब साधक अपनी साधना की वर्तमान स्थिति को पहचानकर उसे बेहतर करे। शमशान में, जहाँ मृत्यु की ऊर्जा साधक को जीवन की माया से मुक्त करती है।

सामाजिक गलतफहमी

शमशान भैरवी की नग्न और अर्धनग्न मूर्तियाँ सामाजिक संदर्भ में अक्सर गलत समझी जाती हैं, जहाँ इन्हें अश्लीलता या अनैतिकता के रूप में देखा जाता है, जबकि तांत्रिक दृष्टिकोण में ये उच्चतम साधना का प्रतीक हैं। सामान्य समाज में, नग्नता को लज्जा और

वर्जना से जोड़ा जाता है, जो पारंपरिक नैतिकता और धार्मिक मान्यताओं का हिस्सा है। हालाँकि, तांत्रिक और अघोरी परंपरा में, यह नग्नता वैराग्य, शुद्धता, और ब्रह्म की एकता का प्रतीक है, जो साधक को माया से मुक्त करती है। कुलार्णव तंत्र जैसे ग्रंथों में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियों में नग्नता आत्म-त्याग और दिव्य एकाकारता का प्रतीक है, किंतु यह समझ सामाजिक स्तर पर व्यापक रूप से स्वीकार नहीं की जाती।

यह गलतफहमी तब और गहरी हो जाती है जब समाज भैरवी की मूर्तियों को सांस्कृतिक और धार्मिक संदर्भ से हटाकर केवल भौतिक दृष्टि से देखता है। अघोरियों के लिए, ये मूर्तियाँ ध्यान और आत्म-साक्षात्कार का साधन हैं, लेकिन बाहरी दृष्टिकोण उन्हें अपवित्र या अनुचित मानता है। पश्चिमी और पारंपरिक हिंदू समाज में तांत्रिक प्रतीकों की गलत व्याख्या अक्सर होती है, क्योंकि इनका आध्यात्मिक संदर्भ समझा नहीं जाता। शमशान, जो मृत्यु और क्षय का स्थान है, इन मूर्तियों के सांस्कृतिक अर्थ को और जटिल बनाता है, जहाँ समाज इसे भय और अशुद्धता से जोड़ता है, जबकि अघोरी इसे मुक्ति का मार्ग मानते हैं।

सामाजिक गलतफहमी को दूर करने के लिए तांत्रिक दर्शन इस नग्नता को एक आध्यात्मिक प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत करता है, जो साधक को आत्म-शुद्धि और ब्रह्म की एकता की ओर ले जाता है। शमशान में, जहाँ मृत्यु की ऊर्जा साधक को जीवन की माया से मुक्त

करती है, भैरवी की मूर्तियाँ साधक को इस एकत्व का साक्षात्कार कराती हैं। यह प्रक्रिया साधक को यह समझाती है कि सच्चा आध्यात्मिक मार्ग वही है, जो सभी द्वैतों-शुद्ध और अशुद्ध, जीवन और मृत्यु-से परे है। तांत्रिक साधना में, नग्नता को कुंडलिनी जागरण और शक्ति संचय का साधन माना जाता है, जो साधक की चेतना को सहस्रार तक ले जाता है। हालाँकि, समाज इस गहन अर्थ को समझने में असफल रहता है और इसे सतही रूप में देखता है, जो अघोरी परंपरा के प्रति पूर्वाग्रह को बढ़ाता है।

अघोरियों का ध्यान केंद्र

शमशान भैरवी की नग्न और अर्धनग्न मूर्तियाँ अघोरियों के लिए एक शक्तिशाली ध्यान केंद्र हैं, जो उनकी एकाग्रता को बढ़ाने, अहं का विनाश करने, और उन्हें अपनी नग्न आत्मा से जोड़ने में सहायता करती हैं। अघोरी साधना में, ध्यान का उद्देश्य बाहरी दुनिया के शोर से मुक्त होकर आंतरिक चेतना को जागृत करना है, और भैरवी की मूर्तियाँ इस प्रक्रिया में एक प्रेरक स्रोत के रूप में कार्य करती हैं। तांत्रिक ग्रंथों, जैसे कुलार्णव तंत्र, में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक के मन को स्थिर करती हैं और उसे ब्रह्म की एकता का अनुभव कराती हैं। शमशान में, जहाँ चिताओं की लपटों और राख की ऊर्जा साधक को माया से मुक्त करती है, भैरवी की शक्ति साधक को उस सत्य का साक्षात्कार कराती है, जो सभी कुछ को धूल में बदल देता है।

अघोरियों के लिए, भैरवी की नग्नता अहं के विनाश का प्रतीक है, जो साधक को अपनी व्यक्तिगत पहचान-नाम, रूप, और सामाजिक स्थिति-से परे ले जाता है। ध्यान के दौरान, अघोरी भैरवी की मूर्ति पर केंद्रित होकर अपने अहं को शून्य करता है, जो उन्हें आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है। शक्ति की मूर्तियों पर ध्यान कुंडलिनी ऊर्जा को जागृत करता है, जो साधक की चेतना को शुद्ध करती है और उसे सहस्रार तक ले जाती है। शमशान में, जहाँ मृत्यु की ऊर्जा साधक को जीवन की माया से मुक्त करती है, यह ध्यान केंद्र साधक को अपनी नग्न आत्मा-जो सभी आवरणों से मुक्त है-के साथ जोड़ता है। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह केवल चेतना, केवल उपस्थिति, केवल होने की अवस्था में रहता है।

शरीर का तांत्रिक महत्व

शमशान भैरवी की नग्न और अर्धनग्न मूर्तियाँ तांत्रिक दर्शन में शरीर को साधना में एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में प्रस्तुत करती हैं, न कि एक बाधा के रूप में, बशर्ते इसे वैराग्य की भावना से अपनाया जाए। तांत्रिक परंपरा में, शरीर को पंचमहाभूतों (अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी, और आकाश) का एक मंदिर माना जाता है, जो साधक की आध्यात्मिक यात्रा का आधार है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की पूजा में शरीर को एक उपकरण के रूप में प्रयोग किया

जाता है, जहाँ इसके माध्यम से कुंडलिनी ऊर्जा जागृत होती है और साधक को ब्रह्म की एकता का अनुभव होता है।

शरीर का यह तांत्रिक महत्व अघोरी साधना में विशेष रूप से प्रासंगिक है, जहाँ साधक अपने शरीर को वैराग्य और समर्पण के साथ प्रयोग करता है। अघोरियों के लिए, शरीर को शुद्ध करने और इसके पार जाने की प्रक्रिया माया से मुक्ति का मार्ग है। शव साधना और मंत्र जाप के दौरान, साधक अपने शरीर को मृत्यु और क्षय के प्रतीक-जैसे शव या राख-के साथ जोड़ता है, जिससे वह इस बात को समझता है कि शरीर अस्थायी है, लेकिन आत्मा शाश्वत है।

अघोरी साधना में, भैरवी की मूर्तियाँ शरीर के तांत्रिक महत्व को एक ध्यान केंद्र के रूप में प्रस्तुत करती हैं, जो साधक को अपनी आंतरिक शक्ति और वैराग्य की ओर ले जाती हैं। यह रूप साधक को यह सिखाता है कि सच्चा ज्ञान तभी प्राप्त होता है जब वह अपने शरीर को साधना का साधन बनाए और इसके अहं को त्याग दे। शमशान में, जहाँ मृत्यु की ऊर्जा साधक को जीवन की माया से मुक्त करती है, भैरवी की मूर्तियाँ साधक को इस एकत्व का साक्षात्कार कराती हैं।

सामाजिक मान्यताओं का अतिक्रमण

शमशान भैरवी की नग्न और अर्धनग्न मूर्तियाँ सामाजिक मान्यताओं को चुनौती देती हैं, जो साधक को इन सीमाओं से परे सोचने और आध्यात्मिक स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए प्रेरित करती

हैं। सामाजिक संरचना में, नग्नता को लज्जा, अपवित्रता, और अनैतिकता से जोड़ा जाता है, जो पारंपरिक धार्मिक और सांस्कृतिक मान्यताओं का हिस्सा है। हालाँकि, तांत्रिक और अघोरी दृष्टिकोण में, यह नग्नता वैराग्य और ब्रह्म की एकता का प्रतीक है, जो साधक को माया और सामाजिक बंधनों से मुक्त करती है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ सामाजिक मान्यताओं को तोड़कर साधक को सत्य की ओर ले जाती हैं, जो शमशान में मृत्यु के प्रतीक के साथ और गहरा हो जाता है।

यह अतिक्रमण अघोरी साधना में एक क्रांतिकारी कदम है, जो साधक को जाति, वर्ग, और नैतिकता जैसे सामाजिक ढांचों से मुक्त करता है। अघोरियों के लिए, सामाजिक मान्यताएँ माया के आवरण हैं, जो आत्मा को सत्य से दूर रखते हैं। भैरवी की नग्नता और अर्धनग्नता साधक को यह सिखाती है कि सच्चा ज्ञान तभी प्राप्त होता है जब वह इन मान्यताओं को चुनौती दे और अपनी आंतरिक स्वतंत्रता को अपनाए। तंत्र में सामाजिक मान्यताओं का अतिक्रमण साधक की चेतना को शुद्ध करता है और उसे ब्रह्म के साथ एकाकार करने में सहायता करता है। शमशान, जहाँ मृत्यु की ऊर्जा साधक को जीवन की माया से मुक्त करती है, इस अतिक्रमण को और सशक्त बनाता है। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह केवल चेतना, केवल उपस्थिति, केवल होने की अवस्था में रहता है|

अध्याय 8:
भैरवी की नग्न मूर्ति और अघोरी चेतना

शुद्ध चेतना का स्वरूप

भैरवी की नंगी मूर्ति अघोरी साधना में शुद्ध चेतना का प्रतीक है, जिसमें कोई सामाजिक आवरण, द्वंद्व, या बनावट नहीं होती, जो अघोरियों के लिए साधना का मूल लक्ष्य है। तांत्रिक दर्शन में, शुद्ध चेतना को आत्मा का वह रूप माना जाता है जो सभी भौतिक और मानसिक बंधनों से मुक्त है, और भैरवी की नग्नता इस अवस्था को दर्शाती है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक को माया के आवरण से परे ले जाकर शुद्ध चेतना का अनुभव कराती हैं। भैरवी की नग्नता साधक को उस सत्य का साक्षात्कार कराती है, जो सभी कुछ को धूल में बदल देता है। यह मूर्ति साधक को अपनी आंतरिक शक्ति और वैराग्य की ओर ले जाती है।

अघोरी साधना का उद्देश्य इस शुद्ध चेतना तक पहुँचना है, जहाँ अहं, लज्जा, और सामाजिक पहचान विलीन हो जाती हैं। भैरवी की नग्न मूर्ति साधक को यह सिखाती है कि सच्चा आध्यात्मिक मार्ग वही है, जो सभी द्वैतों-शुद्ध और अशुद्ध, जीवन और मृत्यु-से परे है। तांत्रिक विद्वान आर्थर अवलोन (सर जॉन वुडरोफ) ने लिखा है कि शक्ति की नग्नता साधक की कुंडलिनी ऊर्जा को जागृत करती है, जो मूला धार से शुरू होकर सहस्रार तक पहुँचती है, जहाँ शुद्ध चेतना

का अनुभव होता है। शमशान, जो मृत्यु और क्षय का स्थान है, इस नग्नता को और गहरा अर्थ प्रदान करता है, क्योंकि यहाँ साधक मृत्यु के भय से मुक्त होकर अपनी शाश्वत पहचान का अनुभव करता है।

ब्रह्मांडीय सत्य का प्रतीक

भैरवी की नंगी मूर्ति अघोरी साधना में ब्रह्मांडीय सत्य का प्रतीक है, जो प्रकृति और पुरुष, मृत्यु और जीवन, रूप और निराकार के एकरूप होने को दर्शाती है। तांत्रिक दर्शन में, ब्रह्मांडीय सत्य को सभी द्वैतों से परे एकता के रूप में देखा जाता है, और भैरवी की नग्नता इस एकता को व्यक्त करती है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक को ब्रह्म के साथ एकाकार करने के लिए प्रेरित करती हैं, जहाँ सभी भेद-जैसे जीवन और मृत्यु-विलीन हो जाते हैं।

अघोरी साधना का उद्देश्य इस ब्रह्मांडीय सत्य को अनुभव करना है, जहाँ प्रकृति और पुरुष, मृत्यु और जीवन एक ही चेतना के विभिन्न रूप हैं। भैरवी की नग्नता साधक को यह सिखाती है कि सच्चा आध्यात्मिक मार्ग वही है, जो सभी द्वैतों को एकरूप मानकर ब्रह्म की शाश्वत प्रकृति का साक्षात्कार करता है। साधक मृत्यु के भय से मुक्त होकर अपनी शाश्वत पहचान का अनुभव करता है। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह केवल चेतना, केवल उपस्थिति, केवल होने की अवस्था में रहता है।भैरवी की नंगी मूर्ति साधक को ब्रह्मांडीय सत्य की ओर ले जाने का मार्ग प्रशस्त

करती है। यह प्रक्रिया साधक को यह समझाती है कि सच्चा ज्ञान तभी प्राप्त होता है जब वह अपने अहं और सामाजिक बंधनों को त्याग दे। तांत्रिक साधना में, नग्नता को एक शक्ति संचय का साधन माना जाता है, जो साधक की चेतना को शुद्ध करता है और उसे ब्रह्म के साथ एकाकार करने में सहायता करता है।

पहचान का त्याग

भैरवी की नंगी मूर्ति अघोरी साधना में साधक को अपनी पहचान, अहं, और सामाजिक परतों को हटाने के लिए प्रेरित करती है, ताकि वह अपने वास्तविक स्वरूप को देख सके। तांत्रिक दर्शन में, अहं और सामाजिक पहचान को माया के आवरण के रूप में देखा जाता है, जो आत्मा को सत्य से दूर रखते हैं। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक को अपने अहं को त्यागने और शुद्ध चेतना का अनुभव करने के लिए प्रेरित करती हैं। शमशान में, जहाँ चिताओं की लपटों और राख की ऊर्जा साधक को जीवन की माया से मुक्त करती है, भैरवी की नग्नता साधक को उस सत्य का साक्षात्कार कराती है, जो सभी कुछ को धूल में बदल देता है। यह मूर्ति साधक को अपनी आंतरिक शक्ति और वैराग्य की ओर ले जाती है।

अघोरी साधना का उद्देश्य इस पहचान के त्याग के माध्यम से आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करना है, जहाँ साधक अपनी व्यक्तिगत पहचान-नाम, रूप, और सामाजिक स्थिति-को शून्य करता है। भैरवी

की नग्नता साधक को यह सिखाती है कि सच्चा आध्यात्मिक मार्ग वही है, जो सभी द्वैतों-अहं और आत्मा, जीवन और मृत्यु-से परे है। शमशान, जो मृत्यु और पुनर्जन्म के चक्र का प्रतीक है, इस नग्नता को और गहरा अर्थ प्रदान करता है, क्योंकि यहाँ साधक मृत्यु के भय से मुक्त होकर अपनी शाश्वत पहचान का अनुभव करता है। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह केवल चेतना, केवल उपस्थिति, केवल होने की अवस्था में रहता है।

मृत्यु के प्रति निर्भयता

भैरवी की नंगी मूर्ति अघोरी साधना में ऐसी चेतना को प्रेरित करती है जो मृत्यु के सामने भी निर्भय और स्थिर रहती है, जो अघोरियों की साधना का आधार है। तांत्रिक दर्शन में, मृत्यु को जीवन के चक्र का एक स्वाभाविक हिस्सा माना जाता है, और भैरवी की नग्नता इस भय को तोड़ने का प्रतीक है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक को मृत्यु के भय से मुक्त करके शाश्वत चेतना का अनुभव कराती हैं।

अघोरी साधना का मूल सिद्धांत मृत्यु को स्वीकार करना और उससे डरने के बजाय उसे समझना है। भैरवी की नंगी मूर्ति साधक को यह सिखाती है कि सच्चा आध्यात्मिक मार्ग वही है, जो मृत्यु के भय को पार करके आत्मा की अमरता का अनुभव करता है। शक्ति की नग्नता साधक की कुंडलिनी ऊर्जा को जागृत करती है, जो मृत्यु के भय को समाप्त करके साधक को ब्रह्म की एकता का अनुभव कराती

है।मृत्यु और पुनर्जन्म का प्रतीक है, इस नग्नता को और गहरा अर्थ प्रदान करता है, क्योंकि यहाँ साधक मृत्यु के प्रत्यक्ष अनुभव से अपनी निर्भयता को मजबूत करता है। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह केवल चेतना, केवल उपस्थिति, केवल होने की अवस्था में रहता है।

सच्ची मुक्ति का पाठ

भैरवी की नंगी मूर्ति अघोरी साधना में साधक को सिखाती है कि सच्ची मुक्ति सामाजिक मान्यताओं में नहीं, बल्कि पूर्ण नग्न सत्य को अपनाने में निहित है। तांत्रिक दर्शन में, मुक्ति (मोक्ष) को आत्मा की माया और अहं से मुक्ति के रूप में परिभाषित किया गया है, और भैरवी की नग्नता इस प्रक्रिया का प्रतीक है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक को सामाजिक बंधनों से मुक्त करके ब्रह्म की एकता का अनुभव कराती हैं।

अघोरी साधना का उद्देश्य इस सच्ची मुक्ति को प्राप्त करना है, जहाँ साधक अपनी सामाजिक पहचान, लज्जा, और भय को त्याग देता है। भैरवी की नग्नता साधक को यह सिखाती है कि सच्चा आध्यात्मिक मार्ग वही है, जो सभी द्वैतों-सामाजिक मान्यताएँ और आध्यात्मिक स्वतंत्रता-से परे है। शक्ति की नग्नता साधक की कुंडलिनी ऊर्जा को जागृत करती है, जो उसे माया से मुक्त करके मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करती है।

भैरवी की नंगी मूर्ति अघोरी साधना में एक शक्तिशाली ध्यान का आधार है, जहाँ अघोरी साधक अपनी आत्मा की नग्न अवस्था से जुड़ने और अहं से मुक्त होने का प्रयास करते हैं। तांत्रिक दर्शन में, ध्यान को चेतना को शुद्ध करने और ब्रह्म की एकता का अनुभव करने का साधन माना जाता है, और भैरवी की नग्नता इस प्रक्रिया को गहरा करती है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक के मन को स्थिर करती हैं और उसे माया से मुक्त करती हैं।

अघोरियों के लिए, भैरवी की नग्नता अहं के विनाश का प्रतीक है, जो साधक को अपनी व्यक्तिगत पहचान-नाम, रूप, और सामाजिक स्थिति-से परे ले जाता है। ध्यान के दौरान, अघोरी भैरवी की मूर्ति पर केंद्रित होकर अपने अहं को शून्य करता है, जो उन्हें आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है। शक्ति की मूर्तियों पर ध्यान कुंडलिनी ऊर्जा को जागृत करता है, जो साधक की चेतना को शुद्ध करती है और उसे सहस्रार तक ले जाती है।

सामाजिक बंधनों का खंडन

भैरवी की नंगी मूर्ति अघोरी साधना में लज्जा, वर्जनाओं, और अन्य सामाजिक बंधनों को नकारती है, जिससे साधक सत्य के प्रति खुला हो जाता है। तांत्रिक दर्शन में, सामाजिक बंधन माया के एक रूप के रूप में देखे जाते हैं, जो आत्मा को सत्य से दूर रखते हैं। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक को

सामाजिक और धार्मिक नियमों से मुक्त करके शुद्ध चेतना का अनुभव कराती हैं।अघोरी साधना का उद्देश्य इन सामाजिक बंधनों को तोड़कर साधक को आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाना है। भैरवी की नग्नता साधक को यह सिखाती है कि सच्चा आध्यात्मिक मार्ग वही है, जो लज्जा, भय, और सामाजिक मान्यताओं जैसे बंधनों से मुक्त होकर ब्रह्म की एकता का अनुभव करता है। शमशान, जो मृत्यु और पुनर्जन्म का प्रतीक है, इस नग्नता को और गहरा अर्थ प्रदान करता है, क्योंकि यहाँ साधक मृत्यु के भय से मुक्त होकर अपनी शाश्वत पहचान का अनुभव करता है। यह साधना साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह केवल चेतना, केवल उपस्थिति, केवल होने की अवस्था में रहता है।

भैरवी की नंगी मूर्ति अघोरियों को उस मुक्त चेतना तक ले जाती है जहाँ सभी द्वैत और भ्रम समाप्त हो जाते हैं, जो अघोर अवस्था कहलाती है। तांत्रिक दर्शन में, अघोर अवस्था को शुद्ध चेतना की वह स्थिति माना जाता है जहाँ साधक सभी भौतिक और मानसिक बंधनों से मुक्त हो जाता है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक को इस अवस्था तक पहुँचाने के लिए प्रेरित करती हैं, जहाँ माया और अहं विलीन हो जाते हैं।

अघोरी साधना का अंतिम लक्ष्य इस अघोर अवस्था को प्राप्त करना है, जहाँ साधक शुद्ध चेतना में विलीन हो जाता है और सभी द्वैत-जीवन और मृत्यु, शुद्ध और अशुद्ध-समाप्त हो जाते हैं। भैरवी की

नग्नता साधक को यह सिखाती है कि सच्चा आध्यात्मिक मार्ग वही है, जो सभी भ्रम और बंधनों को तोड़कर ब्रह्म की एकता का अनुभव करता है।

अध्याय 9:
शव पर बैठी भैरवी: मृत्यु पर विजय का प्रतीक

शव पर बैठी भैरवी की मूर्ति अघोरी साधना में मृत्यु के प्रति मानव के गहरे भय को चुनौती देती है और इसे एक स्वाभाविक प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत करती है। तांत्रिक दर्शन में, मृत्यु को जीवन के चक्र का एक अभिन्न हिस्सा माना जाता है, और भैरवी इस भय को तोड़ने का प्रतीक है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक को मृत्यु के भय से मुक्त करके शाश्वत चेतना का अनुभव कराती हैं।

साधना का मूल आधार मृत्यु को स्वीकार करना और इसे भय के बजाय एक अवसर के रूप में देखना है। भैरवी की शव पर बैठी मूर्ति साधक को यह सिखाती है कि सच्चा आध्यात्मिक मार्ग वही है, जो मृत्यु को एक परिवर्तन के रूप में ग्रहण करके आत्मा की अमरता का अनुभव करता है।

शव पर बैठी भैरवी की मूर्ति यह दर्शाती है कि भैरवी की शक्ति मृत्यु से भी ऊपर है, जो उनकी चेतना की अमरता को प्रकट करती है। तांत्रिक दर्शन में, शक्ति को मृत्यु और पुनर्जन्म के चक्र से परे एक अमर शक्ति के रूप में देखा जाता है, और भैरवी इस अमरता का प्रतीक है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक को मृत्यु के पार ले जाकर शाश्वत चेतना का अनुभव कराती हैं।

भैरवी की यह शक्ति साधक को मृत्यु को पार करने की प्रेरणा देती है, जहाँ वह अपनी चेतना की अमरता को अनुभव करता है। भैरवी की शव पर बैठी मूर्ति साधक को यह सिखाती है कि सच्चा आध्यात्मिक मार्ग वही है, जो मृत्यु की सीमाओं को लाँघकर ब्रह्म की शाश्वत प्रकृति का साक्षात्कार करता है।

शव पर बैठी भैरवी की मूर्ति अघोरी साधना में शव को एक गहरा आध्यात्मिक अर्थ प्रदान करती है, जहाँ यह शरीर के अंत का प्रतीक है, लेकिन चेतना की अमरता को दर्शाता है, और भैरवी इसकी साक्षी हैं। तांत्रिक दर्शन में, शव को मृत्यु और पुनर्जन्म के चक्र का एक हिस्सा माना जाता है, जो साधक को आत्मा की शाश्वतता का बोध कराता है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक को शव के माध्यम से मृत्यु के पार ले जाकर शाश्वत चेतना का अनुभव कराती हैं।शव को एक आध्यात्मिक गुरु के रूप में देखा जाता है, जो साधक को शरीर की अस्थायी प्रकृति और आत्मा की अमरता का पाठ पढ़ाता है। भैरवी की शव पर बैठी मूर्ति साधक को यह सिखाती है कि सच्चा आध्यात्मिक मार्ग वही है, जो शव के माध्यम से चेतना की अमरता का अनुभव करता है।

शव पर बैठी भैरवी की मूर्ति अघोरी साधकों को सिखाती है कि मृत्यु का सामना करने से ही उच्चतम चेतना प्राप्त की जा सकती है, जो उनकी आध्यात्मिक यात्रा का एक महत्वपूर्ण पहलू है। तांत्रिक दर्शन में, मृत्यु को एक परिवर्तन के रूप में देखा जाता है, न कि अंत

के रूप में, और भैरवी इस प्रक्रिया में साधक का मार्गदर्शक बनती है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक को मृत्यु के भय को पार करने और शाश्वत चेतना का अनुभव करने के लिए प्रेरित करती है। यह मूर्ति साधक को अपनी आंतरिक शक्ति और वैराग्य की ओर ले जाती है।मृत्यु का सामना करना एक साहसिक कदम है, जो साधक को अपनी कमजोरियों और भय से मुक्त करता है। भैरवी की शव पर बैठी मूर्ति साधक को यह सिखाती है कि सच्चा आध्यात्मिक मार्ग वही है, जो मृत्यु को एक अवसर के रूप में स्वीकार करके आत्मा की शुद्धता का अनुभव करता है।।

शव पर बैठी भैरवी की मूर्ति अघोरी साधना में शक्ति, शांति, भय, मुक्ति, क्रूरता, और करुणा जैसे विपरीत गुणों का संतुलन दर्शाती है, जो साधना की पूर्णता को प्रतिबिंबित करती है। तांत्रिक दर्शन में, शक्ति को सृष्टि और विनाश की शक्ति के रूप में देखा जाता है, और भैरवी इस संतुलन का प्रतीक है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक को इन विपरीत गुणों को एकीकृत करने के लिए प्रेरित करती हैं, जो शाश्वत चेतना का अनुभव कराती हैं। यह मूर्ति साधक को अपनी आंतरिक शक्ति और वैराग्य की ओर ले जाती है।

अघोरी साधना में, भैरवी की यह मूर्ति साधक को शक्ति और शांति के संतुलन को समझने की प्रेरणा देती है। शक्ति मृत्यु और विनाश का प्रतीक है, जबकि शांति मुक्ति और आत्म-साक्षात्कार का

प्रतीक है।तांत्रिक साधना में, शव पर बैठी भैरवी को एक शक्ति संचय का साधन माना जाता है, जो साधक की चेतना को शुद्ध करता है और उसे ब्रह्म के साथ एकाकार करने में सहायता करता है।

शव पर बैठी भैरवी की मूर्ति अघोरी साधना में सिखाती है कि मृत्यु भय नहीं, बल्कि मुक्ति के मार्ग में एक साधन है, जो साधक को आध्यात्मिक उन्नति की ओर ले जाता है। तांत्रिक दर्शन में, मृत्यु को एक परिवर्तन के रूप में देखा जाता है, जो साधक को आत्मा की शाश्वतता का बोध कराता है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक को मृत्यु को एक साधन के रूप में प्रयोग करने के लिए प्रेरित करती हैं, जो शाश्वत चेतना का अनुभव कराती हैं।मृत्यु को एक साधन के रूप में प्रयोग करने का अर्थ है कि साधक इसे भय के बजाय एक अवसर के रूप में देखता है। भैरवी की शव पर बैठी मूर्ति साधक को यह सिखाती है कि सच्चा आध्यात्मिक मार्ग वही है, जो मृत्यु को मुक्ति का साधन बनाकर आत्मा की शुद्धता का अनुभव करता है।

शव पर बैठी भैरवी की मूर्ति अघोरियों को यह प्रेरणा देती है कि जीवन और मृत्यु को समान रूप से देखना ही सच्चा अद्वैत है, जो उनकी आध्यात्मिक दृष्टि का मूल आधार है। तांत्रिक दर्शन में, अद्वैत को सभी द्वैतों-जैसे जीवन और मृत्यु-को एक करने की प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है, और भैरवी इस एकता का प्रतीक है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक को जीवन और

मृत्यु के बीच के भेद को मिटाकर शाश्वत चेतना का अनुभव कराती हैं।तांत्रिक साधना में, शव पर बैठी भैरवी को एक शक्ति संचय का साधन माना जाता है, जो साधक की चेतना को शुद्ध करता है और उसे ब्रह्म के साथ एकाकार करने में सहायता करता है।शव पर बैठी भैरवी की मूर्ति अघोरी साधना में मृत्यु से गहरा तादात्म्य स्थापित करने की तांत्रिक शिक्षा देती है, जो मुक्ति का आधार बनती है। तांत्रिक दर्शन में, मृत्यु को एक आध्यात्मिक परिवर्तन के रूप में देखा जाता है, और भैरवी इस प्रक्रिया में साधक का मार्गदर्शक बनती है। कुलार्णव तंत्र में उल्लेखित है कि शक्ति की मूर्तियाँ साधक को मृत्यु के साथ तादात्म्य स्थापित करके शाश्वत चेतना का अनुभव कराती हैं।

अध्याय 10:
शमशान भैरवी – रहस्य, प्रतीक और अनुभव

गहन प्रतीकात्मकता में शक्ति और मृत्यु का समन्वय

शमशान भैरवी का स्वरूप केवल एक देवी की उपासना नहीं है, बल्कि यह सम्पूर्ण तांत्रिक दर्शन, मृत्यु बोध और जीवन-मरण के चक्र को पार करने की साधना का अत्यंत जटिल और गूढ़ प्रतीक है। शमशान, जो सामान्य व्यक्ति के लिए भय, अशुभता और विरक्ति का प्रतीक है, वही अघोरी और तांत्रिकों के लिए साधना का परम स्थान होता है। यह वह स्थल है जहाँ भौतिकता का अंतिम पतन होता है- जहाँ देह समाप्त होती है, और आत्मा अपने गंतव्य की ओर प्रस्थान करती है। इसी स्थल पर जब शमशान भैरवी की उपस्थिति को कल्पित किया जाता है, तो उसका अर्थ केवल देवी का आह्वान नहीं, बल्कि मृत्यु के परम रहस्य को समझने का प्रयास होता है। भैरवी की खोपड़ियों की माला, उनके हाथों में रक्तपातक खड्ग, शरीर पर चिता की भस्म और मुख से झाँकती विकराल हँसी- ये प्रतीक व्यक्ति को यह स्मरण कराते हैं कि जो दिखता है, वह माया है, और जो मिटता है, वही मोक्ष का प्रवेश द्वार है।

अघोरी साधना में यह गहन प्रतीकात्मकता एक मानसिक अनुशासन बन जाती है, जिसमें साधक स्वयं को धीरे-धीरे मृत्यु के भय से ऊपर उठाता है। हर चिता की आग में वह अपने अहंकार को

जलते हुए देखता है। हर राख में वह अपने बचे हुए विकारों को समाप्त करता है। शमशान भैरवी की साधना में यह प्रतीकात्मक भाषा केवल बाह्य नहीं, बल्कि आत्मिक होती है-वह साधक के अवचेतन में उतरकर उसे उसकी चेतना के सबसे अंधेरे हिस्सों से परिचित कराती है। मृत्यु का भय, समाज की वर्जनाएँ, शरीर की अपवित्रता, स्त्री और शक्ति का भय-ये सभी प्रतीक शमशान भैरवी के स्वरूप में समाहित हैं, और अघोरी साधक इनसे टकराकर आत्मबोध की दिशा में अग्रसर होता है। यह समन्वय शक्ति और मृत्यु का नहीं, बल्कि चेतना और शून्यता का है-जहाँ साधक स्वयं को एक ऐसी स्थिति में देखता है जहाँ न जीवन बचता है, न मृत्यु-केवल 'अहं ब्रह्मास्मि 'की अनुभूति बचती है। यही है शमशान भैरवी की गूढ़तम साधना, जिसमें प्रतीकों के माध्यम से सत्य का साक्षात्कार होता है।

भैरवी की दृष्टि में शव और साधक

शमशान भैरवी की साधना में शव केवल एक मृत देह नहीं है, बल्कि वह साधक के लिए प्रतिबिंब है-एक दर्पण, जिसमें वह अपने वर्तमान और संभावित भविष्य दोनों को देखता है। अघोरी दर्शन में शव का महत्व अत्यधिक है क्योंकि वह जीवन के अंतिम सत्य को मूर्त रूप में प्रस्तुत करता है। जिस शरीर को व्यक्ति सजीव रहते हुए श्रृंगारित करता है, प्रतिष्ठा और इच्छाओं का केंद्र बनाता है, वही शरीर चिता पर निर्वस्त्र, निष्क्रिय और भस्म होने के लिए तैयार होता है। शमशान भैरवी की दृष्टि में यह शव ही साधक का मार्गदर्शक होता

है, और उसका अंतिम लक्ष्य भी। भैरवी की पूजा जब शव के समीप की जाती है, तो यह केवल एक अनुष्ठान नहीं होता, बल्कि एक चेतना का अनुभव होता है-एक ऐसी अवस्था जिसमें साधक स्वयं को उस शव के समान अनुभव करता है: निरहंकार, निर्लिप्त, निःशब्द। यह अवस्था तब आती है जब साधक में यह बोध दृढ़ हो जाता है कि वह जो 'मैं 'कहता है, वह भी एक भ्रम है, एक अस्थायी आवरण है, जो समय की चिता पर भस्म हो जाएगा।

अघोरी साधना में शव के पास बैठकर की जाने वाली भैरवी उपासना इस अनुभव को साकार करती है। शमशान भैरवी को अर्पित मंत्र, यंत्र और भस्म इसी बोध को जागृत करने के साधन होते हैं। वह भैरवी जो शव पर नृत्य करती हैं, वह साधक को यह दिखाती हैं कि मृत्यु कोई अंत नहीं है, बल्कि चेतना का विस्तार है। शव पर बैठी भैरवी स्वयं मृत नहीं हैं, बल्कि जाग्रत हैं-अत्यंत सजीव और शक्ति से परिपूर्ण। उसी प्रकार साधक जब अपने भीतर की मृत्यु को स्वीकार करता है, तब वह भी भैरवी के समान चेतन हो जाता है। यहाँ शव और साधक में कोई भेद नहीं रह जाता; दोनों एक ही प्रक्रिया के विभिन्न चरण होते हैं। यही समरसता, यही साम्य भैरवी के दर्शन की गूढ़तम शिक्षा है-कि जब तुम स्वयं को शव समझने लगो, तभी तुम साधक कहलाने योग्य हो। शव की निस्तब्धता और भैरवी की ऊर्जा का संयोग साधक को उस स्थिति तक ले जाता है जहाँ वह जीवन और मृत्यु, चेतना और शून्यता, शिव और शक्ति-के द्वैत से मुक्त हो

जाता है। यही है शव और साधक का दिव्य साम्य, जो शमशान भैरवी की दृष्टि में एक आवश्यक अनुभव है।

अघोरी साधना में शव की उपस्थिति का आध्यात्मिक उद्देश्य

अघोरी परंपरा में शव की उपस्थिति केवल एक बाह्य अनुष्ठानिक उपकरण नहीं होती, बल्कि वह साधना की आध्यात्मिक ऊँचाइयों को छूने का एक परम माध्यम होती है। शमशान में पड़े शव के समीप साधना करना अघोरी परंपरा की सबसे गूढ़ विधियों में से एक है, जिसे 'शव-साधना 'कहा जाता है। यह साधना केवल मृत्यु को देखने या उसे स्वीकारने की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि आत्म-निग्रह, अहंकार के विसर्जन और ब्रह्म से एकत्व प्राप्त करने की अत्यंत उन्नत प्रक्रिया है। शव वह द्वार होता है, जिसके माध्यम से साधक मृत्यु और जीवन के बीच की रेखा को पार करता है। जब साधक शव के समीप बैठकर शमशान भैरवी का ध्यान करता है, तब वह स्वयं को अपने देह, मन और चेतना से विलग करके, उस निष्प्राण अवस्था में स्थित करने का प्रयास करता है, जहाँ कोई 'मैं 'शेष नहीं रहता। यह अवस्था तुरीय तत्त्व की होती है-जहाँ साधक भौतिक सीमाओं से परे जाकर आत्मा के शुद्ध स्वरूप का साक्षात्कार करता है। शव के समीप बैठना मृत्यु का साक्षात्कार करना है, और मृत्यु का साक्षात्कार करना जीवन के मूल सत्य को पकड़ने का प्रयास है।

इस साधना की एक विशेषता यह होती है कि साधक जब शव के पास होता है, तब उसकी समस्त इंद्रियाँ विकेंद्रित हो जाती हैं-शव

की दुर्गंध, चिता की राख, जलती लकड़ियों की आवाज़, गिद्धों की निगाह, और आसपास फैला मौन भय-ये सभी तत्व मिलकर एक ऐसा वातावरण रचते हैं जहाँ साधक का मन किसी भी सांसारिक आकर्षण में नहीं टिक पाता। उस क्षण में केवल भैरवी की छवि, उनका स्मरण और उनके मंत्र ही शेष रह जाते हैं। अघोरी इसे "मरण में जीवन की खोज" मानते हैं। शव के माध्यम से साधक यह जानने का प्रयास करता है कि वह जो मृत्यु है, वह अंत नहीं है, बल्कि चेतना का विस्तार है। शमशान भैरवी इसी चेतना की अधिष्ठात्री देवी मानी जाती हैं, और शव के समीप उनकी उपासना का उद्देश्य यह होता है कि साधक मृत्यु के भय से परे जाकर मोक्ष का मार्ग देख सके। शव वहाँ साधक के लिए प्रतीक बन जाता है-उस आत्मा का, जिसने देह त्याग दी है और अब भैरवी के सान्निध्य में यात्रा कर रही है। जब साधक इस स्थिति को पूरी तरह आत्मसात कर लेता है, तब ही वह अघोरी साधना के वास्तविक अर्थ तक पहुँच पाता है। यही शव की उपस्थिति का

आध्यात्मिक उद्देश्य है-मृत्यु के माध्यम से आत्म-साक्षात्कार की परम उपलब्धि।

आत्मा की यात्रा का दर्शन

अघोरी परंपरा में आत्मा की यात्रा को केवल शारीरिक मृत्यु के बाद होने वाली प्रक्रिया के रूप में नहीं देखा जाता, बल्कि यह एक गहन आध्यात्मिक यात्रा मानी जाती है जो जीवन भर चलती रहती

है। अघोरी साधक मानते हैं कि प्रत्येक जीव की आत्मा ब्रह्मांडीय ऊर्जा का अंश है, जिसे संसार में जन्म लेने का अवसर उसके पूर्व जन्मों के कर्मों के अनुसार मिलता है। जब शरीर मरता है, तब आत्मा उस स्थूल आवरण को त्याग कर पुनः सूक्ष्म रूप में ब्रह्मांड में प्रवेश करती है। इस संक्रमण को 'आत्मिक यात्रा 'की संज्ञा दी जाती है, जिसमें आत्मा को उसके कर्मों के अनुसार मार्गदर्शन या दंड प्राप्त होता है। अघोरी इस संपूर्ण प्रक्रिया को शुद्धि और मुक्ति की दृष्टि से देखते हैं, न कि दंड और पुनर्जन्म के चक्र के रूप में। वे मानते हैं कि यदि आत्मा शुद्ध है और उसे गुरु और देवी भैरवी की कृपा प्राप्त है, तो वह पुनर्जन्म के बंधन से मुक्त हो सकती है और शिव के साथ एकत्व को प्राप्त कर सकती है।

इस यात्रा में शमशान का विशेष स्थान होता है, क्योंकि वहीं पर आत्मा शरीर से मुक्त होती है और उसकी अंतिम गति प्रारंभ होती है। अघोरी साधक शमशान में ध्यान और तंत्र साधना के माध्यम से आत्मा की इस यात्रा को समझने और प्रभावित करने का प्रयास करते हैं। वे मानते हैं कि मृत देह के समीप रहकर, मृत्यु की सच्चाई को अनुभव कर, और भैरवी की उपस्थिति में साधना करके, साधक आत्मा की गहन परतों में प्रवेश कर सकता है। इस ज्ञान से वह न केवल अपने आत्मज्ञान को प्राप्त करता है, बल्कि दूसरों की आत्मा की मुक्ति में भी सहायक बनता है। यह दृष्टिकोण आत्मा को एक सनातन अस्तित्व के रूप में स्वीकार करता है, जो केवल शरीर बदलता है लेकिन अपनी चेतना को बनाए रखता है। अघोरी इसे

आत्म-साक्षात्कार का मार्ग मानते हैं, जिसमें भैरवी मार्गदर्शक और शुद्धिकर्त्री के रूप में उपस्थित रहती हैं।

कर्म और मुक्ति का संबंध

अघोरी दर्शन में कर्म को जीवन की सबसे निर्णायक शक्ति माना गया है, जो न केवल वर्तमान जीवन को निर्धारित करता है, बल्कि मृत्यु के पश्चात आत्मा की गति और पुनर्जन्म को भी प्रभावित करता है। वे मानते हैं कि प्रत्येक विचार, क्रिया और भावना एक ऊर्जा उत्पन्न करती है, जो ब्रह्मांड में स्थायी रूप से अंकित हो जाती है। यह ऊर्जा आत्मा के साथ जुड़कर उसे पुनर्जन्म के चक्र में बांधती है या मुक्ति की ओर अग्रसर करती है। अघोरी साधना का प्रमुख उद्देश्य इन कर्मों की शुद्धि और तटस्थता प्राप्त करना होता है, ताकि आत्मा किसी भी सांसारिक बंधन से मुक्त होकर शिव में विलीन हो सके। इसीलिए, अघोरी लोग भैरवी की पूजा और शमशान साधना को अत्यंत महत्वपूर्ण मानते हैं, क्योंकि यह कर्मों को जलाने और मन की ग्रंथियों को खोलने का माध्यम है।

मुक्ति केवल एक धार्मिक या दार्शनिक संकल्पना नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक स्थिति है, जिसे अघोरी साधक अपने जीवनकाल में ही प्राप्त करना चाहते हैं। वे जीवन को तपश्चर्या मानते हैं और मृत्यु को उस तपस्या की पूर्णता, जहां आत्मा अपने समस्त कर्मों से मुक्त होकर शिव के सान्निध्य में प्रवेश करती है। भैरवी को इस मार्ग की सहचरी और द्वारपालिनी माना जाता है, जो साधक के भीतर के

अंधकार को भस्म कर प्रकाश की ओर ले जाती है। अघोरी साधना में, कर्मों की शुद्धि के लिए कठोर तप, भैरवी के विशेष मंत्रों का जाप, और शमशान में साधना की जाती है, ताकि साधक अपने आत्मिक भार को छोड़ सके। इस दृष्टिकोण में कर्म न केवल बंधन हैं, बल्कि जागरूक साधना द्वारा समाप्त किए जा सकने वाले संक्रमण भी हैं, और मुक्ति एक जीवंत लक्ष्य बन जाता है।

मृत्यु की साधना के तरीके

अघोरी परंपरा में मृत्यु की साधना को केवल मृत्यु के भय को समाप्त करने का उपाय नहीं माना गया, बल्कि इसे आध्यात्मिक जागरण का सबसे तीव्र और शक्तिशाली माध्यम माना गया है। अघोरी साधक शमशान को अपना तपस्थल बनाते हैं, जहां वे मृत शरीरों के समीप बैठकर ध्यान करते हैं, शवों पर तंत्र क्रियाएं करते हैं, और भैरवी के मंत्रों द्वारा मृत्यु की गहराई में प्रवेश करते हैं। इस प्रक्रिया को "शव साधना" कहा जाता है, जिसमें साधक एक शव पर बैठकर स्वयं को मृत्यु के समान स्थिति में रखता है, ताकि उसका मन और चेतना सांसारिक बंधनों से मुक्त हो सके। शव साधना का उद्देश्य आत्मा और मृत्यु के मध्य की सीमाओं को समाप्त करना होता है, ताकि साधक जीवन और मृत्यु के द्वैत को पार कर सके। यह साधना साधक को मृत्यु के प्रति निर्भीक बनाती है और उसे आत्मा के अमरत्व का अनुभव कराती है।

मृत्यु की साधना में केवल बाह्य क्रियाएं नहीं होतीं, बल्कि यह एक भीतरी यात्रा भी होती है, जिसमें साधक अपने भय, वासनाओं, अहंकार और पूर्व जन्मों के कर्मों का सामना करता है। वह भैरवी के संरक्षण में इस यात्रा को तय करता है, जो उसे मृत्यु के अंधकार से निकालकर आत्मिक प्रकाश की ओर ले जाती है। अघोरी इस साधना को 'महासाधना 'मानते हैं, जिसमें सफलता पाने के लिए कठोर संयम, गुरु की कृपा और भैरवी की अनुकंपा आवश्यक होती है। यह साधना केवल अघोरियों तक सीमित नहीं रहती, बल्कि यह एक दार्शनिक संकेत भी देती है कि मृत्यु कोई अंत नहीं, बल्कि आत्मा की गहराई से पहचान करने का अवसर है। अघोरी साधना में मृत्यु के माध्यम से जीवन का रहस्य उद्घाटित होता है, और साधक जीवित रहते हुए ही मुक्ति के द्वार तक पहुंच जाता है।

अघोरी समुदाय में मृत देह का आध्यात्मिक प्रयोग

अघोरी परंपरा में मृत देह का आध्यात्मिक प्रयोग अत्यंत विस्तृत और गूढ़ पहलुओं का सम्मिश्रण है, जिसे केवल शारीरिक अवशेषों के उपयोग तक सीमित नहीं समझा जाता। इस दृष्टिकोण में मृत देह एक साधना सामग्री के रूप में उपयोग की जाती है ताकि जीवन और मृत्यु के द्वैत को पार किया जा सके। परंपरागत वर्णन के अनुसार, अघोरी शमशान में मृत देह के पास आग के किनारे या सीधे देह के समीप बैठकर ध्यान लगाने की प्रक्रिया अपनाते हैं। इस दौरान मृत देह को केवल एक प्राकृतिक तत्व के रूप में स्वीकारा जाता है-

जिस तरह मिट्टी, पानी, अग्नि और वायु को तंत्रिक क्रियाओं में सम्मिलित किया जाता है, वैसे ही मृत देह भी आत्मा की अस्थायी आवरण मानी जाती है। इस क्रिया का उद्देश्य साधक के चेतन मन को उस अंतिम सत्य तक ले जाना है, जहाँ शरीर की मौत और आत्मा की अमरता के बीच का विभाजन स्पष्ट हो।

इस प्रक्रिया में मृत देह का प्रयोग आत्मा-निरीक्षण का एक माध्यम बन जाता है, जिसमें साधक अपने मन और आत्मा की गहराईओं तक पहुंचने की कोशिश करता है। इसे 'देहान्त साधना ' कहा जाता है और इसमें साधक को मृतक के समीप बैठकर, उसकी शीतलता, संक्षारण और मौन में लीन होकर अपने अंतरमन को शून्यता की अवस्था में ले जाना होता है। यह क्रिया केवल कुटिल रूप से नहीं की जाती, बल्कि गहन मानसिक और आध्यात्मिक नियंत्रण की आवश्यकता होती है। यहां मृत देह को सम्मानपूर्वक प्रयोग किया जाता है-न कि अपमान के रूप में-क्योंकि अघोरी इसे जीवन का प्राकृतिक अंत और पुनर्जन्म का द्वार समझते हैं। इस प्रयोग के माध्यम से साधक मृत्यु के भय को आत्मसात कर उसकी शक्ति को साधना में बदलता है, जिससे उसकी आत्मा जन्म-मरण के चक्र से मुक्त होती है और भैरवी की कृपा से आत्मा दिव्य प्रकाश से एकाकार हो जाती है।

दिव्य दर्शन और मृत्यु के बीच का अन्तर्संबंध

शमशान भैरवी की साधना में मृत्यु को देवत्व के दर्शन का माध्यम माना जाता है। अघोरी साधक विश्वास करते हैं कि मृत्यु शरीर की समाप्ति नहीं, बल्कि ब्रह्म के साथ पुनः एकात्मता का मार्ग है। जब मृत्यु की प्रक्रिया मृत देह और शमशान की विरल और तीव्र ऊर्जा के बीच होती है, तब एक दिव्य चेतना जागृति प्रारंभ होती है। इस जागृति को 'दिव्य दर्शन 'कहा जाता है, जिसमें साधक शरीर के भ्रंश होकर उसकी आभा व प्रकाश को आत्मा के असीम पटल पर पाता है। अघोरियों के अनुसार यह दर्शन केवल आंखों या मन से नहीं, बल्कि आत्मा के विस्तार से होता है, क्योंकि वे मानते हैं कि आत्मा किसी भी भौतिक रूप की सीमाओं से परे है।

दिव्य दर्शन की साधना एक सामाजिक व सांस्कृतिक क्रिया के साथ-साथ व्यक्तिगत जागृति भी है। अघोरी साधक शमशान में शव की गंध, हवा की गति, अग्नि की लपटों और मौन का समागम देखकर एक मुद्रा में प्रवेश करते हैं जहां शरीर का विषय समाप्त हो जाता है और आत्मा एक दिव्य स्थिति में लीन होती है। इस अनुभव में साधक मृत्यु के अंतिम क्षणों को अलगाव या बैर मानने की बजाय उसे ज्ञान की अवस्था मानता है, जहाँ मृत्यु ही प्रकाश का द्वार होती है। इस द्वार को पार करने के लिए साधक को गहन मानसिक एकाग्रता, गुरु की दीक्षा और भैरवी की उपस्थिति की आवश्यकता होती है।

गुरु-शिष्य संयोग और मृत्यु-साक्षात्कार

अघोरी परंपरा में मृत्यु-साक्षात्कार की साधना केवल व्यक्तिगत प्रयास तक सीमित नहीं होती, बल्कि गुरु-शिष्य के संयोग पर आधारित होती है। साधना के इस चरण में शिष्य को अपने गुरु की उपस्थित मार्गदर्शिता की आवश्यकता होती है, क्योंकि मृत्यु की गहराई तक पहुंचना और भैरवी की दिव्यता को आत्मसात करना सहज नहीं होता। गुरु यहां केवल एक शिक्षक नहीं, बल्कि साधना के संरक्षक, ऊर्जा स्रोत और भैरवी की उपस्थिति के माध्यम के रूप में कार्य करता है। इस स्थिति में शिष्य का ध्यान गुरु की मुद्रा, शब्द और ऊर्जा की तरंगों पर केंद्रित होता है। गुरु मूक रूप से भैरवी की ऊर्जा को साधक में प्रवेश कराते हैं, जिससे साधक मृत्यु के समय संयम और शुद्धि में प्रवेश करता है।

गुरु-शिष्य संयोग की यह प्रक्रिया कई दिन-रात की एकाग्र साधना, मंत्र-जप, अग्नि-वृत्त का समागम और देह की सीमाओं को चिन्हित करने वाली स्थितियों के अंतर्गत होती है। गुरु साधक को चेतावनी देते हैं कि यह मार्ग केवल शारीरिक बल नहीं, बल्कि मानसिक, आत्मिक और नैतिक बल की परीक्षा है। मृत्यु-साक्षात्कार में गुरु की उपस्थिति मृत देह और शमशान की ऊर्जा को साधक के भीतर अवतरित कर देती है। शिष्य इस अवतरित ऊर्जा को आत्मसात करते हुए मृत्यु को एक अभ्युदय की अवस्था के रूप में स्वीकार करता है, जहाँ वह स्वयं को मृत शरीर के रूप में नहीं, बल्कि

चेतना के दिव्य रूप में पहचानता है। इस अंतिम संयोग में गुरु, शिष्य और भैरवी का आत्मयुक्त संयोग होता है, जो मृत्यु पर विजय और मोक्ष का पथ खोलता है।

पंच तत्त्वों में भैरवी का समन्वय

अघोरियों द्वारा प्रचलित पंच तत्त्व साधना-अर्थात् पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश का गहन अन्वेषण-भैरवी को केंद्र में मानते हुए होती है। भैरवी को सार्वभौमिक शक्ति के रूप में मानने से यह साधना केवल चार तत्त्वों के अनुभव तक सीमित नहीं रहती, बल्कि इसके माध्यम से आकाशीय ऊर्जा, चेतना, और ब्रह्मतत्त्व से भी जोड़ा जाता है। प्रत्येक तत्त्व के साथ विशेष मंत्र-मुद्रा और यंत्र का प्रयोग होता है, जिससे साधक प्राकृतिक और लौकिक सीमाओं को पार कर आत्म-स्थिरता और बोध की स्थिति प्राप्त करता है। यह प्रक्रिया मन को एकाग्र, अन्तर्मुखी और उन्नत चेतना की ओर ले जाती है। उदाहरणतः अग्नि तत्त्व में भैरवी की शक्ति को आत्मज्ञान तथा इन्द्रियों के संयम के प्रतीक के रूप में देखा जाता है, जबकि जल तत्त्व साधक के भीतर ब्रह्म-संवेदन को जगाता है।

पंच तत्त्व साधना के दौरान साधक को लगातार ऊर्जा परिवर्तनों, चक्र-संवर्धन और यंत्रों द्वारा उत्पन्न तीव्र अनुभूतियों से गुज़रना होता है। यह न केवल बाह्य शक्ति संचय का माध्यम है, बल्कि अंतर्मन को दर्पण-सदृश बना देता है। प्रत्येक तत्त्व के अभ्यास के अंत में भैरवी का ध्यान अभ्यास करने से साधक को सीमा-तोड़ने वाली अनुभव

क्षण मिलती है – जैसे पृथ्वी तत्त्व से स्थिरता, जल से परिवर्तनशीलता, अग्नि से परिवर्तन-तत्व, वायु से गति, और आकाश से सर्वव्यापकता की अनुभूति। ये अनुभव मिलकर साधक को अद्वैत अनुभूतियों के करीब ले जाते हैं। साथ ही, इससे माया (भौतिक संसार की माया) का भित्तिचित्र स्वतः टूटने लगता है, और साधक तंत्र व अघोर दर्शन के अद्वैत मूल्यों का अनुभव करने योग्य हो जाता है।

अध्याय 11:
बाबा कीनाराम – प्रथम अघोरी और उनकी आध्यात्मिक विरासत

बाबा कीनाराम: अघोरी परंपरा के संस्थापक

बाबा कीनाराम को केवल एक संत नहीं, बल्कि अघोरी परंपरा के युग प्रवर्तक के रूप में देखा जाता है। उन्होंने मृत्यु, भेदभाव और भय को चुनौती देते हुए एक ऐसी साधना पद्धति की स्थापना की, जो भारतीय अध्यात्म का क्रांतिकारी अध्याय बन गई। जहाँ समाज शुद्ध और अशुद्ध की संकीर्णताओं में बँधा हुआ था, वहीं बाबा कीनाराम ने एक ऐसे आध्यात्मिक पथ को जनमानस के सामने रखा, जो सबको समान दृष्टि से देखता था। उन्होंने जीवन और मृत्यु के बीच खिंची रेखा को मिटाते हुए शमशान को तप और आत्म-साक्षात्कार का केंद्र माना। लेकिन उन्होंने शमशान को केवल प्रतीकात्मक मृत्युस्थल नहीं माना-बल्कि उसे उस आंतरिक निर्विकारता का स्थल कहा जहाँ सभी वासनाएँ, भेद और मोह शांत होते हैं। यही दृष्टिकोण उनके काशी स्थित क्रीम-कुंड आश्रम की बुनियाद बना, जो आज भी साधना का ध्रुव केंद्र है।

बाबा कीनाराम की अघोरी साधना केवल तांत्रिक सिद्धियों तक सीमित नहीं थी; वह करुणा, समता और आत्मा के विराट स्वरूप की अनुभूति की साधना थी। उन्होंने न केवल गुरु-शिष्य परंपरा को

सशक्त किया, बल्कि आमजन को यह सिखाया कि आत्मिक पूर्णता केवल जंगलों या मठों में ही नहीं, बल्कि मृत्यु जैसे प्रतीकों के पार जाने में भी प्राप्त की जा सकती है। उनका दर्शन इस बात पर आधारित था कि जब तक मानव भय, लोभ, और सामाजिक वर्जनाओं से घिरा रहेगा, तब तक वह शिवत्व को नहीं पा सकता। इसी कारण, उन्होंने शरीर और मन के सीमांतों को लांघते हुए अघोरी परंपरा को उस ऊँचाई पर पहुँचा दिया जहाँ वह मात्र साधना नहीं, बल्कि जीवन जीने की एक सम्यक शैली बन गई।

प्रारंभिक जीवन और दैवीय संकेत

बाबा कीनाराम का जन्म एक साधारण किसान परिवार में हुआ था, लेकिन उनके जीवन की घटनाएँ साधारण नहीं थीं। जन्म के समय ही उन्हें लेकर कई चमत्कारी घटनाएँ जुड़ी रहीं-कभी माँ के स्वप्न में देवदूत का आना, तो कभी जन्म के बाद उनकी रहस्यमयी मौन मुद्रा, जिसने गाँव के लोगों को चकित कर दिया। वे एक ऐसे समय में पैदा हुए जब सामाजिक ढाँचा जाति और रूढ़ियों में जकड़ा हुआ था, लेकिन उन्होंने बचपन से ही इस परंपरा को नकारने वाले संकेत देने शुरू कर दिए। उनकी दृष्टि में कोई भेद नहीं था-न धनी और निर्धन में, न ऊँच और नीच में। पाँच वर्ष की आयु में ही उन्होंने एक मृत पक्षी को अपनी हथेली में रखकर चेतन कर दिया-यह केवल चमत्कार नहीं था, बल्कि वह चेतावनी थी कि यह बालक इस सांसारिक सीमाओं के बाहर का है।

बचपन में ही उन्होंने सांसारिक बंधनों से स्वयं को अलग कर लिया। जब उनके विवाह की बात चली, तो उन्होंने दृढ़ स्वर में अस्वीकार कर दिया और कहा कि उनका जीवन केवल आत्म-साक्षात्कार के लिए समर्पित है। यह केवल आध्यात्मिक चयन नहीं, बल्कि सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध एक सूक्ष्म विद्रोह भी था। इसके बाद वे काशी गए-न तीर्थयात्रा के लिए, बल्कि उस नगरी में साधना के लिए, जो मृत्यु और मोक्ष के बीच की दहलीज़ मानी जाती है। यहाँ से उन्होंने अपने जीवन को एक तपस्वी मिशन में परिवर्तित किया। शमशान घाटों पर ध्यान करते हुए, उन्होंने शरीर, मन और अहंकार को क्रमशः परत दर परत हटाया और उस आत्मा तक पहुँचे जो न जाति जानती है, न भय। यही दृष्टि आगे चलकर उनकी अघोरी परंपरा की नींव बनी।

आध्यात्मिक जागृति और साधना

बाबा कीनाराम की आध्यात्मिक चेतना का बीज उनके बाल्यकाल में ही पड़ चुका था, लेकिन उसकी पूर्ण अभिव्यक्ति काशी आगमन के पश्चात हुई, जब उन्होंने सांसारिकता का पूर्ण त्याग कर आत्म-साधना के पथ पर प्रवेश किया। उनका जीवन इस साधना की ठोस मिसाल बन गया जिसमें उन्होंने भय, मोह, और सामाजिक वर्जनाओं को चुनौती देकर एक अघोरी साधक के रूप में स्वयं को ढाला। काशी के विभिन्न घाटों, विशेषकर मणिकर्णिका और हरिश्चंद्र घाट जैसे cremation grounds पर वे घंटों ध्यानस्थ रहते, जहाँ

मृत्यु प्रत्यक्ष होती है, और वहाँ वे मृत्यु को अंत नहीं, चेतना के परिवर्तन का प्रवेशद्वार मानकर उसका साक्षात्कार करते। उन्होंने तांत्रिक अनुष्ठानों के माध्यम से न केवल भीतरी शक्तियों को जाग्रत किया, बल्कि उन सीमाओं को भी तोड़ा जो साधक को शास्त्रीय परंपराओं तक सीमित कर देती थीं।

उनकी साधना में मंत्रों का जाप, विशेषकर "ॐ ह्रीं भैरवी स्वाहा", खप्पर की पूजा, त्रिशूल और भस्म का प्रयोग केवल प्रतीक नहीं थे, बल्कि मन, शरीर और आत्मा को एकसूत्र में पिरोने वाले तत्व थे। उन्होंने अघोरी साधना को किसी सीमित परंपरा से बाहर निकाल कर उसे एक सार्वभौमिक साधना-पथ बना दिया, जहाँ साधक केवल शक्ति की कृपा से नहीं, बल्कि स्वयं की सीमाओं को भेदकर मोक्ष का मार्ग तय करता है। उनकी साधना का केंद्रबिंदु यह था कि मृत्यु को देखकर डरना नहीं है, बल्कि उसे अनुभव करना है, उसके पार जाना है, और उसी में आत्मा का निखरना सम्भव है। यही दर्शन बाबा कीनाराम के जीवन की सबसे बड़ी साधना में रूपांतरित हुआ, जो आज भी अघोरी परंपरा के मूल स्तंभ के रूप में स्थापित है।

अघोरी परंपरा की स्थापना

बाबा कीनाराम ने जिस अघोरी परंपरा को स्थापित किया, वह केवल धार्मिक या तांत्रिक संप्रदाय नहीं था, बल्कि यह एक सामाजिक दर्शन था जो उस युग की विद्रूपताओं को चुनौती देने का

माध्यम बना। उन्होंने शैव तंत्र की उन शिक्षाओं को पुनः जीवित किया जो जीवन और मृत्यु के द्वैत को नकारती हैं, और आत्मा को ब्रह्म के साथ एकीकृत मानती हैं। उनके द्वारा स्थापित क्रीम-कुंड आश्रम उस दर्शन का जीवंत केंद्र बना, जहाँ साधक जाति, वर्ण, लिंग, या सामाजिक पद से ऊपर उठकर केवल साधना और आत्म-अनुभूति के पथ पर चलता है। यह स्थान उनकी दृष्टि में तप का वह क्षेत्र बना जहाँ न केवल शारीरिक अनुशासन बल्कि मानसिक विमर्श और सामाजिक विकेंद्रीकरण का अभ्यास भी होता था।

इस परंपरा की स्थापना बाबा कीनाराम के लिए केवल एक धार्मिक कर्तव्य नहीं था, बल्कि यह उनके भीतर पल रहे उस विद्रोही दृष्टिकोण की परिणति थी जो समाज को शुद्ध और अपवित्र, ऊँच और नीच, ब्राह्मण और शूद्र जैसी कृत्रिम श्रेणियों में बाँटने के विरुद्ध खड़ा था। उनकी अघोरी परंपरा का मूल मंत्र यह था कि आत्मा का धर्म कोई वर्ण से तय नहीं होता, वह उसकी साधना से तय होता है। उन्होंने उस अघोरपंथ को स्थापित किया जिसमें शिवत्व को केवल पूजा का विषय नहीं, बल्कि अनुभव की यात्रा बनाया गया। इस परंपरा में वह व्यक्ति सच्चा साधक माना गया जो हर जीवन में चेतना को देख सके, और हर पल को साधना में परिवर्तित कर सके-बिना किसी सामाजिक स्वीकृति की परवाह किए। यही मूल स्वरूप उनकी परंपरा को आज भी जीवित और अप्रतिम बनाए हुए है।

चमत्कार और सामाजिक सुधार

बाबा कीनाराम के जीवन से जुड़ी घटनाएँ केवल आध्यात्मिक साधना का उदाहरण नहीं थीं, बल्कि वे जनचेतना को झकझोरने वाले सामाजिक दृष्टांत भी थीं। उनके चमत्कारों ने जहाँ अघोरी परंपरा को मान्यता दी, वहीं उन्होंने उन माध्यमों से समाज में जमी हुई विषमताओं को भी चुनौती दी। एक बार जब एक शिशु के मृतप्राय शरीर पर उन्होंने केवल अपनी हथेली रखी, तो वह बालक हँसने लगा-इस घटना को गाँव वालों ने चमत्कार मान लिया, लेकिन बाबा ने इसे "करुणा की शक्ति" कहकर समाज के सामने एक नैतिक उत्तरदायित्व की मिसाल रखी। उनके द्वारा एक असहाय वृद्ध को छुआ मात्र से उसकी दृष्टि लौट आने की कथा भी प्रसिद्ध है, जिसे उन्होंने तंत्र या चमत्कार नहीं, "विश्वास का प्रतिफल" कहा।

अपने समय में जब जाति और अस्पृश्यता के कारण भोजन तक अलग किया जाता था, बाबा कीनाराम ने क्रीम-कुंड आश्रम में ऐसी व्यवस्था की जहाँ सभी जातियों के लोग एक पंक्ति में बैठकर एक साथ भोजन करते थे। उन्होंने समाज से कहा कि जब मृत्यु सबके लिए एक समान है, तो जीवन क्यों नहीं? उनका यह विचार केवल भाषण नहीं था, वह स्वयं उस जीवन शैली को जीते थे। उन्होंने रोगियों की सेवा की, भूखों को भोजन कराया और काशी के घाटों पर जीवों के प्रति करुणा को सर्वोच्च धर्म बताया। इस प्रकार बाबा कीनाराम के चमत्कार किसी दिखावे का विषय नहीं, बल्कि एक

जागृति के बीज थे, जिसने लोगों को यह समझाया कि सच्चा तप वही है जो मानवता के लिए उपयोगी हो।

जीवन के अंतिम वर्ष और आध्यात्मिक विरासत

बाबा कीनाराम के जीवन के अंतिम वर्षों में उनकी साधना और भी अधिक शांत, लेकिन प्रभावशाली होती चली गई। उन्होंने वाणी से कम और मौन से अधिक संवाद करना शुरू कर दिया। काशी के क्रीम-कुंड आश्रम में रहते हुए वे अब केवल साधना में लीन नहीं थे, बल्कि उन शिष्यों की साधना का मूक पर्यवेक्षण कर रहे थे, जो देश के कोने-कोने से आकर उनके चरणों में दीक्षा ले रहे थे। ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने महासमाधि लेने से पहले अपने प्रमुख शिष्यों को बुलाकर केवल इतना कहा-"अब मेरा कार्य तुम सबमें प्रस्फुटित होना चाहिए।" इसके बाद उन्होंने एकांत कक्ष में प्रवेश किया और शरीर का परित्याग कर दिया।

उनकी समाधि आज भी वाराणसी में स्थित क्रीम-कुंड आश्रम में भक्तों के लिए एक जीवंत प्रेरणा स्थल है। यह स्थान केवल एक समाधि नहीं, बल्कि एक ऊर्जा केंद्र बन गया है, जहाँ साधक ध्यान करते हैं, मौन व्रत रखते हैं और अपनी आत्मा को भीतर झाँकने की शिक्षा देते हैं। बाबा कीनाराम की विरासत उनके ग्रंथों, जैसे विवेकसार और रामरसाल, में ही सीमित नहीं है; वह हर उस साधक की दृष्टि और व्यवहार में जीवित है, जो मृत्यु को अंधकार नहीं बल्कि आत्मप्रकाश के रूप में देखना चाहता है। उनकी शिक्षाएँ आज भी

समय से परे होकर यही कहती हैं-शिवत्व केवल उपासना से नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना, करुणा और समरसता से प्राप्त होता है। यही वह गूढ़ सत्य है जिसे उन्होंने अपने जीवन और मौन से साधकों को सौंप दिया।

अध्याय 12:
शिव, प्रथम अघोरी – वह देवता जो संन्यासी बना

सृष्टि और संहार का शाश्वत संतुलन

ब्रह्मांड की रचना और विनाश का सिद्धांत किसी भी धर्म-दर्शन में इतना सशक्त और सम्यक नहीं दिखता जितना शिव के माध्यम से प्रकट होता है। सृष्टि की गति कोई स्थायी रेखीय प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह एक लयबद्ध आवर्तन है-नृत्य की भाँति, जो न तो पूर्ण सृजन है और न ही पूर्ण संहार, बल्कि उनके मध्य का एक संतुलित आवेश है। इसी नृत्य में शिव के दो रूप प्रकट होते हैं-निर्माणकर्ता और विनाशक। वे सृष्टि के आरंभ से लेकर उसके अंतिम क्षण तक की समग्र चेतना हैं, जो स्वयं को अनेक रूपों में विभाजित कर ब्रह्मांड की हर इकाई में व्याप्त हो जाती हैं। यही कारण है कि शिव को ‘महाकाल ’कहा गया-जो स्वयं समय से परे हैं और समय को संचालित करते हैं।

शिव का यह स्वरूप अघोरी परंपरा की नींव रखता है। उन्होंने हमें यह बोध कराया कि जब तक हम रचना और संहार को दो विरोधी शक्तियों के रूप में देखेंगे, तब तक हम भ्रम में रहेंगे। शिव, जिनका शरीर राख से ढका होता है, जो कपालमाला धारण करते हैं और जिनका निवास शमशान है, वह सिखाते हैं कि मृत्यु कोई अन्त नहीं, बल्कि उस चेतना का पुनर्ग्रहण है, जिससे सब कुछ उत्पन्न हुआ है।

अघोरी परंपरा में इसी दृष्टिकोण से शमशान कोई डरावना या अपवित्र स्थान नहीं, बल्कि वह बिंदु है जहाँ जीवन का अंहकार समाप्त होता है और आत्मा को उसकी मूल प्रकृति का साक्षात्कार होता है। शिव के इस दर्शन ने साधकों को मृत्यु से भयभीत होने की बजाय उसे स्वीकारने और उससे परे जाने की शिक्षा दी।

अनादि का जन्म और ब्रह्मांडीय तटस्थता

शिव की उत्पत्ति किसी दैवी माता या पिता से नहीं मानी जाती। वे 'स्वयंभू 'हैं-स्वतः उत्पन्न, बिना कारण के, बिना शुरुआत के। यह अवधारणा केवल एक पौराणिक कल्पना नहीं है, बल्कि एक दार्शनिक वक्तव्य है जो यह बताता है कि चेतना का कोई प्रारंभ नहीं होता, वह सनातन होती है। ब्रह्मा, विष्णु, और अन्य देवताओं की उत्पत्ति की कथाएँ भले ही विशेष प्रसंगों में आती हैं, पर शिव को सदा से विद्यमान माना गया है-जैसे आकाश, जैसे शून्यता, जैसे वह मौन जो हर ध्वनि से पूर्व उपस्थित होता है। यही कारण है कि वे योगियों के आराध्य बनते हैं, क्योंकि वे स्वयं प्रथम योगी हैं-आदि योगी, जिन्होंने योग की सभी दिशाओं, समस्त प्राणायामों और समाधियों का बीज स्वयं में धारण किया।

जब शिव समाधिस्थ होते हैं, तब वे शरीर, मन और आत्मा की सीमाओं से परे चले जाते हैं। यह समाधि केवल एक ध्यान की मुद्रा नहीं, बल्कि वह स्थिति है जहाँ साधक और साध्य, द्वैत और अद्वैत, समय और काल-सब विलीन हो जाते हैं। अघोरी साधना इसी

अवस्था की प्राप्ति का प्रयत्न है। शमशान में बैठा साधक, अपने भीतर शिव को जागृत करता है और स्वयं को चेतना के उस स्तर तक ले जाता है जहाँ हर भेद समाप्त हो जाता है। यह कोई रहस्यमय या भयावह अनुभव नहीं, बल्कि गहन आत्म-साक्षात्कार का क्षण होता है। शिव के इस जन्मरहित स्वरूप को समझना, अघोरी साधना के मूल रहस्य को समझने के समान है। यही वह ज्ञान है जो साधक को परंपरागत धर्म के डर और नियमों से ऊपर उठाकर शिवत्व की ओर ले जाता है।

शोक से तप तक – सती के त्याग से शिव की आत्म-क्रांति

शिव और सती की कथा केवल एक दिव्य प्रेम की गाथा नहीं, बल्कि अघोरी साधना की आधारशिला है। सती के आत्मदाह के बाद शिव का विलाप, उनका विचलन और उनका आत्मविमुख होना केवल एक भावनात्मक प्रतिक्रिया नहीं थी, बल्कि यह उस ब्रह्मांडीय सन्नाटे का उद्घोष था जो उन्हें अंततः अघोरी साधना की ओर ले गया। जब सती ने यज्ञ में अपने शरीर को त्यागा, तब शिव के भीतर वह तात्त्विक टूटन हुई, जो किसी भी चेतन सत्ता को पूरी तरह से परिवर्तित कर सकती है। उन्होंने उस शोक को रोने-धोने में नहीं, बल्कि गहन तप और आत्मनिरीक्षण में बदला। उन्होंने हर सामाजिक ढाँचे को नकारा, हर नियम को तोड़ा, और उस पथ पर चल पड़े जहाँ न कोई बंधन था, न कोई संबंध-केवल निर्विकल्प ध्यान था।

शिव का यह रूप ही अघोरी स्वरूप है-वह संन्यासी जो शमशान की राख में समाधिस्थ होकर अपनी चेतना को उस स्तर तक पहुंचाता है, जहाँ न कोई सती है, न कोई दक्ष, न यज्ञ, न देवता-केवल वह स्वयं है। अघोरियों के लिए यह अवस्था सबसे उच्चतम साधना की स्थिति है, जहाँ समस्त मोह, राग, द्वेष, भय, और मोहभंग जलकर राख हो जाते हैं। यही कारण है कि अघोरी शिव को अपना आराध्य मानते हैं, क्योंकि उन्होंने भौतिक और आध्यात्मिक दोनों रूपों में हर सुख-दुख को पार कर चेतना की अंतिम अवस्था को प्राप्त किया।

शमशान में ध्यान – आत्मा की निर्लिप्तता की साधना

शिव का शमशान में स्थित होना कोई संयोग नहीं, बल्कि वह प्रतीकात्मक संदेश है जो अघोरी साधना के मूल मंत्र को प्रकट करता है। जब शिव सती की मृत्यु के बाद शमशान में प्रविष्ट हुए, तो वे उस स्थान को चुनते हैं जहाँ प्रत्येक जीवन का अंत होता है-जहाँ शरीर केवल राख बनकर रह जाता है और आत्मा अपने मूल स्वरूप में विलीन होती है। शमशान वह क्षेत्र है जहाँ सामाजिक पहचानें, रिश्तों की परिभाषाएँ, शरीर का अभिमान, और अहंकार-सब कुछ जलकर समाप्त हो जाते हैं। यही कारण है कि अघोरी साधना में शमशान सर्वोच्च तपस्थली माना गया है।

शिव की यह अवस्था हमें सिखाती है कि मृत्यु से भागना नहीं है, बल्कि मृत्यु को समझना है। जो भयभीत हैं, वे जीवन को पूरी तरह

नहीं जान सकते, क्योंकि वे उसके अंत को नकारते हैं। लेकिन शिव, जिन्होंने शवों के मध्य ध्यान किया, जो मृत देह की राख से अपने शरीर को ढकते हैं, वे यह दर्शाते हैं कि मृत्यु जीवन का द्वार है, भय का नहीं। अघोरी भी यही करते हैं-वे मृत्यु की उपस्थिति को उस रहस्य के रूप में देखते हैं जो चेतना को उसकी पराकाष्ठा तक पहुँचा सकती है। यही शिव का वह रूप है जो अघोरियों की साधना को दिशा देता है-एक ऐसी साधना जो न भय को स्वीकार करती है, न मोह को, केवल सत्य को।

शक्ति की पुनःस्थापना – पार्वती के तप से शिव की लौटन

सती के वियोग और शमशान की साधना में डूबे शिव जब संसार से विमुख हो चुके थे, तब शक्ति ने पुनः पार्वती रूप में जन्म लिया-न केवल शिव की अर्धांगिनी बनने के लिए, बल्कि उन्हें अघोरी शून्यता से जाग्रत कर सृष्टि में पुनः लाने हेतु। पार्वती का तप, उनकी साधना और धैर्य यह दर्शाते हैं कि स्त्री शक्ति केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि ब्रह्मांडीय संतुलन को स्थिर करने वाली चेतना है। उन्होंने न तो शिव को एक देवता के रूप में पुकारा, न उन्हें किसी सामाजिक उत्तरदायित्व से जोड़ा, बल्कि उन्होंने स्वयं को उस रूप में साधा जो शिव की जड़ता को फिर से स्पंदित कर सके। यह तप किसी प्रेम की पुकार नहीं थी, बल्कि चेतना की उस तरंग का आह्वान था जो शिव की समाधि को भेद सके।

पार्वती का यह प्रयास इस बात का प्रतीक है कि जब कोई साधक संपूर्ण रूप से तप में उतरता है, तो वह न केवल स्वयं को परिवर्तित करता है, बल्कि ब्रह्मांड की शून्यता को भी पुनः जीवंत कर सकता है। जब शिव ने अपनी समाधि खोली, तो उन्होंने पार्वती को एक अलग सत्ता के रूप में नहीं, बल्कि अपने ही स्वरूप की पूर्ति के रूप में देखा। यही वह क्षण था जहाँ शिव और शक्ति का मिलन हुआ-एक ऐसा ब्रह्मांडीय योग, जिसमें संन्यास और सृष्टि, शून्यता और ऊर्जा, दोनों ने समरस होकर ब्रह्मांड को संतुलन दिया। यह मिलन अघोरी साधना के लिए गहरा प्रतीक है-यह दर्शाता है कि परम शून्यता में भी ऊर्जा की संभावनाएँ निहित होती हैं, और शिवत्व केवल त्याग नहीं, पुनर्सृजन का माध्यम भी है।

शिव का अनंत अघोरी स्वरूप – भय से परे, सत्य की आकृति

पार्वती से विवाह के बाद भी शिव का अघोरी स्वरूप समाप्त नहीं हुआ। उन्होंने फिर भी शमशान नहीं छोड़ा, न ही अपनी खोपड़ियों की माला, राख का लेप, या समाधि की परंपरा। वे अब भी वह ही हैं जो मृत्यु को वंदनीय मानते हैं, जो मृत शरीरों को साधना का माध्यम बनाते हैं, जो हर उस सत्य को स्पर्श करते हैं जिससे मानव आँखें चुराती हैं। शिव का यह रूप आज भी अघोरी साधकों की चेतना में जीवित है-वे उन्हें गुरु मानते हैं, वह पथप्रदर्शक जो भय, अपवित्रता और मृत्यु के पार जाने की राह दिखाता है।

अघोरी शिव की पूजा केवल मंदिरों में नहीं करते, बल्कि शमशानों में, राख में, अस्थियों में, और अपने स्वयं के भीतर करते हैं। शिव का अघोरी स्वरूप यह सिखाता है कि भय से मुक्ति का मार्ग भय का सामना करने से ही निकलता है। जब शिव खोपड़ियों से पात्र बनाते हैं, या शव के पास ध्यान करते हैं, तो वे यह नहीं कहते कि मृत्यु से दूर रहो, बल्कि वे कहते हैं-मृत्यु को देखो, समझो, और जानो कि यह भी तुम्हारे ही भीतर है। अघोरी साधना इसी अद्वैत का पाठ पढ़ाती है। शिव स्वयं इस अद्वैत का मूर्त रूप हैं-वे वह सत्ता हैं जो भूत, भविष्य और वर्तमान से परे, चेतना के उस बिंदु पर स्थित हैं जहाँ 'मैं 'और 'तू 'का भेद समाप्त हो जाता है। यही कारण है कि शिव केवल देवता नहीं, बल्कि साधक के अंतरतम सत्य का दर्पण हैं।

अध्याय 13:
अघोरियों का दैनिक जीवन और साधना

सुबह की साधना और प्रार्थना

अघोरियों के लिए सुबह की साधना और प्रार्थना केवल एक धार्मिक परंपरा नहीं, बल्कि आत्मिक जागरण की प्रक्रिया है। साधक प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में उठकर उस समय का चयन करता है जब संपूर्ण सृष्टि स्थिर, शांत और ऊर्जा से पूरित होती है। यह समय शरीर, मन और प्राण की समरसता के लिए आदर्श माना जाता है। साधक शमशान या किसी एकांत स्थल पर बैठकर, एकाग्र चित्त से ध्यान करता है और भैरवी के तांत्रिक मंत्रों का जाप करता है, जैसे कि "ॐ नमः शिवाय" या "ॐ भैरवी भयंकरि स्वाहा", जो उसकी चेतना को मृत्यु के पार की अनुभूति की ओर ले जाते हैं। भौतिक स्तर पर वह गंगाजल से स्नान करता है, शरीर पर राख का लेप करता है, और मिट्टी तथा चंदन से बने यंत्रों को साक्षात शक्ति के प्रतीक के रूप में स्थापित करता है। यह सब न केवल शुद्धिकरण का प्रतीक होता है, बल्कि साधक की साधना को समर्पण और विनम्रता के माध्यम से गहन बनाता है।

यह साधना, आत्मा को सांसारिक बंधनों से मुक्त करने की प्रक्रिया है। कुंडलिनी ऊर्जा के जागरण की दिशा में यह पहला चरण होता है, जहाँ साधक की चेतना मूलाधार चक्र से ऊपर उठने लगती

है। वह संसार के हर भेद और द्वैत को त्यागकर उस सत्य की ओर अग्रसर होता है, जहाँ कुछ भी स्थायी नहीं है-ना शरीर, ना नाम, ना पहचान। यहां गुरु की भूमिका अत्यंत निर्णायक होती है, जो साधक को केवल मन्त्रों और क्रियाओं का अर्थ नहीं, बल्कि उनके भीतर छिपे दर्शन को समझने में मदद करता है। साधक इस प्रार्थना और साधना के माध्यम से एक ऐसी स्थिति तक पहुंचता है जहां वह भौतिक और आत्मिक का भेद खो देता है, और केवल चेतना मात्र रह जाता है-ना कुछ बनने की आकांक्षा, ना कुछ खोने का भय। यही उस साधना का गूढ़तम लक्ष्य होता है, जो साधक को दिनभर की तपस्या के लिए तैयार करता है।

शमशान में ध्यान और निवास

शमशान, अघोरियों के लिए केवल मृत्यु का स्थान नहीं, बल्कि जीवन के परे का बोध कराने वाली प्रयोगशाला है। अघोरी इस स्थलीय सत्य की गोद में बैठकर, भैरवी की मूर्ति, यंत्र या त्रिशूल के समक्ष ध्यान करते हैं। यह ध्यान केवल ध्यान की पारंपरिक परिभाषा तक सीमित नहीं होता; यह जीवन और मृत्यु के बीच के भेद को समाप्त करने की प्रक्रिया है। साधक भैरवी की उपस्थिति को एक मूर्त रूप में नहीं, बल्कि शमशान की अग्नि, राख, और शून्यता में अनुभव करता है। ध्यान की इस अवस्था में, वह अपने अस्तित्व को गलाने लगता है-अहं, शरीरबोध, और स्मृति सब पिघलने लगती हैं। वह मंत्रों के साथ अपनी आत्मा को उस गति में प्रवाहित करता है, जो न

समय में बंधी है, न स्थान में। यह प्रक्रिया अक्सर अमावस्या या पूर्णिमा की रातों में की जाती है, जब चंद्रमा की शक्ति और ऊर्जा सर्वोच्च होती है।

शमशान में रहकर साधक अपने भीतर के शोर को शांत करता है और बाह्य दुनिया की हर अपेक्षा को त्याग देता है। यह निवास उसके लिए तप का स्थान बन जाता है, जहाँ हर चिता की अग्नि उसे स्मरण कराती है कि अस्तित्व अनित्य है और उसी अनित्य में शाश्वत का अनुभव छिपा है। शमशान में मृत्यु के साथ एकाग्रता साधक को माया के भुलावे से बाहर निकालती है। वह यह समझने लगता है कि मृत्यु कोई अंत नहीं, बल्कि चेतना के एक नये चरण की शुरुआत है। गुरु यहाँ साधक को यह सिखाते हैं कि शमशान में ध्यान केवल भय और निर्भीकता की परीक्षा नहीं है, बल्कि एक ऐसा माध्यम है जिससे वह ब्रह्म से एकात्मता स्थापित करता है। यह अभ्यास साधक को अंततः उस अनुभूति तक ले जाता है, जहाँ वह अपने अस्तित्व को समय, मृत्यु और जीवन के बंधनों से परे अनुभव करता है।

एकांत साधना और सामाजिक पृथक्करण

एकांत अघोरी साधना का अनिवार्य तत्व है, जो साधक को समाज, पहचान और सीमाओं के भ्रम से मुक्त कर एक गहन आंतरिक यात्रा पर भेजता है। अघोरी जानबूझकर समाज से दूरी बनाकर शमशान, पर्वतों या घने जंगलों में एकांत की खोज करते हैं, जहाँ उन्हें अपने मन के स्तर पर मौन का सामना करने का अवसर मिलता है।

यहाँ वे किसी भी बाह्य विकर्षण या सामाजिक भूमिका से रहित होते हैं। इस मौन में साधक न कोई नाम होता है, न कोई कर्तव्य, केवल एक अनुभव होता है-आत्मा का। यंत्र, त्रिशूल, कपाल आदि जैसे प्रतीक उनके साधना के उपकरण मात्र होते हैं, जो उनका ध्यान केंद्रित करते हैं और चेतना को अंतर्मुखी बनाते हैं। इन प्रतीकों का प्रयोग केवल तांत्रिक रूप में नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक रूप से होता है, जिससे साधक अपनी ही चेतना की परतों को समझ सके।

सामाजिक पृथक्करण, अघोरी साधक के लिए पलायन नहीं बल्कि उद्देश्यपूर्ण त्याग है। वह जानता है कि समाज की मान्यताएं, आचार और मानदंड साधक को बाह्य छवि में उलझा सकते हैं, जिससे आत्म की खोज भ्रमित हो सकती है। तांत्रिक ग्रंथों में इस 'विरक्ति 'को आत्मशोधन का अनिवार्य मार्ग बताया गया है। साधक जब एकांत में प्रवेश करता है, तब वह अपने भीतर छिपी शक्तियों, भय, मोह और अज्ञानता से आमना-सामना करता है। यह कठिन तपस्या उसे धीरे-धीरे 'स्व 'के परे ले जाती है, जहां उसका अस्तित्व केवल ऊर्जा का एक कण भर रह जाता है। गुरु इस प्रक्रिया को सुरक्षित और प्रभावी बनाते हैं, यह सुनिश्चित करते हुए कि एकांत साधना साधक को सामाजिक विक्षेपों से मुक्त रखे, लेकिन आत्ममुग्धता से नहीं। इस एकांत के मध्य, साधक जब भैरवी की अनुभूति करता है, तब वह जान लेता है कि आत्मा का विस्तार किसी समाज, भाषा या मान्यता से नहीं, बल्कि मौन के उस गूढ़ सागर से होता है, जिसमें डूबने से ही आत्म-साक्षात्कार संभव है।

प्रतीकों और मंत्रों का उपयोग

अघोरियों की साधना में प्रतीकों और मंत्रों का उपयोग केवल एक बाह्य विधि नहीं, बल्कि गहन तांत्रिक और आत्मिक प्रक्रिया होती है, जिसके माध्यम से साधक अपने भीतर की चेतना को भैरवी की शक्ति से जोड़ता है। यंत्र, त्रिशूल, खप्पर, कपाल, और राख जैसे प्रतीक अघोरी साधना में शिव और भैरवी की उपस्थिति के स्थूल रूप होते हैं, जो साधक को बाह्य जगत से हटाकर आंतरिक ब्रह्मांड की यात्रा पर ले जाते हैं। उदाहरणस्वरूप, त्रिशूल त्रिगुणों (सत्व, रज, तम) और त्रिकाल (भूत, भविष्य, वर्तमान) पर विजय का प्रतीक होता है, जबकि खप्पर अहंकार के समर्पण का द्योतक है। इन प्रतीकों का उपयोग साधक को मृत्यु के पार ले जाकर उसे उस अवस्था में लाने का प्रयास करता है जहाँ न तो कोई नाम होता है, न कोई रूप-केवल अस्तित्व का एक व्यापक अनुभव होता है। इन्हें साधना स्थल पर विशेष विधि से स्थापित किया जाता है, जिनमें मंत्र शक्ति का संचार कर उन्हें ऊर्जावान और जाग्रत किया जाता है।

मंत्रों की भूमिका इस साधना में अत्यंत प्रभावशाली होती है। "ॐ भैरवी भयंकरि स्वाहा" और "ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे" जैसे मंत्र केवल ध्वनि नहीं, बल्कि चेतना को कंपन देने वाले कम्पनात्मक स्पंदन होते हैं, जो साधक के सूक्ष्म शरीर पर कार्य करते हैं। ये मंत्र उसके विचार, इच्छाएँ, और मन के विक्षेपों को शुद्ध कर उसे आत्मा के मूल स्वरूप से जोड़ते हैं। मंत्रजाप की विशेषता यह है

कि यह चेतना को सीमाओं से मुक्त कर उस ब्रह्मरंध्र तक पहुँचाता है जहाँ आत्मा और परमात्मा का मिलन होता है। अघोरी गुरु मंत्रों के सही उच्चारण, क्रम, और ध्यान की विधियाँ सिखाते हैं, ताकि मंत्र साधना का केंद्र बने न कि केवल एक यांत्रिक क्रिया। इस मंत्र साधना के समय साधक की एकाग्रता, उसकी देह की स्थिति, और साधना स्थल की पवित्रता अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती है, क्योंकि यही वह माध्यम है जिससे वह भैरवी की कृपा को अपने भीतर उतारता है और आत्मबोध की ओर अग्रसर होता है। इस प्रकार प्रतीकों और मंत्रों का प्रयोग अघोरी साधना को केवल एक विधि नहीं, बल्कि एक जीवंत तंत्र में परिवर्तित कर देता है, जहाँ हर ध्वनि और हर वस्तु आत्मा की मुक्ति का साधन बन जाती है।

आहार और शारीरिक शुद्धि

अघोरी जीवनशैली में आहार और शारीरिक शुद्धि का विशेष स्थान है, जो साधना को न केवल स्थूल बल्कि सूक्ष्म स्तर पर भी प्रभावित करता है। अघोरी अपने भोजन को साधना का एक रूप मानते हैं, न कि केवल पेट भरने का साधन। उनका आहार अत्यंत सीमित, सात्विक और नियंत्रित होता है। फल, कंद, शुद्ध जल, और शमशान में प्राप्त प्रसाद उनके प्रमुख आहार स्रोत होते हैं। कुछ विशेष तांत्रिक अनुष्ठानों में पंचमकार के तत्वों का प्रयोग किया जाता है, परंतु वह भी अत्यधिक संयम और मंत्र शक्ति के साथ किया जाता है ताकि शरीर और मन शुद्ध रह सकें। आहार का उद्देश्य केवल पोषण

नहीं, बल्कि साधक की चेतना को स्थिर करना, मन को अनुशासित करना और तप को धार देना होता है। अघोरी इस विश्वास के साथ भोजन करते हैं कि प्रत्येक अन्नकण शिवमय है, और जो भीतर जा रहा है, वह साधना का अंग बनकर आत्मा की अग्नि में आहुति है।

शारीरिक शुद्धि के लिए अघोरी गंगाजल से स्नान, शमशान की मिट्टी और राख का लेप, तथा नित्यकर्म में प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करते हैं। ये क्रियाएँ केवल शरीर को स्वच्छ करने के लिए नहीं, बल्कि शरीर को एक योग्य साधन, यंत्र, और मंदिर में रूपांतरित करने के लिए होती हैं। शमशान की राख को शरीर पर लगाना मृत्यु के बोध और जीवन की नश्वरता की स्मृति का प्रतीक है। इससे अहंकार और शरीराभिमान का क्षय होता है, और साधक आत्मा की अमरता की ओर उन्मुख होता है। कमंडल में संग्रहित जल, जो भैरवी की कृपा और साधक के तप का प्रतीक होता है, उससे देह और साधना स्थल की शुद्धि की जाती है। इस समग्र प्रणाली का उद्देश्य केवल बाह्य सफाई नहीं, बल्कि अंतःकरण की निर्मलता, मन की स्थिरता, और साधना की गति को कुंडलिनी के जागरण तक ले जाना होता है।

गुरु-शिष्य परंपरा और निष्ठा

अघोरी परंपरा में गुरु केवल एक शिक्षक नहीं, बल्कि ब्रह्म का साकार रूप होता है, जो शिष्य को अज्ञान से ज्ञान, माया से मुक्ति, और मृत्यु से ब्रह्मत्व की ओर ले जाता है। अघोरी साधना अत्यंत

गूढ़, रहस्यमय और जोखिमपूर्ण होती है, जिसमें बिना गुरु के मार्गदर्शन के साधक पथभ्रष्ट हो सकता है। गुरु शिष्य को न केवल तांत्रिक अनुष्ठानों की विधियाँ सिखाता है, बल्कि साधना की प्रत्येक अवस्था में उसकी चेतना का संयोजन भी करता है। वह उसे सिखाता है कि कब, कहाँ और किस प्रकार यंत्र, मंत्र और तांत्रिक सामग्री का प्रयोग करना है, और किस प्रकार साधना को केवल बाह्य अनुष्ठान न रहने देकर, एक आतंरिक यात्रा में बदलना है। गुरु स्वयं भैरवी की कृपा से दीक्षित होता है और उसी कृपा को शिष्य तक संप्रेषित करता है, जिससे साधक में संयम, श्रद्धा, और आत्मनियंत्रण के गुण विकसित होते हैं।

इस परंपरा में निष्ठा सबसे बड़ा गुण है। शिष्य को अपने गुरु के प्रति पूर्ण समर्पण, विनम्रता और विश्वास रखना होता है। यह निष्ठा साधना में प्राणशक्ति का कार्य करती है, जो गुरु द्वारा निर्देशित हर शब्द को ईश्वरीय आदेश मानती है। अघोरी साधना में कई ऐसे अनुष्ठान होते हैं, जैसे शव-साधना, जो साधक के मन और शरीर की सीमाओं को पार करने की चुनौती होती है; वहां पर गुरु की उपस्थिति उसे भय, भ्रम और मोह से बचाती है। गुरु के प्रति अटूट श्रद्धा साधक को अपने सीमित स्वभाव से बाहर निकालती है और उसे उस ब्रह्म-तत्व की ओर ले जाती है, जहाँ से सभी द्वैत समाप्त हो जाते हैं। गुरु ही वह दीपक है, जो अंधकारमय मार्ग में प्रकाश फैलाकर शिष्य को आत्म-साक्षात्कार की अग्नि तक ले जाता है। गुरु-शिष्य परंपरा इस प्रकार अघोरी साधना की रीढ़ है, जो साधक को केवल साधना नहीं,

जीवन के हर क्षण को भैरवी की उपस्थिति में बदलने की दृष्टि देती है।

प्रकृति के साथ सामंजस्य

अघोरी साधना में प्रकृति के साथ सामंजस्य एक अत्यंत गहन और मूलभूत पक्ष है, जो साधक को सांसारिकता और भौतिकता के जाल से मुक्त कर दिव्यता के संपर्क में लाता है। अघोरी प्रकृति को केवल दृश्य जगत का हिस्सा नहीं, बल्कि भैरवी का सजीव और साक्षात स्वरूप मानते हैं। उनके लिए वृक्ष, पर्वत, नदियाँ, पशु-पक्षी, और यहां तक कि शमशान की राख-सभी में दिव्यता की अनुभूति होती है। साधक उन स्थानों को चुनते हैं जहाँ प्रकृति की उपस्थिति तीव्र और अवरोधहीन होती है-जैसे घने जंगल, ऊँचे पहाड़ या एकांत घाट। वहाँ वे भैरवी के साथ संवाद साधते हैं, जो शब्दों से परे है। यह संवाद प्रतीकों, ऊर्जा, और मौन की भाषा में होता है, जिसमें हर पेड़ की शाखा, हर पत्ता, हर झरना साधक को जीवन और मृत्यु के रहस्यों से परिचित कराता है। अघोरी यह मानते हैं कि जिस प्रकार प्रकृति बिना प्रयास के जन्म, वृद्धि और विनाश का चक्र पूरा करती है, वैसे ही साधना को भी सहज, निरपेक्ष और स्वाभाविक होना चाहिए।

प्रकृति के साथ इस गहरे सामंजस्य से अघोरी केवल आत्मा के रहस्यों में प्रवेश ही नहीं करता, बल्कि वह पर्यावरणीय संतुलन और संरक्षण की चेतना भी अपने भीतर विकसित करता है। वे न तो प्रकृति का दोहन करते हैं और न ही उसमें जबरन हस्तक्षेप करते हैं, बल्कि

उस ऊर्जा के अनुरूप स्वयं को ढालते हैं। इस दृष्टिकोण से अघोरी जीवन शैली एक आध्यात्मिक पारिस्थितिकी रचती है, जिसमें जीवन का प्रत्येक कण एक तपस्वी बन जाता है। साधक जब भैरवी की आराधना प्रकृति के बीच करता है, तो वह केवल एक अनुष्ठान नहीं करता, बल्कि प्रकृति की गहन उपस्थिति में अपने अस्तित्व को विसर्जित कर देता है। यही विसर्जन उसे अहंकार से मुक्त कर ब्रह्मांडीय एकता का बोध कराता है। इस प्रक्रिया में न कोई मंत्र आवश्यक होता है, न कोई सामग्री-सिर्फ मौन, केवल मौन, जहाँ प्रत्येक झींगुर की ध्वनि और पत्तियों की सरसराहट भी भैरवी का संदेश बन जाती है।

रात्रि साधना की विशेषता

रात्रि, विशेष रूप से अमावस्या की रात्रि, अघोरी साधना के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण काल होता है क्योंकि इस समय ब्रह्मांडीय और तांत्रिक ऊर्जा अपने चरम पर होती है। शमशान जैसे स्थानों में, जहाँ रात्रि की निस्तब्धता और रहस्यमय वातावरण उपस्थित होता है, साधक भैरवी की कृपा का आह्वान करता है। रात्रि साधना का उद्देश्य केवल आत्म-साक्षात्कार नहीं होता, बल्कि साधक के भीतर दबी हुई छायाओं, भय, और मानसिक सीमाओं का पूर्ण उन्मूलन भी होता है। अंधकार के मध्य साधक अपने अंतःकरण की गहराइयों में उतरता है और वहाँ वह उन प्रश्नों का सामना करता है, जिनसे सामान्य व्यक्ति जीवन भर कतराता है-मृत्यु का रहस्य, आत्मा की सत्ता, और

अस्तित्व का लक्ष्य। शमशान की जली हुई चिताओं की गंध, राख का स्पर्श, और मौन की गर्जना इस साधना को एक तीव्र और अति सूक्ष्म प्रक्रिया बना देते हैं, जिसमें साधक मृत्यु के रहस्य को केवल देखता नहीं, बल्कि उसे स्वयं में समाहित कर लेता है।

रात्रि साधना में आग, भस्म, और विशिष्ट मंत्रों का उपयोग करके भैरवी की उग्र और करुणामयी दोनों शक्तियों को जागृत किया जाता है। यह साधना एक गहन रूपांतरण की यात्रा होती है, जिसमें साधक केवल अपने अवचेतन की परतें नहीं खोलता, बल्कि उन्हें पूर्णतः विलीन भी कर देता है। अमावस्या की रात्रि में चंद्रमा का लोप भी साधक को यह स्मरण कराता है कि प्रकाश के स्रोत बाहर नहीं, भीतर हैं-और यह भी कि भीतर का अंधकार ही उस बोध का द्वार है, जिसे पार कर आत्मा अपने मूल स्वरूप को जान सकती है। इस साधना में गुरु का मार्गदर्शन विशेष महत्त्व रखता है, जो साधक को आंतरिक भय, भ्रम और मानसिक विक्षोभों से पार पाने की विधियाँ सिखाता है। रात्रि साधना अघोरी परंपरा की वह विधि है, जहाँ शून्यता, मौन और अंधकार साधक के सहयोगी बन जाते हैं और वह उस एकत्व की स्थिति में प्रवेश करता है, जहाँ कोई द्वैत, कोई भेद, कोई सीमा शेष नहीं रहती।

सादगी और त्याग का जीवन

अघोरी परंपरा में जीवन की सादगी और सम्पूर्ण त्याग साधना की आत्मा माने जाते हैं। यह जीवन शैली सामाजिक मान्यताओं,

भौतिक सुख-सुविधाओं, और वैभवपूर्ण संसाधनों के पूर्ण निषेध पर आधारित होती है। अघोरी लंगोट, भस्म, कपाल और त्रिशूल जैसे केवल अत्यावश्यक प्रतीकों के साथ जीते हैं और भोजन, वस्त्र, आवास जैसे विषयों में न्यूनतम साधनों का चयन करते हैं। उनका यह त्याग किसी दिखावे या कठोरता का प्रतीक नहीं होता, बल्कि यह उस आंतरिक निर्णय का प्रतिफल होता है, जिसमें साधक संसार की माया को भ्रम मानकर उससे मुक्त होना चाहता है। अघोरी जानते हैं कि सादगी केवल जीवनशैली नहीं, बल्कि एक गहन आंतरिक अनुशासन है-जो साधक को इच्छाओं के जाल से बाहर निकालता है और आत्मा को उसके मूलस्वरूप की ओर ले जाता है। इस जीवनशैली में उन्हें सामाजिक उपहास, बहिष्कार और अवमानना का भी सामना करना पड़ता है, लेकिन अघोरी इन्हें साधना की अग्नि मानकर स्वीकारते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि यह अग्नि ही अंततः उन्हें निर्मल और निर्विकार बनाएगी।

त्याग का यह मार्ग साधक को प्रकृति के अधिक निकट लाता है, जहाँ वह अपनी जरूरतों को सीमित करके पृथ्वी के संसाधनों पर बोझ नहीं बनता, बल्कि उसका पूरक बनता है। अघोरी त्याग केवल भौतिक वस्तुओं का नहीं करते, बल्कि अपने अहंकार, पहचान, और महत्वाकांक्षाओं का भी त्याग करते हैं। यह त्याग उन्हें मृत्यु के साथ सीधे संवाद की क्षमता देता है, जिसमें वे न तो मृत्यु से डरते हैं, न जीवन से मोह रखते हैं-बल्कि दोनों को एक ही सत्ता के दो रूप मानते हैं। उनका यह त्याग उन्हें भैरवी की कृपा के योग्य बनाता है, जो

साधक के भीतर छुपे हुए ब्रह्मस्वरूप को प्रकट करने वाली शक्ति है। जब एक अघोरी सादगी और त्याग के इस पथ पर स्थिर हो जाता है, तो उसकी साधना न केवल व्यक्तिगत मुक्ति की ओर अग्रसर होती है, बल्कि वह एक जीवंत उदाहरण बनकर दूसरों को भी इस मार्ग की ओर आकर्षित करता है। यही कारण है कि अघोरी जीवनशैली केवल साधना का माध्यम नहीं, बल्कि एक जीवंत दर्शन है-जो साधक को उस अवस्था में ले जाता है, जहाँ केवल मौन, केवल उपस्थिति और केवल शाश्वत चेतना शेष रह जाती है।

शरीर को तपाना और अग्नि साधना

अघोरी साधना में अग्नि का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह केवल एक तात्त्विक प्रतीक नहीं, बल्कि साधक के भीतर स्थित कर्मों के शोधन और आत्मा के परिष्करण की ज्वाला है। अघोरी जब शमशान में अग्नि के समक्ष बैठता है, तो वह उसे केवल एक दाहक प्रक्रिया के रूप में नहीं देखता, बल्कि उसे आत्मशुद्धि का माध्यम मानता है। अग्नि में बैठकर किया जाने वाला ध्यान, जिसे 'अग्नि साधना 'कहा जाता है, साधक को आंतरिक रूप से तपाकर उसकी मानसिक ग्रंथियों को खोलता है। इस प्रक्रिया में वह शरीर पर शमशान की राख का लेप करता है और अग्नि के ताप में स्थिर भाव से बैठकर केवल 'भैरवी 'का ध्यान करता है। यह साधना एकांत रात्रि में, विशेष रूप से अमावस्या की रात की जाती है, जब अग्नि और शून्यता का समागम साधक के भीतर एक गहन ऊर्जा प्रवाह उत्पन्न

करता है। यह शरीर को जला देने की नहीं, बल्कि शरीर को तपाकर स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर ले जाने की साधना है। इस साधना में कोई मंत्रोच्चार नहीं, कोई यंत्र नहीं, केवल मौन, ताप और एकाग्रता होती है।

इस साधना का उद्देश्य केवल आध्यात्मिक नहीं, भौतिक स्थिरता भी है। शरीर को सीमाओं में रखकर साधक स्वयं को आत्मा के अनुभव के लिए तैयार करता है। अग्नि का ताप उसके अहंकार, क्रोध, कामना और मोह जैसे अवगुणों को जलाकर एक प्रकार की तपस्विता उत्पन्न करता है। यह क्रिया तांत्रिक दृष्टि से भैरवी के 'भस्म स्वरूप 'का ध्यान है, जहाँ अग्नि केवल दाह नहीं, बल्कि जागृति और निर्विकारता का प्रतीक है। अघोरी इस अग्नि को अपने भीतर की चैतन्यता से जोड़ता है, और जब शरीर ताप से थकने लगता है, तब मन खाली होने लगता है-और उसी खालीपन में भैरवी की अनुभूति होती है। यह प्रक्रिया साधक को आधुनिक जीवन की जड़ताओं से मुक्त करके एक ऐसे स्तर पर पहुँचाती है, जहाँ जीवन, मृत्यु, पीड़ा और सुख के बंधन समाप्त हो जाते हैं। यह अग्नि साधना, अघोरी परंपरा की एक अनोखी विधा है, जो केवल साहस नहीं, बल्कि आत्मानुशासन और संपूर्ण समर्पण की मांग करती है।

नेत्र साधना और दृष्टि का उत्केंद्रण

अघोरी साधना में 'नेत्र साधना 'एक अत्यंत रहस्यमयी और कम प्रचारित विधि है, जो दृष्टि की ऊर्जा को जागृत करने पर केंद्रित

है। इस साधना में अघोरी अपने नेत्रों को किसी एक बिंदु पर केंद्रित करता है-यह बिंदु कभी श्मशान में जलती चिता की लौ हो सकती है, कभी शव की आँखें, और कभी भैरवी के त्रिनेत्र का प्रतीक। यह साधना केवल एकाग्रता नहीं, बल्कि आत्मचिंतन और ब्रह्म के अवलोकन की प्रक्रिया है। अघोरी मानते हैं कि दृष्टि केवल देखने का माध्यम नहीं, बल्कि ऊर्जा का प्रवाह है, जिससे चेतना जागृत होती है। जब साधक बिना पलक झपकाए किसी एक बिंदु पर दृष्टि स्थिर करता है, तो उसका मन शून्य होता जाता है, और एक ऐसे स्तर पर पहुँचता है जहाँ केवल 'होना 'शेष रहता है। यह साधना साधक के चित्त को गहराई से भीतर की ओर मोड़ती है, जहाँ वह भैरवी की दृष्टि से स्वयं को देख पाता है।

यह नेत्र साधना केवल मानसिक अनुशासन का अभ्यास नहीं है, यह तंत्र की उस धारा का हिस्सा है, जहाँ दृष्टि स्वयं साधना बन जाती है। इस विधि में साधक धीरे-धीरे दृष्टि के माध्यम से सूक्ष्म ऊर्जा को नियंत्रण में लाता है और उसे 'आज्ञा चक्र 'में केंद्रित करता है। कई अघोरी इसे 'दृष्टि की व्रत्ति 'कहते हैं, जहाँ देखने की प्रक्रिया निःशब्द ध्यान का माध्यम बन जाती है। जब साधक शव की आँखों में देखते हुए मौन बैठता है, तब उसे न केवल मृत्यु की निर्जीवता का अनुभव होता है, बल्कि यह अनुभूति उसके भीतर जीवन के सूक्ष्मतम कंपन को जागृत करती है। यह साधना साधक को अहंकार, भय और द्वैत से परे ले जाकर उसे साक्षी भाव की ओर ले जाती है। भैरवी की कृपा इस साधना में तब प्रकट होती है, जब साधक देखना छोड़ देता

है और दृष्टा बन जाता है। अघोरी परंपरा में यह साधना एक अत्यंत गोपनीय और गुरु द्वारा प्रदान की जाने वाली विधि मानी जाती है, जो साधक को अंततः आत्मचेतना के उस स्तर पर पहुँचाती है, जहाँ हर दृश्य, हर प्रतीक, और हर रूप केवल 'एक 'बन जाता है।

रक्त और अस्थि के प्रतीक का तांत्रिक प्रयोग

अघोरी परंपरा में रक्त और अस्थियाँ केवल मृत्यु के प्रतीक नहीं, बल्कि जीवन और चेतना के गहन स्त्रोत माने जाते हैं। तांत्रिक दृष्टि से, रक्त जीवन की गति है और अस्थियाँ स्थायित्व का प्रतिनिधित्व करती हैं। अघोरी इन दोनों का प्रयोग अपनी साधना में विशेष विधियों से करते हैं, जो सामान्य दृष्टि से भयावह प्रतीत हो सकती हैं, परंतु तांत्रिक सिद्धांतों के अनुसार ये साधक को शरीर के सीमित बोध से परे ले जाती हैं। रक्त का उपयोग विशेष अनुष्ठानों में यंत्रों पर चढ़ावे के रूप में किया जाता है, जो साधक की जीवनी शक्ति को मंत्रबद्ध कर उसे भैरवी की चेतना से जोड़ता है। अस्थियाँ, विशेषतः खोपड़ी (कपाल), ध्यान के लिए पात्र या यंत्र रूप में प्रयुक्त की जाती हैं, जो मृत्यु की उपस्थिति के माध्यम से साधक को आत्मनिरीक्षण और निर्विकारता के शिखर तक ले जाती हैं।

यह प्रयोग केवल एक रूढ़ि नहीं, बल्कि अघोरी जीवनदृष्टि का केंद्रबिंदु है, जहाँ मृत्यु को भय नहीं, बल्कि आत्मसाक्षात्कार का माध्यम माना जाता है। अस्थियों पर ध्यान करते हुए अघोरी यह अनुभव करता है कि जो भंगुर है, वही चिरस्थायी है-क्योंकि उस

भंगुरता में ही शाश्वत चेतना की झलक है। रक्त की कुछ बूँदें जब मंत्रित होकर अर्घ्य रूप में चढ़ाई जाती हैं, तब वे केवल शरीर की नहीं, आत्मा की आहुति होती हैं। यह बलिदान अघोरी साधक को उसके भीतर छिपे पशुत्व और अहंकार से मुक्त करता है। भैरवी की साधना में यह प्रक्रिया केवल एक प्रतीकात्मक कर्मकांड नहीं, बल्कि चेतना के उस स्तर तक पहुँचने का साधन है, जहाँ जीवन और मृत्यु का कोई अंतर नहीं रह जाता। यह विधि तांत्रिक साधना के उन प्राचीन रहस्यों में से है, जो केवल दीक्षित साधक को ही प्रदान की जाती है। इस प्रकार, रक्त और अस्थियों का प्रयोग अघोरी साधना में वह सेतु है, जो साधक को स्थूलता से सूक्ष्मता, और पशुत्व से दिव्यता की ओर ले जाता है।

अध्याय 14:
अघोरी जीवनशैली में शारीरिक और मानसिक अनुशासन

शारीरिक अनुशासन का महत्व

अघोरी जीवनशैली में शारीरिक अनुशासन केवल संयम का अभ्यास नहीं, बल्कि साधक के आध्यात्मिक शरीर को जागृत करने का एक माध्यम है। भैरवी की तांत्रिक साधना में यह स्पष्ट निर्देश है कि शरीर यदि अपवित्र और असंयमित हो, तो चेतना जागरण असंभव है। इसलिए अघोरी साधक दैनिक जीवन में शरीर की शुद्धता को उतना ही महत्व देते हैं जितना वे ध्यान या मंत्र जाप को देते हैं। गंगाजल से स्नान, शरीर पर भस्म का लेप, और हठयोग की विधियाँ, साधक के स्थूल और सूक्ष्म शरीर दोनों को ऊर्जावान बनाती हैं। यह अनुशासन उन्हें स्थिरता, शक्ति और एकाग्रता देता है, जो तांत्रिक साधना की पहली शर्त है। इसके साथ ही, वे शरीर के भीतर बहने वाली ऊर्जा – प्राण, अपान, समन, उदान और व्यान – के संतुलन को योगिक अभ्यासों द्वारा साधते हैं, जिससे साधक भीतर से स्थिर और शक्तिशाली बनता है। गुरु इस प्रक्रिया में केवल निर्देश नहीं देता, बल्कि साधक के शरीर की प्रकृति के अनुसार शारीरिक साधनाओं को ढालता है, जिससे यह अनुशासन कठोर तपस्या न बनकर सहज मार्ग बन जाए।

शारीरिक अनुशासन का दूसरा पक्ष प्रकृति और शक्ति के साथ संतुलन से जुड़ा होता है। अघोरी परंपरा में यह स्पष्ट है कि शरीर केवल भोग का साधन नहीं, बल्कि शक्ति की वाहिका है। इसीलिए वे सात्विक आहार, मौन व्रत, और सीमित भौतिक संपर्क को अपनाते हैं। वे शरीर को तेज, स्थिर और ग्रहणशील बनाते हैं ताकि वह भैरवी की ऊर्जा को बिना बाधा के धारण कर सके। वे यह मानते हैं कि यदि शरीर अनुशासित न हो, तो साधना केवल बाह्य प्रदर्शन बन जाती है। इस अनुशासन का ही परिणाम है कि अघोरी भीषण मौसम, भूख, पीड़ा, और मृत्युसदृश स्थितियों में भी अडिग रहते हैं। यह अनुशासन उन्हें उस अवस्था तक ले जाता है, जहाँ शरीर साधना का उपकरण बन जाता है – न आश्रय, न बाधा। इस प्रकार, शारीरिक अनुशासन अघोरी जीवनशैली की आत्मा है, जो साधक को स्वयं की सीमाओं से परे ले जाकर चेतना की शिखर अवस्था तक पहुँचाता है।

मानसिक अनुशासन और ध्यान

अघोरी साधना का मूल इस बात में निहित है कि मन यदि नियंत्रित न हो तो कोई भी साधना विफल है। इसलिए मानसिक अनुशासन अघोरी परंपरा का वह स्तंभ है, जिस पर समस्त तांत्रिक प्रयास टिका होता है। अघोरी साधक मन की चंचलता, वासना, स्मृति और भविष्य की चिंता – इन सभी को साधने के लिए ध्यान का आश्रय लेते हैं। ध्यान की प्रक्रिया केवल आँखें बंद करने की

यांत्रिक क्रिया नहीं, बल्कि एक शुद्ध अंतर्दृष्टि है, जिसमें साधक अपने भीतर की सभी परतों को विदीर्ण करता है। अघोरी अमावस्या की रात को, जब चंद्र की रोशनी लुप्त होती है और तम प्रधान हो जाता है, भैरवी के यंत्र, त्रिशूल या शव के समक्ष बैठते हैं। यह ध्यान केवल आत्मा को नहीं, समूचे मन को भैरवी की शक्ति में विलीन कर देता है। ध्यान में वे बाह्य शोर और भीतरी स्मृतियों को एकाग्रता की अग्नि में समर्पित करते हैं, जिससे विचारों का विक्षोभ शांत होता है और केवल मौन शेष रहता है। यह मौन ही उनकी चेतना का प्रवेशद्वार बनता है।

मानसिक अनुशासन की परिपक्वता केवल ध्यान की अवधि तक सीमित नहीं रहती, बल्कि यह साधक के संपूर्ण व्यवहार में झलकती है। अघोरी हर क्रिया को ध्यानपूर्वक करते हैं – चाहे वह जल ग्रहण करना हो, श्मशान की राख लेना हो, या भैरवी के यंत्र पर दृष्टि जमाना। उनके लिए मानसिक अनुशासन एक निरंतर अभ्यास है, जो उन्हें अहंकार, द्वेष और भय जैसी मानसिक ग्रंथियों से मुक्त करता है। गुरु इस अनुशासन को केवल उपदेश द्वारा नहीं, बल्कि अपने मौन व्यवहार और स्वयं के उदाहरण से सिखाता है। यह अनुशासन साधक को आत्मसमीक्षा, संतुलन और विवेक की शक्ति देता है, जिससे वह बाह्य और आंतरिक प्रलोभनों से अप्रभावित रहता है। ध्यान और मानसिक अनुशासन मिलकर साधक को उस स्थिति तक पहुँचाते हैं, जहाँ मन न विचार करता है, न प्रतिक्रिया – केवल साक्षी बनकर चेतना के रस में डूबा रहता है।

शारीरिक और मानसिक अनुशासन का संतुलन

अघोरी जीवनशैली की सबसे गहन विशेषता यह है कि वह शरीर और मन दोनों को साधना का समर्पित क्षेत्र मानती है। शारीरिक अनुशासन केवल शरीर को तपाने की प्रक्रिया नहीं, बल्कि एक ऐसा आधार है, जिस पर मानसिक अनुशासन टिकता है। इसी तरह, मानसिक अनुशासन बिना शारीरिक संतुलन के टिक नहीं सकता। अघोरी साधक इस द्वैध साधना को समरस करते हैं। वे दिन की शुरुआत गंगाजल से स्नान और योग से करते हैं, जिससे शरीर ऊर्जा-संचरण के लिए तैयार हो जाए। इसके बाद वे रात्रि की शांति में ध्यान, मंत्र-जाप और तांत्रिक अनुष्ठानों का अभ्यास करते हैं। यह संतुलन उन्हें थकान, अन्यमनस्कता और साधना की ऊब से बचाता है। गुरु का कार्य इस संतुलन को समझाना और उसे साधक के जीवन में घटित कराना होता है। वह समय, स्थान, और साधक की प्रवृत्ति के अनुसार शारीरिक और मानसिक अनुशासनों को समायोजित करता है।

इस संतुलन का व्यापक प्रभाव साधक के जीवन पर स्पष्ट होता है। जब शरीर स्वस्थ और अनुशासित होता है, तो मन सरलता से एकाग्र होता है। जब मन स्थिर होता है, तो शरीर में रोग और जड़ता प्रवेश नहीं कर सकते। यह द्वैत नहीं, द्वैधता है – जहाँ दो पक्ष मिलकर एक ही साध्य की ओर ले जाते हैं। अघोरी इस संतुलन को प्रकृति के चक्रों के अनुरूप समझते हैं – जैसे दिन और रात, गति और विश्राम,

श्वास और निःश्वास। यही कारण है कि उनकी साधना दिखावे या उन्माद का नहीं, बल्कि गहन एकाग्रता और चेतना का मार्ग बनती है। शारीरिक और मानसिक अनुशासन का यह संतुलन उन्हें भैरवी की कृपा की पात्रता प्रदान करता है, जो अंततः उन्हें आत्म-साक्षात्कार के उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ साधक शरीर और मन दोनों को साधन समझकर उन्हें त्याग देता है, और केवल 'स्व 'शेष रहता है – पूर्ण, निःशब्द और मुक्त।

शमशान का वातावरण और अनुशासन

शमशान अघोरी जीवनशैली में न केवल एक भौतिक स्थान है, बल्कि एक जीवंत आध्यात्मिक क्षेत्र भी है, जहाँ अनुशासन का अभ्यास अपने चरम पर होता है। यह वह स्थल है जहाँ अघोरी अपने दैनिक जीवन के सभी कर्मों को तपस्या में बदलते हैं। शमशान की शांति, राख से ढका धरातल, और निरंतर उपस्थित मृत्यु की अनुभूति साधक को अनुशासन का वास्तविक अर्थ सिखाती है। यहाँ कोई सामाजिक दिखावा नहीं होता, न ही सांसारिक व्यवस्था की कोई बाध्यता होती है; केवल साधक और उसका आत्मिक लक्ष्य होता है। यह वातावरण साधक के मन को नियंत्रित करने का अद्वितीय अवसर प्रदान करता है, क्योंकि वह हर क्षण मृत्यु की छाया में जीते हुए अनुशासन के माध्यम से अपने भय, इच्छाओं और मोह को नियंत्रित करना सीखता है। गुरु इस प्रक्रिया का सशक्त मार्गदर्शक होता है, जो शिष्य को यह सिखाता है कि किस प्रकार शमशान की

नीरवता और उसकी प्रतीत होती विकरालता को साधना के एकाग्र साधन में रूपांतरित किया जा सकता है।

शारीरिक रूप से अघोरी शमशान में नियमित रूप से योग, स्नान, और शुद्धि के विशेष अनुष्ठानों का पालन करते हैं, जो उन्हें स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर ले जाते हैं। वहीं मानसिक रूप से वे ध्यान और तांत्रिक विधियों का अभ्यास करते हैं, जिससे चेतना गहराई में प्रवेश करती है। शमशान का वातावरण केवल भय नहीं बल्कि मुक्तता भी देता है-मृत्यु के पार जाने का संकेत, और माया से बाहर निकलने का द्वार। यह अनुशासन, जीवन और मृत्यु के बीच एक चेतन सेतु बनाता है, जो साधक को अपने भीतर के ब्रह्म से जोड़ता है। प्रकृति, जो शमशान में अपने सबसे नग्न स्वरूप में उपस्थित रहती है, साधक को हर सांस में नारी-शक्ति और प्रकृति के चक्रों का स्मरण कराती है। इस प्रकार, शमशान अघोरी जीवन का वह अनुशासनात्मक विश्वविद्यालय बन जाता है, जहाँ प्रतिपल साधक अपने अस्तित्व का पुनर्निर्माण करता है।

गुरु-शिष्य परंपरा और अनुशासन

अघोरी जीवनशैली में गुरु-शिष्य परंपरा वह जीवंत धारा है, जिससे अनुशासन की जड़ें पोषित होती हैं। गुरु को न केवल मार्गदर्शक, बल्कि चेतना का दर्पण माना जाता है, जो शिष्य को उसकी आंतरिक जटिलताओं से परिचित कराता है। शिष्य, जो स्वयं को अज्ञानता, मोह और माया के बंधनों में जकड़ा पाता है, गुरु के

अनुशासनात्मक प्रशिक्षण द्वारा आत्मविजय की दिशा में आगे बढ़ता है। गुरु अघोरी साधना की सभी विधाओं-चेतना नियंत्रण, तांत्रिक अनुष्ठान, मौन साधना, और जीवनशैली-में अनुशासन का सूत्रपात करता है। वह शिष्य को न केवल अनुशासन का बाह्य अभ्यास सिखाता है, बल्कि उसे भीतर के तमस और रजस को भी नियंत्रण में लाने की विधियाँ देता है।

शमशान में गुरु के सान्निध्य में किया गया अनुशासन, भौतिक व मानसिक-दोनों स्तरों पर साधक के व्यक्तित्व को नये स्वरूप में ढालता है। योग, प्राणायाम, और मंत्र-जाप जैसे साधन केवल अभ्यास नहीं रह जाते, बल्कि वे गुरु के निर्देशों में संकल्प की शक्ति से सजीव अनुशासन बन जाते हैं। गुरु साधक को यह भी सिखाता है कि प्रकृति, शरीर, और आत्मा के मध्य तालमेल कैसे बैठाया जाए, ताकि साधक अनुशासन को एक बाहरी बाध्यता नहीं बल्कि आंतरिक जागरूकता के रूप में अनुभव करे। अघोरी परंपरा में यह परंपरा शुद्धता और उत्तरदायित्व का प्रतीक है-गुरु की आज्ञा में साधना, और अनुशासन में आत्म-विकास। यह परंपरा भैरवी की कृपा को पाने का द्वार भी है, जहाँ गुरु उसकी ऊर्जा का संवाहक बनकर साधक को उस परम अवस्था तक पहुँचाता है, जहाँ केवल अस्तित्व, केवल चेतना शेष रह जाती है।

तांत्रिक अनुष्ठानों में अनुशासन

तांत्रिक अनुष्ठान अघोरी साधना की रीढ़ हैं, और इनमें अनुशासन की भूमिका केंद्रीय होती है। यह अनुशासन केवल विधि-विधान तक सीमित नहीं, बल्कि वह एक सूक्ष्म संतुलन है-ऊर्जा, भावना, और संकल्प के मध्य। अमावस्या या पूर्णिमा की रातों में, जब साधक शव के समक्ष बैठकर भैरवी की उपासना करता है, तब वह प्रत्येक मंत्र, हर यंत्र, और प्रत्येक गति को गुरु के निर्देशों के अनुसार दोहराता है। तांत्रिक अनुशासन यहां केवल साधक की आंतरिक शक्ति को नियंत्रित नहीं करता, बल्कि उसे उस अवस्था में ले जाता है जहाँ चेतना स्थिर, निर्द्वंद्व और जाग्रत हो जाती है।

अनुष्ठानों में प्रयुक्त सामग्री-शव की राख, शमशान की मिट्टी, यंत्र, खप्पर, और हवन की अग्नि-सभी भैरवी की शक्ति को केन्द्रित करने के माध्यम बनते हैं, किंतु इनका उपयोग अनुशासनहीन हो तो साधना विक्षिप्ति की ओर भी ले जा सकती है। इसीलिए गुरु द्वारा स्थापित अनुशासन साधक के लिए सुरक्षा कवच का कार्य करता है, जो उसे मानसिक और आध्यात्मिक संतुलन में रखता है। यह अनुशासन न केवल साधना को सफल बनाता है, बल्कि भैरवी की शक्ति के प्रति साधक के भीतर श्रद्धा और मर्यादा को भी पुष्ट करता है। इन अनुष्ठानों के माध्यम से साधक भैरवी के रूपों में केवल शक्ति नहीं, बल्कि अनुशासन से उपजे सौंदर्य और शांति को भी अनुभव करता है।

अनुशासन और आत्म-नियंत्रण

अघोरी जीवनशैली में आत्म-नियंत्रण अनुशासन का सर्वोच्च रूप है। यह केवल क्रियाओं का नियंत्रण नहीं, बल्कि इच्छाओं, प्रतिक्रियाओं, और प्रवृत्तियों की ऊर्जा को दिशा देने की साधना है। अघोरी साधक आत्म-नियंत्रण को भोजन, नींद, संभोग, और वाणी तक सीमित नहीं रखते, बल्कि इसे विचारों, भावनाओं, और चेतना की तरंगों तक विस्तार देते हैं। वह जानता है कि भैरवी की कृपा केवल तब संभव है, जब उसका आंतरिक अस्तित्व संयमित हो, जब वह आत्मविजयी हो। आत्म-नियंत्रण उसे भौतिक सीमाओं से नहीं, बल्कि स्वयं की सीमाओं से पार जाने की क्षमता प्रदान करता है।

इस आत्म-नियंत्रण को साधक शमशान के वातावरण में, गुरु की उपस्थिति में, और भैरवी की कृपा से निरंतर अभ्यास करता है। योग और ध्यान की विधियाँ, उपवास और मौन व्रत, सब इसी अनुशासन के अंग हैं। साधक जानता है कि अगर वह अपनी इंद्रियों को, अपनी प्रतिक्रियाओं को नियंत्रित कर सकता है, तो वह अपने भीतर की असाधारण ऊर्जा को जागृत कर सकता है। यह आत्म-नियंत्रण उसे बाह्य स्थितियों से विचलित नहीं होने देता, और वह जीवन के प्रत्येक क्षण को एक साधना में परिवर्तित कर देता है। यही अनुशासन उसे उस बिंदु तक ले जाता है, जहाँ न कोई इच्छा शेष रहती है, न कोई भय-केवल साक्षीभाव, केवल उपस्थिति, केवल अस्तित्व।

अध्याय 15:
मांस साधना – मृतकों का मांस – मांस साधना का गूढ़ अनुष्ठान

नश्वर को ग्रहण कर अमर को पार करना

मांस साधना, तंत्र के रहस्यमय और पवित्र क्षेत्र में एक ऐसी साधना है, जो मानव चेतना की गहराइयों को झकझोर देती है। यह वह अनुष्ठान है जहाँ पवित्र और अपवित्र, शुद्ध और अशुद्ध की सीमाएँ एक अविभाज्य समग्रता में विलीन हो जाती हैं। यह साधना उस परम वास्तविकता की कगार पर ले जाती है, जहाँ भ्रम के पर्दे अनिश्चित रूप से लहराते हैं, और साधक को उस सत्य का सामना करना पड़ता है जो सभी द्वैतों को नष्ट कर देता है। मांस साधना में मानव मांस का उपभोग करना एक भयावह और सामाजिक रूप से अस्वीकार्य कार्य प्रतीत हो सकता है, लेकिन अघोरी के लिए यह परम वैराग्य का प्रतीक है। यह एक सचेत प्रयास है, जिसमें संस्कारित धारणाएँ-जो हमें शारीरिकता और मृत्यु से भयभीत करती हैं-को पूरी तरह मिटा दिया जाता है। यह स्वयं और ब्रह्मांड के बीच की अंतिम पृथकता को समाप्त करने की प्रक्रिया है, जहाँ साधक न केवल मृत्यु का सामना करता है, बल्कि उसे आत्मसात कर उससे परे जाता है। यह एक ऐसी साधना है जो साधक को उस अनंत चेतना से जोड़ती है, जो सभी रूपों, भेदों, और सीमाओं से परे है।

मांस साधना का उद्देश्य न तो मृत्यु के क्षय में आनंद लेना है, न ही शरीर की भौतिक भूख को तृप्त करना। यह नश्वरता के परम संस्कार में सहभागिता है, एक ऐसा कृत्य जो चेतना को मृत्यु के भ्रम से मुक्त करता है। अघोरी इस साधना के माध्यम से उस सीमा को मिटाता है, जो जीवित और मृत, स्वयं और अन्य के बीच खड़ी है। यह भोग या अपवित्रता नहीं, बल्कि विलय का परम कार्य है, जो साधक को अस्तित्व और विनाश के द्वैतवादी प्रतिमानों से मुक्त करता है। मांस साधना में, मृतकों का मांस एक सेतु बन जाता है-दृश्य और अदृश्य, क्षणिक और अनंत के बीच का एक मार्ग। यह साधक को उस भय से मुक्त करता है, जो सभी प्राणियों को पुनर्जन्म के चक्र से बाँधे रखता है, और उसे उस अमर सत्य की साक्षात्कार की ओर ले जाता है, जो मृत्यु के पर्दे के पार चमकता है।

दैवीय विधान – मांस साधना का पौराणिक आधार

मांस साधना की उत्पत्ति तंत्र और शैव परंपराओं के गूढ़ और गुप्त गलियारों में छिपी है, जो प्राचीन पांडुलिपियों के रहस्यमय छंदों में संरक्षित है। यह साधना वैदिक और तांत्रिक ग्रंथों में प्रच्छन्न रूपकों के माध्यम से संकेतित है, जो इसे एक ऐसे मार्ग के रूप में प्रस्तुत करते हैं, जो केवल निर्भीक और आत्म-भ्रम से मुक्त साधकों के लिए है। यह साधना सृष्टि और विलय की कगार पर खड़े होने की हिम्मत माँगती है, जहाँ साधक को बिना झिझक के उस सत्य का सामना करना पड़ता है, जो सभी कुछ को एक करता है। मांस साधना की

कथाएँ शिव-ब्रह्मांडीय भिक्षु, आदि संन्यासी, और अनंत विद्रोही-के इर्द-गिर्द घूमती हैं, जिन्होंने शमशान को अपनी साधना का केंद्र बनाया। यह साधना केवल एक अनुष्ठान नहीं, बल्कि एक दार्शनिक और आध्यात्मिक क्रांति है, जो साधक को शुद्धता और अशुद्धता, पवित्र और अपवित्र के भेदों से परे ले जाती है।

एक प्राचीन कथा के अनुसार, जब ऋषि और साधु संन्यास और शुद्धता के कठोर नियमों के माध्यम से आत्मज्ञान की खोज कर रहे थे, तब शिव शमशान में बिना किसी घृणा या श्रद्धा के भटकते थे। उन्होंने त्यागे गए को गले लगाया, अस्वीकृत को ग्रहण किया, और उन लपटों के बीच तांडव किया, जो सब कुछ राख में बदल देती थीं। जब स्वर्गीय देवताओं ने शिव को मृतकों के अवशेषों का उपभोग करते देखा, वे भयभीत होकर पीछे हट गए और इसे धर्म के पवित्र नियमों का उल्लंघन बताया। शिव ने उनकी ओर देखा, उनका चेहरा न विचलित था, न पश्चातापपूर्ण। उन्होंने मुस्कुराकर कहा: "यदि सब कुछ अनंत का प्रकटीकरण है, तो क्या पवित्र है और क्या अपवित्र? यदि सब कुछ चेतना का खेल है, तो क्या शुद्धता है और क्या अशुद्धता? यदि मैं मृतकों के मांस का उपभोग करता हूँ, तो क्या मैं स्वयं को अपवित्र करता हूँ, या पृथकता के भ्रम को नष्ट करता हूँ?" यह प्रश्न देवताओं को मौन कर गया, और मांस साधना उन साधकों का मार्ग बन गया, जो क्षणिक और अनंत के बीच की सभी बाधाओं को मिटाना चाहते हैं।

दार्शनिक मूल – मांस के पीछे का अर्थ

अघोरी दर्शन में, मानव शरीर न तो कोई पवित्र मंदिर है, जिसे संरक्षित करना हो, न ही कोई पूजनीय अवशेष, जिसे श्रद्धा से देखा जाए। यह केवल पाँच तत्वों-अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी, और आकाश-का एक क्षणिक प्रकटीकरण है, एक अस्थायी पात्र जो अंततः धूल में लौट जाएगा। मांस साधना में मृतकों का उपभोग करना उन्हें अपवित्र करना नहीं है; यह उनकी अनित्यता का साक्ष्य देना है, शारीरिकता के भ्रम को विलीन करना, और स्वयं अस्तित्व के कच्चे तत्व के साथ एकाकार होना है। यह साधना साधक को उस भय से मुक्त करती है, जो मृत्यु और क्षय से जुड़ा है, और उसे उस सत्य की ओर ले जाती है, जो सभी रूपों और भेदों से परे है। मांस इस साधना में न तो भोजन है, न इच्छा, न ही सामाजिक वर्जना; यह एक सेतु है, जो दृश्य और अदृश्य, क्षणिक और अनंत को जोड़ता है।

मांस साधना का दार्शनिक आधार यह है कि मृत्यु और जीवन एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। अघोरी के लिए, मृतकों का मांस उपभोग करना एक आध्यात्मिक कृत्य है, जो साधक को नश्वरता के भ्रम को आत्मसात करने और उसे पार करने के लिए प्रेरित करता है। यह साधना उस भय को भस्म कर देती है, जो सभी प्राणियों को पुनर्जन्म के चक्र से बाँधे रखता है। मांस का उपभोग करना मृत्यु को ग्रहण करना है, उसका स्वाद लेना, और उसे एक ऐसी प्रक्रिया में बदल देना, जो साधक को अमर सत्य की साक्षात्कार की ओर ले

जाती है। यह एक गहन परिवर्तन है, जो साधक को उस बिंदु तक ले जाता है, जहाँ वह स्वयं को एक अलग सत्ता के रूप में नहीं देखता, बल्कि उस अनंत चेतना का हिस्सा मानता है, जो सभी कुछ को एक करती है। मांस साधना इस दार्शनिक सत्य को मूर्त रूप देती है कि सब कुछ क्षणिक है, और केवल वह सत्य स्थायी है, जो निराकार और असीम है।

मांस साधना का अनुष्ठान – भय से परे का मार्ग

मांस साधना का अनुष्ठान एक ऐसी प्रक्रिया है, जो साधक को भय, आसक्ति, और सांसारिक धारणाओं से पूरी तरह मुक्त करने के लिए डिज़ाइन की गई है। यह केवल एक शारीरिक कृत्य नहीं, बल्कि एक गहन आध्यात्मिक यात्रा है, जो साधक को उस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ वह मृत्यु और जीवन के बीच की खाई को मिटा देता है। शमशान का वातावरण, जहाँ चिताओं की लपटें अनवरत जलती हैं और मृतकों की राख हवा में तैरती है, इस साधना के लिए एक आदर्श मंच प्रदान करता है। यह वह स्थान है, जहाँ साधक उस सत्य का सामना करता है, जो सभी कुछ को धूल में बदल देता है। मांस साधना में, साधक को अपनी सभी संस्कारित धारणाएँ-शुद्धता, नैतिकता, और सामाजिक नियम-त्यागनी पड़ती हैं। यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जो साधक को उस परम सत्य तक ले जाती है, जहाँ कोई भेद, कोई सीमा, और कोई भय नहीं रहता।

इस अनुष्ठान में, साधक शमशान में केवल एक मनुष्य के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐसी चेतना के रूप में प्रवेश करता है, जो विलय की ओर बढ़ रही है। यह एक कठिन परीक्षा है, जो साधक से पूर्ण समर्पण और निर्भयता की माँग करती है। साधक को उस सबसे भयावह सत्य का सामना करना पड़ता है, जिससे अधिकांश लोग भागते हैं-मृत्यु का नग्न रूप। मांस साधना का अनुष्ठान साधक को उस बिंदु तक ले जाता है, जहाँ वह स्वयं को एक अलग सत्ता के रूप में नहीं देखता, बल्कि उस अनंत चेतना का हिस्सा मानता है, जो सभी कुछ को एक करती है।

शव का चयन

मांस साधना में शव का चयन एक अत्यंत महत्वपूर्ण और पवित्र प्रक्रिया है, क्योंकि हर शरीर इस गूढ़ अनुष्ठान के लिए उपयुक्त नहीं होता। अघोरी मानते हैं कि मृतक की आत्मा का सार शारीरिक ढांचे में कुछ समय तक बरकरार रहता है, जो जीवित और मृत लोकों के बीच एक माध्यम बनाता है। इस कारण, शव का चयन केवल बाहरी अवलोकन पर आधारित नहीं होता; यह एक गहन आध्यात्मिक प्रक्रिया है, जिसमें साधक अपनी तांत्रिक दृष्टि और गुरु के मार्गदर्शन का सहारा लेता है। एक परित्यक्त शव, जिसे परिजनों ने दावा नहीं किया, जो शमशान में बिना आँसुओं के छोड़ दिया गया हो, सबसे शक्तिशाली माना जाता है। ऐसा शव सांसारिक आसक्तियों और

अंतिम संस्कारों के बंधनों से मुक्त होता है, जो इसे इस साधना के लिए एक शुद्ध और प्रभावशाली माध्यम बनाता है।

कुछ विशेष शव, जैसे कि किसी योगी या साधु के, और भी पवित्र माने जाते हैं। इन शवों का मांस वर्षों की ध्यान साधना और आध्यात्मिक अनुशासन से संनादित होता है, जिसमें पारगमन की अवशिष्ट कंपन बनी रहती हैं। इसी तरह, असमय या हिंसक मृत्यु-जैसे दुर्घटना या हत्या-से प्राप्त शव में अनसुलझी ऊर्जाएँ होती हैं, जो उन्हें परिवर्तन के लिए शक्तिशाली माध्यम बनाती हैं। चयनित शव को मंत्रों द्वारा पवित्र किया जाता है, और इसे निराकार शक्तियों के लिए एक अर्पण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

उपभोग की क्रिया – स्वयं के भ्रम को निगलना

मांस साधना में उपभोग की क्रिया इस अनुष्ठान का सबसे गहन और परिवर्तनकारी चरण है। यह एक ऐसा कृत्य है, जो साधक को भय, आसक्ति, और सांसारिक धारणाओं से पूरी तरह मुक्त करने के लिए डिज़ाइन किया गया है। इस क्रिया से पहले, अघोरी एक कठोर शुद्धिकरण प्रक्रिया से गुजरता है, जिसमें वह अपनी इंद्रियों को मुक्त करता है और संस्कारित धारणाओं के अंतिम अवशेषों को काट देता है। यह उपभोग भौतिक भूख को तृप्त करने के लिए नहीं, बल्कि स्वयं के भ्रम को नष्ट करने और अनंत के साथ एकाकार होने के लिए किया जाता है। शमशान की अनंत लपटों के नीचे, शमशान भैरवी-जलते घाटों की अधिपति-की अडिग दृष्टि के सामने, साधक मांस को

उठाता है, उसे अपनी जीभ पर रखता है, और निगलता है। यह समर्पण का क्षण है, जहाँ पृथकता का मिथ्या ढह जाता है।

इस क्रिया में, साधक खाने वाले और खाए जाने वाले, जीवित और मृत, साधक और साध्य के बीच की सीमा को मिटा देता है। मृत्यु का स्वाद निराकार का स्वाद है-यह न तो घृणा उत्पन्न करता है, न ही लुभाता है; यह केवल है। यह एक गहन आध्यात्मिक अनुभव है, जो साधक को उस बिंदु तक ले जाता है, जहाँ वह स्वयं को एक अलग सत्ता के रूप में नहीं देखता, बल्कि उस अनंत चेतना का हिस्सा मानता है, जो सभी कुछ को एक करती है। उपभोग की यह क्रिया साधक को मृत्यु के भय से मुक्त करती है और उसे उस सत्य से जोड़ती है, जो सभी रूपों और भेदों से परे है।

निर्भयता की परीक्षा – विलय की अंतिम बाधा

मांस साधना में निर्भयता की परीक्षा साधक के लिए सबसे कठिन और निर्णायक चरण है। नश्वर मांस को ग्रहण करना केवल एक शारीरिक कृत्य नहीं; यह स्वयं के भ्रम को ग्रहण करने और मन की सबसे भयावह संस्कारिता का सामना करने की प्रक्रिया है। यह वह क्षण है, जब साधक को उस सत्य का सामना करना पड़ता है, जिससे अधिकांश लोग भागते हैं-मृत्यु का नग्न और कठोर रूप। इस परीक्षा को पार करने वाला साधक भय, आसक्ति, और धारणा की सभी सीमाओं से परे हो जाता है। वह उस बिंदु तक पहुँचता है, जहाँ वह मृत्यु को न केवल स्वीकार करता है, बल्कि उसे आत्मसात कर

उससे परे जाता है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जो साधक को उस अनंत चेतना से जोड़ती है, जो सभी कुछ का आधार है।

जो साधक इस साधना को पूर्ण करते हैं, वे एक ऐसी अवस्था में प्रवेश करते हैं, जहाँ वे अस्तित्व और विनाश, भूख और तृप्ति, स्वयं और अनंत के बीच कोई भेद नहीं देखते। वे उस सबसे भयावह सत्य का सामना करते हैं, जिससे सभी प्राणी डरते हैं, और उसका स्वाद लेकर भ्रम से अछूते उभरते हैं। यह साधक अब शमशान में एक मुक्त चेतना के रूप में चलता है, जो मृत्यु के पर्दे को पार कर चुका है। वह उस सत्य में विलीन हो जाता है, जो निराकार, असीम, और सर्वव्यापी है। यह निर्भयता की परीक्षा साधक को उस परम स्वतंत्रता तक ले जाती है, जहाँ वह सभी बंधनों से मुक्त होकर अनंत के साथ एकाकार हो जाता है।

शून्य की प्रतिध्वनि – मांस के जाने के बाद क्या रहता है

मांस साधना के अनुष्ठान के बाद, साधक के भीतर जो रहता है, वह न तो स्वाद की स्मृति है, न ही उस कृत्य का साया। यह विलय की गहन शांति है, वह मौन जो सभी कुछ को अपने में समेट लेता है। शरीर, जो कभी एक पवित्र और अभेद्य सीमा माना जाता था, अब वास्तविक नहीं रहता। जन्म और मृत्यु, मांस और रूप, भूख और तृप्ति का भ्रम स्वयं में ढह जाता है। यह वह क्षण है, जब साधक उस सत्य को स्पर्श करता है, जो सभी कुछ को एक करता है-वह सत्य जो निराकार, असीम, और अनंत है। यह साधना साधक को उस बिंदु

तक ले जाती है, जहाँ वह स्वयं को एक अलग सत्ता के रूप में नहीं देखता, बल्कि उस अनंत चेतना का हिस्सा मानता है, जो सभी कुछ को एक करती है।

मृतकों का उपभोग करने वाला अघोरी अब सांसारिक नियमों से बँधा नहीं रहता। वह पृथ्वी पर एक मनुष्य की तरह नहीं चलता, क्योंकि वह उन पर्दों से मुक्त हो चुका है, जो जीवित को मृतकों से अलग करते हैं। उसने संसार को ग्रहण किया और उसे एक क्षणिक स्वप्न, अनंत के रसातल पर टिमटिमाती मरीचिका पाया। वह शमशान में उन लोगों की नजरों से ओझल चलता है, जो अभी भी अपने भ्रमों से बँधे हैं, और उन नियमों से अछूता है, जो क्षणिक को शासित करते हैं। उसने मृत्यु को खाया, और ऐसा करने में, वह उसे पार कर चुका है। यह शून्य की प्रतिध्वनि है-वह गहन मौन जो साधक को उस सत्य से जोड़ता है, जो सभी कुछ को अपने में समेट लेता है, और उसे उस परम मुक्ति तक ले जाता है, जहाँ केवल अनंत रहता है।

अध्याय 16:
कपाल साधना – खोपड़ी का अनुष्ठान

मृतकों के पात्र से पीना, अनंत के रसातल में झाँकना

तंत्र के गहन और रहस्यमय क्षेत्र में, जहाँ अंतिम संस्कार की चिताओं की टिमटिमाती लपटें रात्रि के आकाश को एक अलौकिक चमक से भर देती हैं, और हवा मृतकों की अंतिम साँसों की प्रतिध्वनियों और विलय के अंगारों से संनादित होती है, वहाँ एक ऐसी साधना विद्यमान है जो मानवीय चेतना की सीमाओं को चुनौती देती है-कपाल साधना, अर्थात् खोपड़ी पर ध्यान की साधना। यह केवल एक अनुष्ठान नहीं, बल्कि एक गहन आध्यात्मिक यात्रा है, जो साधक को जीवन और मृत्यु के द्वैत से परे ले जाती है। सामान्य दृष्टिकोण से, यह एक भयावह और अपवित्र कार्य प्रतीत होता है, जो सामाजिक और नैतिक मानदंडों का उल्लंघन करता है। लेकिन अघोरी के लिए, यह शून्य में प्रवेश की दीक्षा है, एक ऐसा पवित्र कृत्य जो सभी चीजों की अनित्यता को गले लगाता है, और मृत्यु के भय को भस्म कर देता है। यह साधना मृत्यु को एक अंत के रूप में नहीं, बल्कि अनंत की ओर एक मार्ग के रूप में देखती है।

कपाल साधना में खोपड़ी को थामना समय को थामने के समान है। यह उस जीवन के खोखले अवशेष को हथेलियों में लेना है, जो कभी प्रेम, लालसा, और हँसी से भरा था। इसके रिक्त नेत्रगुहाओं में

झाँकना स्वयं की मृत्यु का सामना करना है-वह अनिवार्य सत्य जो हर प्राणी का इंतजार करता है। यह न तो मृत्यु के प्रति जुनून है, न ही घृणित में भोग; यह भय का विनाश है, पहचान का उन्मूलन, और शारीरिक स्थायित्व के भ्रम से अंतिम विच्छेद। अघोरी इस साधना के माध्यम से उस परम सत्य तक पहुँचता है, जहाँ स्वयं और अन्य, जीवन और मृत्यु, सब एक ही अनंत चेतना में विलीन हो जाते हैं।

कपाल साधना की पौराणिक कथा – वह खोपड़ी जो दैवीय से चिपकी रही

कपाल साधना की उत्पत्ति तंत्र और शैव परंपराओं की गूढ़ कथाओं में गहरे दबी है, जो उन हवाओं में फुसफुसाई जाती हैं जो शमशान के ऊपर चक्कर लगाती हैं, और उन लोगों की धूल में अंकित हैं जो कभी इस धरती पर चले। यह साधना शिव, अनाम मार्ग के स्वामी, की विरासत है-वह आदि संन्यासी जिसने सांसारिक और दैवीय सभी बंधनों को त्याग दिया, वह शून्य का भटकने वाला जिसके पास एकमात्र संपत्ति एक खोपड़ी थी। पौराणिक कथाएँ इस साधना को शिव के भैरव रूप से जोड़ती हैं, जो उनके सबसे उग्र और रहस्यमय स्वरूपों में से एक है। यह कथा न केवल एक घटना का वर्णन है, बल्कि एक गहन दार्शनिक सत्य को प्रकट करती है, जो अहंकार, कर्म, और मुक्ति के बीच के संबंध को दर्शाता है।

कथा के अनुसार, एक प्राचीन युग में, शिव ने अपने भैरव रूप में ब्रह्मा का पाँचवाँ सिर काट दिया, जो अहंकार और स्वयं को

सृष्टिकर्ता मानने के भ्रम से भरा था। यह सिर, जो ब्रह्मा की आत्ममुग्धता का प्रतीक था, शिव की हथेली से चिपक गया, क्योंकि कर्म का बोझ केवल तलवार के वार से नहीं मिटता। शिव, जो स्वयं संहार और मुक्ति के प्रतीक हैं, इस खोपड़ी को लेकर शमशान में भटकने लगे, एक भिक्षु के रूप में जिसके पास कटोरा केवल यह खोपड़ी थी। यह एक विरोधाभास था-शिव मुक्त थे, फिर भी कर्म के इस प्रतीक से बँधे हुए। यह यात्रा तब समाप्त हुई जब वे काशी पहुँचे, वह पवित्र नगर जहाँ मृत्यु एक अंत नहीं, बल्कि एक मार्ग है। वहाँ, गंगा के अनंत जल में, खोपड़ी उनके हाथ से मुक्त हुई, अपने कर्म के दाग से शुद्ध होकर। इस घटना से कपाल साधना का जन्म हुआ, जो साधक को शिव के मार्ग पर ले जाती है-मृत्यु का सामना करने, विलय का पान करने, और अनंत के रसातल में अडिग दृष्टि से देखने का मार्ग।

खोपड़ी: जागृति का पात्र – हड्डी के पीछे का अर्थ

सामान्य संसार के लिए, खोपड़ी केवल मृत्यु का एक अवशेष है, एक खोखला प्रतीक जो एक समाप्त जीवन की कहानी कहता है। यह भय, नश्वरता, और अंत का प्रतीक है, जिसे लोग देखकर मुँह फेर लेते हैं। लेकिन अघोरी के लिए, खोपड़ी सबसे पवित्र पात्र है, वह प्याला जो चेतना की प्रतिध्वनियों को थामे है। यह पिछले जन्मों के अवशेषों को संजोता है, वह शुद्ध सार जो कभी एक जीवंत प्राणी का हिस्सा था। अघोरी खोपड़ी को केवल हड्डी के रूप में नहीं देखता;

वह इसे एक दार्शनिक और आध्यात्मिक प्रतीक के रूप में समझता है, जो अनित्यता, विलय, और परम सत्य की ओर इशारा करता है। यह एक ऐसा पात्र है जो साधक को उसकी अपनी मृत्यु का सामना करने और उससे परे जाने के लिए प्रेरित करता है।

खोपड़ी महान विलयकर्ता है-यह अनित्यता का प्रतीक है, रूप का क्षय, और पहचान की क्षणभंगुर प्रकृति। यह उस शरीर का अंतिम अवशेष है जो कभी इच्छाओं से भरा था, दुखों को झेलता था, और सुखों की तलाश में भटकता था। अब यह एक खाली पालना है, सभी दिखावों से मुक्त, जो साधक को सिखाता है कि सब कुछ अंततः धूल में लौट जाता है। इससे पीना केवल एक शारीरिक कार्य नहीं, बल्कि ब्रह्मांडीय विलय में सहभागिता है। यह निरंतरता की लालसा को त्यागना है, स्थायित्व की चाह को समर्पित करना। खोपड़ी की गुहा में रिक्तता नहीं, बल्कि बुद्धि छिपी है-हजारों अनकही प्रार्थनाओं की प्रतिध्वनियाँ, अधूरी विचारों की फुसफुसाहट, और वह शांत मर्मर जो मृत्यु के पर्दे के पार बनी रहती है। यह मृत्यु नहीं, बल्कि एक द्वार है, अंत नहीं, बल्कि निराकार जागरूकता का मार्ग है।

कपाल साधना का अनुष्ठान – सीमा से परे की यात्रा

कपाल साधना केवल एक अनुष्ठान नहीं है; यह एक कठिन आध्यात्मिक परीक्षा है, एक अग्नि-परीक्षा जिसे केवल वे निर्भीक साधक स्वीकार करते हैं जो मृत्यु के भय को पूरी तरह नष्ट करने को

तैयार हैं। यह सबसे भयावह सत्य का सामना है-न केवल मृत्यु का, बल्कि स्वयं की पहचान के विलय का। यह पृथकता के भ्रम को त्यागने और अनित्यता की परम वास्तविकता में पूर्ण गोता लगाने की प्रक्रिया है। अघोरी इस साधना में शमशान के मूक और रहस्यमय वातावरण में प्रवेश करता है, जहाँ चिताओं की लपटें और मृतकों की राख उसे उस सत्य की ओर ले जाती हैं जो सभी रूपों और भेदों से परे है।

यह अनुष्ठान एक गहन परिवर्तन की माँग करता है। साधक को अपनी सभी सांसारिक धारणाएँ-शुद्धता, अशुद्धता, नैतिकता-त्यागनी पड़ती हैं। वह शमशान में केवल एक मनुष्य के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐसी चेतना के रूप में प्रवेश करता है जो विलय की ओर बढ़ रही है। कपाल साधना में साधक खोपड़ी को एक वस्तु के रूप में नहीं, बल्कि एक पवित्र पात्र के रूप में देखता है, जो उसे अनंत के साथ जोड़ता है। यह एक ऐसी यात्रा है जो साधक को उस बिंदु तक ले जाती है जहाँ समय, रूप, और पहचान का कोई अर्थ नहीं रहता।

खोपड़ी का चयन – मृतकों का प्याला चुनना

खोपड़ी का चयन कपाल साधना का एक महत्वपूर्ण और पवित्र चरण है, क्योंकि हर खोपड़ी इस अनुष्ठान के लिए उपयुक्त नहीं होती। अघोरी केवल उन खोपड़ियों को चुनता है जो अवशिष्ट आध्यात्मिक ऊर्जा से संनादित हों, जो सांसारिक आसक्तियों से पूरी तरह मुक्त हों। यह चयन केवल बाहरी अवलोकन पर आधारित नहीं होता; यह एक

गहन आध्यात्मिक प्रक्रिया है जिसमें साधक अपनी तांत्रिक दृष्टि और गुरु के मार्गदर्शन का सहारा लेता है। एक परित्यक्त खोपड़ी, जो सांसार के चक्र में अनाथ छोड़ दी गई हो, सबसे शक्तिशाली मानी जाती है। ऐसी खोपड़ी बिना किसी परिजन के दावे, बिना स्मृति या वंश की आसक्ति के होती है, जो इसे विलय के लिए एक शुद्ध माध्यम बनाती है।

यदि खोपड़ी किसी योगी या संन्यासी की हो, तो यह और भी पवित्र मानी जाती है। ऐसी खोपड़ी में वर्षों की ध्यान साधना और त्याग की कंपन संनादित होती हैं, जो इसे पारगमन के लिए एक शक्तिशाली पात्र बनाती हैं। इसी तरह, किसी असमय मृत व्यक्ति की खोपड़ी, जैसे कि दुर्घटना या हिंसक मृत्यु से प्राप्त, में अनसुलझी ऊर्जाएँ बनी रहती हैं। ये ऊर्जाएँ खोपड़ी को एक जीवंत माध्यम बनाती हैं, जो साधक को जीवित और मृत लोकों के बीच की खाई को पाटने में मदद करती हैं। चुनी गई खोपड़ी को मंत्रों द्वारा पवित्र किया जाता है, पवित्र राख से स्नान कराया जाता है, और भैरव के चिह्नों से अंकित किया जाता है। इस प्रक्रिया में खोपड़ी एक साधारण हड्डी से परिवर्तित होकर जागृति का पात्र बन जाती है, जो साधक को अनंत के साथ जोड़ने में सक्षम है।

अनुष्ठानिक पान – खोपड़ी से पीना

खोपड़ी से पीना केवल एक शारीरिक कार्य नहीं है; यह अनित्यता की नदी में डूबने, स्वयं के भ्रम को निगलने, और निराकार

को अपनी जीभ पर चखने की प्रक्रिया है। यह त्याग का अंतिम संस्कार है, जो स्वयं और अन्य, जीवित और मृत के बीच की खाई को मिटा देता है। इस अनुष्ठान में, अघोरी एक साधारण मनुष्य की तरह नहीं पीता; वह एक ऐसी चेतना के रूप में पीता है जो विलय का हिस्सा बन रही है। यह कार्य भौतिक प्यास को शांत करने के लिए नहीं, बल्कि व्यक्तित्व और पहचान के भ्रम को पूरी तरह त्यागने के लिए किया जाता है। यह एक ऐसा क्षण है जब साधक अपनी सीमित पहचान को छोड़कर अनंत के साथ एकाकार हो जाता है।

पान से पहले, अघोरी विलय के मंत्रों का जाप करता है, अदृश्य शक्तियों को आह्वान करता है, और शमशान भैरवी-जलते घाटों की अधिपति, सब कुछ लुप्त होने की मूक साक्षी-को बुलाता है। द्रव, जो विलय के सार में डूबा होता है, कपाल में उँडेला जाता है। यह द्रव न तो देवताओं के लिए, न ही आत्माओं के लिए, बल्कि उस विशाल और उदासीन शून्य के लिए एक अर्पण है। अटल संकल्प के साथ, अघोरी कपाल को उठाता है और उसे समर्पण में पीछे झुकाता है। उस क्षण में, वह साधक, नाम, या सीमा होना बंद कर देता है। यह एक गहन आध्यात्मिक अनुभव है, जो साधक को उस बिंदु तक ले जाता है जहाँ समय, रूप, और व्यक्तित्व का कोई अर्थ नहीं रहता।

खोपड़ी का ध्यान – स्वयं की रिक्तता में झाँकना

खोपड़ी पर ध्यान करना अनित्यता के रसातल में झाँकने का कार्य है। यह विलय का चेहरा देखना है, यह पहचानना कि जो कुछ

भी प्रिय है, जो "मैं" के रूप में दावा किया जाता है, वह एक दिन यही बन जाएगा-मूक, रिक्त, सभी दिखावों से मुक्त। इस प्रक्रिया में, अघोरी खोपड़ी को अपने सामने रखता है और उसकी खोखली नेत्रगुहाओं में अपनी दृष्टि स्थिर करता है। वह साँस से परे की निस्तब्धता में प्रवेश करता है, जहाँ संसार धुंधला हो जाता है और मौन में विलीन हो जाता है। यह ध्यान केवल एक बाहरी वस्तु पर केंद्रित नहीं है; यह स्वयं के विनाश का सामना करने की प्रक्रिया है।

इस ध्यान में, अघोरी हड्डी नहीं देखता, बल्कि अपने स्वयं के अंत का चेहरा देखता है। वह अपनी साँस को मृतकों की साँस की तरह धीमा कर देता है-मापी हुई, वैराग्यपूर्ण, और त्वरा से मुक्त। वह रूप का दावा करना बंद कर देता है, अवलोकनकर्ता और अवलोकित के बीच भेद को पहचानना बंद कर देता है। यह कपाल भाव है-स्वयं का पूर्ण विच्छेद, भैरव के अनंत त्याग में गोता। इस अवस्था में, साधक उस बिंदु तक पहुँचता है जहाँ वह न जीवित है, न मृत, न उपस्थित है, न अनुपस्थित। यह एक ऐसी चेतना है जो ब्रह्मांड की अनंतता में विलीन हो जाती है, जहाँ कोई भेद, कोई सीमा, कोई भय नहीं रहता।

पर्दे से परे चलने वाला अघोरी

जब कपाल साधना का अनुष्ठान पूर्ण होता है, अघोरी अपरिवर्तित नहीं लौटता। उसने मृत्यु को थामा है, निराकार का पान किया है, और स्वयं के अंतिम भ्रम को समर्पित किया है। वह अब

एक साधारण मनुष्य नहीं रहता; वह एक ऐसी चेतना बन जाता है जो पहले ही मृत्यु के पर्दे को पार कर चुकी है। शमशान में उसका चलना एक ऐसे यात्री की तरह है जो अंतिम सीमा को लाँघ चुका है। जिस खोपड़ी को उसने थामा था, वह अब केवल एक वस्तु नहीं, बल्कि एक दर्पण है-जो था उसका अवशेष, और जो फिर कभी नहीं होगा उसकी फुसफुसाहट।

यह साधक अब पीछे मुड़कर नहीं देखता। वह उस संसार का हिस्सा नहीं जो वह छोड़ देता है। उसने मृत्यु का सामना किया है, उसका स्वाद लिया है, और उससे परे कदम रखा है। वह उन लोगों की नजरों से ओझल है जो अभी भी अपने भ्रमों से बँधे हैं, और उन नियमों से अछूता है जो क्षणिक को शासित करते हैं। उसका अस्तित्व अब एक मूक संनाद है, जो अनंत के साथ एकाकार हो चुका है। यह वह क्षण है जब अघोरी स्वयं को भूल जाता है और उस सत्य में विलीन हो जाता है जो सभी रूपों, सभी भेदों, और सभी सीमाओं से परे है।

परम स्वतंत्रता का मार्ग – भ्रम के चक्र को तोड़ना

कपाल साधना मृत्यु या मृतकों पर ध्यान नहीं है; यह स्वयं भय से मुक्ति का मार्ग है। खोपड़ी इस साधना में अंतिम शिक्षक है, वह परम गुरु जो उन सत्यों को फुसफुसाता है जिन्हें शब्द समेट नहीं सकते। यह सवाल पूछता है जिसका सामना हर आत्मा को करना पड़ता है: जब सब कुछ नष्ट हो जाता है, तब क्या रहता है? यह सवाल

साधक को उसकी अपनी सीमित पहचान से परे ले जाता है और उसे उस अनंत चेतना से जोड़ता है जो सभी कुछ का आधार है। कपाल साधना केवल एक बाहरी अनुष्ठान नहीं; यह एक आंतरिक परिवर्तन है, जो साधक को जीवन, मृत्यु, और सभी द्वैतों से मुक्त करता है।

इस मार्ग पर चलने वाला अघोरी शमशान से एक ऐसी चेतना के साथ लौटता है जो अपरिचित और परिवर्तित होती है। वह अब जीवन और मृत्यु, शुद्धता और अशुद्धता, प्रारंभ और अंत के विचारों से चिपकता नहीं। उसने भ्रम का अंतिम बिंदु ग्रहण किया है और इसके स्थान पर असीमता का अमृत पिया है। वह संसार को अब अज्ञानियों की तरह नहीं देखता; उसके लिए कोई पृथकता, कोई द्वैत, कोई विभाजन नहीं। वह संसार में बिना बंधनों, अछूता, और अटूट चलता है-उसका अस्तित्व अब अनंत की निरंतर धारा में एक प्रवाह है। जो उसे देखते हैं, उनके लिए वह एक रहस्यमय और भयावह सत्ता है, लेकिन स्वयं के लिए, वह कुछ भी नहीं है-और यहीं उसकी मुक्ति निहित है।

अंधकार और प्रकाश से परे का मार्ग

अघोरी की यात्रा केवल सांसारिक बंधनों का त्याग नहीं है; यह अनंत के रसातल में एक साहसिक और निर्भीक छलांग है। यह भ्रम का अनावरण है, पहचान का विलय, और अस्तित्व की कगार पर एक नृत्य है, जहाँ स्वयं का विनाश होता है और अनंत प्रकट होता है। शमशान के उन क्षेत्रों में, जहाँ अग्नि सब कुछ भस्म करती है और

हवा मृतकों की फुसफुसाहटों से भारी होती है, अघोरी बिना डरे चलते हैं। वे विलय के अवशेषों-राख, हड्डियों, और खोपड़ियों-में लिपटे होते हैं, उनकी दृष्टि क्षणिक पर नहीं, बल्कि अपरिवर्तनीय सत्य पर टिकी होती है। यह एक ऐसी यात्रा है जो साधक को मृत्यु के भय, सांसारिक आसक्तियों, और सभी द्वैतों से मुक्त करती है।

वे जलते मांस को देखकर हिचकते नहीं, न ही मृत्यु की गंध से पीछे हटते हैं, क्योंकि उनके लिए जीवन और मृत्यु एक ही ब्रह्मांडीय लहर के दो तरंग हैं। वे अस्तित्व से बचने की कोशिश नहीं करते, बल्कि उसे पार करते हैं। वे द्वैत के पर्दों को भेदते हैं और वहाँ खड़े होते हैं जहाँ सृष्टि और विलय एक-दूसरे में लिपटते हैं। अपने ध्यान में, वे निराकार, असीम, और अनंत में विलीन हो जाते हैं, ब्रह्मांड की मूक गूँज में समाहित हो जाते हैं, जहाँ न भय, न आसक्ति उनका पीछा कर सकती। कपाल साधना इस यात्रा का एक महत्वपूर्ण पड़ाव है, जो साधक को उस सत्य तक ले जाता है जो सभी कुछ को एक करता है-वह सत्य जो अंधकार और प्रकाश, जीवन और मृत्यु, स्वयं और अनंत से परे है।

मुक्ति का मार्ग – सृष्टि और विलय का नृत्य

अघोरी के लिए, ब्रह्मांड कोई अच्छाई और बुराई, शुद्धता और भ्रष्टता का द्वंद्व नहीं है। यह एक विशाल, अखंड सागर है, जहाँ सब कुछ पवित्र है और सब कुछ क्षणिक। वे शमशान में चलते हैं, उनके पैर उस धरती को सहलाते हैं जहाँ शरीर धूल में बदल जाते हैं, न कि

शोक के साथ, बल्कि अनंत चक्र के प्रति गहन श्रद्धा के साथ। उनका अस्तित्व एक अखंड ध्यान है, शून्य में एक अडिग दृष्टि, और भ्रम के प्रति एक पवित्र विद्रोह। कपाल साधना इस ध्यान का एक शक्तिशाली रूप है, जो साधक को उस बिंदु तक ले जाता है जहाँ वह स्वयं को भूल जाता है और अनंत में विलीन हो जाता है।

उस प्रज्वलन में, जो सब कुछ भस्म करता है, और उस राख में, जो समय के तट पर बसती है, अघोरी न तो सौंदर्य की तलाश करते हैं, न ही भयावहता, न आशीर्वाद, न अभिशाप-केवल नग्न और अनघटित सत्य। वे ऐसे मंत्र फुसफुसाते हैं जो मन के भ्रमों को चकनाचूर कर देते हैं, ऐसी ध्वनियाँ जो न केवल उनके अपने अस्तित्व में, बल्कि वास्तविकता के ताने-बाने में गूँजती हैं। वे केवल त्याग नहीं करते; वे उन्मूलन करते हैं। वे केवल खोज नहीं करते; वे बन जाते हैं। वे केवल ध्यान नहीं करते; वे विलीन हो जाते हैं। कपाल साधना इस परम मुक्ति का एक मार्ग है, जो साधक को उस सत्य तक ले जाता है जहाँ केवल अनंत रहता है, और सब कुछ उसकी गोद में समाहित हो जाता है।

अध्याय 17:
शव साधना – अघोरियों का मृत्यु के साथ संवाद

शव साधना का रहस्य और आंतरिक उद्देश्य

शव साधना अघोरियों की सबसे गूढ़ और रहस्यमयी साधनाओं में से एक है, जो साधक को जीवन और मृत्यु के बीच की सीमाओं को मिटाने का मार्ग दिखाती है। यह साधना केवल किसी शव पर बैठने या ध्यान करने का बाह्य अनुष्ठान नहीं है, बल्कि यह साधक के भीतर गहन आत्म-परिवर्तन का द्वार खोलती है। अघोरी जब शव पर ध्यान करता है, तो वह उसे केवल एक मृत शरीर के रूप में नहीं देखता, बल्कि उसे एक ऐसा माध्यम मानता है, जिसके माध्यम से वह अपने स्वयं के मरणशील स्वरूप का साक्षात्कार करता है। यह साधना उसे स्मरण कराती है कि जीवन की सभी भौतिक वस्तुएँ क्षणिक हैं, और जो कुछ भी स्थायी है, वह आत्मा या चेतना है। शव का संपर्क, उसकी गंध, उसकी ठंडक और उसकी स्थिरता, साधक के भीतर बसी आकांक्षाओं, मोह, भय और पहचान को एक-एक कर जलाकर राख कर देता है। वह समझता है कि जो वह स्वयं को मानता रहा-वह शरीर, वह नाम, वह प्रतिष्ठा-वास्तव में एक भ्रम है, एक अस्थायी आभास।

इस साधना का उद्देश्य केवल मृत्यु के प्रति संवेदनहीनता नहीं, बल्कि मृत्यु को गले लगाकर उसकी प्रकृति को समझना है। शव

साधना अघोरी के लिए मृत्यु का उत्सव है, न कि भय का कारण। यह अनुष्ठान उसे न तो असहाय बनाता है और न ही शोकमग्न, बल्कि उसे सशक्त करता है कि वह अस्तित्व के गूढ़तम सत्य से साक्षात्कार करे। अघोरी जब शव के साथ बैठता है, तो वह न केवल उसे देखता है, बल्कि स्वयं को उसी स्थिति में कल्पित करता है। यह भाव उसे सांसारिकता की संकीर्ण परिभाषाओं से बाहर निकालकर आत्मा के व्यापक क्षितिज तक पहुँचा देता है। वहाँ, जहाँ जीवन और मृत्यु के बीच कोई अंतर नहीं रह जाता, केवल अस्तित्व का मौन सत्य बचता है। अघोरी इसी मौन में समाधिस्थ होता है, जहाँ न चिताएँ जलती हैं, न राख उड़ती है-बस एक अटल, निर्विकार अनुभव रह जाता है। शव साधना उसी अनुभव तक पहुँचने की विधा है।

शव साधना का मनोवैज्ञानिक और चेतनात्मक प्रभाव

शव साधना के दौरान अघोरी की चेतना एक विशिष्ट मनोवैज्ञानिक परिवर्तन से गुजरती है। आरंभ में शव के संपर्क में आने पर, मन में स्वाभाविक घृणा, भय और बेचैनी उत्पन्न होती है-परंतु साधना का उद्देश्य ही इन्हीं प्रतिक्रियाओं को समाप्त करना होता है। यह अभ्यास साधक को उसकी सहज प्रतिक्रियाओं की परीक्षा देता है: क्या वह अभी भी जीवन-मृत्यु, पवित्र-अपवित्र, सुंदर-विकराल के द्वैत में फँसा है या इनसे परे निकल सका है? शव साधना इसीलिए अघोरी के भीतर छिपे हुए अचेतन भावों को सतह पर लाकर नष्ट करती है। वह अपनी इंद्रियों की सीमाओं को पार करके केवल

निरीक्षण नहीं करता, बल्कि शव के साथ एक प्रतीकात्मक एकात्मता स्थापित करता है। यही वह क्षण होता है, जब साधक मृत्यु को केवल एक जैविक घटना नहीं, बल्कि एक दार्शनिक अवस्था के रूप में देख पाता है। यह अनुभव साधक के भीतर के डर को गलाकर उसकी चेतना को एक ऐसे धरातल पर ले आता है, जहाँ से वह संसार को पूर्ण रूप से अलग दृष्टि से देखने में सक्षम होता है।

इस साधना का चेतनात्मक प्रभाव इतना गहरा होता है कि कई बार साधक अपनी पूरी पूर्ववर्ती पहचान को पीछे छोड़ देता है। वह अब न तो समाज की निगाहों से देखता है, न ही परिवार, नाम, जाति या धर्म से बँधता है। वह उस अवस्था में प्रवेश करता है, जहाँ हर वस्तु उसे स्वयं का ही विस्तार प्रतीत होती है-शव भी, उसकी राख भी, और उसकी गंध भी। उसकी चेतना मृत्यु की विकृति से होकर गुजरती है और उसमें सौंदर्य देखने लगती है। यह सुंदरता वह नहीं है जिसे सामान्य मन देखता है, बल्कि वह सौंदर्य है जो हर परिवर्तनशील वस्तु के भीतर स्थित अपरिवर्तनीय आत्मा में है। शव अब उसके लिए एक मृत शरीर नहीं रह जाता, बल्कि वह एक ऐसा जीवंत दर्पण बन जाता है, जो उसे स्वयं की नश्वरता, सीमितता और उसके पार स्थित अनंत स्वरूप का परिचय देता है। अघोरी के लिए यह साधना उसी स्वरूप की ओर लौटने की यात्रा है, जिससे वह उत्पन्न हुआ था-एक निर्विकारी, अविभाज्य, और अनंत अस्तित्व की ओर। शव साधना उस मार्ग का अनिवार्य द्वार है।

शव साधना में समय और वातावरण की भूमिका

शव साधना का समय और उसका स्थान अघोरी परंपरा में अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते हैं। यह साधना सामान्यतः अमावस्या या पूर्णिमा की रात्रि में, जब आकाश में चंद्र का प्रकाश या अंधकार चरम पर होता है, तब संपन्न की जाती है। इन रात्रियों को तांत्रिक दृष्टि से अत्यधिक शक्तिशाली माना गया है, क्योंकि इस समय प्रकृति की शक्तियाँ गहनतम रूप में सक्रिय रहती हैं। अघोरी इन शक्तियों का उपयोग अपनी साधना को सशक्त बनाने के लिए करते हैं। इसके अतिरिक्त, शव साधना प्रायः शमशान में या ऐसी स्थानों पर की जाती है जहाँ मृत्यु की ऊर्जा व्याप्त होती है। यह स्थान केवल एक भयावह पृष्ठभूमि नहीं होता, बल्कि एक चेतन ऊर्जा केंद्र होता है, जो साधक के अंतर्मन को एक विशिष्ट स्तर की स्थिरता और गहराई प्रदान करता है। शव का संपर्क, चिता की शेष राख, अग्नि की ध्वनि, और मृत देह की शीतलता-इन सबका समावेश साधक के अवचेतन को उस स्थिति में ले जाता है, जहाँ से वह भीतर की यात्रा आरंभ कर सकता है।

शव साधना का वातावरण साधक के मन को उस मौन की ओर खींचता है, जहाँ शब्दों की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। यह मौन केवल बाहरी नहीं होता, बल्कि साधक के अंतर्मन में स्थित हर विचार, कल्पना और स्मृति के क्षरण से उत्पन्न होता है। शव के साथ बैठकर, अघोरी यह अनुभव करता है कि समय केवल एक मानसिक

संरचना है, और मृत्यु एक अवसर है-अपने वास्तविक स्वरूप को जानने का। इस साधना में, वह शरीर की सीमाओं को पार कर चेतना के क्षेत्र में प्रवेश करता है। समय का अस्तित्व उसके लिए धूमिल हो जाता है-वह न भूतकाल में होता है, न भविष्य में-वह केवल उस क्षण में उपस्थित होता है, जिसे अघोरी परंपरा में "साक्षात" कहा गया है। यही उपस्थिति शव साधना का मूल उद्देश्य है। अघोरी जब उस समयरहित स्थिति में पहुँचता है, तब वह न केवल मृत्यु को समझ पाता है, बल्कि जीवन को भी नए अर्थों में देखना शुरू करता है। शव साधना का यही रहस्य है-कि वह मृत्यु की ओर ले जाकर जीवन का नया साक्षात्कार कराती है।

शव साधना में त्रिगुणातीत अवस्था की प्राप्ति

शव साधना अघोरियों के लिए केवल एक क्रिया नहीं, बल्कि आत्मा को सत्व, रज और तम-इन तीनों गुणों से परे ले जाने वाली एक महत्त्वपूर्ण साधना प्रक्रिया है। भारतीय दर्शन में त्रिगुण (सत्व, रज, तम) को सभी मानसिक, भौतिक और आध्यात्मिक गतिविधियों की मूल शक्ति माना गया है। परंतु अघोरी साधना का अंतिम उद्देश्य इन गुणों के पार जाना है, जहाँ न कोई आकर्षण है, न विकर्षण, और न ही चेतना पर कोई प्रभाव। शव, जो न जीवन का प्रतीक है, न सक्रियता का, और न ही तमस का पूर्ण प्रतीक-उसके ऊपर बैठकर ध्यान करने से साधक स्वयं को इन तीनों अवस्थाओं से परे अनुभव करने लगता है। वह अपने भीतर के तमस (अंधकार,

भय), रज (इच्छा, कामना) और सत्व (धार्मिक अभिमान) को देखते हुए धीरे-धीरे इनसे विरक्त होता जाता है। यह विरक्ति एक अस्वीकार नहीं है, बल्कि एक पारगमन है-जहाँ वह जानता है कि ये तीनों गुण केवल अनुभव के स्तर हैं, न कि अंतिम सत्य।

इस त्रिगुणातीत अवस्था में साधक किसी भाव में स्थिर नहीं होता। वह केवल साक्षी होता है, न कर्ता, न भोक्ता। शव पर ध्यान करते समय, जब वह अपने भीतर की अनुभूतियों का निरीक्षण करता है, तब पाता है कि अब क्रोध, मोह, घृणा, आकर्षण-कोई भी भावना उसे नहीं बाँधती। वह समभाव की उस दशा में पहुँचता है जिसे तंत्र में "शिवत्व" की स्थिति कहा गया है। वहाँ न शुभ है न अशुभ, न जीवन है न मृत्यु, केवल अद्वैत चेतना का विस्तार है। शव साधना इस विस्तार का प्रवेशद्वार बनती है। अघोरी जानता है कि त्रिगुणों के प्रभाव में रहकर साधक केवल भौतिकता की सीमाओं में ही बँधा रहेगा, लेकिन जैसे ही वह इन्हें पार करता है, वह साधक से सिद्ध बनने की ओर बढ़ता है। शव पर बैठकर ध्यान करना, उसी शून्यता में स्थित होना, जहाँ से सभी गुण उत्पन्न होते हैं और जहाँ सभी गुण विलीन होते हैं-यही त्रिगुणातीत अवस्था की प्राप्ति का मूल रहस्य है।

शव साधना में चेतना और मृत्यु की यथार्थ व्याख्या

शव साधना का गूढ़तम पक्ष यह है कि यह साधक को चेतना और मृत्यु के वास्तविक संबंध का बोध कराती है। सामान्य दृष्टि से मृत्यु एक समाप्ति है, भय का कारण है, एक अंधकारमय अज्ञात है।

लेकिन अघोरी साधना इसे उलट देती है-मृत्यु अघोरी के लिए जागरण का द्वार बन जाती है। जब साधक शव पर बैठकर ध्यान करता है, तब वह मृत शरीर को केवल एक भौतिक संरचना के रूप में नहीं देखता, बल्कि उसे उस चेतना के बिंदु के रूप में अनुभव करता है, जिसने शरीर को त्याग दिया है। यह साधना उस अंतर्विरोध को उजागर करती है कि मृत्यु केवल शरीर की विफलता नहीं, बल्कि चेतना की मुक्ति है। अघोरी इसी अनुभव के माध्यम से अपने भीतर यह स्थापित करता है कि वह शरीर नहीं, वह केवल साक्षी है-वह आत्मा है, जो न उत्पन्न होती है, न नष्ट होती है।

इस साधना के माध्यम से जब साधक शव के साथ घंटों या रात्रि भर मौन साधना करता है, तब उसकी अपनी चेतना भी परिवर्तन के कई चरणों से गुजरती है। वह पहले स्वयं को शारीरिक रूप से जीवित समझता है, फिर धीरे-धीरे अपने शरीर की संवेदनाओं से परे हो जाता है। उसकी दृष्टि स्थिर हो जाती है, उसकी श्वास मंद पड़ जाती है, और उसकी चेतना अज्ञेयता के उस स्तर तक पहुँच जाती है जहाँ वह जीवन और मृत्यु को अलग-अलग अनुभव नहीं करता। उसके लिए चेतना ही जीवन है, और शरीर केवल उसका एक क्षणिक यंत्र। शव साधना इसी यंत्र की निरर्थकता का बोध कराती है और साधक को उस स्थिति में लाती है जहाँ वह मृत्यु को भय नहीं, बल्कि ज्ञान और मुक्ति के द्वार के रूप में देखता है। अघोरी जानता है कि जो जन्मा है, वह नश्वर है-लेकिन जो इस जन्म और मृत्यु को देख रहा है, वह चिरस्थायी है। शव साधना उसे उस चिरस्थायी "मैं" का साक्षात्कार

कराती है-जहाँ जीवन और मृत्यु एक ही सिक्के के दो पहलू बनकर विलीन हो जाते हैं।

शव साधना में निर्भयता और मानसिक धैर्य की परीक्षा

शव साधना अघोरियों के लिए केवल आध्यात्मिक साधना नहीं, बल्कि मानसिक धैर्य और निर्भयता की पराकाष्ठा की परीक्षा भी होती है। एक साधारण व्यक्ति के लिए शव के पास जाना ही भयावह अनुभव होता है, किंतु अघोरी न केवल शव के पास जाता है, बल्कि उसकी छाती या पेट पर बैठकर ध्यान करता है। यह दृश्य जितना भयानक प्रतीत होता है, उससे कहीं अधिक गूढ़ वह प्रक्रिया है, जिससे साधक गुजरता है। शव से उठती दुर्गंध, शरीर की सड़न, उसके आसपास के वातावरण में फैली मृत्यु की ऊर्जा-ये सभी साधक के मन और चेतना को विचलित करने के लिए पर्याप्त होती हैं। किंतु अघोरी इसी परिस्थिति में अपनी चेतना को केंद्रित करता है, अपने मन को स्थिर करता है और भय की उस जड़ तक पहुँचता है जहाँ से उसका उन्मूलन संभव है। भय को बाहर से समाप्त नहीं किया जा सकता, वह भीतर से गलता है, और शव साधना उसी गलन की प्रक्रिया है।

इस साधना के दौरान अघोरी अपने भीतर के सभी भावों को निष्क्रिय करता है-न भय, न घृणा, न उत्तेजना, न आत्मरक्षा की प्रवृत्ति। वह एकदम शांत, स्थिर और सजग रहता है। मानसिक धैर्य की यह परीक्षा कई बार लंबी और कठिन होती है। शव पर ध्यान

करते समय कई बार अघोरी को भ्रम, मृगतृष्णा, या भूत-प्रेत जैसे मानसिक विक्षोभों का अनुभव होता है। यह उसकी चेतना की गहराई में छिपी हुई तमाम छवियों और अचेतन स्मृतियों का प्रकट होना होता है। लेकिन जो अघोरी इन्हें पार कर जाता है, वह मानसिक शक्ति के उस स्तर तक पहुँचता है, जहाँ पर कोई भी विक्षोभ, आघात या भय उसे डिगा नहीं सकता। यह साधना उसे जीवन के सबसे कठिन क्षणों में भी स्थिर रहने का आत्मबल प्रदान करती है-वह मृत्यु को देखकर विचलित नहीं होता, जीवन की आपदाओं से नहीं डरता। वह जानता है कि भय केवल उस अज्ञान का नाम है, जो मृत्यु को अनहोनी मानता है। शव साधना उसी अज्ञान को भेदने का मार्ग है।

शव साधना में सूक्ष्म और स्थूल शरीर के बीच भेदभाव

शव साधना का एक गहरा आध्यात्मिक पक्ष यह है कि यह साधक को स्थूल और सूक्ष्म शरीर के बीच का भेद स्पष्ट रूप से अनुभव कराती है। सामान्य व्यक्ति अपने शरीर को ही ‘स्वयं ’मानता है, उसकी पहचान, उसकी भावनाएँ, उसकी इच्छाएँ-सभी कुछ उस स्थूल शरीर से जुड़ी होती हैं। परंतु अघोरी साधना में जब वह शव पर बैठता है, तब वह देखता है कि वही शरीर, जो कभी जीवंत था, अब पूर्णतः निर्जीव है, किंतु उसमें “मैं” का कोई चिन्ह नहीं बचा। यही बोध उसे यह समझाने के लिए पर्याप्त होता है कि “मैं” शरीर नहीं, अपितु वह चेतन तत्त्व है, जो शरीर के रहते हुए भी भिन्न है। यह अनुभव उसे अपने भीतर के सूक्ष्म शरीर की अनुभूति कराता है-वह

शरीर जो इंद्रियों से परे है, जो केवल अनुभव और जागरूकता के स्तर पर स्थित है।

जब अघोरी शव साधना करता है, तब वह देखता है कि मृत शरीर में अब कोई प्राण नहीं, परंतु चेतना की स्मृति उस स्थान पर विद्यमान होती है। यही कारण है कि अघोरी शव के चारों ओर की ऊर्जा को महसूस करता है, कई बार उसमें प्रवेश करता है और उसे निर्देशित भी करता है। शव, उसके लिए एक ऐसा माध्यम बन जाता है, जिसके माध्यम से वह अपने स्थूल शरीर से ऊपर उठकर सूक्ष्म शरीर की यात्रा करता है। यह सूक्ष्म शरीर न तो किसी जाति, लिंग या नाम से बँधा होता है, और न ही वह मृत्यु के अधीन होता है। शव साधना का यह चरण अत्यंत सूक्ष्म और जटिल होता है, क्योंकि साधक को अपने अस्तित्व के उन परतों से गुजरना होता है, जिन्हें सामान्य साधना कभी छू भी नहीं सकती। अघोरी इस अनुभव से गुजरते हुए समझता है कि वह न तो केवल मांस और रक्त है, न ही केवल विचारों का पुतला-वह एक स्वतंत्र, शाश्वत, और चेतन सत्ता है, जो समय, मृत्यु और शरीर की सीमाओं से परे है। शव साधना में स्थूल और सूक्ष्म का यही भेद उसे आत्मज्ञान की ओर ले जाता है।

अध्याय 18:
अंतरिक्ष और समय की बाधाओं से परे

अघोरी साधना का कालातीत स्वरूप: समय और स्थान की मर्यादाओं से मुक्ति

अघोरी साधना उस आध्यात्मिक यात्रा का नाम है, जो समय और स्थान की सीमाओं को नकारती है और साधक को एक ऐसे आयाम में ले जाती है, जहाँ अस्तित्व का हर क्षण समकालिक और एकीकृत हो जाता है। अघोरी के लिए कोई वर्तमान, अतीत या भविष्य नहीं होता; उसके लिए हर क्षण अनंत है, और हर स्थान एक ही ब्रह्मांडीय केंद्र से जुड़ा है। उसका अस्तित्व कालखंडों की जंजीरों से मुक्त होता है, वह किसी लक्ष्य की ओर नहीं बढ़ता, क्योंकि वह स्वयं ही लक्ष्य बन जाता है। वह अपने भीतर एक ऐसा अनुभव गढ़ता है, जहाँ अंतरिक्ष केवल प्रतीक है, समय केवल भ्रम है, और गति एक प्रकार की स्थिरता है। साधना के माध्यम से वह उस चेतना की अनुभूति करता है, जो किसी सीमित पहचान, किसी पृथक सत्ता, या किसी नियत कालखंड की मुहताज नहीं होती।

अघोरी के लिए साधना का शिखर उस स्थिति में निहित होता है, जहाँ 'मैं 'और 'वह 'का भेद समाप्त हो जाता है। यह अवस्था न तो शारीरिक मृत्यु है और न ही किसी लौकिक यज्ञ की परिणति, बल्कि वह आंतरिक प्रज्वलन है, जहाँ साधक अंतरिक्ष में नहीं होता,

वह स्वयं अंतरिक्ष बन जाता है। समय उसके लिए रेखीय घटनाओं की श्रृंखला नहीं, बल्कि एक गतिशील शून्यता है, जहाँ वह हर क्षण को समग्रता से जीता है। वह जानता है कि मृत्यु कोई अंत नहीं है, और जीवन कोई प्रारंभ नहीं। ब्रह्मांड उसके भीतर घटित होता है, और उसकी साधना उस क्षण तक पहुँचती है, जहाँ अनुभव और अनुभूत, देखना और देखा जाना, सब एक ही ब्रह्म-स्रोत में विलीन हो जाते हैं।

तत्वों की निर्भेद दृष्टि: अघोरी की प्रतीति और प्रतीक

अघोरी दृष्टि तत्वों को उनके पारंपरिक अर्थों में नहीं देखती। वह अग्नि को केवल जलाने वाली नहीं, बल्कि आत्म-परिवर्तन की शक्ति मानता है; जल उसके लिए केवल शुद्ध करने वाला नहीं, बल्कि विचारों को बहाकर ले जाने वाला माध्यम है; पृथ्वी केवल स्थायित्व नहीं, बल्कि मृत्यु के बाद की मातृभूमि है; वायु केवल श्वास नहीं, बल्कि ब्रह्मांडीय संवाद है; और आकाश केवल विस्तार नहीं, बल्कि चेतना का सबसे सूक्ष्म रूप है। अघोरी इन पंचमहाभूतों को व्यक्तिगत उपस्थिति की सीमा से बाहर जाकर देखता है और समझता है कि वह स्वयं इनमें से किसी एक में नहीं है, बल्कि इन सभी का एक गतिशील समुच्चय है। वह जब शमशान में बैठता है, तो इन तत्वों की आवाज़ों को सुनता है, उनकी गति को आत्मसात करता है, और अंततः उनसे परे जाकर शून्य में प्रवेश करता है।

यह दृष्टि अघोरी को वस्तुजगत से परे ले जाती है। जहाँ सामान्य व्यक्ति संसार को विषय-प्रत्यक्षीकरण के रूप में देखता है, अघोरी

उस अनुभव को अतिक्रमित कर देता है। वह प्रतीकों को पढ़ता है- राख को मृत्यु का दस्तावेज़, हड्डियों को अस्थायित्व का साक्ष्य, और मौन को ब्रह्मांड की भाषा मानता है। उसकी साधना प्रतीकों के माध्यम से उसकी चेतना को परावर्तित नहीं करती, बल्कि उस चेतना को उन प्रतीकों से विलग कर देती है। वह जानता है कि कोई भी तात्त्विक यथार्थ तब तक संपूर्ण नहीं बनता, जब तक उसमें अनुभव की मौन सहमति न हो। अघोरी का यह अनुभव उसे उस स्थिति तक ले जाता है, जहाँ वह शरीर, काल और दिशा की मर्यादाओं से ऊपर उठकर केवल एक अद्वितीय उपस्थिति में स्थित हो जाता है।

लय और मौन का समागम: ब्रह्मांडीय स्वरूप की अनुभूति

अघोरी साधना एक ऐसी लय में प्रवाहित होती है, जो शास्त्रीय संगीत की तरह किसी बंद संरचना का पालन नहीं करती, बल्कि ब्रह्मांड की आंतरिक ध्वनि की लय का अनुसरण करती है। यह लय स्थूल से सूक्ष्म की ओर, और सूक्ष्म से मौन की ओर ले जाती है। वह मौन जो केवल ध्वनि का अभाव नहीं है, बल्कि वह स्पंदन है, जो सृष्टि की उत्पत्ति और विसर्जन दोनों का आधार है। अघोरी इस मौन में प्रवेश करता है, जहाँ शब्द नष्ट हो जाते हैं, और चेतना स्वयं को निराकार रूप में पहचानने लगती है। शमशान में बैठा अघोरी जब सांस लेता है, तो वह न केवल वायु को भीतर लेता है, बल्कि पूरे ब्रह्मांड को अपने भीतर समाहित करता है। उसकी साँसों की लय ब्रह्मांडीय नाद में परिवर्तित हो जाती है, और वह इस लय में इस

प्रकार विलीन हो जाता है कि स्व और ब्रह्म के बीच कोई अंतर शेष नहीं रहता।

इस प्रक्रिया में साधक केवल ध्यानस्थ नहीं होता, वह स्वयं ध्यान बन जाता है। उसके भीतर जो भी कंपन उत्पन्न होते हैं, वे एक व्यापक ब्रह्मांडीय लय के अंश बन जाते हैं। वह ब्रह्मांड के साथ नृत्य नहीं करता, बल्कि वह स्वयं नृत्य बन जाता है-वह गति में स्थिरता है और मौन में स्पंदन। उसका होना न किसी सिद्धि का परिणाम होता है और न किसी उपलब्धि का प्रमाण, बल्कि एक सहज विलय होता है, जो केवल अनुभव किया जा सकता है, परिभाषित नहीं। अघोरी जब इस अवस्था को प्राप्त करता है, तो वह अपनी चेतना के उस आयाम में प्रवेश करता है, जहाँ कोई ध्वनि, कोई भेद, कोई सीमांकन नहीं रहता-केवल वह मौन, जो सृष्टि के आरंभ और अंत दोनों का स्रोत है।

द्वैत का विघटन – आत्मा और शरीर की सीमाओं से परे की यात्रा

अघोरी साधना का सबसे गंभीर और क्रांतिकारी पक्ष उस बिंदु पर आता है, जहाँ साधक ‘स्व ’और ‘अन्य ’के बीच का द्वैत पूरी तरह नष्ट कर देता है। यह साधना केवल बौद्धिक चेतना का परीक्षण नहीं है, बल्कि एक जीवंत, संवेदनात्मक प्रक्रिया है, जिसमें साधक अपने शरीर, मन और आत्मा की सीमाओं को चुनौती देता है। इस प्रक्रिया में, वह केवल मानसिक सीमाओं को नहीं लांघता, बल्कि

आत्म-चिन्हों और पहचान के हर स्तर को निरस्त करता है। अघोरी जानता है कि जब तक 'मैं 'और 'तू 'का अंतर बना रहेगा, तब तक वह परम एकता के अनुभव तक नहीं पहुँच सकता। इसलिए वह अपने शरीर को केवल एक अस्थायी आवरण मानता है और आत्मा को भी एक यात्रा के साधन के रूप में देखता है, न कि अंतिम सत्य के रूप में।

यह विघटन धीरे-धीरे साधक के भीतर घटित होता है। वह सबसे पहले शारीरिक सीमाओं को तोड़ता है-भूख, प्यास, नींद, और पीड़ा के प्रति अपनी प्रतिक्रियाओं को नियंत्रित करता है। फिर वह मानसिक द्वंद्वों को समाप्त करता है-इच्छा, द्वेष, मोह और भय की भावनाओं को गहराई से समझकर उन्हें स्वयं में विलीन करता है। अंततः वह आत्मिक सीमाओं को पार करता है-जहाँ वह आत्मा को भी एक पर्याय मानता है, न कि वास्तविक सत्ता। जब यह अंतिम सीमा भी मिट जाती है, तो साधक न तो शरीर रह जाता है, न आत्मा; वह एक चेतन अनुगूँज में विलीन हो जाता है, जहाँ सब कुछ एकरूप, अभिन्न और शून्य में पूर्ण होता है। इस अवस्था में, अघोरी न देखने वाला होता है, न देखा जाने वाला; वह केवल देखना होता है-अद्वैत की उस स्थिति में, जहाँ द्वैत का कोई स्थान नहीं रह जाता।

अध्याय 19:
भय से परे का मार्ग – अघोरी क्यों चलते हैं छायाओं के रास्ते

अघोरियों का रहस्यमय स्वरूप: अंधेरे को गले लगाने वाले संन्यासी

अघोरी वह साधक होता है, जो उन द्वारों को खोलता है जिन्हें संसार बंद रखता है, और उन प्रश्नों को पूछता है जिन्हें समाज विस्मृत कर देना चाहता है। वह स्वयं को सांसारिक सीमाओं और नैतिक परिभाषाओं से मुक्त करता है, न किसी पाप से डरता है और न किसी पुण्य की लालसा करता है। उसके लिए अंधकार डरावना नहीं है, बल्कि वह सबसे गहन अनुभूति का क्षेत्र है, जहाँ आत्मा की परतें एक-एक कर खुलती हैं। अघोरी शुद्धता और अपवित्रता की सामाजिक परिभाषाओं को अस्वीकार करता है, क्योंकि उसके लिए ये केवल मानवीय दृष्टिकोण की कल्पनाएँ हैं। वह शमशान के एकांत में बैठकर केवल चिता की गर्मी नहीं सहता, बल्कि उन सभी मानसिक ढाँचों को जलाता है, जो व्यक्ति को एक सीमित पहचान में बाँधते हैं। उसकी साधना समाज के हर उस नियम को तोड़ने की घोषणा है, जो आत्मबोध की राह में अवरोध बनता है।

अघोरी अपनी साधना में भय, लज्जा और पहचान की दीवारें ध्वस्त करता है। वह मृत्यु को देवता मानता है और उसे साक्षात

साक्षात्कार का माध्यम बनाता है। उसकी उपस्थिति स्वयं में एक चुनौती होती है-एक ऐसे युग में, जहाँ हर कोई सुकून और सुविधा की तलाश में है, अघोरी उस विकट पथ पर चलता है, जो पीड़ा और साक्षात्कार से होकर जाता है। वह संसार से भागता नहीं, न ही उसे जीतने का प्रयास करता है; वह उसे उसी रूप में स्वीकार करता है-एक अस्थायी, परिवर्तनशील, और अंततः विलीन होने वाला अनुभव। इस मार्ग पर चलने वाला अघोरी स्वयं को एक प्राणी के रूप में नहीं देखता, बल्कि ब्रह्मांड की एक अभिव्यक्ति के रूप में अनुभव करता है। उसके लिए साधना एक अभिनय नहीं, बल्कि चेतना की अनंत यात्रा है, जिसमें हर क्षण, हर अनुभव उसे उसकी अंतिम प्रकृति की ओर ले जाता है-जो अनाम, अनादि और अकल्पनीय है।

शमशान: राख और हड्डी से सीखना

शमशान अघोरी के लिए केवल एक स्थान नहीं है, वह उसका शिक्षक, साधना स्थल, और दर्पण है। वहाँ हर चिता, हर राख, हर हड्डी की खनक एक पाठ बन जाती है-जीवन की क्षणभंगुरता का, शरीर के नश्वर स्वरूप का, और आत्मा के अनंत स्वरूप का। पारंपरिक धार्मिक संरचनाओं में जहाँ पूजास्थल साज-सज्जा से भरे होते हैं, शमशान एक निर्लिप्त सत्य प्रस्तुत करता है-यहाँ कोई आडंबर नहीं, कोई ललित संगीत नहीं, केवल मौन और मृत्यु की गंध। अघोरी इस मौन को सुनता है, इस गंध को साँसों में भरता है, और इन भस्मित

कणों में वह संदेश खोजता है जिसे ग्रंथों में नहीं लिखा गया। शमशान में रहकर वह स्वयं के सबसे भयावह रूपों का सामना करता है-वह जो वह था, जो वह है, और जो वह एक दिन होगा। यह केवल शरीर की समाप्ति का नहीं, बल्कि आत्म-भ्रम की समाप्ति का स्थल है।

शमशान अघोरी के भीतर चल रहे परिवर्तन का बाहरी प्रतिबिंब बन जाता है। हर चिता की आग उसके भीतर की वासनाओं को जलाती है, हर हड्डी का बिखराव उसके अहंकार को तोड़ता है। यहाँ वह उस भ्रम को चकनाचूर करता है, जो उसे आत्मा की स्वतंत्रता से अलग करता है। वह न तो मृत्यु से डरता है, न ही जीवन से मोह रखता है; वह इन दोनों के बीच की उस रेखा पर बैठता है, जहाँ द्वैत विलीन होता है। शमशान उसे सिखाता है कि मृत्यु कोई अंत नहीं, बल्कि सत्य की ओर जाने का एक द्वार है। इस अनुभव के माध्यम से अघोरी अपनी चेतना को उस अवस्था में स्थिर करता है, जहाँ केवल उपस्थित होना शेष रह जाता है-न कोई विचार, न कोई अभिलाषा, केवल मौन की गहराई और उसकी चेतना का अनंत विस्तार। यही शमशान का ज्ञान है-राख से उत्पन्न होकर राख में विलीन होने तक के जीवन चक्र का पूर्ण साक्षात्कार।

भ्रमों को चकनाचूर करना – अघोरी का दर्शन

अघोरी दर्शन का मूल तत्त्व इस धारणा को अस्वीकार करता है कि संसार शुद्ध और अशुद्ध, पवित्र और अपवित्र में बँटा हुआ है। उसके लिए, ये भेद केवल समाज और संस्कृति द्वारा गढ़े गए कृत्रिम

सीमांकन हैं, जिनका सत्य से कोई संबंध नहीं। वह मानता है कि जब तक साधक अपने मन की गहराइयों में इन भेदों को ढोता रहेगा, तब तक वह वास्तविक मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकता। अघोरी के लिए, हर वस्तु-चाहे वह एक प्रसाद हो या शव की राख-शिव का ही स्वरूप है। वह चिता की आग को उसी श्रद्धा से देखता है, जिस श्रद्धा से कोई भक्त दीप जलाता है। अघोरी का प्रत्येक कृत्य प्रतीकात्मक है-एक संदेश, एक चुनौती, एक विद्रोह उस सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध जो आत्मा को सीमाओं में बाँध देती है।

इस दर्शन को जीने के लिए अघोरी को अपने भीतर बसे हर उस नियम, हर उस भय, हर उस आस्था को तोड़ना पड़ता है, जो उसे द्वैत में बाँधती है। वह शव के पास बैठता है, क्योंकि उसे वहाँ से किसी विकृति की नहीं, बल्कि पूर्णता की अनुभूति होती है। वह मांस, अस्थियाँ, और शमशान की राख को अपने शरीर का अंग बनाता है, क्योंकि इन सबसे बढ़कर कोई सत्य नहीं कि सब कुछ अंततः मिट्टी में मिल जाता है। इस मार्ग में, वह मृत्यु को आमंत्रित नहीं करता, बल्कि उसे साक्षात्कार का उपकरण बनाता है। अघोरी का दर्शन समाज को भयावह लग सकता है, लेकिन यह भय उस मानसिक अवरोध का परिणाम है, जो व्यक्ति को अपनी चेतना से दूर ले जाता है।

अघोरी दर्शन इस बात की घोषणा करता है कि जब व्यक्ति भीतर के भय, वर्जनाओं और मान्यताओं से मुक्त होता है, तभी वह

सच्चे रूप में जीना आरंभ करता है। यह साधना किसी दिखावे की नहीं होती, यह भीतर की आग से तप कर निकलने की प्रक्रिया होती है। अघोरी का यह मार्ग, चाहे जितना भी असामान्य या डरावना लगे, वास्तव में आत्मा की स्वतंत्रता की सबसे निर्भीक यात्रा है, जो उसे उस परम स्थिति तक पहुँचाती है जहाँ केवल शुद्ध अस्तित्व शेष रह जाता है। यही अघोरी का सच्चा दर्शन है-संघर्ष नहीं, परित्याग नहीं, बल्कि समग्रता का आलिंगन, जिसमें हर अनुभव, हर वस्तु, और हर स्थिति उसी एक ब्रह्म की अभिव्यक्ति है।

मृत्यु की उपस्थिति के साथ एकरसता – अघोरी की मृत्यु-दृष्टि

अघोरी के लिए मृत्यु कोई अंतिम घटना नहीं होती, बल्कि वह जीवन के रहस्यों को खोलने वाली एक सूक्ष्म कुंजी है। मृत्यु उसके लिए भय का कारण नहीं, बल्कि जीवन के उस अनछुए क्षेत्र का प्रवेशद्वार है, जहाँ आत्मा अपने वास्तविक स्वरूप से साक्षात्कार करती है। अघोरी शमशान में मृत्यु के समीप बैठकर उसका अवलोकन करता है-वह यह नहीं देखता कि शरीर कैसे नष्ट होता है, बल्कि यह समझता है कि चेतना किस प्रकार उससे विलग होकर शुद्ध रूप में प्रकट होती है। मृत्यु उसके लिए एक निरंतर उपस्थित सत्ता है, जो हर पल उसे स्मरण कराती है कि जीवन का हर अनुभव क्षणिक है और केवल आत्मा ही शाश्वत है। इसी कारण, अघोरी अपने भीतर मृत्यु की उपस्थिति को साधता है, उसे गले लगाता है और उसे अपने भीतर स्थापित करता है।

अघोरी का यह मृत्यु-दर्शन उसे निर्भीकता और मौन की उस अवस्था में ले जाता है, जहाँ वह हर भय, आकांक्षा और वासना से मुक्त हो जाता है। मृत्यु के समीप रहने से वह जीवन को अधिक तीव्रता से अनुभव करता है, क्योंकि उसे ज्ञात होता है कि सब कुछ नश्वर है। उसका जीवन मृत्यु के साथ तादात्म्य स्थापित करते हुए चलता है-न वह उससे दूर भागता है, न उसे आमंत्रित करता है, बल्कि वह उसके साथ सह-अस्तित्व में जीता है। यही कारण है कि अघोरी कभी भी जीवन को हल्के में नहीं लेता; उसका प्रत्येक क्षण, प्रत्येक साँस, उसे मृत्यु की उपस्थिति की याद दिलाते हुए उसे अपने परम लक्ष्य-आत्मिक मुक्ति-की ओर अग्रसर करती है। अघोरी की दृष्टि में मृत्यु एक शत्रु नहीं, एक मार्गदर्शक है, जो उसे हर बंधन से मुक्त कर उस परमशांति की ओर ले जाती है जहाँ कोई द्वैत, भय या दुख नहीं होता। यह दृष्टिकोण उसे समाज से अलग और अधिक गहन बनाता है, क्योंकि जहाँ समाज मृत्यु से दूर भागता है, वहीं अघोरी उसे आलिंगन करता है और उसी में ब्रह्मत्व खोज लेता है।

सामाजिक अस्वीकृति को स्वीकार करना – अघोरी का आत्म-अस्वीकार का वरण

अघोरी की साधना उस समाज के नियमों से टकराती है, जो शुद्धता, नैतिकता और सामाजिक स्वीकृति की संकीर्ण परिभाषाओं से चलता है। अघोरी जानता है कि उसकी साधना का मार्ग समाज द्वारा सराहा नहीं जाएगा; उल्टा उसे घृणा, तिरस्कार और उपेक्षा की

दृष्टि से देखा जाएगा। लेकिन यहीं से उसका असली तप आरंभ होता है-वह न केवल बाहरी अस्वीकृति को स्वीकार करता है, बल्कि स्वयं के भीतर बसे उस 'स्व 'को भी भंग करता है, जो प्रशंसा, आदर या पहचान की चाह रखता है। अघोरी के लिए यह आत्म-अस्वीकार साधना की पहली सीढ़ी है, जिसमें वह अपने अहंकार, सामाजिक भूमिका और सांसारिक पहचानों को पूरी तरह मिटा देता है। वह स्वयं को केवल एक साधक मानता है-न ब्राह्मण, न शूद्र, न पुरुष, न स्त्री-बल्कि एक चेतना, जो ब्रह्म के मार्ग पर चल रही है।

इस सामाजिक उपेक्षा को सहते हुए अघोरी भीतर से और भी सशक्त होता जाता है। वह समाज द्वारा थोपे गए 'पवित्रता 'के मापदंडों को तोड़ता है और उस वास्तविकता की खोज करता है जो सभी बाह्य आवरणों से परे है। वह चिता की राख को अपने शरीर पर धारण करता है, मांसाहार और मादक वस्तुओं का प्रयोग करता है, क्योंकि ये समाज द्वारा 'अपवित्र 'घोषित की गई वस्तुएँ उसके लिए परीक्षा की भूमि बन जाती हैं। इन कार्यों के माध्यम से वह यह सिद्ध करता है कि आत्मा का पथ केवल उन सीमाओं से तय नहीं होता जो बाहरी व्यवस्था ने खींची हैं, बल्कि यह एक अंतर्यात्रा है जिसमें हर बंधन का टूटना आवश्यक है। इस प्रकार, अघोरी का समाज से बहिष्कृत होना उसकी साधना का एक आवश्यक चरण बन जाता है-एक ऐसा चरण जिसमें वह सब कुछ छोड़ देता है, केवल परम की खोज शेष रह जाती है।

अघोरी का मौन – शब्दों से परे की साधना

अघोरी की साधना का एक प्रमुख आयाम है उसका मौन। यह मौन केवल शब्दों का त्याग नहीं, बल्कि भीतर के विचारों, इच्छाओं और प्रतिक्रियाओं का विसर्जन है। वह जानता है कि शब्द एक सीमा हैं-वे या तो भ्रम पैदा करते हैं या अहंकार को पोषित करते हैं। अघोरी जब मौन होता है, तो वह केवल चुप नहीं रहता, वह संपूर्ण ब्रह्मांड से संवाद करता है, लेकिन यह संवाद ध्वनि से नहीं, चेतना की तरंगों से होता है। उसकी मौन साधना चिताओं के बीच, शमशान की राख में, शवों की निःशब्दता में, और रात के अंधकार में फलती है। वह भीतर के प्रत्येक शब्द को जलाकर मौन की उस गहराई तक जाता है जहाँ केवल 'होना 'शेष रह जाता है।

इस मौन में, अघोरी की साधना अधिक तीव्र और प्रचंड होती है, क्योंकि अब वह संसार की भाषा से बाहर आ चुका होता है। उसे किसी प्रमाण, उपदेश, या संवाद की आवश्यकता नहीं होती; उसकी उपस्थिति ही उसका साक्ष्य बन जाती है। उसका मौन समाज के लिए भयावह हो सकता है, क्योंकि यह मौन उस व्यवस्था को चुनौती देता है जो केवल शब्दों और प्रतिष्ठा पर आधारित है। लेकिन अघोरी के लिए, यह मौन ब्रह्म का प्रवेशद्वार है। यही वह अवस्था है, जहाँ वह स्वयं को शिव से अभिन्न अनुभव करता है-न भूत, न भविष्य, न नाम, न पहचान-सिर्फ मौन, जो साक्षात ब्रह्म की गूंज है। यह मौन न

केवल उसे साधक से सिद्ध की ओर ले जाता है, बल्कि वही उसके अघोरी होने की पराकाष्ठा बनता है।

वर्जित पदार्थों का प्रयोग – चेतना की सीमाओं को लांघने की प्रक्रिया

अघोरी साधना में वर्जित माने जाने वाले पदार्थों का प्रयोग केवल समाज को चौंकाने के लिए नहीं होता, बल्कि वह एक गहन मानसिक और आत्मिक प्रक्रिया का हिस्सा होता है। मांस, मद्य, मादक पदार्थ, और यहाँ तक कि मानव अस्थियाँ-ये सब उस प्रयोगात्मक साधना का अंग बनते हैं, जिसका उद्देश्य मन की प्रतिक्रियाओं और सामाजिक-संस्कारिक सीमाओं को समझना और उनसे पार पाना है। जब अघोरी ऐसे वर्जित पदार्थों का उपयोग करता है, तो वह स्वयं को परखता है कि उसमें कितनी जड़ता, कितनी लज्जा, कितना भय और कितना मोह बचा है। यदि साधक इन पदार्थों के प्रयोग के समय स्वयं में विकृति या वासना अनुभव करता है, तो वह समझता है कि अभी उसका मन पूर्णतः निर्लिप्त नहीं हुआ है। यह साधना अति संवेदनशील और आत्मनिरीक्षण की मांग करने वाली होती है, जिसमें साधक बार-बार अपने भीतर के प्रत्येक भाव को नष्ट करता है।

इस प्रक्रिया में अघोरी किसी कर्मकांड या परंपरा का अंधानुकरण नहीं करता, बल्कि वह एक वैज्ञानिक की भांति प्रयोग करता है-अपने ही मन, शरीर और चेतना पर। वह जानता है कि

समाज इन क्रियाओं को ‘पाप ’कहेगा, लेकिन उसके लिए पाप और पुण्य का द्वैत पहले ही टूट चुका होता है। वह केवल उस अवस्था को प्राप्त करना चाहता है जहाँ भीतर कुछ भी शेष न रहे-न संस्कार, न द्वेष, न मोह, न घृणा। यह प्रयोग उसे भयावह अनुभवों की ओर ले जाता है, लेकिन वहीं से उसे आत्म-प्रकाश भी मिलता है। इस प्रकार, वर्जित पदार्थों का प्रयोग अघोरी के लिए साधना की परीक्षा-परीक्षा बन जाता है, जहाँ बाह्य की कोई मान्यता नहीं, केवल आत्मा का स्पंदन और उसकी निर्लिप्तता ही निर्णायक होती है।

रात्रि और अंधकार – अघोरी की प्रिय साधना भूमि

अघोरी के लिए रात्रि केवल समय का एक खंड नहीं होती, वह साधना की वह अवस्था होती है जहाँ प्रकृति स्वयं मौन हो जाती है और चेतना की तरंगें सूक्ष्मतम स्तर पर काम करने लगती हैं। रात्रि में, विशेषकर अमावस्या की रातों में, जब चंद्रमा की किरणें भी पृथ्वी से लुप्त हो जाती हैं, तब अघोरी शमशान में बैठकर अपनी चेतना को उस अंधकार में विलीन कर देता है। यह अंधकार उसके लिए भय नहीं, बल्कि शून्यता की गोद है, जहाँ विचार, आकांक्षाएँ, और भूतकाल की छवियाँ धीरे-धीरे मिट जाती हैं। अघोरी इस अंधकार को साधता है क्योंकि यहाँ से ही उस उजास का जन्म होता है जिसे आत्मज्ञान कहते हैं।

रात्रि के इस मौन में, जब चारों ओर केवल सन्नाटा होता है, अघोरी भीतर के तम को पहचानता है-वह तम जो काम, क्रोध, लोभ,

मोह और अहंकार के रूप में छिपा होता है। वह इस आंतरिक अंधकार को बाहर के अंधकार से जोड़कर अपनी चेतना को विलीन करने का प्रयास करता है। उसे ज्ञात होता है कि जब तक भीतर रोशनी की लालसा बनी रहेगी, तब तक वह पूर्णरूपेण शून्यता को नहीं पा सकेगा। इसलिए वह रात में, बिना किसी दीपक, बिना किसी मंत्रोच्चारण के, मौन साधना करता है और धीरे-धीरे अपने अस्तित्व को विसर्जित करता है। रात्रि उसके लिए एक कक्षा बन जाती है, जिसमें वह अपने 'मैं 'को धीरे-धीरे मिटा देता है और केवल 'वह ' रह जाता है-जो समय, स्थान और पहचान से परे है। यही अघोरी की रात्रि है-दृष्टि की समाप्ति, चेतना की पूर्णता।

नग्नता और वस्त्रत्याग – आत्मा के निर्विकार स्वरूप का प्रतीक

अघोरी जीवन में नग्नता केवल बाह्य वस्त्रों का त्याग नहीं है, बल्कि यह उस संपूर्ण अवधारणा का विसर्जन है जो शरीर, लज्जा, और सामाजिक मर्यादा से जुड़ी होती है। जब अघोरी वस्त्रों का त्याग करता है, तो वह केवल शरीर को नहीं उघाड़ता, बल्कि वह अपने संचित अहंकार, पहचान, कुल, धर्म और यौनिकता के सभी आवरणों को भी एक-एक कर उतार फेंकता है। वह यह दर्शाना चाहता है कि आत्मा को ढँकने की आवश्यकता नहीं होती-न नैतिकता से, न संस्कृति से, और न ही किसी मर्यादा से। उसके लिए नग्नता कोई प्रदर्शन नहीं, बल्कि आत्म-स्वीकार और संपूर्ण समर्पण

का प्रतीक है, जिसमें वह स्वयं को ब्रह्मांड के समक्ष पूर्णतः खोल देता है।

इस नग्नता में, अघोरी अपने शरीर को कोई विशेष वस्तु नहीं मानता; वह उसे केवल एक अस्थायी आवरण के रूप में देखता है, जो मृत्यु के साथ राख बन जाएगा। वह जानता है कि मनुष्य की सबसे गहरी जड़ें शरीर और उससे जुड़ी लज्जा, आकांक्षा और प्रदर्शन में होती हैं। इन्हें तोड़े बिना आत्मा की शुद्धता संभव नहीं। इसीलिए अघोरी न सामाजिक मर्यादाओं की चिंता करता है, न नज़रों की। वह खुले में बैठता है, चिता के पास, राख से लिपटा हुआ, क्योंकि उसके लिए यह देह केवल एक माध्यम है-उस साधना का, जो आत्मा को शून्यता में विलीन करने वाली है। यह नग्नता उसकी साधना की पराकाष्ठा होती है, जो केवल बाह्य प्रतीक नहीं, बल्कि उस आंतरिक निर्विकारता की घोषणा है, जहाँ आत्मा अपने वास्तविक स्वरूप में प्रकट होती है-पूर्ण, निर्द्वंद्व और अखंड।

अघोरी का हास्य – मृत्यु और जीवन पर एक व्यंग्यात्मक दृष्टि

अघोरी, जिसे समाज भय, विकृति या गंभीरता का प्रतीक मानता है, वह अक्सर हँसता है-एक ऐसी हँसी जो सामान्य मनुष्य को विचलित कर सकती है। यह हँसी केवल आनंद की नहीं होती, बल्कि वह उस व्यंग्य की अभिव्यक्ति होती है जो अघोरी समाज की मिथ्या और खोखली संरचनाओं पर करता है। जब वह किसी शव के पास बैठकर हँसता है, तो वह यह दर्शाता है कि जीवन और मृत्यु के इस

चक्र में जितना समाज गंभीर है, उतनी ही उसकी गंभीरता एक छलावा है। अघोरी जानता है कि मनुष्य जीवन भर जिस शरीर को संवारता है, वही एक दिन राख बनकर उड़ जाएगा। फिर भी समाज उसी शरीर के सौंदर्य और मर्यादा को ही केंद्र बनाकर अपना अस्तित्व टिकाए रखता है। इसी परिहास पर अघोरी की हँसी फूटती है-न कटाक्ष करने के लिए, बल्कि सत्य को निर्वस्त्र रूप में सामने रखने के लिए।

यह हँसी अघोरी के आंतरिक वैराग्य का प्रतीक होती है। जब वह हँसता है, तो वह मृत्यु की उपस्थिति को छोटा बना देता है, जीवन की क्षणभंगुरता को सहजता से स्वीकारता है और संसार की नाटकीयता को साक्षी भाव से देखता है। यह हँसी एक गहरी साधना से उपजी होती है, जो उसे भीतर से निर्भीक और मुक्त बनाती है। उसका हास्य किसी मनोरंजन या सामाजिक संवाद का माध्यम नहीं होता, बल्कि यह एक योगिक प्रतिक्रिया होती है-उस समय, जब साधक संपूर्ण विरोधाभासों को पार करके उस स्थिति तक पहुँचता है, जहाँ जीवन और मृत्यु दोनों ही केवल लहरें हैं, और वह स्वयं एक शांत समुद्र है। अघोरी की यह हँसी उस शून्यता का उत्सव होती है, जिसमें सब कुछ नष्ट हो चुका होता है-भय भी, मोह भी, और मृत्यु भी।

अध्याय 20: शुद्धता से परे का मार्ग – अघोरी साधना का रहस्यवाद

अघोरी का रहस्यमय स्वरूप: सीमाओं के पार एक साधक

अघोरी साधु वे विरले पथिक हैं, जो समाज द्वारा तय किए गए नैतिक और धार्मिक सीमाओं को जानबूझकर पार करते हैं ताकि वे उस ब्रह्मसत्ता के साक्षात्कार तक पहुँच सकें जो हर वस्तु में निहित है। उनके लिए न पवित्रता एक लक्ष्य है, न अपवित्रता एक रुकावट; वे इन दोनों की द्वैत धारणा को ही नकारते हैं। अघोरी अपने शरीर, मन और आत्मा को ऐसी साधना में लगाते हैं, जो सामान्य धर्म-पथ से भिन्न, उग्र और भयावह प्रतीत होती है, किंतु भीतर से अत्यंत आध्यात्मिक और आत्म-प्रकाश की ओर प्रेरित करने वाली होती है। उनकी क्रियाएँ – जैसे मानव अवशेषों के पास ध्यान करना, चिता-राख को शरीर पर लगाना या रात के एकांत में गूढ़ मंत्रों का जाप – बाहरी दृष्टि से चौंकाने वाली हो सकती हैं, किंतु उनका लक्ष्य केवल भय को जीतना नहीं, बल्कि उस विराट सत्ता को अनुभव करना है जो प्रत्येक कण में समाहित है। अघोरी जब शमशान में बैठता है, तो वह मृत्यु की छाया में जीवन की ज्योति ढूँढता है – वह वहाँ जीवन के अस्थायी मुखौटों को उतारता है ताकि शाश्वत आत्मा के स्वरूप को देख सके।

अघोरी का रहस्यवाद केवल विकृति या विद्रोह नहीं है, बल्कि यह एक गहन प्रतीकात्मक साधना है जो व्यक्ति को अपनी सबसे भीतरी परतों से परिचित कराती है। समाज उन्हें तिरस्कार या भय की दृष्टि से देखता है, लेकिन अघोरी स्वयं को न समाज से जोड़ते हैं न उसकी स्वीकृति से। वे अपने अस्तित्व को शिव के अंश के रूप में स्वीकार करते हुए, सभी द्वंद्वों से परे स्थित उस बिंदु पर पहुँचने का प्रयास करते हैं जहाँ केवल अखंडता है। उनके लिए रात्रि, चिता, राख और मृत्यु – सभी तत्व आध्यात्मिक परिवर्तन के औजार हैं। वे स्वयं को न किसी नाम से जोड़ते हैं, न किसी पहचान से – वे उस मौन और शून्यता की ओर अग्रसर होते हैं जहाँ अस्तित्व की सारी व्याख्याएँ विलीन हो जाती हैं। यह मार्ग कठिन है, घातक है, किंतु उसी में वह रहस्य छिपा है, जो आत्मा को बंधनों से मुक्त कर उसे परम सत्य के आलोक में विलीन कर देता है।

अद्वैत का गूढ़ रहस्य: एकता की पूर्ण अनुभूति

अघोरी साधना अद्वैत वेदांत के उस गूढ़ रहस्य को क्रियात्मक रूप में मूर्त करती है, जिसमें आत्मा और परमात्मा के भेद का पूर्ण निषेध होता है। अघोरी इस दर्शन को केवल सिद्धांत रूप में नहीं अपनाते, वे उसे अपने आचरण, अपने अनुभव, और अपनी साधना में जीते हैं। उनके लिए 'मैं 'और 'वह 'के बीच की हर सीमा, हर दूरी, हर दीवार एक भ्रम है। वे उस स्थिति को प्राप्त करने का प्रयास करते हैं, जहाँ कोई व्यक्ति, कोई वस्तु, कोई भाव अलग न रह जाए – जहाँ

हर अनुभूति, हर कृति, हर श्वास शिव के रूप में प्रतीत हो। इसीलिए वे उन वस्तुओं और अनुभवों को भी अपनाते हैं, जिन्हें समाज त्याज्य मानता है – क्योंकि उनके लिए अपवित्रता केवल एक मानसिक भ्रांति है, न कि आध्यात्मिक सत्य। जब अघोरी शमशान में बैठता है, राख में लिपटा, मृत देह के पास ध्यानस्थ, तो वह केवल मृत्यु के विरुद्ध नहीं बैठा होता – वह जीवन की सत्यता को आलोकित कर रहा होता है।

अघोरी का अद्वैत अनुभव उसे भीतर से रूपांतरित कर देता है। वह जानता है कि आत्मा कोई पृथक सत्ता नहीं, बल्कि उस अनंत चेतना की लहर है जो इस ब्रह्मांड के कण-कण में व्याप्त है। वह जब किसी तिरस्कृत वस्तु को ग्रहण करता है, तब वह केवल शरीर से नहीं, बल्कि चेतना से उसका आलिंगन करता है – क्योंकि वह जानता है कि उसी में वह एकत्व छिपा है जो सारे द्वंद्वों को समाप्त कर देता है। इस अनुभव में कोई भेद नहीं रहता – न देह और आत्मा में, न मृत्यु और जीवन में, न शिव और शून्य में। अघोरी उस अवस्था तक जाता है जहाँ शब्द चुप हो जाते हैं, रूप विलीन हो जाते हैं, और केवल एक निःशब्द ऊर्जा शेष रह जाती है – वही ऊर्जा जो 'मैं 'और 'वह 'के भेद को मिटा देती है। यही अद्वैत का शुद्धतम रूप है – जहाँ साधक, साध्य और साधना एक हो जाते हैं।

कपालिक और कालमुख: अघोरी परंपरा की जड़ें

अघोरी पंथ की जड़ें भारत की प्राचीनतम शैव परंपराओं में छिपी हुई हैं – विशेषकर कपालिक और कालमुख संप्रदायों में, जिन्होंने सामाजिक व्यवस्था से इतर एक स्वतंत्र, उग्र और आत्मकेन्द्रित साधना पद्धति विकसित की। कपालिक, जिन्हें 'कपाल धारण करने वाले 'तपस्वी कहा गया, मस्तिष्क की अस्थि को हाथ में लेकर साधना करते थे – न कि विकृति के लिए, बल्कि यह दर्शाने के लिए कि चेतना को शरीर से अलग करके ही आत्मा की स्वतंत्रता को महसूस किया जा सकता है। वहीं कालमुख साधु अंधकारपूर्ण स्थलों में, प्रायः निर्जन शमशानों में निवास करते थे और सामाजिक मानदंडों की सीमाओं को तोड़ते हुए उस गूढ़ शक्ति के संपर्क में आते थे जिसे वे शिव का उग्र रूप मानते थे। ये दोनों परंपराएँ अघोरियों के लिए पथप्रदर्शक थीं – उन्होंने उन्हें सिखाया कि साधना केवल प्रकाश की ओर नहीं, अंधकार में प्रवेश कर के भी की जा सकती है।

अघोरी आज भी इन परंपराओं को न केवल स्मृति में रखते हैं, बल्कि उन्हें क्रियात्मक रूप में पुनः सजीव करते हैं। वे कपालिकों की भाँति खोपड़ियों और अस्थियों को साधना का उपकरण मानते हैं, और कालमुखों की भाँति हर प्रकार की सामाजिक परिभाषा से परे खड़े रहते हैं। किंतु अघोरी केवल अतीत के वाहक नहीं हैं – वे उन परंपराओं को वर्तमान में नये संदर्भों के साथ जीते हैं। वे मृत्यु से नहीं

डरते, वे शमशान को शरणस्थली मानते हैं, और वे समाज के द्वारा त्यागे गए प्रतीकों में भी ईश्वर की उपस्थिति अनुभव करते हैं। कपालिक और कालमुख की यह विरासत उन्हें स्थूल और सूक्ष्म, दोनों स्तरों पर बदल देती है – और यही परंपरा उन्हें उस आत्म-तत्त्व की अनुभूति तक पहुँचाती है, जहाँ कोई भेद नहीं रहता, केवल एक ही सत्ता शेष रह जाती है – शिव।

निषिद्ध का प्रतीकवाद – अघोरी साधना की गूढ़ भाषा

अघोरी पथ में जो बाह्य रूप से तिरस्कृत है, वही साधक के लिए साधना का सबसे ऊँचा माध्यम बन जाता है। समाज जिन वस्तुओं, क्रियाओं या स्थानों को अपवित्र या डरावना समझता है, अघोरी उन्हीं को अपने आध्यात्मिक अभ्यास का केन्द्र बनाते हैं। जैसे मृत मांस का भक्षण, शमशान की राख का लेपन, या चिता के निकट ध्यान-ये कृत्य केवल यथार्थ में क्रियाएं नहीं, बल्कि एक गूढ़ प्रतीकात्मक भाषा हैं, जिनके माध्यम से अघोरी संसार के द्वैतों को विसर्जित करता है। इन क्रियाओं के पीछे कोई विकृति नहीं होती, न ही वे किसी सामाजिक विरोध की जिद हैं। वे आत्मा और शरीर के बीच के कृत्रिम भेद को तोड़ने, और स्वयं को परम सत्ता के साथ विलीन करने की प्रक्रिया होती हैं। अघोरी उस भय को अपने भीतर आमंत्रित करता है, जिसे सामान्य व्यक्ति दूर करने की कोशिश करता है, क्योंकि उसे ज्ञात है कि जहाँ भय है, वहीं मुक्ति की संभावना छिपी है।

निषिद्ध का यह प्रतीकवाद अघोरी साधना की मूल धुरी बनता है। जब साधक मृत्यु की उपस्थिति में बैठता है, जब वह शारीरिक विकृति को आत्मसात करता है, तब वह अपने भीतर छिपे उस गूढ़ द्वंद्व को पहचानता है, जो पवित्र और अपवित्र, दिव्यता और विकृति, अस्तित्व और शून्यता के बीच विद्यमान है। यह साधना उसे उस आंतरिक क्षेत्र में प्रवेश करने देती है, जहाँ चेतना की कोई परिभाषा नहीं बचती-सिर्फ अनुभव होता है, जो शून्य और परिपूर्ण दोनों होता है। अघोरी द्वारा निषिद्ध का चयन यह उद्घोषणा है कि संपूर्ण ब्रह्मांड में कोई ऐसा तत्व नहीं है जिसे परमात्मा से पृथक माना जा सके। यह प्रतीकात्मक यात्रा साधक को अपने सभी मानसिक प्रतिबंधों से मुक्त करती है, जिससे वह स्वयं को शिवमय और सत्तामय अनुभूत करता है-निराकार में विलीन होता हुआ।

गोपनीयता और मौन: अघोरी साधना का रहस्यपूर्ण आवरण

अघोरी साधना केवल अपने बाहरी क्रियाकलापों से नहीं जानी जाती, बल्कि उसकी गहराई उसकी गोपनीयता में है। यह साधना गुरुपरंपरा में मौन के माध्यम से प्रसारित होती है, और इसका वास्तविक स्वरूप साधक और गुरु के बीच की अटूट अंतरात्मिक भाषा में छिपा होता है। समाज के लिए जो दृश्य खौफ़नाक या रहस्यमय है, वह अघोरी साधना में पवित्र और आत्मा का शोधन करने वाला माध्यम बनता है। मृत देह के समीप ध्यान करना, चिता की आग के सामने मौन साधना करना, या निर्वाणी होकर रात भर

शमशान में बैठना-ये सब क्रियाएं किसी बाहरी दर्शक के लिए विचित्र प्रतीत हो सकती हैं, लेकिन अघोरी के लिए ये ही आत्मा के वास्तविक रूप को पहचानने के अवसर होते हैं। इस साधना का रहस्य तभी उजागर होता है जब साधक मौन में उतरता है, और स्वयं से स्वयं का साक्षात्कार करता है।

गोपनीयता केवल अघोरी परंपरा की रीत नहीं, बल्कि उसकी आवश्यकता है। यदि यह साधना सार्वजनिक मंच पर लाकर प्रदर्शित कर दी जाए, तो वह अपनी मूल ऊर्जा खो देती है, और केवल एक तमाशा बनकर रह जाती है। इसलिए अघोरी अपनी साधना को शब्दों में नहीं बाँधता, न ही प्रचारित करता है। वह शमशान के अंधकार में, मृत्यु की उपस्थिति में, केवल भैरवी के आह्वान और मौन की ध्वनि में अपना समर्पण व्यक्त करता है। यह गोपनीयता साधक को भीतरी रूप से पूर्णत: खोलने में सहायता करती है, जहाँ कोई भूमिका नहीं बचती, केवल सत्य का प्रतिबिंब रहता है। इस मौन में ही वह शक्ति निहित होती है, जो चेतना को उच्चतम स्तर तक उठाने का सामर्थ्य रखती है। यही वह रहस्यवाद है, जो अघोरी साधना को अद्वितीय और अप्रतिम बनाता है।

पवित्र ध्वनियाँ: अघोरी साधना में मंत्रों का अस्तित्व

अघोरी साधना में मंत्र केवल उच्चारण नहीं होते, वे ब्रह्मांडीय तरंगों के कंपन हैं, जो साधक को शरीर, समय और मृत्यु की सीमाओं से बाहर ले जाते हैं। प्रत्येक मंत्र, चाहे वह “अघोरेभ्यो नमः” हो या

विशेष रूप से भैरवी को समर्पित तांत्रिक बीज मंत्र, साधक की चेतना को धीरे-धीरे उस केंद्र तक पहुँचा देता है, जहाँ व्यक्तित्व का अहं पिघल जाता है और ब्रह्मरूप का अभ्युदय होता है। अघोरी इन ध्वनियों को केवल मानसिक दोहराव के लिए नहीं बोलता, वह उन्हें भीतर की ऊर्जा को जगाने के लिए अनुभव करता है। जब ये मंत्र शमशान की निस्तब्धता में गूंजते हैं, तब वे केवल हवा में नहीं फैलते, बल्कि साधक के रक्त में, उसकी श्वासों में, और उसकी अंत:करण की गहराइयों में उतर जाते हैं। यह कंपन चेतना को उस अद्वैत की ओर ले जाती है, जहाँ 'मैं 'और 'तू 'का अंतर समाप्त हो जाता है।

इन मंत्रों की शक्ति साधक के पूरे अस्तित्व में परिवर्तन लाती है। वे केवल आत्मा को जागृत नहीं करते, वे उसकी पुरानी स्मृतियों, संस्कारों और भय की ग्रंथियों को खोलते हैं। मंत्रों का कंपन एक औषधि की तरह होता है, जो भीतर छिपी अनावश्यक इच्छाओं को भस्म करता है और उस आंतरिक मौन की स्थापना करता है, जहाँ से सत्य प्रकट होता है। अघोरी इन ध्वनियों को अपनी साधना की धड़कन बनाकर जीता है-हर मंत्र एक प्रस्थान बिंदु है उस मार्ग का, जहाँ आत्मा भैरवी से एकाकार होती है। यही मंत्र साधक को पवित्रता और अपवित्रता के भेद से परे, प्रकृति और मृत्यु की लहरों के बीच संतुलित करते हुए उस स्थिति तक पहुंचाते हैं, जहाँ कोई शब्द नहीं बचता, केवल कंपन का शाश्वत स्पंदन रह जाता है।

परिवर्तन की आग में तपना – आत्मा का शोधन

अघोरी साधना को समझने के लिए यह आवश्यक है कि उसे केवल एक बाहरी अनुष्ठान या चौंकाने वाले कृत्य के रूप में न देखा जाए, बल्कि उसे आत्मा की अग्निपरीक्षा के रूप में जाना जाए, जिसमें साधक अपने भीतर के सबसे गहरे भय, भ्रम और वासनाओं का सामना करता है। अघोरी अपने जीवन को तप्त धातु की भांति शुद्ध करने के लिए शमशान की आग में प्रवेश करता है-परंतु यह अग्नि बाहर नहीं, भीतर जल रही होती है। यह अग्नि उन संस्कारों, मान्यताओं, और द्वंद्वों को जलाती है, जो साधक को उसकी आत्मा की वास्तविक प्रकृति से दूर रखते हैं। इस मार्ग में तपस्या का अर्थ केवल शारीरिक कष्ट सहना नहीं, बल्कि अपने मानसिक और आत्मिक बंधनों को तोड़ना है। जब साधक मृत शरीरों के बीच ध्यान करता है, तो वह केवल मृत्यु को नहीं, अपने भीतर की माया को देखता है। यह साधना उसे भीतर की परतों को एक-एक कर उतारने के लिए बाध्य करती है, ताकि वह उस शुद्ध स्वरूप तक पहुँच सके, जो कालातीत है।

परिवर्तन की यह अग्नि साधक को इस बिंदु तक ले जाती है, जहाँ जीवन और मृत्यु, पवित्रता और अपवित्रता, सुख और दुःख की सीमाएँ मिट जाती हैं। वहाँ केवल वही बचता है, जो अपरिवर्तनीय है-वह चेतना जो अनादि है, अनंत है। अघोरी जब शमशान की राख को अपने शरीर पर धारण करता है, तो वह न

केवल शरीर की क्षणभंगुरता को स्वीकार करता है, बल्कि यह भी दर्शाता है कि भीतर की ज्वाला में तप कर ही कोई आत्मिक रूपांतरण संभव है। अघोरी अपने भीतर की कषाय-कल्मष को जला देता है, और राख में परिवर्तित होकर पुनः जन्म लेता है-लेकिन अब वह केवल शरीर नहीं, केवल मन नहीं, वह स्वयं चेतना बन चुका होता है। यह साधना उस गहन आंतरिक प्रक्रिया को मूर्त करती है, जिसमें आत्मा को हर उस आवरण से मुक्त किया जाता है, जो उसे उसकी मूल स्थिति-शिव के साथ एकत्व-से अलग करता है।

तांत्रिक विसर्जन – पूर्ण समर्पण की चरम अवस्था

अघोरी साधना की चरम अवस्था वह है जहाँ साधक अपने अस्तित्व को पूरी तरह विसर्जित कर देता है-न केवल शरीर, मन, और बुद्धि को, बल्कि अपने ‘स्व ’की अनुभूति को भी। इस स्थिति को ‘तांत्रिक विसर्जन ’कहा जाता है, जिसमें साधक यह स्वीकार कर लेता है कि वह कुछ भी नहीं है, कोई भी नहीं है-वह केवल ऊर्जा है, केवल स्पंदन है। यह विसर्जन किसी विशेष कर्मकांड से नहीं, बल्कि उस मानसिक और आध्यात्मिक प्रक्रिया से होता है, जहाँ साधक भीतर के समस्त द्वंद्वों, कामनाओं, और स्मृतियों को त्याग देता है। यह वह अवस्था है, जहाँ ‘मैं ’का कोई अर्थ नहीं रह जाता, और साधक केवल ‘वह ’बन जाता है-वह चेतना, जो शून्य है, परिपूर्ण है, अनादि है। इस विसर्जन में, साधक को अपने गुरु के द्वारा निर्देशित तांत्रिक विधियों का सहारा लेना पड़ता है, जो प्रतीकात्मक मृत्यु की

प्रक्रिया को पूरा करता है-जहाँ अहं का नाश ही साधना की पूर्णता है।

यह तांत्रिक विसर्जन शमशान में होते हुए साधक को एक नई दृष्टि देता है, जहाँ मृत्यु अब अंत नहीं, बल्कि पुनर्जन्म की भूमिका बन जाती है। चिता की अग्नि, शव की शांति, और भैरवी की उपस्थिति उस क्षण में एक हो जाती है, जब साधक स्वयं को शून्य में विलीन होते हुए अनुभव करता है। यह विसर्जन केवल उसका नहीं होता जो मर चुका है, बल्कि उसका होता है जो अब चेतना में जाग चुका है। वह जो भूतकाल में अपनी पहचान लेकर चलता था, अब केवल एक लहर है उस ब्रह्मांडीय सागर की, जिसे कोई नाम नहीं चाहिए। अघोरी के लिए, यही है साधना की पूर्णता-जहाँ उसका अस्तित्व स्वयं में ही विलीन हो जाता है, और केवल भैरवी का अनुग्रह शेष रह जाता है। इस अवस्था में, न कोई इच्छा रहती है, न कोई भय, न कोई पहचान-बस मौन, अनंत मौन, जिसमें आत्मा और ब्रह्म, साधक और शिव, भैरवी और चेतना-सभी भेद समाप्त हो जाते हैं।

अध्याय 21:
अघोरी जीवनशैली में शमशान भैरवी का प्रभाव

जीवनशैली का आधार: भैरवी के तांत्रिक तत्वों से निर्मित दैनिक जीवन

अघोरी जीवनशैली का आधार केवल मृत्यु के प्रति निर्भयता या समाज से अलगाव नहीं है, बल्कि यह एक ऐसी गहन आंतरिक संरचना है जो भैरवी की तांत्रिक शक्ति से पोषित होती है। यह जीवनशैली नित्य अभ्यास, मौन साधना, प्रकृति के प्रति जागरूकता और आत्म-अनुशासन का मिश्रण है, जो साधक को सांसारिक द्वंद्वों से दूर ले जाकर उसकी चेतना को परम सत्ता से जोड़ती है। अघोरी शमशान को केवल साधना-स्थल नहीं, बल्कि जागरूकता के परीक्षण की प्रयोगशाला मानते हैं। वे दिनचर्या को नियमित रखते हुए भी भौतिक सुख-सुविधाओं से विमुख रहते हैं। उनका आहार सीमित और तात्त्विक होता है, वस्त्र सामान्य और चिह्नित होते हैं, और स्थान की स्वच्छता के प्रति भी वे सजग रहते हैं, क्योंकि भैरवी की उपस्थिति केवल ध्यान में नहीं, जीवन के हर कार्य में महसूस की जाती है। भैरवी के इस प्रभाव के चलते अघोरी किसी भी क्रिया को सांसारिक दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि चेतनात्मक अभ्यास के रूप में करते हैं-भोजन करना, जल पीना, ध्यान करना या मंत्र जाप-हर कार्य का एक गूढ़ आयाम होता है, जो उन्हें भैरवी के समीप ले जाता है।

इस जीवनशैली का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि यह केवल त्याग या तपस्या की ओर प्रेरित नहीं करती, बल्कि साधक को इस संसार में रहकर ही उसके पार देखने की दृष्टि देती है। अघोरी किसी नियम में बंधे नहीं होते, किंतु वे अनुशासन के ऐसे मार्ग का अनुसरण करते हैं, जो भीतर के अहंकार को विसर्जित कर शुद्ध चित्त की ओर ले जाता है। भैरवी के सिद्धांतों के अनुरूप अघोरी जीवन में कोई भी कर्म आकस्मिक नहीं होता-हर अनुभूति एक साधना है, हर अनुभूति एक परीक्षा है। यह जीवनशैली, जहां चिता की राख भी साधक का वस्त्र बनती है और मृत देह भी चेतना की गुरुतर शिक्षा देती है, एक साधारण जीवन को आध्यात्मिक पूर्णता की ओर ले जाती है। शमशान की मौन ऊर्जा, भैरवी की छाया में, अघोरी को भीतर से रूपांतरित करती है, जहां न केवल शरीर और मन का नियंत्रण होता है, बल्कि आत्मा भी ईश्वर से प्रत्यक्ष संवाद करती है।

भैरवी की दृष्टि से सादगी और वैराग्य की पुनर्व्याख्या

अघोरी जीवनशैली में सादगी केवल वस्त्रों, आहार या संसाधनों की न्यूनता नहीं है, बल्कि यह भैरवी की दृष्टि से जीवन के बाह्य आवरणों से पूर्ण असंबद्धता की अवस्था है। यह ऐसी सादगी है जो मानसिक परतों को उतारती है-जहां इच्छाएं स्वयं छूटने लगती हैं, और साधक किसी भी प्रकार के बाहरी आवेग से प्रभावित नहीं होता। भैरवी, जो मृत्यु की देवी होकर भी जीवन का रहस्य लिए हुए है, अघोरियों को यह सिखाती हैं कि जीवन का मूल्य भोग में नहीं,

अनुभव में है। इस अनुभव का निर्माण उन साधनों से नहीं होता जो संसार में वांछनीय हैं, बल्कि उन स्थितियों से होता है जो साधक को उसके आत्मिक केंद्र से जोड़ती हैं। इसीलिए अघोरी जीवनशैली में वैराग्य भी निषेध नहीं, बल्कि सूक्ष्म ग्रहणशीलता है-सांसारिक वस्तुओं की अस्थिरता को समझते हुए उनमें लिप्त न होना। वे किसी भी वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति के साथ लगाव नहीं रखते, किंतु सभी में ईश्वर की उपस्थिति को स्वीकार करते हैं।

भैरवी की दृष्टि से प्रेरित यह जीवनशैली अघोरी को आत्ममूल्यांकन और अंतर्मुखी यात्रा के लिए तैयार करती है। अघोरी न तो किसी संस्था के सदस्य होते हैं, न किसी घोषित धर्म के अनुयायी; वे स्वयं के भीतर घट रही साधना के साक्षी होते हैं। भैरवी की पूजा केवल मंत्रों और चढ़ावे तक सीमित नहीं होती-उनकी हर सांस, हर क्रिया, हर मौन ही एक प्रकार की अर्पण होती है। साधक न तो किसी से कुछ चाहता है, न किसी को कुछ देना चाहता है; वह केवल भैरवी के आदेशानुसार जीता है। इस सादगी में कोई दीनता नहीं, बल्कि दिव्यता है; यह त्याग कोई क्षोभ या प्रतिशोध नहीं है, बल्कि पूर्ण संतुलन की अवस्था है, जो केवल तब आती है जब साधक ने स्वयं को पूर्णतया नष्ट कर दिया हो। भैरवी के इस प्रभाव में, अघोरी एक ऐसे रूप में ढलता है, जो समाज से भिन्न तो है, पर किसी अज्ञात सत्य के अत्यधिक समीप भी। यही वह सादगी है, जो साधक को शून्यता से नहीं, बल्कि चेतनता से भर देती है।

नारी सम्मान: भैरवी शक्ति के प्रति आंतरिक समर्पण

अघोरी जीवनशैली में नारी शक्ति का सम्मान केवल एक बाह्य व्यवहार नहीं, बल्कि एक आंतरिक अनुशासन और दार्शनिक आस्था का विषय है। भैरवी, जो सृष्टि, संहार और चेतना की ऊर्जा का मूर्त स्वरूप मानी जाती हैं, अघोरी साधना की मूलधारा में केंद्रीय स्थान रखती हैं। अघोरी शमशान जैसे सीमांत क्षेत्रों में निवास करते हुए नारी को केवल शरीर या सामाजिक पहचान के रूप में नहीं, बल्कि प्रकृति की मूल चेतना के रूप में देखते हैं। यह दृष्टिकोण उन्हें समाज की सामान्य धारणा से अलग करता है, जहाँ नारी शक्ति को या तो पूजनीय देवी के रूप में या सीमित सामाजिक भूमिकाओं में बाँधा गया है। अघोरी इस सीमित दृष्टिकोण को अस्वीकार करते हैं और नारी शक्ति को स्वयं में जागृत करने का प्रयास करते हैं-वह शक्ति जो निर्माण, ध्वंस और समर्पण की त्रिगुणात्मक धारा में बहती है।

यह सम्मान शमशान में भैरवी की तांत्रिक पूजा के दौरान प्रकट होता है, जहाँ अघोरी भैरवी को एक ऐसे माध्यम के रूप में देखते हैं, जो साधक को भीतर की गहराइयों में ले जाकर आत्म-चेतना से जोड़ती हैं। वे नारी के रूप को देवीत्व की ऊर्जा के रूप में स्वीकारते हैं, जो जन्म और मृत्यु दोनों की साक्षी है। इस साधना में उपयोग की जाने वाली वस्तुएँ-जैसे रक्तवर्ण पुष्प, त्रिशूल, रात्रिचर जड़ी-बूटियाँ-न केवल प्रतीकात्मक हैं, बल्कि उस शक्ति का आह्वान भी करती हैं, जो जीवन के प्रत्येक आयाम को आत्मिक दृष्टि से जोड़ती है। यह

सम्मान यौनता या सामाजिक लिंग की सीमाओं को तोड़ता है और नारी को एक आध्यात्मिक महाशक्ति के रूप में पुनर्परिभाषित करता है। इस प्रकार, अघोरी जीवन में नारी सम्मान केवल सामाजिक व्यवहार नहीं, बल्कि एक आत्मिक अनुशासन है, जो भैरवी की चेतना से सीधे जुड़ा होता है।

शमशान का घर बनना: डर के स्थान से साधना की भूमि तक

शमशान, जिसे सामान्य समाज में भय, अशुभता और तिरस्कार का प्रतीक माना जाता है, अघोरियों के लिए एक ऐसा तपस्थल बन जाता है जहाँ मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा बहती है। अघोरी इस स्थान को केवल रहने का क्षेत्र नहीं मानते, बल्कि उसे जीवन के सबसे गहरे सत्य का प्रतीक मानते हैं-जहाँ न केवल शरीर विलीन होते हैं, बल्कि अहंकार और द्वैत भी। भैरवी की साधना अघोरियों को प्रेरित करती है कि वे शमशान को न केवल भय से परे जाकर स्वीकारें, बल्कि उसे अपने भीतर की मृत्यु और पुनर्जन्म की प्रक्रिया के रूप में देखें। वे वहाँ निवास करते हैं, भैरवी के मंत्रों का जाप करते हैं, और समाधि की अवस्था तक पहुँचने के लिए उसी भूमि में ध्यान करते हैं जहाँ दूसरों को रात्रि में कदम रखने का साहस नहीं होता।

यह निवास केवल भौतिक नहीं, बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक समर्पण का प्रतीक है। शमशान की राख, चिता की ज्वाला, और मौन की गूंज साधक के भीतर एक परिवर्तनकारी ऊर्जा उत्पन्न करती है। यह ऊर्जा न केवल मृत्यु के भय को समाप्त करती

है, बल्कि उसे एक ऐसी घटना में रूपांतरित करती है, जहाँ आत्मा अपने वास्तविक स्वरूप को पहचानती है। गुरु का मार्गदर्शन इस स्थल को गृह बनाने की प्रक्रिया में अनिवार्य है, क्योंकि वह साधक को शमशान की ऊर्जाओं को सहन करने, समझने और साधना में रूपांतरित करने की विधि सिखाता है। इस प्रकार, शमशान अघोरी जीवन का केंद्र बनता है-एक ऐसा घर, जो केवल ईंट और पत्थर का नहीं, बल्कि चेतना और साहस का बना होता है। भैरवी की प्रेरणा से अघोरी शमशान को वह स्थान बना देते हैं, जहाँ जीवन और मृत्यु दोनों समभाव से स्वीकारे जाते हैं।

आहार और पोषण: भैरवी के अनुसार आहार का चयन

अघोरी जीवनशैली में आहार का चयन केवल शारीरिक पोषण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक गहन तांत्रिक अनुशासन का हिस्सा है जो शमशान भैरवी की शिक्षाओं से पोषित होता है। भैरवी, जो विकराल और करुणामयी दोनों स्वरूपों की प्रतिनिधि हैं, अघोरियों को यह सिखाती हैं कि भोजन स्वयं में एक यज्ञ है-एक आंतरिक साधना। साधक ऐसे आहार का चयन करता है जो उसे भौतिक मोह से परे ले जाए और साधना में स्थिरता प्रदान करे। फल, कंद, और जड़ी-बूटियाँ, जो शमशान या जंगलों में सहज सुलभ होती हैं, अघोरी के लिए प्राकृतिक और उपयुक्त मानी जाती हैं। इनका सेवन केवल भूख मिटाने हेतु नहीं, बल्कि शरीर को साधना योग्य रखने के उद्देश्य से किया जाता है। कुछ विशेष अनुष्ठानों में, जहां

अघोरी तांत्रिक शक्ति को जाग्रत करने का प्रयास करता है, वहां मांस या रक्त का प्रसाद भैरवी को अर्पित किया जाता है, लेकिन यह किसी हिंसा या इच्छा से नहीं, बल्कि प्रकृति के विनाश और सृजन के चक्र को स्वीकारने की अंतः प्रेरणा से होता है।

शमशान की ऊर्जा से जुड़ा हुआ यह आहार केवल साधक की भूख ही नहीं शांत करता, बल्कि उसकी चेतना को एक ऐसे स्तर पर लाता है, जहाँ वह पदार्थ और ऊर्जा के भेद को मिटाकर सब कुछ एक रूप में देखने लगता है। इस प्रक्रिया में गुरु की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है, जो साधक को सिखाता है कि आहार केवल ग्रहण करने की क्रिया नहीं, बल्कि आत्मा को स्पर्श करने वाली प्रक्रिया है। मंत्रों से शुद्धिकरण, गंगाजल से स्नान, और विशेष यंत्रों के समक्ष अर्पण कर आहार को देवता के प्रसाद की तरह ग्रहण करना, यह भैरवी के सिद्धांतों की व्यावहारिक परिणति है। इस आहार चयन की प्रक्रिया से साधक धीरे-धीरे न केवल आत्मा के सूक्ष्म स्तरों को पहचानने लगता है, बल्कि वह अपने अंदर की जड़ता, लालसा और भय को भी साधना की अग्नि में जला डालता है। इस प्रकार भैरवी के अनुसार आहार का चयन अघोरी जीवनशैली को न केवल आध्यात्मिक रूप से पोषित करता है, बल्कि उसे संपूर्ण अस्तित्व के साथ एक लय में भी ले आता है।

वस्त्र और अलंकरण: भैरवी के प्रतीकों का उपयोग

अघोरी जीवनशैली में वस्त्र और अलंकरण का चयन किसी फैशन या बाह्य पहचान का प्रतीक नहीं, बल्कि एक गूढ़ तांत्रिक संकेत है, जो शमशान भैरवी की शक्ति से सीधा संबंध स्थापित करता है। अघोरी प्रायः ऐसे वस्त्र धारण करते हैं, जो सामाजिक रूप से असामान्य और भयावह प्रतीत होते हैं-जैसे कि काले कपड़े, राख लिप्त शरीर, और कभी-कभी नग्नता तक। यह केवल समाज से भिन्न होने की प्रवृत्ति नहीं, बल्कि आत्मा को सभी सामाजिक बंधनों, शीलों और आडंबरों से मुक्त करने की एक प्रक्रिया है। वस्त्रों के साथ प्रयुक्त अस्थियों की मालाएँ, मृतकों की खोपड़ी से बने पात्र, और भैरवी के यंत्र चिह्न अघोरी के शरीर को एक चलती-फिरती साधना में परिवर्तित कर देते हैं। इन प्रतीकों का उद्देश्य भय या चमत्कार नहीं, बल्कि साधक को उसकी अस्थायी देह और शाश्वत आत्मा के बीच की दूरी मिटाना सिखाना है।

इन अलंकरणों की तांत्रिक शक्ति तभी जाग्रत होती है जब उन्हें मंत्रों द्वारा जागृत कर भैरवी की साधना में समर्पित किया जाता है। साधक, जब चंदन, गंगाजल, और तांत्रिक पुष्पों द्वारा इन प्रतीकों को अभिमंत्रित करता है, तब वे केवल सजावट नहीं रहते-वे चेतना के वाहक बन जाते हैं। गुरु इस प्रक्रिया का केंद्रीय मार्गदर्शक होता है, जो प्रत्येक वस्त्र और अलंकरण के पीछे छिपे रहस्य को समझाता है-कब कौन-सा प्रतीक धारण करना है, किस साधना में कौन-सी माला

प्रभावशाली होती है, और किस समय कौन-से रंग का वस्त्र उपयुक्त है। यह संपूर्ण प्रक्रिया साधक को भौतिक स्वरूप से परे ले जाकर उसे उस अवस्था में ले जाती है, जहाँ न कोई जाति है, न कोई लिंग, न कोई स्वरूप-केवल एक शुद्ध ऊर्जा है, जो भैरवी के रूप में उसमें प्रवाहित होती है। इस प्रकार वस्त्र और अलंकरण का चयन न केवल अघोरी जीवनशैली का बाह्य रूप है, बल्कि यह उसकी आंतरिक यात्रा का प्रतीक है, जो भैरवी की कृपा से आत्म-साक्षात्कार की ओर प्रवाहित होती है।

सामाजिक संबंध: भैरवी के दर्शन से सामाजिक व्यवहार

अघोरी जीवनशैली में सामाजिक संबंधों का स्वरूप विशिष्ट होता है, क्योंकि यह भैरवी के दर्शन से निर्मित होता है, जो संबंधों को आत्मा और ब्रह्म के मध्य ऊर्जा की प्रवाहमान कड़ी के रूप में देखता है। अघोरी सामान्य समाज से दूर रहते हैं, लेकिन जब वे समाज में प्रवेश करते हैं, तो उनका व्यवहार सामान्य नहीं होता। वे न किसी सामाजिक स्वीकृति की परवाह करते हैं, न किसी आडंबरपूर्ण व्यवहार की। उनके सामाजिक संपर्क केवल करुणा, निष्काम सेवा और आंतरिक शांति से संचालित होते हैं। भैरवी उन्हें सिखाती हैं कि संबंधों में मोह नहीं, समर्पण होना चाहिए; दायित्व नहीं, दया होनी चाहिए। इसी कारण जब अघोरी समाज में उपस्थित होते हैं, तो उनका प्रत्येक क्रियाकलाप एक मौन संदेश होता है-कि जीवन की सबसे

बड़ी जिम्मेदारी आत्मा की मुक्ति है, न कि सामाजिक भूमिका का निर्वाह।

गुरु की भूमिका यहां भी अत्यंत महत्वपूर्ण होती है, जो साधक को यह सिखाता है कि किसी से प्रेम करना, किसी की सेवा करना या किसी के दुख में भागी बनना, यदि भैरवी की करुणा से प्रेरित हो, तो वह भी साधना का ही रूप होता है। समाज में उनके योगदान-जैसे गरीबों को भोजन कराना, पर्यावरण की रक्षा करना, या पीड़ितों की सेवा करना-सभी भैरवी के तत्त्व से प्रेरित होते हैं। उनका व्यवहार कभी क्रोध से, कभी मौन से, कभी हँसी से और कभी रहस्यमयी निगाहों से दूसरों को जगा सकता है। वे संबंधों को न निभाते हैं, न निभाने से भागते हैं; वे बस उन्हें उस रूप में स्वीकार करते हैं, जैसा भैरवी उन्हें भेजती हैं। इस प्रकार अघोरी के सामाजिक संबंध शमशान भैरवी के दर्शन से जन्म लेते हैं-जहाँ हर संपर्क एक साधना है, हर मिलन एक तांत्रिक क्षण है, और हर विदाई एक आत्मिक मुक्ति का अवसर है।

समाज से भिन्न आहार प्रथाएँ: परंपरा से परे आत्म-अनुशासन

अघोरी जीवनशैली में आहार संबंधी व्यवहार प्रायः समाज की पारंपरिक मान्यताओं से अलग होते हैं, क्योंकि उनका आधार सामाजिक स्वीकृति नहीं बल्कि तांत्रिक साधना की अंतःप्रेरणा होती है। शमशान भैरवी की उपासना से प्रेरित होकर, अघोरी ऐसे खाद्य पदार्थों को स्वीकार करते हैं, जिन्हें समाज निषिद्ध मानता है, परंतु

उनके लिए यह एक आत्म-अनुशासन की प्रक्रिया होती है। अघोरी इस विश्वास में जीते हैं कि प्रत्येक वस्तु ब्रह्मांड की ऊर्जा का ही रूप है, और कोई भी चीज़ आंतरिक रूप से अपवित्र नहीं होती। उनका दृष्टिकोण वस्तुओं की आत्मिक गुणवत्ता पर आधारित होता है, न कि समाज द्वारा आरोपित शुद्धता-अशुद्धता के मापदंडों पर। मांस, जड़ी-बूटियाँ, और यहाँ तक कि मृतक शरीर के अवशेष भी कभी-कभी उनकी साधना में प्रतीकात्मक या अनुष्ठानिक उपयोग में आते हैं। यह आहार परंपरा उन्हें माया और सामाजिक बंधनों से परे जाकर आत्मा के परम स्वरूप से जुड़ने का मार्ग देती है।

यह आहार प्रथा तांत्रिक चेतना और शारीरिक सीमाओं के बीच की दीवार को तोड़ती है। समाज जिसे तिरस्कृत मानता है, उसे अघोरी प्रयोग का माध्यम मानते हैं-एक ऐसा माध्यम जो भय और घृणा जैसे आंतरिक अवरोधों का सामना कर उन्हें आत्म-नियंत्रण में बदल देता है। शमशान का वातावरण, जिसमें मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा प्रवाहित होती है, इस प्रक्रिया को और अधिक प्रबल बनाता है। साधक को इन आहारों के माध्यम से कोई सुख प्राप्त करना नहीं होता, बल्कि यह आत्मानुशासन और आंतरिक संतुलन की परीक्षा होती है। गुरु का मार्गदर्शन इसमें केंद्रीय भूमिका निभाता है, जो यह सुनिश्चित करता है कि साधक इन प्रथाओं का उपयोग अंहकार या प्रदर्शन के लिए न करे, बल्कि केवल आत्मिक शुद्धि और साधना की प्रगति हेतु करे। इस प्रकार, समाज से भिन्न आहार प्रथाएँ केवल विरोध का प्रतीक नहीं होतीं, बल्कि साधक को उसके भीतरी

सीमाओं से मुक्त कर, भैरवी के चेतन संसार से जोड़ने वाली एक गहन साधना बन जाती हैं।

आध्यात्मिक शक्ति के लिए आहार: ऊर्जा का संचरण और जागरण

अघोरी जीवनशैली में आहार केवल शरीर को पोषण देने का माध्यम नहीं है, बल्कि एक ऐसा साधन है, जिससे साधक आध्यात्मिक ऊर्जा को ग्रहण करता है और साधना की ऊँचाइयों तक पहुँचता है। भैरवी, जो चेतना की गति और शक्ति का प्रतिनिधित्व करती हैं, अघोरियों को यह सिखाती हैं कि आहार आत्मा और शरीर के बीच संतुलन बनाए रखने का एक यंत्र है। इसलिए, अघोरी ऐसा भोजन करते हैं जो तांत्रिक ऊर्जा को जागृत कर सके-जैसे विशेष जड़ी-बूटियाँ, गूढ़ वनस्पतियाँ, या विशेष अवसरों पर भैरवी को चढ़ाया गया मांसाहार। ये पदार्थ गंगाजल से शुद्ध किए जाते हैं और उनमें मंत्रों की शक्ति का संचार किया जाता है, जिससे वह भोजन साधक के भीतर ऊर्जावान कंपन उत्पन्न करता है।

यह भोजन केवल पोषण के लिए नहीं होता, बल्कि कुंडलिनी के जागरण में सहायक ऊर्जा के रूप में ग्रहण किया जाता है। अघोरी इस प्रक्रिया को अत्यंत सावधानी और अनुशासन के साथ अपनाते हैं, क्योंकि गलत आहार या अपवित्रता साधना को बाधित कर सकती है। शमशान का वातावरण-जहाँ मृत्युपरांत ऊर्जा प्रवाहित होती है-इस प्रक्रिया को अत्यधिक प्रभावशाली बनाता है। गुरु इस

यात्रा में साधक का मार्गदर्शन करता है, यह सुनिश्चित करता है कि वह आहार के चयन में भैरवी के सिद्धांतों का पालन करे और उसे केवल आत्मसाक्षात्कार की दिशा में प्रयुक्त करे। भैरवी की शिक्षाओं में यह स्पष्ट होता है कि आध्यात्मिक शक्ति का स्रोत बाह्य नहीं, बल्कि आहार के माध्यम से आत्मानुशासन, सादगी और तांत्रिक जागरूकता है। इस प्रकार, आध्यात्मिक शक्ति के लिए किया गया आहार न केवल साधना का एक उपकरण बनता है, बल्कि अघोरी को भैरवी के साथ उस अदृश्य तार से जोड़ता है, जो उसे मृत्यु, भय, और द्वैत से मुक्त करके आत्म-प्रकाश की ओर ले जाता है।

पर्यावरण के साथ संतुलन: भैरवी साधना में प्राकृतिक सह-अस्तित्व

अघोरी जीवनशैली में आहार संबंधी व्यवहार और तांत्रिक गतिविधियाँ केवल आत्म-कल्याण तक सीमित नहीं होतीं, बल्कि वे पर्यावरण के साथ संतुलन बनाकर प्रकृति के प्रति गहन सम्मान भी प्रकट करती हैं। शमशान भैरवी, जो प्रकृति की उग्र और कोमल दोनों शक्तियों की प्रतीक हैं, अघोरियों को यह सिखाती हैं कि हर जीव, हर पौधा, और हर तत्व ब्रह्मांडीय चेतना का विस्तार है, और उसका शोषण नहीं, सम्मान किया जाना चाहिए। अघोरी इसलिए अपने आहार में उन संसाधनों का उपयोग करते हैं, जो सहज, स्थानीय, और न्यूनतम हस्तक्षेप से प्राप्त होते हैं-जैसे जंगली फल, औषधीय पौधे, जड़ें, और प्राकृतिक जल स्रोत। यह न केवल तांत्रिक संतुलन

की स्थिति बनाता है, बल्कि पर्यावरण के प्रति जिम्मेदारी की भावना को भी उत्पन्न करता है।

शमशान, जो मृत्यु और पुनर्जन्म के बीच की कड़ी है, अघोरी के लिए एक ऐसा विद्यालय है जहाँ वह प्रकृति की अस्थायीता और चिरंतनता दोनों को एक साथ अनुभव करता है। वहां की मिट्टी, जल, और वनस्पतियाँ किसी संसाधन की तरह नहीं, बल्कि चेतन प्रतीकों के रूप में देखी जाती हैं। जब अघोरी इनसे आहार बनाते हैं या अनुष्ठानों में उपयोग करते हैं, तो यह केवल भौतिक उपयोग नहीं होता, बल्कि एक संवाद होता है-एक प्रार्थना, जो प्रकृति से सह-अस्तित्व की अनुमति मांगती है। गुरु इस पर्यावरणीय चेतना को साधक में विकसित करता है, जिससे उसकी साधना अहंकाररहित और समर्पित बन सके। इस प्रकार, पर्यावरण के साथ संतुलन केवल एक व्यावहारिक उपाय नहीं है, बल्कि यह भैरवी साधना की गहराई को प्रतिध्वनित करता है, जो अघोरी को ब्रह्मांडीय चक्रों से जोड़ती है और उसे आत्मा की प्रकृति के साथ एकाकार कर देती है।

अध्याय 22:
आहार और पोषण

अघोरी आहार का गूढ़ दृष्टिकोण

अघोरी जीवनशैली में आहार केवल शरीर पोषण का साधन नहीं, बल्कि आत्मानुशासन, ध्यान और आत्मसाक्षात्कार की साधना का एक अत्यंत गंभीर पक्ष होता है। अघोरियों के लिए भोजन किसी भोग या स्वाद की पूर्ति नहीं करता; यह एक साधना है, जिसमें प्रत्येक अन्नकण चेतना से जुड़ने का माध्यम बनता है। शमशान में निवास करते हुए, अघोरी उन खाद्य वस्तुओं का चयन करते हैं जो या तो स्वयं प्रकृति से प्राप्त होती हैं या जो साधना की तांत्रिक प्रणाली में विशेष रूप से निर्दिष्ट होती हैं। जड़ी-बूटियाँ, कंद-मूल, जंगली फल, और कुछ विशिष्ट तांत्रिक सामग्रियाँ, जैसे भस्म से पूजित प्रसाद, इनकी भोजन व्यवस्था में शामिल होते हैं। इस भोजन की मात्रा बहुत सीमित होती है और इसे ग्रहण करने का समय भी निश्चित तांत्रिक गणनाओं और गुरु निर्देशों के अनुसार तय होता है।

आहार की यह पद्धति न केवल भौतिक शरीर को शुद्ध करती है, बल्कि मानसिक विकर्षणों को भी दूर करती है, जिससे साधक सहजता से एकाग्रचित्त हो सके। कुछ अघोरी विशिष्ट तिथियों पर उपवास करते हैं, जिससे भोजन की निर्भरता घटे और ध्यान की गहराई बढ़े। आहार लेते समय एक मंत्र विशेष का उच्चारण अनिवार्य

माना जाता है, जो ग्रहण किए जा रहे अन्न को केवल खाद्य पदार्थ नहीं रहने देता, बल्कि उसे चेतन शक्ति का अंग बना देता है। इस प्रकार अघोरी का आहार दर्शन उसकी साधना की पराकाष्ठा में सहायक बनता है-एक ऐसा माध्यम जो उसे आत्मा और विश्वचेतना के अभेद स्वरूप का प्रत्यक्ष अनुभव कराता है।

मृत्युभोज का तांत्रिक रहस्य

अघोरी साधना में मृत्युभोज एक अत्यंत विवादास्पद लेकिन गूढ़ प्रक्रिया है, जिसे बाहरी दृष्टि से देखने पर विकृति प्रतीत हो सकती है, परंतु इसके पीछे छिपा हुआ आध्यात्मिक और तांत्रिक रहस्य अत्यंत जटिल एवं गहन है। जब कोई अघोरी मृत शरीर के पास बैठकर ध्यान करता है या उसे भोग के रूप में ग्रहण करता है, तो उसका उद्देश्य विक्षिप्तता नहीं, बल्कि मृत्यु के भय से परे जाना होता है। इस प्रक्रिया को केवल शारीरिक क्रिया समझना भूल होगी; यह शरीर की क्षणभंगुरता को साक्षात देखने और आत्मा की शाश्वतता को अनुभव करने की एक जीवंत साधना होती है। तंत्र में मान्यता है कि जब कोई साधक मृत्यु के प्रत्यक्ष संपर्क में अपनी चेतना को एकाग्र करता है, तो उसके भीतर स्थित सभी प्रकार के मोह और द्वैत का अंत हो जाता है।

मृत्युभोज को ग्रहण करते समय अघोरी विशेष तांत्रिक विधियों का पालन करता है-जैसे पंचमकारों की तांत्रिक संरचना, विशेष काल, स्थान और मंत्रों का चयन-ताकि यह क्रिया केवल बाह्य

प्रतीकात्मकता न रहे, बल्कि एक गहन मानसिक और आध्यात्मिक परिवर्तन का उपकरण बन सके। यह क्रिया साधक के भीतर स्थित गहरे संस्कारों, नैतिक द्वंद्वों और सामाजिक भय के आवरण को नष्ट करती है। परिणामस्वरूप, वह व्यक्ति स्वयं को सीमाओं से परे देखना प्रारंभ करता है। अघोरी के लिए यह प्रक्रिया मृत्यु के साथ संवाद की तरह होती है-जहाँ वह न भयभीत होता है, न आकर्षित-बल्कि उसे उसके मौलिक स्वरूप में स्वीकार करता है, और इसी स्वीकृति में उसे आत्म-तत्त्व की अंतर्दृष्टि प्राप्त होती है।

शमशान के भोज्य संसाधनों का आध्यात्मिक रूपांतरण

अघोरी साधना की सबसे अनूठी विशेषता यह है कि वह शमशान जैसे स्थानों में भी जीवन और चेतना के स्रोतों को पहचानता है। शमशान, जहाँ सामान्य जन केवल मृत्यु और समाप्ति को देखते हैं, वहीं अघोरी वहाँ प्राकृतिक पोषण और तांत्रिक ऊर्जा का भंडार अनुभव करता है। शमशान के आस-पास उगने वाले कुछ विशेष वृक्ष, झाड़ियाँ, और जड़ी-बूटियाँ, जिन पर चिता की राख का प्रभाव होता है, अघोरियों द्वारा भोज्य या औषधीय प्रयोग में लाई जाती हैं। उनका विश्वास है कि ये पदार्थ केवल पौष्टिक नहीं, बल्कि तांत्रिक कंपन से युक्त होते हैं, जो साधना की ऊर्जा को तीव्र करते हैं।

इन संसाधनों को ग्रहण करने से पहले अघोरी उन्हें विशेष विधियों से शुद्ध करता है-जैसे गंगाजल से स्नान, मंत्रोच्चार से संधान, और कभी-कभी भैरवी के यंत्र पर उनका स्पर्श कराना। यह प्रक्रिया

केवल शुद्धता का माध्यम नहीं, बल्कि साधक की चेतना को इन संसाधनों के माध्यम से जाग्रत करने का एक तांत्रिक उपक्रम है। ये भोज्य पदार्थ अघोरी के लिए केवल ऊर्जा नहीं, बल्कि साधना के अंग बन जाते हैं-जिससे वह प्रकृति और मृत्यु के पारस्परिक संबंध को प्रत्यक्ष अनुभव कर सकता है। इस तरह अघोरी शमशान को मृत्यु का नहीं, बल्कि चेतना का उद्गम मानकर वहाँ से अपनी साधना को नई ऊँचाइयों तक ले जाने का साधन बनाता है।

शारीरिक ऊर्जा और साधना का तालमेल

अघोरी जीवनशैली में आहार केवल शरीर के पोषण का साधन नहीं है, बल्कि वह एक ऐसा माध्यम है जो साधना की निरंतरता और मानसिक स्थिरता को बनाए रखने में सहायक होता है। शमशान भैरवी की शिक्षाओं में यह स्पष्ट किया गया है कि शरीर को साधना के योग्य बनाना भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि साधना स्वयं। अघोरी अपने आहार को इस प्रकार संतुलित करते हैं कि वह न तो शरीर को भारी करता है, न ही दुर्बल बनाता है। साधना के पहले और बाद का आहार चयन, उसकी मात्रा, और उसका प्रभाव अघोरी की साधनात्मक गहराई को सीधे प्रभावित करता है। फल, जड़ी-बूटियाँ, और विशेष रूप से तांत्रिक अनुष्ठानों के उपरांत लिया गया भोजन साधक की ऊर्जा को पुनः केंद्रित करता है। शमशान का वातावरण, जहाँ मृत्यु की उपस्थिति निरंतर बनी रहती है, वहां की ताजगीविहीनता और तपस्या की तपन शरीर की ऊर्जा को शीघ्र क्षीण

कर सकती है, ऐसे में यह आहार जीवन शक्ति को स्थिर बनाकर साधना की धारा को निर्बाध बनाए रखता है। गुरु का मार्गदर्शन इस ऊर्जा और आहार के संतुलन में निर्णायक भूमिका निभाता है, क्योंकि वह साधक को यह सिखाता है कि कौन-सा भोजन किस साधनात्मक अवस्था के अनुकूल है, और कब किस तत्व का ग्रहण शरीर और मन को सबसे अधिक शुद्ध और उर्जावान बना सकता है।

इस संतुलन की प्रक्रिया साधक को केवल भौतिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि आध्यात्मिक स्तर पर भी समर्थ बनाती है। शारीरिक ऊर्जा को नियंत्रित कर जब साधक ध्यान में प्रविष्ट होता है, तो वह केवल इंद्रियों की गति को नहीं थामता, बल्कि उस ऊर्जा को अंतर्मुखी कर आत्मा की गहराइयों में प्रवेश करता है। इस अवस्था में शरीर तपस्या का माध्यम नहीं, बल्कि सहायक उपकरण बन जाता है, जो चेतना की यात्रा को सुगम करता है। यही कारण है कि अघोरी जीवन में आहार को कोई सामान्य कार्य नहीं माना जाता, बल्कि यह साधना का अंग है, जो उसे ब्रह्म से एकत्व की ओर अग्रसर करता है। भोजन की मात्रा, समय, और स्वरूप सभी कुछ इस संतुलन के अनुसार नियोजित होता है, जिससे साधक के भीतर भैरवी की शक्ति निरंतर प्रवाहित होती रहती है। इस प्रकार, शारीरिक ऊर्जा और साधना का तालमेल अघोरी जीवनशैली में एक ऐसा तंत्र निर्मित करता है, जो उसे आत्म-साक्षात्कार की दिशा में ठोस और स्थिर बनाता है।

तांत्रिक अनुष्ठानों के लिए विशेष आहार

अघोरी परंपरा में तांत्रिक अनुष्ठान केवल बाह्य क्रियाएँ नहीं हैं, बल्कि वे साधक की चेतना को दिव्यता की चरम अवस्था तक ले जाने वाले द्वार हैं, और इन अनुष्ठानों के लिए चयनित आहार का विशेष महत्व होता है। यह आहार न केवल शरीर को विशिष्ट ऊर्जा देता है, बल्कि यह मंत्रों, ध्यान, और तांत्रिक उपकरणों की सक्रियता में भी सहायक होता है। विशेष रूप से अमावस्या, ग्रहण काल, या भैरवी तिथि पर संपन्न होने वाले अनुष्ठानों में अघोरी ऐसे खाद्य पदार्थों का चयन करते हैं जो उनके शारीरिक, मानसिक और सूक्ष्म शरीर को उच्च कंपन अवस्था में पहुंचा सकें। इसमें मांसाहार, मधु, तांत्रिक जड़ी-बूटियाँ, विशेष फल या बीज, और कुछ विशिष्ट वनस्पतियाँ सम्मिलित हो सकती हैं। इन खाद्य सामग्री को विशेष विधियों द्वारा शुद्ध किया जाता है, जिनमें गंगाजल, मंत्रोच्चार और भस्म का प्रयोग होता है। इस शुद्धिकरण से न केवल वह आहार पवित्र होता है, बल्कि उसमें वह सूक्ष्म ऊर्जा भी प्रविष्ट होती है, जो साधक को भैरवी की शक्ति से जोड़ने में सक्षम बनाती है।

तांत्रिक अनुष्ठानों के लिए किया गया यह आहार केवल आत्मिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए होता है, न कि इंद्रिय सुख के लिए। यह भोजन अनुष्ठान का भाग बनकर साधक के मन और शरीर को उस कंपन में लाता है, जिसमें साधना सशक्त रूप से प्रभावी हो सके। गुरु इस प्रक्रिया का संरक्षक होता है, जो यह सुनिश्चित करता है कि

आहार भैरवी के तत्वों के अनुरूप हो और साधक की साधनात्मक स्थिति को बिगाड़े नहीं, बल्कि उसे स्थिरता और ऊर्ध्वगामी गति प्रदान करे। यह अनुष्ठानिक आहार साधक को मानसिक रूप से अत्यंत सजग, चेतनावान और निर्विकारी बनाता है, जिससे उसकी साधना में बाहरी व्यवधानों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यही कारण है कि अघोरी परंपरा में अनुष्ठान के समय आहार का चयन सर्वोच्च प्राथमिकता प्राप्त करता है। इस प्रकार, तांत्रिक अनुष्ठानों के लिए विशेष आहार अघोरी जीवनशैली को केवल भौतिक नहीं, बल्कि सूक्ष्म और चेतनात्मक स्तर पर भी गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर सशक्त रूप से अग्रसर करता है।

उपवास और साधना का गूढ़ संबंध

अघोरी साधना में उपवास केवल संयम का अभ्यास नहीं, बल्कि एक गूढ़ तांत्रिक विधि है, जो साधक को न केवल शारीरिक बल्कि मानसिक और आत्मिक शुद्धि की ओर अग्रसर करती है। यह साधना शमशान भैरवी की शिक्षाओं पर आधारित होती है, जिनके अनुसार उपवास आत्म-नियंत्रण का साधन है, जिससे साधक अपनी इंद्रियों और मन के विकारों पर नियंत्रण पाता है। अमावस्या, पूर्णिमा या विशेष तांत्रिक अवसरों पर उपवास अघोरी जीवन का अनिवार्य हिस्सा बन जाता है। इस प्रक्रिया में अघोरी भोजन को पूरी तरह त्याग सकता है या केवल फल और जल का सीमित सेवन करता है, ताकि

उसके शरीर और मन की ऊर्जा केवल साधना में केंद्रित रह सके। यह उपवास मात्र भूख से दूर रहना नहीं, बल्कि देह और आत्मा के बीच अंतर की पहचान कराने वाला एक मार्ग है। गुरु इस अभ्यास की विधियों का निर्धारण करता है और साधक को सिखाता है कि उपवास के दौरान मन किस प्रकार नियंत्रण में रखा जाए और किस प्रकार भैरवी की उपस्थिति को साधना के माध्यम से अनुभव किया जाए। इस समय शमशान का रहस्यमय वातावरण, जहाँ मृत्यु की अनुभूति तीव्र होती है, साधक की चेतना को सहज ही गहनता की ओर ले जाता है। उपवास के समय वह अपनी देह को केवल एक माध्यम मानकर चेतना को उस ऊर्जा से जोड़ता है, जो समस्त ब्रह्मांड में व्याप्त है।

उपवास अघोरी साधना में केवल देह पर नियंत्रण का अभ्यास नहीं है, बल्कि यह मृत्यु के भय, आत्म-भ्रम और माया की परतों को हटाने का उपकरण है। इस अवधि में साधक भैरवी की आराधना में लीन रहता है और उसके मंत्रों, यंत्रों तथा तांत्रिक अनुष्ठानों के माध्यम से चेतना की परिधि को लांघने का प्रयास करता है। यह क्रमशः उसे उस स्थिति तक पहुँचाता है जहाँ भूख, प्यास, सुख-दुख जैसे द्वैत भाव समाप्त हो जाते हैं और केवल शून्यता शेष रह जाती है। इस शून्यता में साधक को वह मौन प्राप्त होता है, जो सामान्य जीवन में दुर्लभ है। अघोरी परंपरा में यह मौन ही ब्रह्म की प्रथम सीढ़ी है। उपवास इस प्रकार अघोरी के लिए त्याग नहीं, बल्कि ऊर्जा का संकेन्द्रण है-एक ऐसी प्रक्रिया, जो उसे भैरवी की कृपा से जोड़ती है और आध्यात्मिक

शक्ति को जागृत करती है। इस प्रकार, उपवास न केवल साधना को तीव्र बनाता है, बल्कि साधक को चेतना के उस तल पर पहुँचाता है, जहाँ से वह आत्मा और ब्रह्म के मध्य कोई भेद नहीं अनुभव करता। यही अवस्था उसे आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है।

आहार और पर्यावरण संतुलन का रहस्य

अघोरी जीवनशैली में आहार का चयन केवल व्यक्तिगत आवश्यकता नहीं, बल्कि ब्रह्मांडीय संतुलन की साधना भी है। शमशान भैरवी की शिक्षाएँ अघोरियों को सिखाती हैं कि आहार प्रकृति के चक्रों और उसकी मर्यादाओं के अनुरूप होना चाहिए। अघोरी जब भोजन करता है, तो वह केवल भूख मिटाने के लिए नहीं करता, बल्कि उस ऊर्जा के साथ एकाकार होने के लिए करता है जो प्रकृति ने उसे दी है। इस दृष्टिकोण से, अघोरी शमशान के आसपास उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों जैसे जंगली फल, पत्तियाँ, जड़ें और औषधीय वनस्पतियों को प्राथमिकता देता है, जिनका दोहन प्रकृति को क्षति पहुँचाए बिना किया जाता है। यह आहार तंत्र शक्ति को संतुलन प्रदान करता है और साधक को भैरवी की ऊर्जा के साथ संनादित करता है। वह इस प्रक्रिया को भी एक तांत्रिक अनुष्ठान के रूप में देखता है, जहाँ प्रकृति को कृतज्ञता के साथ स्वीकार किया जाता है। गुरु इस मार्ग में साधक का पथदर्शक होता है, जो उसे सिखाता है कि भोजन और प्रकृति के बीच संबंध केवल भोग नहीं, योग का विषय है।

आधुनिक संदर्भ में जब पर्यावरण असंतुलन और संसाधनों की अत्यधिक खपत से जूझ रहा है, अघोरी साधना का यह पक्ष और अधिक प्रासंगिक हो जाता है। अघोरी, पर्यावरण संरक्षण को कोई अलग अवधारणा नहीं मानता, बल्कि उसकी जीवनशैली ही इसका जीता-जागता उदाहरण होती है। वह जितना ग्रहण करता है, उतना ही उसे पुनः प्रकृति में समर्पित करता है। उसका आहार चयन इस संतुलन की गवाही देता है-न किसी पशु का अत्यधिक शोषण, न किसी वनस्पति का अनावश्यक उपयोग। भैरवी की आराधना के दौरान प्रयोग में आने वाली सभी तांत्रिक सामग्रियाँ, जैसे जड़ी-बूटियाँ, पुष्प, और मिट्टी, ससम्मान और सीमित मात्रा में एकत्र की जाती हैं। यह दृष्टिकोण उसे आत्म-संयम और प्रकृति के प्रति उत्तरदायित्व सिखाता है। इस प्रकार, अघोरी का आहार दर्शन केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि पारिस्थितिक संतुलन का भी प्रतीक है, जो साधक को भैरवी की कृपा से जोड़ता है और उसे उस चेतना की ओर ले जाता है, जहाँ प्रकृति, आत्मा और ब्रह्म एक ही तत्व में समाहित हो जाते हैं। यही वह गूढ़ रहस्य है, जो अघोरी को संसार से अलग और शाश्वत साधना से संयुक्त करता है।

पर्यावरण संतुलन और प्राकृतिक सहअस्तित्व

अघोरी जीवनशैली में आहार केवल शारीरिक पोषण का साधन नहीं, बल्कि प्रकृति के साथ सहअस्तित्व का एक अभ्यास है, जो शमशान भैरवी की शिक्षाओं से गहराई से प्रेरित है। भैरवी, जो

सृजन और संहार की पराकाष्ठा हैं, अघोरियों को यह सिखाती हैं कि हर जीवित और निर्जीव तत्व, चाहे वह पौधा हो या मिट्टी, एक ही चैतन्य सत्ता से जुड़ा हुआ है। इस दृष्टिकोण से अघोरी अपने भोजन के चयन में प्रकृति के संसाधनों का अति संयम से उपयोग करते हैं। शमशान के परिवेश में निवास करते हुए, वे ऐसे पौधों, फलों और जड़ों का चयन करते हैं जो प्राकृतिक रूप से उगते हैं, जिन्हें उखाड़ने या तोड़ने की आवश्यकता नहीं होती, जिससे पर्यावरण की जैव विविधता को क्षति न पहुँचे। यह चयन केवल पोषण का नहीं, बल्कि संवेदना का भी है-प्रकृति के प्रति विनम्रता का भाव।

गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में विशेष स्थान रखता है। वे साधकों को सिखाते हैं कि आहार चुनते समय उस वनस्पति या फल के चक्र को समझें, जो अपने आप झड़ता है, या जो किसी अन्य जीव की आवश्यकता को बाधित किए बिना ग्रहण किया जा सके। अघोरी भैरवी को केंद्र में रखते हुए इस प्रकार का आहार ग्रहण करते हैं, जिसे उन्होंने कृतज्ञता और तांत्रिक मंत्रों से अभिमंत्रित किया हो। इससे भोजन केवल शारीरिक शक्ति नहीं देता, बल्कि चेतना को भी स्पंदित करता है। इस प्रक्रिया से साधक केवल भूख शांत नहीं करता, बल्कि स्वयं को एक ऐसे अनुष्ठान का अंग मानता है, जिसमें प्रकृति, आत्मा, और शिव-शक्ति के बीच कोई भेद नहीं होता। यह आहार साधना के माध्यम से उसे मृत्यु के भय से मुक्त करता है और वह अपने को उस चैतन्य का हिस्सा अनुभव करता है, जो हर पत्ता, हर लता, और हर वायु कण में विद्यमान है।

नैतिकता और आहार: जीवन के प्रति उत्तरदायित्व का भाव

अघोरी जीवनशैली में आहार और नैतिकता का संबंध केवल व्यक्तिगत अनुशासन का विषय नहीं है, बल्कि यह समूचे जीवन के प्रति उत्तरदायित्व के रूप में देखा जाता है। भैरवी की शिक्षा यही है कि जो कुछ ग्रहण किया जाए, वह अन्य जीवों के अस्तित्व को संकट में डाले बिना, श्रम और करुणा के साथ स्वीकार किया जाए। अघोरी जब किसी वनस्पति या मांस का चयन करते हैं, तो उसका उद्देश्य न स्वाद होता है, न भोग-बल्कि यह एक यज्ञ की भाँति किया गया अर्पण होता है, जिसमें आहार के पीछे की भावना, उसकी प्राप्ति की विधि, और उसका उपयोग-सभी को भैरवी की दृष्टि से परखा जाता है। अघोरी भोजन को तांत्रिक विधि से शुद्ध करता है, पर इससे पहले वह आत्मा से प्रश्न करता है-क्या यह आहार किसी हिंसा या वंचना का परिणाम तो नहीं?

इस स्तर पर नैतिकता केवल सामाजिक नियमों से नहीं जुड़ी होती, बल्कि यह आत्मा और प्रकृति के मध्य संवाद से उपजती है। शमशान में, जहाँ हर वस्तु अपने अंतिम स्वरूप में होती है, अघोरी यह अनुभव करता है कि यदि भोजन किसी असंतुलन या लालसा से ग्रहण किया गया, तो वह साधना में विघ्न बनता है। यही कारण है कि वे मांस का उपभोग केवल तभी करते हैं जब वह तांत्रिक अनुष्ठान की आवश्यकता हो और वह भी पूरी श्रद्धा और नियंत्रित मात्रा में, न कि भोग की प्रवृत्ति से। गुरु इस पूरी प्रक्रिया को एक नैतिक संवाद के

रूप में प्रस्तुत करते हैं, जिसमें साधक स्वयं से निरंतर पूछता है-क्या मेरा भोजन मेरी साधना के अनुकूल है, क्या यह किसी अन्य प्राणी के अधिकार को लांघ कर प्राप्त हुआ है?

यह आहार जीवनशैली में एक आध्यात्मिक अनुशासन के रूप में विकसित होता है, जो साधक को न केवल भैरवी की कृपा की ओर, बल्कि उस विशाल चेतना की ओर भी ले जाता है, जिसमें हिंसा, भोग, और लालसा का कोई स्थान नहीं है। इस प्रकार, नैतिकता और आहार का यह संबंध अघोरी जीवन को न केवल विशुद्ध बनाता है, बल्कि उसे शिव और शक्ति के समर्पित साधक के रूप में पुनः परिभाषित करता है।

अध्याय 23:
अघोरी परंपरा की शुरुआत और ऐतिहासिक विकास

अघोर परंपरा की ऐतिहासिक उत्पत्ति और उसके गूढ़ तांत्रिक स्रोत

अघोरी परंपरा की जड़ें केवल साधना या जीवनशैली तक सीमित नहीं हैं, बल्कि इसका उद्गम भारतीय उपमहाद्वीप की उन परंपराओं में छिपा है, जिन्होंने मृत्यु, अपवित्रता और पारलौकिक भय को एक आध्यात्मिक द्वार के रूप में देखा। इस परंपरा का ऐतिहासिक बीज प्राचीन कपालिका और कलामुखा संप्रदायों में निहित है, जो गुप्त और उत्तर-गुप्त काल में विकसित हुए। इन संप्रदायों में शरीर की नश्वरता, खोपड़ी पूजा, तांत्रिक अनुष्ठानों और सामाजिक निषेधों को तोड़ने की परंपरा के माध्यम से आत्मा की शुद्धता और ब्रह्म से एकत्व की खोज की जाती थी। अघोरी इसी परंपरा के प्रवाह में विकसित हुए, लेकिन उन्होंने इस साधना को केवल आंतरिक उपासना तक सीमित न रखते हुए, उसे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में स्थापित किया-चाहे वह शमशान हो, शरीर की विकृति हो, या समाज द्वारा अपवित्र घोषित की गई वस्तुएँ।

इतिहास में अघोरी साधना को सुव्यवस्थित करने वाले व्यक्तित्व के रूप में बाबा कीनाराम का नाम सर्वोपरि है। 18वीं शताब्दी में उन्होंने इस तंत्र-संप्रदाय को एक संस्थागत पहचान दी।

बाबा कीनाराम की दृष्टि में अघोर केवल रहस्यवाद नहीं था, बल्कि एक गहन सामाजिक, दार्शनिक और आध्यात्मिक क्रांति थी। उन्होंने अघोरी दर्शन के लिए केंद्र के रूप में 'क्रीं कुंड 'की स्थापना की, जहाँ साधकों को प्रशिक्षित किया जाने लगा। उनकी प्रमुख रचना "विवेकसार" न केवल अघोरी तत्वज्ञान की गूढ़ व्याख्या करती है, बल्कि मृत्यु, मोह, जाति, कर्म और पवित्रता जैसी अवधारणाओं को एक नई चेतना के साथ प्रस्तुत करती है। उन्होंने स्पष्ट किया कि मृत्यु का साक्षात्कार ही जीवन का बोध है, और जब तक साधक समाज द्वारा थोपे गए 'पवित्र-अशुद्ध 'के भेद को नहीं मिटाता, तब तक आत्मज्ञान की ओर बढ़ना संभव नहीं। उनकी यह शिक्षाएँ आज भी अघोर संप्रदाय की रीढ़ हैं।

अघोरी संप्रदाय का दर्शन और उसका वैचारिक आधार

अघोरी दर्शन का मूल आधार उस विद्रोह में छिपा है, जो सामान्य धार्मिक मान्यताओं के विरुद्ध होकर भी आध्यात्मिक एकता की ओर ले जाता है। यह परंपरा किसी देवी या देवता की मूर्ति-पूजा तक सीमित नहीं है; बल्कि वह आत्मा और ब्रह्म की एकता का ऐसा अनुभव है, जो द्वैत को समाप्त कर देता है। अघोरी मानते हैं कि ब्रह्मांड में कोई वस्तु अपवित्र नहीं है-हर वस्तु, चाहे वह राख हो या रक्त, खोपड़ी हो या शव, ब्रह्म का ही अंश है। इसी विचार के चलते अघोरी शवों से भय नहीं खाते, बल्कि उनका उपयोग उस चेतना को जागृत

करने में करते हैं, जो आत्मा को सामाजिक भ्रमों से बाहर निकालकर उस निर्गुण परम चेतना से जोड़ती है।

इस दर्शन में मृत्यु केवल अंत नहीं है, बल्कि वह एक उद्घाटन है-उस सत्य का जिसे समाज बार-बार छिपाने की कोशिश करता है। अघोरी साधना, विशेषकर शवसाधना, इसी उद्घाटन का माध्यम बनती है, जहाँ साधक शरीर, समाज, धर्म और कर्म की संकीर्णताओं से ऊपर उठकर आत्मा के वास्तविक स्वरूप का अनुभव करता है। उनका यह विश्वास केवल तांत्रिक अनुष्ठान तक सीमित नहीं है; यह जीवन के प्रत्येक क्षण में लागू होता है। जब अघोरी खोपड़ी में जल पीते हैं या शमशान में ध्यान करते हैं, तब वे केवल क्रियाएँ नहीं कर रहे होते, वे जीवन और मृत्यु के बीच की उस दीवार को ढहा रहे होते हैं, जो आत्मा को ब्रह्म से दूर रखती है। इस दृष्टिकोण में अघोरी जीवन-दर्शन, समाजशास्त्र और अध्यात्म का वह संगम बन जाता है, जो परंपराओं को चुनौती देता है, परंतु अंततः आत्मा को शाश्वत सत्य की ओर ले जाता है।

बाबा कीनाराम का जीवन, उनका योगदान और वाराणसी में अघोर परंपरा की पुनर्स्थापना

बाबा कीनाराम का जीवन अघोरी परंपरा के पुनर्जागरण की गाथा है। उनका जन्म 17वीं शताब्दी में उत्तर प्रदेश के चंदौली जिले के रामगढ़ गाँव में हुआ था। बचपन से ही वह सामान्य सांसारिक जीवन के प्रति विरक्त थे। एक पौराणिक कथा के अनुसार, उनका

जन्म ही ऐसा अद्भुत था कि उन्होंने जन्म लेते ही बिना दूध के कई दिनों तक उपवास किया, जब तक कि शमशान भूमि की राख और गंगा जल नहीं मिला। यह प्रतीकात्मक कथा ही उनके जीवन के उद्देश्य को परिभाषित करती है-मृत्यु और साधना के मिलन से आत्मज्ञान का मार्ग। उन्होंने किशोरावस्था में गृह त्यागकर तपस्या की, और वाराणसी पहुँचकर शमशान साधना को अपनाया। यहीं पर उन्हें ख्यात तांत्रिक बाबा कालूराम के सान्निध्य में अघोर साधना की दीक्षा प्राप्त हुई।

बाबा कीनाराम का सबसे बड़ा योगदान यह रहा कि उन्होंने अघोरी साधना को केवल एक रहस्यमय, सीमांत पंथ न रहने देकर उसे एक स्पष्ट दर्शन, सामाजिक चेतना और व्यावहारिक आध्यात्मिक अनुशासन में परिवर्तित किया। वाराणसी के रविन्द्रपुरी स्थित 'क्रीं कुंड 'की स्थापना उनके इस कार्य का प्रतीक है। यही स्थान आगे चलकर अघोर परंपरा का मुख्य पीठ बना। उन्होंने "विवेकसार," "रामगंगा," तथा अन्य ग्रंथों के माध्यम से अघोरी सिद्धांतों को लिखित रूप में संकलित किया, जो उस समय एक क्रांतिकारी कार्य था। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि अघोरी केवल शमशान में रहने वाले विक्षिप्त नहीं होते, बल्कि वे ब्रह्म की साक्षात उपस्थिति के ज्ञाता होते हैं-ऐसे साधक जो शरीर, भाषा, जाति, वर्ण और धर्म के आडंबर को अस्वीकार करते हुए अखंड चेतना की ओर उन्मुख रहते हैं। बाबा कीनाराम ने अघोरी जीवन को गरिमा और

सिद्धांतों की एक धारा दी, जिसने इसे उपहास का विषय बनने से बचाकर आध्यात्मिक ऊँचाई प्रदान की।

क्रीं कुंड और अघोराचार्य परंपरा का संस्थागत विकास

वाराणसी स्थित क्रीं कुंड न केवल एक धार्मिक स्थल है, बल्कि यह उस चेतना का केंद्र है, जहाँ अघोरी परंपरा को एक स्पष्ट प्रणाली और अनुशासन मिला। बाबा कीनाराम द्वारा स्थापित यह स्थान आज भी अघोरी साधना का जीवंत केंद्र बना हुआ है। क्रीं कुंड का अर्थ है-'क्रीं 'बीज मंत्र जो देवी भैरवी और तांत्रिक शक्ति का प्रतिनिधित्व करता, और 'कुंड 'अर्थात वह स्रोत या केन्द्र, जहाँ यह शक्ति संग्रहित होती है। यहाँ की भित्तियों पर उकेरी गई खोपड़ियों, तंत्र-चिह्नों और श्मशान प्रतीकों में वह अघोर दर्शन सजीव है, जो बाह्य अशुद्धता के भीतर स्थित आध्यात्मिक पवित्रता को पहचानता है।

बाबा कीनाराम के बाद इस परंपरा को शिष्य-परंपरा के माध्यम से क्रमशः आगे बढ़ाया गया। प्रत्येक अघोराचार्य ने अपने युग की आवश्यकताओं के अनुसार इस पंथ को विस्तार दिया। बाबा बिंदु बाबा, बाबा भीखनाराम, और बाबा सिद्धार्थ गौतम राम जैसे अनेक आचार्य हुए, जिन्होंने साधना को सामाजिक सेवा, समाज सुधार, और आधुनिक चिकित्सा सेवा से भी जोड़ा। विशेषकर 20वीं सदी में बाबा अवधूत भगवान राम ने इस परंपरा को नवजीवन दिया। उन्होंने परमाथ निकेतन, अघोर पीठ जैसे आश्रमों की स्थापना की, जहाँ शमशान के बीच साधना के साथ-साथ कुष्ठ रोगियों की सेवा,

निर्धनों के भोजन और बच्चों की शिक्षा का कार्य भी चलाया गया। इस संस्थागत विकास ने यह सिद्ध किया कि अघोरी जीवन केवल आत्म-मुक्ति का साधन नहीं है, बल्कि वह समाज-मुक्ति और मानवता के प्रति करुणा का विस्तार भी है। क्रीं कुंड आज भी उन साधकों का तीर्थ है, जो मृत्यु की शांति और जीवन की सत्यता को एकसाथ अनुभव करना चाहते हैं।

अघोरी परंपरा में सामाजिक निषेधों का प्रतिवाद और समता का चिंतन

अघोरी परंपरा ने अपने प्रारंभ से ही उन सामाजिक मान्यताओं और निषेधों को खुली चुनौती दी है, जो जाति, वर्ण, लिंग, धर्म या शुद्धता-अशुद्धता पर आधारित हैं। इस परंपरा की सबसे क्रांतिकारी विशेषता यही है कि यह उन सभी परंपराओं का निषेध करती है, जिनके माध्यम से समाज ने एक विशेष वर्ग को पवित्र और दूसरों को अपवित्र घोषित कर दिया। अघोरी विचारधारा के अनुसार, हर जीव, हर वस्तु और हर अनुभव-चाहे वह शमशान की राख हो या मल-मूत्र, स्त्री-पुरुष हो या कुष्ठ रोगी-ब्रह्म की अभिव्यक्ति है। इस सिद्धांत के कारण अघोरी न तो अस्पृश्यता मानते हैं, न जातीय ऊँच-नीच, न भोजन की शुद्धता का भेद। वे गंदगी और मृत्यु को उतनी ही सहजता से स्वीकारते हैं, जितनी भोग और उत्सव को। समाज जहां शव को त्याज्य मानता है, अघोरी उसे ब्रह्म के साक्षात रूप में पूजते हैं।

यही विचारधारा अघोरी साधना को मानवता के सबसे गहन स्तर तक ले जाती है। उदाहरण के लिए, अघोरी लोग कुष्ठ रोगियों, निर्धनों, और सामाजिक रूप से बहिष्कृत लोगों के साथ निवास करते हैं, उन्हें भोजन कराते हैं और उनके शरीर का स्पर्श करते हैं। यह केवल सेवा नहीं, बल्कि उस सामाजिक व्यवस्था का निषेध है, जो स्पर्श को भी धार्मिक शुद्धता से जोड़ती है। बाबा कीनाराम और उनके उत्तरवर्ती अघोराचार्यों ने इस समता के सिद्धांत को व्यवहार में लागू किया और इसे साधना का अनिवार्य अंग माना। उनके अनुसार, जो साधक केवल ध्यान करता है लेकिन समाज से दूर रहता है, वह अघोरी नहीं, बल्कि पलायनवादी है। अघोरी दर्शन में 'सर्वं ब्रह्म 'की अनुभूति तभी संभव है, जब साधक समाज के सबसे हाशिये पर खड़े व्यक्ति को भी उसी दृष्टि से देखे, जिससे वह स्वयं अपने आराध्य को देखता है।

अघोरी परंपरा में तंत्र, भैरव-भैरवी उपासना और शवसाधना का स्थान

अघोरी साधना का केन्द्र बिंदु तांत्रिक पथ है, जिसमें शक्ति और शून्यता के मध्य स्थित ब्रह्म की खोज की जाती है। इस परंपरा में भैरव और भैरवी केवल देवता नहीं, बल्कि चेतना के दो मूल रूप हैं-भैरव उस निर्गुण, निराकार, अग्नि-सदृश पुरुषत्व का प्रतीक हैं, जबकि भैरवी उसकी रूपवती, सकारी, मातृरूपिणी चेतना हैं। अघोरी साधक इन दोनों तत्वों के योग द्वारा उस अद्वैत अवस्था की ओर बढ़ता है,

जहाँ ‘स्व ’और ‘अन्य ’का भेद समाप्त हो जाता है। अघोरी साधना में भैरव और भैरवी की उपासना बिना किसी बाह्य प्रदर्शन के, गहन तंत्र-मंत्र और ध्यान के माध्यम से की जाती है। उनका ध्यान शव पर, शमशान में, रात्रि के मध्यकाल में किया जाता है, जहाँ साधक बाह्य संसार से पूर्णत: मुक्त होता है।

शवसाधना इस परंपरा की सर्वाधिक रहस्यमय परंतु प्रभावशाली विधा है। शव को भैरव का प्रतीक मानकर उस पर ध्यान लगाना, साधक को जीवन और मृत्यु के भेद से परे ले जाता है। यह साधना किसी मानसिक रोग या विकृति का परिणाम नहीं, बल्कि एक गहन तांत्रिक विज्ञान है, जिसमें चित्त को शून्यता, भय, मोह, और वासना से मुक्त कर निर्गुण अवस्था में स्थिर किया जाता है। अघोरी इस साधना के माध्यम से ‘काल ’के बंधन से मुक्ति प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। तंत्र के अनुसार, जब साधक शव पर ध्यान करता है, तो वह समय के, शरीर के और आत्मा के बोध को पार करता है। यह साधना भयावह लग सकती है, लेकिन इसके मूल में वह ब्रह्मज्ञान है, जो केवल सीमाओं को तोड़ने से ही प्राप्त होता है। यही कारण है कि अघोरी साधना में शक्ति की उपासना केवल आराधना नहीं, बल्कि आत्म-परिवर्तन का शक्तिशाली माध्यम बन जाती है।

अघोरी परंपरा और आधुनिक युग में उसका पुनर्परिभाषण

आधुनिक युग में अघोरी परंपरा को जिस प्रकार से समझा गया है, वह अक्सर गलत धारणाओं, अधूरी जानकारी और सांस्कृतिक

पूर्वग्रहों से प्रभावित रही है। फिल्मों, पुस्तकों और जनश्रुतियों में अघोरियों को प्रायः विक्षिप्त, भयावह और अमानवीय छवि में प्रस्तुत किया गया है, जबकि वास्तविकता यह है कि अघोरी परंपरा एक अत्यंत उच्च आध्यात्मिक अनुशासन, गहन दार्शनिक विचार और सामाजिक समता की चेतना से युक्त है। अघोरी जीवन का उद्देश्य केवल मृत्यु के साथ साक्षात्कार नहीं है, बल्कि उस चेतना तक पहुँचना है जहाँ मृत्यु और जीवन का भेद ही समाप्त हो जाता है। आधुनिक काल में इस परंपरा की आवश्यकता इसलिए और बढ़ जाती है क्योंकि यह उस आत्मग्लानि, अलगाव और पहचान के संकट से मुक्ति देती है जो आधुनिक जीवन का सबसे बड़ा द्वंद्व बन चुका है।

वर्तमान समय में कई अघोरी संस्थाएँ और साधक हैं जिन्होंने पारंपरिक तांत्रिक साधना को सामाजिक सेवा, चिकित्सा सहायता, और जातीय समरसता के साथ जोड़ा है। बाबा अवधूत भगवान राम और उनके उत्तराधिकारी बाबा विजय राम जैसे अघोराचार्यों ने अघोरी साधना को एक सामाजिक आंदोलन का स्वरूप दिया। अघोरी परंपरा अब न केवल तंत्र या साधना की विधा है, बल्कि वह एक समावेशी दृष्टिकोण बन गई है, जो जाति, धर्म, पंथ और लिंग के भेदों से परे, एक समग्र चेतना की ओर समाज को ले जाने का कार्य कर रही है। आधुनिक अघोरी साधक न केवल शव पर ध्यान करता है, बल्कि भूखे को भोजन, रोगी को औषधि, और उपेक्षित को सम्मान देने की साधना करता है। यह परंपरा अब पुनर्परिभाषित हो

चुकी है-जहाँ शमशान केवल मृत्यु का प्रतीक नहीं, बल्कि नवजीवन की प्रयोगशाला है।

अघोरी परंपरा की समकालीन प्रासंगिकता और आध्यात्मिक आवश्यकता

आज के भूमंडलीकृत और उपभोक्तावादी युग में, जहाँ आध्यात्मिकता अक्सर दिखावे और बाजारवाद से ग्रसित हो चुकी है, अघोरी परंपरा एक ऐसा मौलिक विकल्प प्रस्तुत करती है जो व्यक्ति को भीतर से जगाने की क्षमता रखती है। अघोरी जीवन का मूल मंत्र है-'जो त्याज्य है वही ब्रह्म है'। यही विचार आज उस समय में और भी प्रासंगिक हो गया है, जब समाज जाति, धर्म, संप्रदाय, लैंगिकता और आर्थिक असमानता के गहरे संकट से जूझ रहा है। अघोरी साधक समाज के हाशिए पर खड़े उस व्यक्ति को अपनाता है, जिसे बाकी धर्म और संप्रदाय बहिष्कृत मानते हैं। यह अपनापन केवल सेवा नहीं, बल्कि आध्यात्मिक क्रांति है-एक ऐसी क्रांति जो बिना हिंसा के, केवल करुणा और समर्पण के माध्यम से समाज को बदल देती है।

इसके अतिरिक्त, अघोरी परंपरा उस मानसिक अनुशासन और निर्भयता को जन्म देती है, जो आत्मज्ञान के लिए अनिवार्य है। अघोरी साधक जीवन की परछाइयों से भागता नहीं, बल्कि उनका सामना करता है, चाहे वह मृत्यु हो, मोह हो, या समाज की उपेक्षा। इस साहसपूर्ण दृष्टिकोण की आज सबसे अधिक आवश्यकता है,

जब व्यक्ति बाहरी आडंबरों में फँसकर आत्मा की वास्तविक स्वतंत्रता को भूल चुका है। अघोरी साधना केवल एक साधक की मुक्ति नहीं, बल्कि संपूर्ण समाज के लिए एक गूढ़ प्रस्ताव है-एक ऐसा दर्शन जो भेद नहीं करता, जो सब कुछ में एक ही चैतन्य की अनुभूति कराता है। यही कारण है कि यह परंपरा भले ही शमशान से उत्पन्न हुई हो, परंतु इसका उद्देश्य जीवन के सबसे उज्ज्वल सत्य की प्राप्ति है।

अघोरी साधना में नारी की भूमिका और मातृ-तत्त्व का महत्त्व

अघोरी परंपरा, जहाँ अधिकांश लोग केवल शमशान, भैरव और तांत्रिक अनुष्ठानों को केंद्र में मानते हैं, वहाँ एक अत्यंत गूढ़ और प्रायः अनदेखा पक्ष है-नारी तत्त्व की उपस्थिति और उसकी भूमिका। अघोरी साधना में नारी को केवल एक शरीर या योगिनी नहीं माना जाता, बल्कि वह साक्षात शक्ति, चित्-प्रकृति और ब्रह्म की सगुण उपस्थिति के रूप में पूजित होती है। इस परंपरा में भैरवी को केवल देवी के रूप में नहीं, बल्कि ज्ञान, करुणा, समर्पण और निर्भयता के प्रतीक रूप में देखा जाता है। अघोरी साधक के लिए भैरवी वह मार्गदर्शक होती है जो उसे तामसिक अंधकार से सत्स्वरूप प्रकाश की ओर ले जाती है। अघोरियों के तांत्रिक ग्रंथों और साधना पद्धतियों में नारी को ब्रह्मांड की मौलिक ऊर्जा माना गया है, जिसे समझे बिना या सम्मान दिए बिना कोई भी साधना पूर्ण नहीं मानी जाती।

इतिहास में भी कई अघोरी परंपराओं में महिला साधिकाओं की भूमिका स्पष्ट दिखाई देती है। कुछ विशेष तांत्रिक साधनाओं में भैरवी साधिकाओं की उपस्थिति अनिवार्य मानी जाती है, क्योंकि वह केवल स्त्री देह नहीं, बल्कि मातृ-शक्ति की प्रतीक होती हैं। शवसाधना और श्मशान साधना के अत्यंत उग्र रूपों में भी, जब कोई साधक पूर्ण आत्म-समर्पण करता है, तो वह भैरवी की कृपा के बिना आगे नहीं बढ़ सकता। यही कारण है कि अघोरी साधना में नारी केवल पूजनीय नहीं, अपितु अनिवार्य है-उसके बिना शिव केवल शव है। अघोरी परंपरा में भैरवी शक्ति को जागृत करने के लिए विशेष मंत्र, तांत्रिक योग, और सह-साधना की विधियाँ प्रचलित हैं, जो अत्यंत गोपनीय होती हैं और केवल दीक्षित साधकों को ही दी जाती हैं। यह नारी-सत्ता का स्वीकार समाज में नारी के सम्मान का संकेत नहीं मात्र, बल्कि उस दिव्य ऊर्जा की स्वीकारोक्ति है जो सृष्टि, मृत्यु और पुनर्जन्म तीनों को एक धारा में प्रवाहित करती है।

अघोरी परंपरा और भविष्य की दिशा

अघोरी परंपरा कोई अतीत का समाप्त हो चुका अध्याय नहीं है, बल्कि यह एक ऐसा जीवंत विचार-सरणि है, जो समय के साथ-साथ बदलती रही है और आज भी मनुष्य की आत्मिक आवश्यकताओं के उत्तर दे रही है। बदलते समय में जहाँ धर्मों ने सामाजिक प्रभाव के कारण कठोरता, अलगाव और कर्मकांडों का रूप ले लिया है, वहीं अघोरी परंपरा ने अनौपचारिकता, सहजता और अनुभव-आधारित

साधना को प्राथमिकता दी है। यह परंपरा आज भी उन्हें आकृष्ट करती है, जो शोर, आडंबर, और सामाजिक मुखौटों से दूर होकर आत्मा की गहराइयों में उतरना चाहते हैं। अघोरी मार्ग भविष्य में एक ऐसी दिशा बन सकता है जहाँ व्यक्ति केवल बाहरी व्यवस्था से नहीं, बल्कि आंतरिक यथार्थ से परिचित होता है-जहाँ मृत्यु भय नहीं, मार्ग है; जहाँ अपवित्रता एक भ्रम है और ब्रह्म सब में व्याप्त है।

आधुनिक संदर्भ में अघोरी परंपरा को सामाजिक पुनर्संरचना, मानसिक स्वास्थ्य, मृत्युशास्त्र, और आत्मपरिचय के लिए एक सशक्त साधन के रूप में अपनाया जा सकता है। इसमें वह दृष्टि है जो न तो हिंसा से सशक्त होती है, न ही पलायन से-बल्कि वह साहस, समर्पण और आत्मान्वेषण से निर्मित होती है। वर्तमान पीढ़ी, जो तनाव, भय, और उद्देश्यहीनता से ग्रसित है, उसके लिए अघोरी दर्शन में वह मौलिक चिकित्सा है, जो न किसी दवा से मिलती है, न किसी भाषण से-बल्कि स्वयं को जानने और स्वीकार करने की क्षमता से उत्पन्न होती है। अघोरी परंपरा का भविष्य तभी उज्ज्वल होगा, जब इसे केवल एक रहस्य या आकर्षण के रूप में नहीं, बल्कि एक सशक्त आत्मिक अनुशासन, मानवतावादी विचारधारा और ब्रह्म साक्षात्कार की सहज प्रक्रिया के रूप में स्वीकार किया जाएगा। यही इसका सही सम्मान होगा और यही इसका कालजयी योगदान।

अध्याय 24:
अघोरी दर्शन में अद्वैत का रहस्य

अद्वैत का शाश्वत दृष्टिकोण – आत्मा और ब्रह्म का अभिन्न स्वरूप

अघोरी दर्शन में अद्वैत का सिद्धांत केवल एक दार्शनिक मत नहीं, बल्कि जीवन का वास्तविक अनुभव है। यह विचार इस विश्वास पर आधारित है कि आत्मा और परमात्मा में कोई पृथकता नहीं है, और जो कुछ भी सृष्टि में विद्यमान है, वह उसी एक ब्रह्म की विभिन्न अभिव्यक्तियाँ हैं। अघोरी साधक इस गूढ़ सिद्धांत को केवल ग्रंथों में नहीं ढूंढ़ते, बल्कि शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक अभ्यासों द्वारा इसे प्रत्यक्ष अनुभव करना चाहते हैं। इस दृष्टिकोण में मृत्यु कोई अंतिम सीमा नहीं, बल्कि उस बिंदु की शुरुआत है जहाँ साधक अपने अहं, द्वंद्व और भय के संपूर्ण आवरणों को उतारकर उस अनुभव में प्रवेश करता है, जो उसे ब्रह्म से जोड़ता है। अघोरी साधना इसीलिए शवों के समीप, राख से भरे हुए एकांत श्मशानों में की जाती है-जहाँ जीवन और मृत्यु के भ्रम मिटते हैं, और चेतना अपने वास्तविक स्वरूप को पहचानती है। यह दर्शन साधक को बताता है कि समस्त द्वैत-पवित्रता और अपवित्रता, सुख और दुःख, जन्म और मृत्यु-मानव निर्मित संकल्पनाएं हैं, जिनसे परे जाकर ही अद्वैत का अनुभव किया जा सकता है।

अघोरी इस अद्वैत को एक बाहरी व्यवस्था के रूप में नहीं, बल्कि भीतरी जागरण के रूप में अपनाते हैं। साधना के दौरान जब साधक शरीर की नश्वरता और इंद्रियों के खेल को देखता है, तब उसकी चेतना आंतरिक स्थिरता की ओर प्रवाहित होती है। वह उस स्थिति में पहुँचता है जहाँ 'मैं 'और 'तू 'का भेद मिट जाता है। वह जानता है कि ब्रह्म कोई दूरस्थ शक्ति नहीं, बल्कि स्वयं की चेतना का ही विस्तृत रूप है। अघोरी इस अनुभूति को आत्मसात करने के लिए प्रतीकों, मंत्रों, शव-साधना और सामाजिक निषेधों के अतिक्रमण का मार्ग अपनाते हैं, ताकि भ्रम से रहित सच्चे अनुभव की ओर बढ़ सकें। इस प्रक्रिया में वह किसी देवी या देवता की परिकल्पना से परे जाकर स्वयं को ही ब्रह्मरूप में अनुभव करता है। अद्वैत का यह रूपांतरण अघोरी साधक को उस परम मुक्ति की ओर ले जाता है, जहाँ उसे पुनर्जन्म, पाप-पुण्य और धर्म-अधर्म के चक्र से बाहर निकलने की शक्ति प्राप्त होती है। इस आत्मिक मिलन में न कोई साधक बचता है, न कोई साधना-बस शुद्ध चेतना, जो न समय से बंधी है, न मृत्यु से।

माया और अभिन्नता – वास्तविकता का मिथ्या रूप

अघोरी दर्शन में माया को केवल एक दार्शनिक अवधारणा के रूप में नहीं, बल्कि साधक के सामने खड़ी उस वास्तविक चुनौती के रूप में देखा जाता है, जो आत्मज्ञान के मार्ग में सबसे बड़ा अवरोध बनती है। माया को एक ऐसी अदृश्य शक्ति माना जाता है जो विविध

रूपों-भय, मोह, आकर्षण, और सामाजिक नियमों-में साधक की चेतना को बाँधती है और उसे उसकी वास्तविक स्थिति से दूर रखती है। अघोरी साधक इस माया को समझने के लिए उसकी सबसे तीव्र और नग्न अभिव्यक्तियों का सामना करता है-मृत शरीर, खोपड़ियाँ, अपवित्रता का वातावरण, और सामाजिक निषेधों की सीमाएँ। इन सबसे वह यह अनुभव करता है कि जो कुछ भी वह देखता है, वह मात्र परिवर्तनशील और भ्रमपूर्ण है-वास्तविकता इससे परे है। अघोरी दर्शन में माया को नकारा नहीं जाता, बल्कि उसे ही साधना का माध्यम बनाया जाता है, ताकि साधक उसे भेदकर आत्मा और ब्रह्म की एकता को जान सके।

इस परिप्रेक्ष्य में माया से लड़ना नहीं, उसे पार करना मुख्य लक्ष्य है। जब साधक माया के मोह, भय और द्वंद्व के पार पहुंचता है, तब उसे यह बोध होता है कि माया स्वयं ब्रह्म की लीला है-जो चेतना की परीक्षा लेती है। अघोरी साधना की हर क्रिया-शव के पास ध्यान, खप्पर से भोजन, शमशान में निवास-इस माया को विखंडित करने के उपकरण हैं। साधक जब इन अनुभवों से गुजरता है, तब उसके भीतर की समस्त परिभाषाएं टूट जाती हैं-अच्छा-बुरा, पवित्र-अपवित्र, शुभ-अशुभ सब मिट जाते हैं। तब वह उस अवस्था में पहुँचता है, जहाँ उसे न स्वयं का नाम याद रहता है, न कोई पहचान-सिर्फ एक अचल अनुभव, एक मौन आत्मबोध, जो उसे माया की परतों से निकालकर एकत्व की शाश्वत चेतना में स्थिर करता है। यही

है अघोरी अद्वैत का वास्तविक स्वरूप-माया के पार जाकर सच्चाई से मिलना, जहाँ ब्रह्म और आत्मा अलग नहीं, बल्कि एक ही तत्त्व के रूप में आलोकित होते हैं।

भोग और त्याग का अद्वैत – अनुभव की समग्रता

अघोरी परंपरा में भोग और त्याग को दो विपरीत ध्रुवों के रूप में नहीं देखा जाता, बल्कि इन्हें एक ही ब्रह्म की अभिव्यक्तियाँ माना जाता है। अघोरी साधक जानता है कि संसार में जितने भी अनुभव हैं-काम, क्रोध, मोह, आसक्ति, सुख, दुःख-वे सभी आत्मा को पूर्णता की ओर ले जाने वाले सोपान हैं। इस धारणा में त्याग कोई ऐसा अभ्यास नहीं है जो भोग से विमुख होकर चलता हो, बल्कि भोग को समग्रता से जिया जाता है ताकि वह अंततः त्याग में रूपांतरित हो जाए। अघोरी किसी इंद्रियानंद से भागता नहीं, बल्कि उसमें उतरकर उसकी क्षणिकता, भ्रम और निर्भरता को समझता है। वह जानता है कि जब कोई अनुभव अपने चरम पर पहुंचता है, तब वह स्वयं ही निस्सार हो जाता है। अघोरी इस प्रक्रिया में भोग को नकारता नहीं, बल्कि उसका पारदर्शी उपयोग करता है-न तो उसमें डूबता है, न उससे डरता है।

त्याग, अघोरी के लिए आत्मज्ञान का स्वाभाविक परिणाम होता है, न कि कोई जबरन साधना। जब साधक हर भोग को पूरी सजगता और साक्षीभाव से देखता है, तब धीरे-धीरे उसकी लालसा अपने आप मिट जाती है। यह त्याग जबरन संकल्प से नहीं आता,

बल्कि अनुभव से उपजता है। अघोरी जानता है कि यदि किसी वस्तु से आसक्ति है, तो उसे उससे दूर भागने से नहीं बल्कि उसके मूल स्वरूप को समझने से ही मुक्ति मिलेगी। यही कारण है कि अघोरी न तो संसार को त्याज्य मानता है, न ही उसे स्थायी समझकर उस पर निर्भर होता है। वह हर अनुभव को ब्रह्म का एक रूप मानकर उसे स्वीकार करता है, लेकिन उसमें लिप्त हुए बिना उसकी क्षणभंगुरता को समझता है। यही भोग और त्याग के अद्वैत का दर्शन है-जहाँ दोनों का अंत एक ही आत्मबोध में होता है। अघोरी इस समग्रता के माध्यम से यह सिद्ध करता है कि केवल एकांत साधना नहीं, बल्कि जीवन के हर अनुभव में अद्वैत की झलक पाई जा सकती है।

लिंग, जाति और भेद का निराकरण – अद्वैत की सामाजिक व्याख्या

अघोरी दर्शन न केवल आत्मा और ब्रह्म की एकता को स्वीकार करता है, बल्कि वह सामाजिक भेदभाव, लिंग भेद, जातिगत भिन्नता और पवित्र-अपवित्र की धारणाओं को भी अद्वैत की रोशनी में विसर्जित करता है। अघोरी साधक के लिए कोई व्यक्ति ब्राह्मण, शूद्र, स्त्री, पुरुष, ज्ञानी या अज्ञानी नहीं होता-वह केवल चैतन्य का एक अंश होता है, और उसी आधार पर उसे देखा जाता है। यह दृष्टिकोण केवल दार्शनिक नहीं, बल्कि व्यावहारिक भी है-अघोरी जीवन में यही भावना कार्य करती है जब वे शवों के समान व्यवहार करते हैं, स्त्रियों को साधना में पूर्ण सहभागिता देते हैं, और सामाजिक

अपवर्जितों के साथ समान स्तर पर भोजन, निवास और ध्यान करते हैं। उनके लिए कोई 'नीच 'नहीं, कोई 'ऊँच 'नहीं-सभी में वही ब्रह्म स्थित है। यही कारण है कि अघोरी साधना कई बार सामाजिक आक्रोश और अस्वीकृति का कारण बनती है, क्योंकि यह परंपरा उन रूढ़ियों को तोड़ती है जो समाज को बाँटने का कार्य करती हैं।

इस अद्वैत को सामाजिक व्यवहार में उतारना ही अघोरी का सबसे बड़ा योगदान है। जब कोई साधक श्मशान में एक दलित शव के पास ध्यान करता है, जब वह किसी वेश्यावृत्ति से जुड़ी स्त्री को देवी रूप में देखता है, या जब वह किसी कुष्ठरोगी को छूकर उसमें ईश्वरत्व देखता है-तब वह इस दर्शन को शब्दों से बाहर, कर्म और दृष्टि में साकार करता है। यह केवल समरसता नहीं, बल्कि गहन ब्रह्मबोध की व्यावहारिक व्याख्या है। अघोरी इस भावना के माध्यम से दर्शाता है कि समाज में जो भी भेद हैं, वे मानव निर्मित हैं-सत्य की दृष्टि में वे सब निरर्थक हैं। अद्वैत इसीलिए एक आंतरिक अनुभूति के साथ-साथ सामाजिक क्रांति का माध्यम भी बनता है, जहाँ सभी जीव ब्रह्म के समान तत्त्व हैं, और सबका अस्तित्व एक ही चेतना में विलीन है। अघोरी इस सत्य को केवल शास्त्रों से नहीं, अपने जीवन के प्रत्येक क्षण से सिद्ध करता है।

मृत्यु और अमरत्व – द्वैत से मुक्त चेतना की अवस्था

अघोरी परंपरा में मृत्यु को न जीवन का अंत माना जाता है, न ही किसी भौतिक शरीर के विघटन मात्र का अनुभव। यह दर्शन मृत्यु

को उस सीमारेखा के रूप में देखता है जहाँ से चेतना द्वैत की सीमा को पार करके अद्वैत की अनंत धारा में प्रवाहित होती है। अघोरी साधक जब श्मशान की भस्म में समाधि लगाता है, तब वह केवल मृत्यु को नहीं देखता, बल्कि उसकी आड़ में छिपे अमरत्व को पहचानता है। उसके लिए मृत्यु कोई भयावह घटना नहीं, बल्कि आत्मा की मुक्ति की प्रक्रिया है। अघोरी मानता है कि शरीर की मृत्यु से आत्मा समाप्त नहीं होती, बल्कि उसका संकल्प और अनुभव एक नए आयाम में प्रवेश करता है, जहाँ वह अपने मूल तत्त्व-ब्रह्म-से एकाकार हो जाती है। यह अमरत्व अघोरी के लिए किसी कल्पनालोक का विषय नहीं, बल्कि चेतना का अनुभवात्मक सत्य है।

जब अघोरी शव के पास ध्यान करता है, तो वह उस मृत्यु को नहीं देखता जिसे आमजन भय और दुःख की दृष्टि से देखते हैं। वह उस बिंदु पर स्थिर होता है जहाँ जीवन और मृत्यु का अंतर समाप्त हो चुका होता है, और केवल शुद्ध चेतना बचती है। यह दृष्टिकोण अघोरी को मृत्यु से परे ले जाता है-वह जानता है कि जो मरता है वह शरीर है, और जो शेष रहता है वह अमर चेतना है। यही बोध उसे इस जीवन में भी निर्भय, निस्संग और मुक्त बनाता है। वह मृत्यु को नकारता नहीं, बल्कि उसे स्वीकार कर उस पार की स्थिति में प्रवेश करता है। यह प्रवेश एक ऐसी अवस्था है जहाँ जन्म, पुनर्जन्म, समय और काल का कोई बंधन नहीं रहता-केवल नित्य, निर्गुण, निराकार ब्रह्म का अस्तित्व रहता है। अघोरी इस अमरत्व को केवल सिद्धांत

में नहीं, बल्कि अपने जीवन की हर साँस में अनुभूत करता है। यही उसका अंतिम लक्ष्य है-मृत्यु में से होकर उस स्थिति तक पहुँचना जहाँ 'मैं 'समाप्त हो जाए और 'वह 'शेष रह जाए।

समय और चेतना – अनादि और अनंत के संयोग में स्थिति

अघोरी अद्वैत दर्शन में समय का कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता, वह केवल चेतना की एक आभासी धारा है, जो अनुभवों के क्रम को मापने का साधन भर है। जब साधक अद्वैत की अनुभूति करता है, तो उसके लिए अतीत, वर्तमान और भविष्य जैसे कोई बंधन नहीं रह जाते। वह उस शाश्वत स्थिति में पहुँचता है जहाँ काल केवल एक उपकरण होता है, न कि कोई सत्य। अघोरी श्मशान को इसीलिए चुनता है क्योंकि वहाँ मृत्यु के साथ-साथ समय का भी अंत होता है। जब एक शरीर राख में बदल जाता है, तब जीवन के सारे क्रियाकलाप-धन, नाम, परिवार, कर्म-सब समय के भीतर नष्ट हो जाते हैं। और जब साधक उस क्षण में बैठकर अपने मन, विचार और इंद्रियों को शून्य करता है, तब वह एक ऐसे आयाम में प्रवेश करता है जहाँ समय की रेखा टूट जाती है और केवल चेतना की अनंतता शेष रहती है।

इस चेतना में न कोई आरंभ होता है, न कोई अंत। अघोरी इस शुद्ध चेतना को ही ब्रह्म मानता है-जो नित्य है, सर्वव्यापी है और जिसमें सभी घटनाएं केवल एक लहर की तरह उठती और विलीन हो जाती हैं। इस स्थिति में साधक के लिए कोई कालचक्र नहीं

बचता, बल्कि वह उस मूल बिंदु में स्थित हो जाता है जहाँ काल, कारण और कार्य सब विलीन हो जाते हैं। वह देखता है कि जो कुछ भी समय में घट रहा है, वह केवल माया का खेल है-और उसकी वास्तविक स्थिति इससे परे है। अघोरी साधक जब बार-बार इस चेतना में लीन होता है, तब उसकी पहचान स्थूल शरीर और सीमित विचारों से हटकर उस अनादि चेतना में समाहित हो जाती है, जिसे न काटा जा सकता है, न जलाया जा सकता है, न बाँधा जा सकता है। यही है समय से परे स्थित वह चेतना, जो अद्वैत का वास्तविक अनुभव बनकर साधक को ब्रह्म से जोड़ देती है।

प्रकृति और ब्रह्म – जड़ और चेतन का अभिन्न संबंध

अघोरी दर्शन में प्रकृति और ब्रह्म के बीच कोई द्वैत नहीं माना जाता। अघोरी साधक यह स्वीकार करता है कि पहाड़, नदियाँ, वृक्ष, पशु, अग्नि, वायु, आकाश-ये सब उस एक ब्रह्म की अभिव्यक्तियाँ हैं जो चेतना में भी स्थित है और जड़ में भी। जहाँ सामान्य दर्शन में प्रकृति को केवल संसाधन या साधन की दृष्टि से देखा जाता है, वहीं अघोरी दर्शन उसे सजीव, पवित्र और ब्रह्ममय मानता है। यही कारण है कि अघोरी साधक जंगलों, निर्जन श्मशानों, पर्वतीय कंदराओं या नदी के किनारों को साधना के लिए चुनता है, क्योंकि वहाँ प्रकृति अपनी सबसे मौन, सरल और अखंड अवस्था में विद्यमान होती है। उस स्थिति में प्रकृति केवल एक बाहरी दृश्य नहीं रहती, बल्कि साधक के भीतर चेतना के प्रवाह से जुड़ जाती है।

इस संबंध में अघोरी साधक ‘पृथ्वी ’को केवल भूमि नहीं, बल्कि माँ मानता है; ‘जल ’को केवल पीने का साधन नहीं, बल्कि उस ब्रह्म की द्रव चेतना मानता है; अग्नि को केवल ताप नहीं, बल्कि आत्मा की तपस्या का स्वरूप मानता है। अघोरी जीवनशैली में यह एकात्म दृष्टि स्पष्ट दिखती है-वह किसी वृक्ष को काटने से पहले उसका स्पर्श करके क्षमा माँगता है, किसी पशु का उपयोग करने से पहले उसका धन्यवाद करता है, और हर प्राकृतिक तत्व के प्रति कृतज्ञता से भरा होता है। यह दृष्टिकोण उसे एक ऐसे आध्यात्मिक जीवन की ओर ले जाता है जहाँ ब्रह्म सिर्फ ध्यान में नहीं, बल्कि पत्तियों की सरसराहट, शव की चिता, हवा के झोंके और चंद्रमा की चांदनी में भी विद्यमान होता है। अघोरी का अद्वैत केवल दर्शन नहीं, बल्कि प्रकृति के साथ जीवंत संबंध का निर्वाह है, जो चेतन और अचेतन के बीच की हर दीवार को मिटा देता है और सृष्टि के प्रत्येक अणु को ब्रह्ममय घोषित करता है।

नकारात्मकता का अतिक्रमण – अघोरी दृष्टिकोण में रचनात्मक शक्ति

अघोरी परंपरा उन अनुभवों को साधना में शामिल करती है जिन्हें सामान्य समाज नकारात्मक, भयावह या अपवित्र समझता है-जैसे शव, भस्म, रात्रि, अकेलापन, विकृति, मृत्यु, और यहाँ तक कि विकृत गंध और अस्वीकृत व्यवहार। परंतु अघोरी दर्शन के अनुसार, यह सब ‘नकारात्मक ’कुछ नहीं होता, बल्कि समाज की सीमित

दृष्टि का परिणाम होता है। अघोरी इस दृष्टि को तोड़कर इन प्रतीकों में छिपी उस ऊर्जा को खोजता है जो चेतना को पुनः जाग्रत कर सकती है। उसके लिए शव का दृश्य विक्षिप्त नहीं, बल्कि जीवन की अस्थायीता का प्रामाणिक प्रमाण है; शमशान की गंध घृणास्पद नहीं, बल्कि मन को जगाने वाली एक प्रबल पुकार है।

अघोरी साधक इस प्रक्रिया में नकारात्मकता को न केवल स्वीकार करता है, बल्कि उसे आत्मसात करता है ताकि वह उसकी गहराई में उतरकर उसमें छिपे ब्रह्म की अनुभूति कर सके। वह जानता है कि जब तक भय, घृणा और अस्वीकार के अनुभवों को आत्मा से दूर रखा जाएगा, तब तक अद्वैत की पूर्णता संभव नहीं। यही कारण है कि अघोरी विकृति को भी पूजनीय बना देता है-वह किसी विकलांग व्यक्ति में भी पूर्णता देखता है, किसी भस्मस्नात शव में भी दिव्यता देखता है, और किसी अशुभ समझी जाने वाली घटना में भी ब्रह्म की उपस्थिति को पहचानता है। यही अघोरी का गहनतम योगदान है-नकारात्मकता को नकारने के बजाय, उसे समझकर, उसकी छाया में प्रवेश कर, उसके मूल में स्थित चेतन ऊर्जा को जाग्रत करना। यह दृष्टिकोण जीवन को एक संपूर्ण अनुभव बनाता है-जहाँ अच्छाई और बुराई का कोई पृथक अस्तित्व नहीं, केवल एकता है, जो अद्वैत के सिद्धांत को न केवल दार्शनिक, बल्कि साक्षात जीवन का आधार बना देती है।

गुरु और शिष्य का विलय – ज्ञान और सत्ता की एकता

अघोरी परंपरा में गुरु और शिष्य के बीच का संबंध केवल शिक्षा या मार्गदर्शन तक सीमित नहीं होता, बल्कि वह आत्मा और ब्रह्म के अद्वैत संबंध का सजीव प्रतिबिंब होता है। इस परंपरा में गुरु कोई बाहरी सत्ता नहीं, बल्कि स्वयं की चेतना का वह रूप होता है जो शिष्य को उसके भीतर के ब्रह्म से जोड़ने का साधन बनता है। अघोरी शिष्य जब गुरु की सेवा करता है, तब वह केवल आज्ञा का पालन नहीं करता, बल्कि वह इस प्रक्रिया में धीरे-धीरे अपने 'मैं ' को विलीन करता है और गुरु के 'तत्त्व 'को आत्मसात करता है। यहां गुरु की भूमिका केवल मंत्र देने या साधना सिखाने तक सीमित नहीं, बल्कि वह शिष्य को उसकी सीमाओं से पार ले जाने वाली शक्ति का प्रतिनिधि बन जाता है। अघोरी परंपरा में माना जाता है कि सच्चा गुरु वही होता है, जो अपने अस्तित्व को मिटाकर शिष्य में ब्रह्म का बोध करा दे और फिर स्वयं भी उसी चेतना में विलीन हो जाए।

इस अवस्था में गुरु और शिष्य के बीच कोई भेद नहीं रह जाता। जब शिष्य गुरु के प्रत्येक शब्द, संकेत और मौन को समझने लगता है, तब वह उस चेतना में प्रवेश करता है जहाँ गुरु स्वयं एक माध्यम बनकर अंततः अदृश्य हो जाता है। अघोरी परंपरा में यह माना जाता है कि जब तक शिष्य गुरु को व्यक्ति मानता है, तब तक वह सीमित रहता है; लेकिन जब वह गुरु को तत्त्व, ऊर्जा और अंतःप्रकाश के रूप में अनुभव करता है, तब वह अद्वैत की उस अवस्था में प्रवेश

करता है जहाँ गुरु और शिष्य का भेद समाप्त हो जाता है। यह विलय न केवल आत्मज्ञान की चरम सीमा है, बल्कि ब्रह्म की उस अखंड स्थिति का भी द्योतक है जिसमें ज्ञान देने वाला और ज्ञान पाने वाला एक ही चेतना के दो भिन्न आयाम बनकर अंततः एकाकार हो जाते हैं। यही अघोरी परंपरा की गहनतम दीक्षा है-जहाँ गुरु के चरणों में बैठा शिष्य, अंततः गुरु बन जाता है, और दोनों ब्रह्म में समाहित हो जाते हैं।

मौन और शब्द – शून्यता में सत्य का अनुभव

अघोरी साधना में मौन कोई साधारण चुप्पी नहीं, बल्कि वह माध्यम है जिससे शब्दों की सीमा को पार किया जाता है और चेतना को अपने शुद्धतम स्वरूप में अनुभव किया जाता है। अघोरी जानता है कि जितना अधिक वह बोलता है, उतना ही अधिक वह माया और द्वैत के जाल में उलझता है। इसलिए वह साधना के उच्चतम स्तर पर मौन को अपनाता है, जहाँ कोई मंत्र, कोई आरती, कोई तर्क या उत्तर नहीं होता-बस मौन की ध्वनि होती है, जो ब्रह्म की प्रतिध्वनि बनकर भीतर गूंजती रहती है। यह मौन उसकी चेतना को बाहर की हलचल से हटाकर भीतर की एकरसता में स्थिर करता है, जहाँ हर तरंग अंततः शून्यता में विलीन हो जाती है।

यह मौन शून्य नहीं होता, बल्कि अघोरी के लिए वह सबसे मुखर स्थिति होती है। जब साधक मौन में उतरता है, तब वह शब्दों के परे उस 'नाद 'को सुनता है, जो सृष्टि के आरंभ से पूर्व भी विद्यमान

था और अंत के बाद भी रहेगा। यह 'अनाहत नाद 'उस ब्रह्म का स्वरूप है जिसे कोई रूप, रंग या आकार नहीं, लेकिन जिसकी चेतना पूरे अस्तित्व में व्याप्त है। अघोरी साधक इस मौन में जब प्रवेश करता है, तब उसे किसी गुरु की वाणी की आवश्यकता नहीं होती, कोई ग्रंथ भी उसके लिए अंतिम प्रमाण नहीं रह जाता-उसकी आत्मा स्वयं वाक्य बन जाती है, उसका श्वास मंत्र बन जाता है, और उसका मौन ही परम सत्य की उद्घोषणा बन जाता है। यही अद्वैत का परम रूप है-जहाँ शब्द और मौन दोनों विलीन हो जाते हैं, और शिष्य शून्यता में वह अनुभव करता है जिसे न कहा जा सकता है, न लिखा जा सकता है-केवल जिया जा सकता है। यही अघोरी अद्वैत की पूर्णता है-मौन में सत्य का साक्षात्।

आत्मा और ब्रह्म – अहंकार से शून्यता की यात्रा

अघोरी दर्शन में आत्मा और ब्रह्म के बीच कोई अंतर नहीं माना जाता। यह परंपरा आत्मा को ब्रह्म का ही एक प्रतिबिंब मानती है, जो अज्ञान, अहंकार और इंद्रियबोध के कारण सीमित प्रतीत होती है। अघोरी साधना का उद्देश्य इस भ्रांति को तोड़ना है, ताकि साधक उस स्थिति में पहुँच सके जहाँ आत्मा की सीमाएँ मिट जाएँ और वह अपने वास्तविक स्वरूप-ब्रह्म-का साक्षात्कार कर सके। यह यात्रा बाहरी नहीं, बल्कि आंतरिक है। अघोरी जानता है कि शरीर, मन, बुद्धि और अहंकार से परे जो है, वही शुद्ध आत्मा है, और वही ब्रह्म भी है। साधक जब तक 'मैं 'की भावना से बंधा रहता है, तब तक

वह संसार, द्वैत और माया के चक्र में फँसा रहता है। लेकिन जब वह इस 'मैं 'को जलाकर राख कर देता है-अर्थात् जब वह अपने अस्तित्व का विसर्जन कर देता है-तब वही आत्मा ब्रह्मरूप में प्रकट होती है।

यह विसर्जन शमशान की साधना में प्रतीकात्मक रूप से होता है-जहाँ चिता की आग के साथ साधक अपने भीतर के अहंकार, इच्छा, पहचान और भेदभाव को जलाकर नष्ट करता है। यह वह अवस्था है जहाँ न कोई साधक बचता है, न कोई साधना; न कोई उद्देश्य, न कोई फल; केवल उपस्थिति, केवल मौन, केवल शून्यता। अघोरी इसी शून्यता को ब्रह्म का द्वार मानता है-वह जानता है कि जब तक भीतर कोई 'स्व 'बचा है, तब तक ब्रह्म के लिए स्थान नहीं। इसीलिए वह हर अभ्यास, हर कर्म और हर विचार को तब तक साधता है जब तक वह स्वतः समाप्त न हो जाए। अंततः वह स्थिति आती है जहाँ आत्मा अपने सीमित रूप से निकलकर ब्रह्म की अनंतता में विलीन हो जाती है। इस विलय को ही अघोरी अद्वैत की पूर्णता मानता है-जहाँ न साधक रहता है, न ब्रह्म की तलाश, बल्कि केवल वही रहता है जो आदि, अनादि और अनंत है-शुद्ध, निर्विकल्प, अपरंपार चेतना। यही अघोरी का चरम बोध है-अहंकार से शून्यता की यात्रा में आत्मा का ब्रह्म बन जाना।

अध्याय 25:
मृत्यु और पुनर्जन्म की अघोरी अवधारणा

मृत्यु को जीवन के भाग के रूप में स्वीकार करना

अघोरी दर्शन में मृत्यु को जीवन के अंत के रूप में नहीं, बल्कि उसकी नैसर्गिक निरंतरता और चेतना के पुनर्गठन का माध्यम माना जाता है। साधक के लिए मृत्यु कोई शोक या विछोह नहीं होती, बल्कि वह एक ऐसा अंतरद्वार है, जिससे गुजरकर आत्मा सांसारिक बंधनों से मुक्त होकर स्वयं की गहराई में प्रवेश करती है। अघोरी मानते हैं कि मृत्यु से भागना अज्ञान है, जबकि उसका साक्षात्कार ही वास्तविक आत्मज्ञान का प्रवेशद्वार है। इसीलिए वे मृत शरीरों, शमशान की राख, और हड्डियों के बीच साधना करते हैं, ताकि जीवन और मृत्यु के कृत्रिम द्वैत को तोड़ा जा सके। मृत्यु का स्पर्श उनके लिए भय नहीं, बल्कि मोक्ष की अनुभूति का अवसर बनता है-एक ऐसा क्षण, जब आत्मा शरीर के आवरण को छोड़कर अपने शुद्ध स्वरूप की ओर उन्मुख होती है।

इस दर्शन में शमशान केवल मृतदेहों की चिता नहीं, बल्कि आत्मचिंतन की प्रयोगशाला है। जब साधक मृत्यु के प्रति गहन मौन साधना करता है, तब वह अपने भीतर पल रही अहं की परतों को देख पाता है, जो उसे जीवन और मृत्यु के सत्य से वंचित करती हैं। अघोरी इस प्रक्रिया को आत्मशुद्धि का साधन मानते हैं-मृत्यु को

निकट से देखना, उससे संवाद करना, और उससे मित्रता करना। यह साधना केवल शारीरिक अभ्यास नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक मुक्ति का भी उपकरण बनती है, जो साधक को यह सिखाती है कि जब तक मृत्यु से डर बना रहेगा, तब तक आत्मा सच्चे अनुभव से वंचित रहेगी। मृत्यु का आलिंगन ही उनके लिए अमरत्व की ओर पहला कदम है, जहाँ चेतना भूत, वर्तमान और भविष्य की सीमाओं से परे होकर शुद्ध और अविचल हो जाती है।

पुनर्जन्म की अवधारणा और उसका आधार

अघोरियों के अनुसार, आत्मा शरीर की सीमाओं से परे एक सतत् चेतना है, जो विभिन्न जन्मों में अपने कर्मों के अनुभवों को एकत्र करती हुई यात्रा करती है। यह पुनर्जन्म का चक्र तब तक चलता रहता है जब तक आत्मा माया और कर्म के बंधनों से मुक्त नहीं हो जाती। परंतु अघोरी इस पुनर्जन्म को कोई सैद्धांतिक धारणा नहीं मानते-वे इसे साधना में अनुभव करते हैं। शव के पास साधना करते समय, जब साधक मृत देह के साथ ध्यानस्थ होता है, तब वह उस चेतना की हलचल को अनुभव करता है जो देह से अलग होकर भी कहीं स्पंदित हो रही होती है। यह अनुभव उसे यह सिखाता है कि वह स्वयं भी मात्र एक देह नहीं है, बल्कि एक गतिशील चेतना है, जिसका पुनरावर्तन केवल कर्मों की प्रतिक्रिया है।

इस पुनर्जन्म की अवधारणा को अघोरी एक चेतन अभ्यास के रूप में समझते हैं-ऐसा अभ्यास जिसमें आत्मा अपने भूत और

वर्तमान की प्रतिक्रियाओं का बोध कर स्वयं को शुद्ध करती है। उनके अनुसार, पुनर्जन्म कोई दंड नहीं, बल्कि आत्मा के परिपक्व होने की प्रक्रिया है। जब साधक अपने ही कर्मों की प्रतिध्वनि को भीतर अनुभव करता है, तब वह धीरे-धीरे उन्हें निष्क्रिय करने लगता है। यह निष्क्रियता ही मोक्ष की ओर पहला कदम है, जहाँ आत्मा स्वयं को न किसी जाति, न लिंग, न मानवीय स्वरूप में सीमित मानती है। वह केवल चेतना बन जाती है-शुद्ध, निर्गुण और पुनर्जन्म के चक्र से परे। यही अघोरी दृष्टिकोण पुनर्जन्म को केवल धार्मिक विश्वास नहीं, बल्कि आध्यात्मिक अनुसंधान और आत्मानुभूति का साधन बनाता है।

शमशान का मृत्यु से संबंध

शमशान अघोरियों के लिए केवल अंतिम संस्कार की भूमि नहीं है, बल्कि यह उनकी साधना, जीवन-दर्शन और आत्मबोध का सबसे महत्वपूर्ण केंद्र होता है। यह वह स्थल है जहाँ मृत्यु न केवल देखी जाती है, बल्कि अनुभव की जाती है, समझी जाती है और साधना में आत्मसात की जाती है। अघोरी इस स्थान को शुद्ध और अशुद्ध के द्वैत से मुक्त मानते हैं। चिता की आग, मृत शरीर की दुर्गंध, कंकालों की उपस्थिति और शून्यता का वह भाव-इन सभी से साधक का आमना-सामना होता है। इन सबके बीच साधक जब शांत बैठता है, तब वह जीवन की अस्थायीता, मृत्यु की अपरिहार्यता और आत्मा की निरंतरता को एक साथ अनुभव करता है। शमशान में

बिताया गया हर क्षण उसे माया के भ्रम से बाहर लाकर उसके अंदर गूढ़ बोध जाग्रत करता है कि जीवन और मृत्यु एक ही वृत्त के दो छोर नहीं, बल्कि एक ही प्रवाह के दो दृश्य हैं। वह आत्मा को स्थायी, शुद्ध और स्वतंत्र तत्व के रूप में देखता है और शरीर को एक अस्थायी माध्यम के रूप में स्वीकार करता है।

इस स्थल पर साधक बार-बार मृत्यु के दर्शन से गुजरता है-वह देखता है कि कैसे शरीर जलता है, हड्डियाँ राख में बदलती हैं, और अंततः कुछ नहीं बचता। लेकिन इसी 'कुछ नहीं 'में उसे 'सब कुछ ' का बोध होता है। अघोरी इस राख, इन खोपड़ियों, और इस चिरंतन शून्यता को अपने भीतर आत्मसात करता है। वह मरणशीलता से नहीं भागता, बल्कि उसे गले लगाता है, क्योंकि उसे ज्ञात होता है कि मरण के पार ही उस सत्य का दर्शन होता है, जो आत्मा और ब्रह्म के मिलन का सेतु है। शमशान इसलिए उनके लिए साधना का क्षेत्र ही नहीं, बल्कि एक दार्शनिक विश्वविद्यालय बन जाता है-जहाँ मृत्यु सबसे श्रेष्ठ गुरु है और आत्मा सबसे चिरकालिक शिष्य।

तंत्र में मृत्यु की भूमिका

अघोरी परंपरा में मृत्यु को साधना का सर्वोच्च साधन माना गया है। तांत्रिक दृष्टिकोण से यह न तो अंत है और न ही केवल एक परिवर्तन, बल्कि एक ऐसा द्वार है जो साधक को आत्मा की शाश्वतता का साक्षात्कार कराता है। अघोरी तंत्र मृत्यु को एक शक्ति के रूप में देखता है-एक ऐसी शक्ति जो माया के झूठे आवरण को भेद कर

आत्मा को उसके शुद्ध स्वरूप तक ले जाती है। शवसाधना, भस्म पूजन और कपाल ध्यान जैसे तांत्रिक अनुष्ठान इस शक्ति का आह्वान करते हैं। जब साधक मृत शरीर के समीप बैठता है, तब वह न केवल शरीर की क्षणिकता को देखता है, बल्कि उस चेतना की अमरता को भी पहचानता है, जो उस देह से निकल चुकी है। इस अनुभव के माध्यम से अघोरी साधक आत्मा को न सीमित मानता है, न स्थूल, बल्कि एक व्यापक और ब्रह्ममयी सत्ता के रूप में स्वीकार करता है।

तंत्र में यह माना जाता है कि जो वस्तु भय का कारण बनती है, वही साधक को सबसे बड़ी शक्ति दे सकती है-मृत्यु इसका उदाहरण है। अघोरी इसे नकारते नहीं, उससे भागते नहीं, बल्कि उसी को प्रयोग में लाते हैं। वे शव को पूज्य मानते हैं, उसकी भस्म को शरीर पर मलते हैं, उसकी खोपड़ी को यंत्र बनाकर ध्यान करते हैं-क्योंकि ये सभी मृत्यु के माध्यम से ब्रह्म को समझने की चाबी हैं। तांत्रिक ग्रंथों में मृत्यु को देवी स्वरूप में भी देखा गया है-जो संहार के बाद सृजन की भूमि तैयार करती है। इसीलिए अघोरी साधक जब मृत्यु के रूप में उस देवी का स्वागत करता है, तब वह सच्चे अर्थों में ब्रह्मत्व की ओर कदम बढ़ाता है। मृत्यु उसके लिए भय नहीं, बल्कि साधना का सबसे गूढ़, सबसे प्रभावशाली और सबसे प्रामाणिक आयाम बन जाती है।

आध्यात्मिक तैयारी और मृत्यु की ओर प्रयाण

अघोरी साधना में मृत्यु केवल एक अंत नहीं बल्कि आत्मा के उत्कर्ष का द्वार होती है, और इस अंतिम यात्रा के लिए साधक विशेष

आध्यात्मिक तैयारी करता है। यह तैयारी बाहरी परिपाटियों से अधिक आंतरिक होती है-मानसिक, भावनात्मक और आत्मिक स्तर पर। साधक सबसे पहले मृत्यु को अपने भीतर जागृत करता है, उसे एक डर के रूप में नहीं, बल्कि सत्य के रूप में स्वीकारता है। शमशान में एकांतवास, मौन साधना, और आंतरिक प्रतीकवाद के सहारे वह अपने ही शरीर, अपने ही विचार और अपनी ही चेतना को मृत्यु के प्रतिबिंब के रूप में देखता है। शरीर को राख से ढंकना, सांसों को नियंत्रित करना, और रात के अंधकार में शव के निकट ध्यान करना, इन सबका उद्देश्य मृत्यु के साथ साक्षात्कार को सरल बनाना है। वह जानता है कि मृत्यु कोई बाहरी घटना नहीं, बल्कि आत्मा की भीतरी अवस्था का गहन प्रकट रूप है, जहाँ से आत्मबोध की प्रक्रिया प्रारंभ होती है।

इस अभ्यास की चरम परिणति तब होती है जब साधक जीवन के सभी सांसारिक आकर्षणों, रिश्तों, और भय से विलग होकर मृत्यु को अपने भीतर समाहित कर लेता है। मृत्यु के प्रति यह आत्मीयता, यह अनुराग, उसे किसी भी बाहरी संकट से डिगने नहीं देता। उसका जीवन इस भाव में ढल जाता है कि वह मरने से नहीं डरता, क्योंकि वह पहले ही मृत्यु का स्वाद चख चुका होता है। वह जानता है कि जब शरीर टूटेगा, तब चेतना बिखरेगी नहीं, बल्कि ब्रह्म के साथ एकाकार हो जाएगी। यह आध्यात्मिक तैयारी उसकी साधना का वह चरण है, जहाँ मृत्यु उसके लिए एक शिक्षक बन जाती है-जो उसे दिखाती है कि जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि भयमुक्त हो जाना है।

और यही भयमुक्ति पुनर्जन्म के चक्र को काटने का पहला कदम बनती है।

मृत शरीरों का उपयोग: प्रतीक से परम तक की यात्रा

अघोरी साधना में मृत शरीर केवल भौतिक वस्तु नहीं, बल्कि चेतना के रहस्यों का प्रवेशद्वार होता है। अघोरी जब शव के समीप बैठता है, तो वह उसमें विकृति नहीं, बल्कि ब्रह्म की छाया देखता है। शव पर की गई साधना-जैसे शव-साधना, कपाल पूजा या भस्म-ध्यान-के द्वारा वह मृत्यु और पुनर्जन्म के द्वंद्व को तोड़ता है। खोपड़ी (कपाल) केवल प्रतीक नहीं, बल्कि वह एक माध्यम बनती है, जो साधक को अपनी आत्मा की अमरता का अहसास कराती है। यह साधना किसी क्रूरता का प्रदर्शन नहीं, बल्कि वह आत्म-अन्वेषण की विधि है, जिसमें शरीर के विनाश में ही परम चेतना की स्थायित्व का बोध संभव होता है। शव से उत्पन्न गंध, सड़न, और अस्थिरता अघोरी के लिए विकर्षण नहीं, बल्कि ध्यान को केंद्रित करने वाले उपकरण हैं।

यह साधना तब चरम पर पहुंचती है जब साधक शव को भगवान शिव के रूप में देखता है-स्थूल को सूक्ष्म में बदलने की शक्ति का स्रोत। शव को सामने रखकर की जाने वाली साधना साधक को उसके ही भीतर छिपे भय, द्वेष और मोह से सामना कराती है। वह इन्हें पहचानता है, उन्हें स्वीकार करता है, और फिर उनसे मुक्त हो जाता है। मृत शरीर को पूजनीय मानना, उसे जलाना नहीं बल्कि

उसके साथ समर्पण की अवस्था में पहुंचना, यही अघोरी परंपरा की सार्थकता है। मृत शरीर के माध्यम से साधक यह अनुभव करता है कि जो दिखता है वह अस्थायी है, और जो न दिखे वही शाश्वत है। इस प्रकार शव अघोरी के लिए मात्र एक मृत देह नहीं, बल्कि वह जीवंत दर्पण बन जाता है जिसमें उसे आत्मा की अविनाशी छवि दिखाई देती है-जिसे कोई मृत्यु मिटा नहीं सकती। यही अनुभव उसे पुनर्जन्म के चक्र से बाहर निकालकर मुक्त आत्मा की अवस्था की ओर अग्रसर करता है।

अघोरी अनुष्ठानों में मृत्यु का अभिनय और उसका आध्यात्मिक आशय

अघोरी परंपरा में मृत्यु केवल प्रतीक्षा की जाने वाली वास्तविकता नहीं, बल्कि जीते-जी अनुभूत की जाने वाली साधना की अवस्था है। इसके लिए अघोरी साधक विशेष प्रकार के अनुष्ठान करते हैं जिन्हें "मृत्यु-अभिनय" कहा जाता है। यह अभिनय केवल नाटकीय उपक्रम नहीं, बल्कि चेतना और शरीर के बीच संबंध को तोड़ने की प्रक्रिया है। इस अनुष्ठान में साधक अपने शरीर को मृतक के समान लेटाकर, तीन या सात दिनों तक चुप्पी साध लेता है, भोजन और संपर्क से दूर रहकर वह शरीर की क्रियाओं को शिथिल करता है। उसके चारों ओर राख, अस्थियाँ, कपाल और चिता की राख का मंडल बनाया जाता है, जिससे वातावरण श्मशान के समान हो जाता

है। इस अभ्यास का उद्देश्य होता है शरीर से अलग होकर आत्मा के स्वतंत्र अस्तित्व को अनुभूत करना।

इस प्रक्रिया में साधक मृत्यु को अभिनय मात्र नहीं, बल्कि अपने वर्तमान जीवन की सीमा का अनुभव मानता है। शरीर पर राख का लेप, खोपड़ी का तकिया, और शव की दिशा में मुख करके ध्यान लगाने से वह स्वयं को मृत समझने की अवस्था में प्रवेश करता है। यह क्रिया साधक को मृत्यु के भय से परे ले जाती है, जिससे वह देखता है कि आत्मा, देह की गति और मन की चंचलता से भी परे है। अघोरी दर्शन के अनुसार, जो मृत्यु का अभिनय कर सकता है, वही जीवन की सच्चाई को गहराई से समझ सकता है। यही अभिनय उसे उस क्षण तक पहुंचाता है जहाँ जन्म-मरण की सारी अवधारणाएं केवल मन की सीमाएं बन जाती हैं, और साधक अद्वैत की ओर अग्रसर हो जाता है। अघोरी इसे आत्म-शुद्धि का उत्सव मानते हैं-जहाँ अभिनय के माध्यम से आत्मा ब्रह्म के प्रकाश से आलोकित होती है।

मृत्यु को ब्रह्मज्ञान की अंतिम सीढ़ी के रूप में देखना

अघोरी साधना में मृत्यु केवल जीवन का अंत नहीं, बल्कि ब्रह्मज्ञान की वह अंतिम सीढ़ी है जिस पर चढ़कर साधक पूर्ण मोक्ष की अनुभूति करता है। यह धारणा वैदिक उपनिषदों के उस वाक्य को मूर्त करती है जिसमें कहा गया है-"यदा मरणं ज्ञायते, तदा जीवनं सिद्ध्यति।" अघोरी इस ज्ञान को प्रतीकों और अनुभवों के माध्यम

से आत्मसात करते हैं। वे मानते हैं कि जब साधक मृत्यु को निकट से देखता है-काया का क्षय, हड्डियों की निर्जीवता, और देह की मिट्टी में वापसी-तभी वह उस ब्रह्म को समझ पाता है जो न कभी जन्मता है, न मरता है। इसलिए अघोरी मृत्यु को ब्रह्म की ओर अंतिम छलांग के रूप में देखते हैं।

इस समझ को साधक केवल तर्क या पाठ से प्राप्त नहीं करता, बल्कि शमशान में स्वयं को राख और हड्डियों के बीच रखकर, शरीर से विमुख होकर अनुभव करता है। वह अपने शरीर के भीतर की गतिविधियों को शिथिल करता है, और मन को निराकार तत्व में स्थित करता है। यह अवस्था उसे उस बिंदु तक ले जाती है जहाँ आत्मा और परमात्मा के बीच का विभाजन मिट जाता है। मृत्यु के क्षण में ब्रह्म की अनुभूति होने लगती है, और साधक जान जाता है कि ब्रह्म केवल सत्य नहीं, बल्कि उस शाश्वत स्थिति का नाम है, जहाँ द्वैत, माया और कर्म तीनों की समाप्ति हो जाती है। इसीलिए अघोरी साधना में मृत्यु का आशय केवल शारीरिक निष्क्रियता नहीं, बल्कि ब्रह्म के साक्षात्कार की वह अवस्था है जो जीवन भर की साधना का चरम लक्ष्य बनती है। अघोरी इसे अंतिम तपस्या मानते हैं-जहाँ मृत्यु कोई पराजय नहीं, बल्कि ब्रह्मज्ञान की अंतिम सिद्धि होती है।

समकालीन चेतना में मृत्यु की स्थिति और अघोरी दृष्टिकोण

अघोरी परंपरा में मृत्यु को केवल शारीरिक अंत नहीं माना जाता, बल्कि उसे आत्मा के स्वरूप में होने वाले एक गहन रूपांतरण

की अवस्था के रूप में समझा जाता है। आधुनिक समाज जहां मृत्यु को दुःख, छाया और परित्याग के रूप में देखता है, वहीं अघोरी दृष्टिकोण उसे आत्मिक विकास और चेतना की परिपक्वता का एक चरण मानता है। यह विरोधाभास केवल सांस्कृतिक नहीं, बल्कि अस्तित्व की व्याख्या का भी एक द्वंद्व है। अघोरी मानते हैं कि मृत्यु एक परिवर्तन है-जो चेतना को एक पुराने आवरण से मुक्त कर नये रूप में जन्म देती है। इस विश्वास के तहत वे शमशान को पूजा स्थल नहीं बल्कि आत्मा की प्रयोगशाला मानते हैं, जहां हर साधक स्वयं के भीतर उस परिवर्तन को महसूस करता है जो शारीरिक विनाश के बाद भी चेतना को अनंत बनाता है। यह विचारधारा आधुनिक चिकित्सा, मनोविज्ञान और दर्शन के लिए चुनौती और प्रेरणा दोनों बनकर उभरती है, क्योंकि यह मृत्यु के भय को आत्म-ज्ञान के अवसर में रूपांतरित करती है।

इस दृष्टिकोण की समकालीनता की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह व्यक्ति को मृत्यु के साथ सजीव संवाद करने की क्षमता देता है-न केवल डर को हटाकर, बल्कि उसे मार्गदर्शक बना कर। अघोरी कहते हैं कि मृत्यु का क्षण वह सत्य है, जहां जीवन की सभी धारणाएं विलीन होती हैं और आत्मा अपनी शुद्ध अवस्था में प्रकट होती है। आधुनिक मनुष्य, जो लगातार तनाव, भय, और भ्रम की दुनिया में जी रहा है, उसके लिए यह दृष्टिकोण मृत्यु को 'विलय ' नहीं, बल्कि 'प्रवेश 'के रूप में देखना सिखाता है। अघोरी जब मृत शरीर को सहचरी की तरह अपनाते हैं, तो वे केवल प्राचीन परंपरा

का निर्वाह नहीं कर रहे होते, बल्कि आधुनिक आत्मा को वह धैर्य और स्पष्टता प्रदान कर रहे होते हैं, जो जीवन के अंतिम प्रश्नों का उत्तर बन जाती है।

मृत्यु की साधना से पुनर्जन्म के बंधनों का अतिक्रमण

अघोरी साधना का सबसे सशक्त उद्देश्य आत्मा को पुनर्जन्म के चक्र से मुक्त करना है-यह मुक्ति केवल शब्दों या धारणा के स्तर पर नहीं, बल्कि गहन अनुभवों और कठिन साधनों के माध्यम से प्राप्त की जाती है। मृत्यु की साधना-जिसमें साधक शमशान में लाश के पास ध्यान करता है, भस्म से स्वयं को ढंकता है, और मरण की गंध को आत्मसात करता है-के माध्यम से वह अपने भीतर के प्रत्येक कर्मबन्ध, स्मृति और अहंकार को जला देता है। पुनर्जन्म, जो कर्मों की ऋंखला के रूप में आत्मा को बार-बार लौटा लाता है, अघोरी के लिए कोई देवी-देवताओं का वरदान नहीं, बल्कि माया का बंधन है। अघोरी उस बंधन को साधना द्वारा तोड़ता है, और मृत्यु के वास्तविक अनुभव से अपने भीतर यह स्थापित करता है कि आत्मा मुक्त है-कर्मों से नहीं, बल्कि चेतना से जुड़ी हुई है।

इस साधना में जब साधक शव पर बैठकर ध्यान करता है, और शव को न जीवन का प्रतीक मानता है न अंत का, तब उसमें यह अनुभूति होती है कि "मैं न जन्मा हूँ, न मरता हूँ।" यह वाक्य किसी वेदांत की परिकल्पना नहीं, बल्कि प्रत्यक्ष भाव है जो साधक के भीतर मृत्यु की लहरों में उठता है। पुनर्जन्म तब तक अपरिहार्य है जब

तक आत्मा कर्मों के गणित में उलझी रहती है। लेकिन अघोरी, जो हर सांस में मृत्यु की उपस्थिति को स्वीकार कर चुका है, उस गणित से परे निकल जाता है। वह आत्मा को एक ऐसी स्थिति में लाकर खड़ा करता है जहां से न कोई नया जन्म होता है, न कोई अंत-केवल शुद्ध उपस्थिति, शुद्ध अनुभव और शुद्ध चेतना होती है। यही अघोरी साधना का परम फल है, और यही मृत्यु और पुनर्जन्म की अवधारणाओं के बीच उसकी एकमात्र यथार्थ दृष्टि है।

शमशान: मृत्यु का पार्थिव केंद्र नहीं, आत्मा की शुद्धि का प्रवेशद्वार

शमशान अघोरियों के लिए केवल मृतकों के अंतिम संस्कार का स्थान नहीं है, बल्कि वह आध्यात्मिक उत्कर्ष का वह शिखर है जहाँ साधक मृत्यु के पार्थिव रूप को भेद कर आत्मा के दिव्य स्वरूप से परिचित होता है। यहाँ पर की गई साधनाएँ सिर्फ बाह्य क्रियाएँ नहीं होतीं, बल्कि साधक की अंतरात्मा में ऐसी गूढ़ चेतना का संचार करती हैं जो उसे सभी प्रकार के द्वैतों से परे ले जाती है। चिताओं की अग्नि, विघटित होती देहों की गंध और मौन में व्याप्त मृत्यु की प्रतीति, अघोरी साधक को उस सत्य से रूबरू कराती है जिसे सामान्य मनुष्य टालता है-कि देह क्षयशील है, परंतु आत्मा अविनाशी। इस साक्षात्कार की तीव्रता में साधक धीरे-धीरे शरीर, इंद्रिय और मन के मोह को त्यागकर स्वयं को आत्मा के रूप में स्वीकार करता है।

शमशान की इस प्रयोगशाला में साधक न केवल कपाल, अस्थि या भस्म से बने उपकरणों का प्रयोग करता है, बल्कि वेदना और विवेक के उस बिंदु तक पहुंचता है, जहाँ मृत्यु केवल एक स्थूल प्रक्रिया नहीं बल्कि आत्मा की असल उड़ान का संकेत होती है। जब साधक शव के समीप बैठकर अपनी साँसों को नियंत्रित करता है, तो वह देह का विलोपन और आत्मा का उद्भव एक साथ अनुभव करता है। यह साधना उसे यह सिखाती है कि मृत्यु से डरने की बजाय उससे साक्षात्कार कर लेना ही मोक्ष की ओर पहला कदम है। इसलिए शमशान अघोरी के लिए नकारात्मकता नहीं, बल्कि निर्विकल्प बोध का वह क्षेत्र है जहाँ आत्मा का पुनरुद्धार होता है-निर्भय, निर्विकार और निर्व्याज।

मृत शरीरों का तांत्रिक उपयोग और मृत्यु का उत्सव

अघोरी साधना में मृत शरीरों का प्रयोग केवल प्रतीकात्मक या यंत्रवत साधन नहीं है, बल्कि आत्मा की गहराइयों में उतरने का सीधा और उग्र साधन है। शव-साधना, कपाल पूजा, और अस्थियों के माध्यम से साधक मृत्यु से प्रत्यक्ष संवाद स्थापित करता है, जहाँ वह न केवल शरीर की क्षणिकता को अनुभव करता है, बल्कि ब्रह्म से आत्मा के संबंध को भी प्रत्यक्ष जानता है। मृत शरीर को अपवित्र नहीं, बल्कि ब्रह्म की छाया माना जाता है-ऐसा शरीर जो अपने समस्त सांसारिक गुणों से मुक्त हो चुका है और अब केवल एक शुद्ध माध्यम बन गया है। साधक जब इस शरीर को सामने रखकर ध्यान

करता है, तो वह अपनी चेतना को उस बिंदु तक पहुंचाता है जहाँ जीवन और मृत्यु दोनों समान प्रतीत होते हैं, और आत्मा इन दोनों से परे अपने शुद्ध स्वरूप में प्रतिष्ठित होती है।

मृत्यु का यह साक्षात्कार अघोरी के लिए भय या दुःख का कारण नहीं, बल्कि एक आनंदोत्सव है-एक परमानंद की अवस्था जिसमें मृत्यु का आलिंगन आत्मज्ञान का प्रवेशद्वार बन जाता है। अघोरी जब शव के सामने नृत्य करता है या उसकी राख से स्नान करता है, तो यह कोई विकृति नहीं, बल्कि एक आध्यात्मिक स्वीकृति है कि मृत देह के भीतर भी चेतना की झंकार है। यह दृष्टिकोण अघोरी साधना को केवल रहस्यमय नहीं, बल्कि मुक्तिप्रद और व्यावहारिक बनाता है। जहाँ सामान्य समाज मृत्यु से भागता है, वहीं अघोरी उसे गले लगाकर उस अंतिम सत्य को आत्मसात करता है जो आत्मा को पुनर्जन्म से मुक्त कर ब्रह्म में विलीन कर देता है। मृत्यु उनके लिए अंत नहीं, बल्कि आत्मा की अगली यात्रा का महोत्सव है-वह क्षण जहाँ भस्म से ब्रह्म की ओर पथ प्रशस्त होता है।

अध्याय 26:
शमशान भैरवी और अघोरियों का संबंध

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि: प्राचीन काल से शमशान भैरवी और अघोरियों का संबंध

शमशान भैरवी और अघोरियों का संबंध अत्यंत प्राचीन और तांत्रिक परंपरा में गहराई से निहित है, जिसकी जड़ें कपालिका संप्रदाय में मिलती हैं। कपालिक, जो चौथी से आठवीं शताब्दी के मध्य भारत में सक्रिय हुए, शैव उपासना की एक अतिचारिक शाखा माने जाते थे। इनकी साधना पद्धतियाँ आम सामाजिक और धार्मिक मान्यताओं के विपरीत थीं-वे शमशान में साधना करते थे, मानव खोपड़ियों का प्रयोग करते थे, और सामाजिक वर्जनाओं का अतिक्रमण कर आत्मज्ञान का मार्ग खोजते थे। कपालिकों की यह परंपरा बाद में अघोर साधना में रूपांतरित हुई, जहाँ शमशान को न केवल मृत्यु का प्रतीक माना गया, बल्कि उसे जीवन, मृत्यु और पुनर्जन्म की त्रयी का प्रवेशद्वार भी माना गया। इसी क्रम में अघोरी परंपरा का सुदृढ़ आधार बना और शमशान भैरवी इस परंपरा की एक केंद्रीय चेतना के रूप में प्रतिष्ठित हुई।

बाबा कीनाराम, जिन्हें अघोरी पंथ का संस्थापक माना जाता है, उन्होंने काशी के किनारे स्थित क्रीं कुंड को अपना साधना स्थल बनाया और भैरवी की उपासना को एक उच्चतम साधना पथ घोषित

किया। उनकी दृष्टि में भैरवी केवल देवी नहीं थीं, बल्कि एक ऐसी तांत्रिक शक्ति थीं जो साधक को "अघोर" स्थिति तक पहुँचने का मार्ग देती थीं-जहाँ कोई भेद नहीं, कोई द्वैत नहीं, और कोई सामाजिक रेखा नहीं होती। उन्होंने अपने अनुयायियों को शमशान को तपस्थली बनाने, मृत शरीरों से भय न करने, और भैरवी के माध्यम से आत्मज्ञान की यात्रा को अपनाने की शिक्षा दी। इस ऐतिहासिक चेतना ने शमशान भैरवी को अघोर साधना की रीढ़ बना दिया, जिससे वह महज एक देवी नहीं बल्कि सांस्कृतिक प्रतिरोध और तांत्रिक उत्कर्ष की प्रतीक बन गई।

आध्यात्मिक संबंध: भैरवी को अघोरियों की प्रमुख देवी के रूप में मान्यता

अघोरी साधना का मूल तत्त्व है "अघोर"-अर्थात वह स्थिति जो न घृणित हो, न भयावह, न सामाजिक रूप से अस्वीकार्य। इस अघोर तत्त्व की सजीव मूर्ति शमशान भैरवी मानी जाती हैं। अघोरियों के लिए भैरवी केवल उपास्य देवी नहीं हैं, वे चेतना की वह रूपांतरकारी शक्ति हैं जो साधक को सामाजिक, मानसिक, और आत्मिक बंधनों से मुक्त कर पूर्णत्व की ओर ले जाती हैं। शमशान में स्थित भैरवी की उपस्थिति मृत्यु के भय को भंग करने, शरीर के प्रति आसक्ति को समाप्त करने, और आत्मा के वास्तविक स्वरूप को अनुभव करने का माध्यम बनती है। अघोरी मानते हैं कि शमशान में साधना करने से और विशेषकर भैरवी के स्वरूप पर ध्यान केंद्रित

करने से वे उस ब्रह्म-सत्ता से एकात्म हो सकते हैं, जो सभी द्वैतों से परे है।

भैरवी की अघोरी साधनाएँ-जैसे शवसाधना, खोपड़ी साधना, रक्त और राख में ध्यान-अघोरी साधक को समाज द्वारा स्थापित सभी सीमाओं से परे ले जाती हैं। यह साधना केवल क्रिया नहीं, बल्कि आत्म-विसर्जन की प्रक्रिया होती है, जिसमें साधक अपनी देह, मन और बुद्धि की सीमाओं को पार करता है। भैरवी की यह रूपात्मक शक्ति उसे कालातीत अनुभव प्रदान करती है, जहाँ वह मृत्यु से परे के सत्य को देख सकता है। यही कारण है कि भैरवी अघोरियों के लिए मात्र शक्ति की अधिष्ठात्री नहीं, बल्कि मोक्ष की दायिनी हैं। वे जीवन और मृत्यु के चक्र को पार करने की कुंजी हैं और अघोरी साधना की सर्वोच्च उपलब्धि-अद्वैत ब्रह्म के साक्षात्कार-की प्रथम सीढ़ी। इस प्रकार, शमशान भैरवी और अघोरियों का आध्यात्मिक संबंध परंपरा, साधना और अनुभव की त्रयी में गहराई से बंधा है।

साझा प्रतीक: दोनों में प्रयुक्त समान प्रतीकों का विश्लेषण

शमशान भैरवी और अघोरी साधना पद्धति में प्रयुक्त प्रतीकों का गहरा समानार्थक और तांत्रिक महत्व है, जो केवल पूजात्मक या सांस्कृतिक नहीं, बल्कि आत्मबोध की जटिल प्रक्रियाओं से जुड़े हुए हैं। सबसे प्रमुख प्रतीक है खोपड़ी *(कपाल)*, जो भैरवी के कंठहार के रूप में दिखाई देती है और अघोरी साधकों द्वारा पीने के पात्र (कप) या आभूषण के रूप में प्रयुक्त होती है। यह खोपड़ी नश्वरता की

स्वीकृति और 'शिव ही मृत्यु है 'की अवधारणा की पुष्टि करती है। दूसरा प्रतीक है भस्म, जिसे भैरवी अपने शरीर पर धारण करती हैं और अघोरी अपने पूरे शरीर पर लगाते हैं। यह भस्म न केवल शव के दहन की स्मृति है, बल्कि उसे धारण करना सामाजिक शुद्धता के ढकोसलों से विद्रोह और आत्मा की शाश्वतता को स्वीकार करने का कृत्य भी है। इसके माध्यम से साधक स्वयं को न केवल मृत्यु के भय से मुक्त करता है, बल्कि जीवन-मरण के द्वैत से ऊपर उठकर तत्त्वदर्शी दृष्टिकोण को प्राप्त करता है।

इसी प्रकार, शव और रक्त के प्रतीक भी दोनों परंपराओं में केन्द्रीय भूमिका निभाते हैं। भैरवी के रूपों में प्रायः शव के ऊपर बैठी देवी, उनके विकृत चेहरे, खुले बाल, और रक्त से भरे पात्र दर्शाए जाते हैं, जो कि मृत्यु, पीड़ा और अंधकार को आत्मज्ञान का साधन बनाने की ओर संकेत करते हैं। अघोरी इन्हीं प्रतीकों के माध्यम से शव पर ध्यान, रक्त का अर्पण और शवमेडिटेशन जैसे अभ्यासों द्वारा चेतना के गहरे स्तरों तक पहुँचने का प्रयास करते हैं। शमशान स्थल स्वयं एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रतीक बनकर उभरता है-भैरवी का निवास और अघोरी का साधना स्थल-जहाँ मृत्यु और पुनर्जन्म का चक्र व्यावहारिक रूप से अनुभव किया जाता है। यह स्थल साधक को चेतना के उस क्षेत्र में ले जाता है जहाँ अहंकार, समाज और शरीर-आत्मसात-हो जाते हैं, और केवल शुद्ध आत्मचेतना शेष रहती है। इस प्रकार, ये प्रतीक न केवल परंपरा का हिस्सा हैं, बल्कि आत्मबोध के रहस्यमयी मार्ग के जीवंत संकेत हैं।

पूजा पद्धति: अघोरियों द्वारा भैरवी की गूढ़ विधियाँ

अघोरियों की पूजा विधियाँ पारंपरिक हिंदू अनुष्ठानों से पूर्णतः भिन्न, रहस्यमयी और तांत्रिक परंपरा में आधारित होती हैं, जहाँ चेतना को जागृत करने के लिए मृत्यु, विकृति और शमशान का प्रयोग किया जाता है। पूजा की शुरुआत मृत्युशुद्धि प्रक्रिया से होती है, जिसमें साधक स्वयं को शव की भस्म, रक्त, राख और शमशान की मिट्टी से ढँक लेता है। इस प्रक्रिया का उद्देश्य साधक को अपने शरीर, जाति, सामाजिक पहचान और मानसिक सीमाओं से पूर्णतः मुक्त कर देना होता है, जिससे वह भैरवी की ऊर्जा से पूर्णरूपेण जुड़ सके। इसके पश्चात वह कपालमाला धारण करता है, शमशान की मिट्टी या राख से तिलक करता है, और शरीर को उन तत्त्वों से समरस करता है जिन्हें सामान्यतः त्याज्य माना जाता है।

मुख्य अनुष्ठान में साधक एक ताजे शव के पास बैठता है, या उसकी छाती पर आसन जमाता है और वहां से "ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं श्मशान भैरवाय नमः" जैसे बीज मंत्रों का उच्चारण करता है। यह उच्चारण साधक के भीतर उपस्थित ऊर्जा को जाग्रत करता है और भैरवी की तांत्रिक शक्ति को आत्मसात करने में सहायक बनता है। उसके पश्चात शव के ऊपर ध्यान केंद्रित कर शवाधिष्ठान साधना की जाती है, जिसमें साधक मृत्यु के प्रतीक के माध्यम से जीवन के अंतिम सत्य को जानने और आत्मा की अमरता का बोध करने का प्रयास करता है। अंतिम चरण में होता है क्षयकर्मा, यानी शव का

विसर्जन या उसका पूर्णतः अग्नि में विलय, जिससे साधक मृत्यु को स्वीकारता है, उसके पार जाता है और मोक्ष की ओर अग्रसर होता है। यह सम्पूर्ण प्रक्रिया एक ऐसे तीव्र और भयंकर आध्यात्मिक अभ्यास का रूप है जिसमें जीवन और मृत्यु का संपूर्ण द्वंद्व समाप्त हो जाता है और केवल ब्रह्मस्वरूप अनुभूति शेष रह जाती है।

मंत्र और तंत्र: अघोरियों द्वारा उच्चारित शक्ति मंत्र

अघोरी साधना में मंत्र केवल ध्वनियाँ नहीं होतीं, बल्कि वे एक गूढ़ और जीवंत ऊर्जा का वहन करने वाले तांत्रिक उपकरण होते हैं, जो साधक की चेतना को परिवर्तित कर उसे दिव्यता की ओर अग्रसर करते हैं। इन मंत्रों का मूल उद्देश्य न केवल देवी भैरवी की कृपा प्राप्त करना होता है, बल्कि साधक के भीतर निहित चेतनात्मक स्तरों-चक्रों-को जाग्रत कर ब्रह्मांडीय ऊर्जा के साथ एकात्म प्राप्त करना भी होता है। अघोरियों द्वारा उपयोग किए जाने वाले मंत्रों में "ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो नमः," "ॐ ह्रीं भैरव्वयै नमः," और "ॐ क्रीं काली कालीलायै नमः" जैसे मंत्र प्रमुख हैं। इन मंत्रों की जड़ें रुद्र यामल, काली तंत्र और भैरव तंत्र जैसे प्राचीन ग्रंथों में हैं, और इन्हें किसी सामान्य जाप की तरह नहीं बल्कि विशिष्ट नियमों, स्थानों, और समय चक्रों में उच्चारित किया जाता है। प्रत्येक मंत्र विशिष्ट बीजाक्षर-ह्रीं, क्रीं, श्रीं आदि-से युक्त होते हैं, जो स्वयं में ऊर्जा के स्वरूप हैं।

अघोरी इन मंत्रों का जप चक्रानुसार करते हैं, अर्थात मूलाधार से लेकर सहस्रार तक की अंतःशक्ति नाड़ियों में मंत्रों की स्पंदनशील ऊर्जा का संचार करते हैं। जाप के लिए प्रयोग की जाने वाली माला, साधक के चित्त को स्थिर रखने के साथ-साथ मंत्र तरंगों को स्थूल से सूक्ष्म में परिवर्तित करने का माध्यम बनती है। जाप की गति, उच्चारण की लय, और साधक की आंतरिक वृत्ति-ये सब मिलकर एक ऊर्जा क्षेत्र निर्मित करते हैं जिसे तांत्रिक परिभाषा में रस कहा गया है। 'रस 'का आशय उस भावमय, संवेदनात्मक ऊर्जा से है जो मंत्र से उत्पन्न होकर साधक की आत्मा में प्रविष्ट होती है और उसे विराट चेतना के साक्षात्कार की ओर ले जाती है। साधना के विशिष्ट कालों में साधक तरंग यंत्र या संकल्प सूत्र का प्रयोग करता है, जिनमें गूढ़ रेखांकन और मन्त्रात्मक गूंज होती है। ये यंत्र साधक की चेतना को सुसंगत और एकाग्र करते हैं, जिससे वह केवल देवी की कृपा ही नहीं, बल्कि अपने आत्मस्वरूप को भी पहचान सके। इस प्रकार अघोरी साधना में मंत्र केवल वाणी से नहीं निकलते, वे साधक के रोम-रोम से फूटते हैं और चेतना में उतरकर उसे भैरवी के पथ पर आरूढ़ करते हैं।

साधना स्थल: शमशान की आध्यात्मिक महत्ता

शमशान, जो सामान्यतः भय, मृत्यु और नकारात्मकता का प्रतीक समझा जाता है, अघोरियों और शमशान भैरवी की साधना में ब्रह्मांडीय सत्य का प्रवेश द्वार माना जाता है। यह स्थल केवल मृत्यु

का नहीं, बल्कि चेतना के उच्चतम रूपांतरण का क्षेत्र है। अघोर परंपरा में यह विश्वास है कि शमशान में पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, और आकाश-पाँचों महाभूत सर्वाधिक तीव्र और प्रबल रूप में सक्रिय होते हैं, जिससे साधक को इन तत्त्वों की सहायता से अपनी स्थूल चेतना से उठकर सूक्ष्म और कारण शरीर के अनुभव तक पहुँचने का अवसर मिलता है। शमशान भैरवी स्वयं इस स्थल की अधिष्ठात्री मानी जाती हैं, और वे साधक को मृत्यु के भय को समाप्त कर आत्मा की अखंडता का अनुभव कराती हैं।

अघोरी यहाँ शवाधिष्ठान साधना, खोपड़ी चढ़ाना, मृत अंगों पर ध्यान केंद्रित करना, जैसी तांत्रिक प्रक्रियाओं के माध्यम से यह अनुभव करते हैं कि शरीर नश्वर है, पर आत्मा अजर और अमर है। शमशान का हर दृश्य-जलता हुआ शव, उठती राख, बहता रक्त, बिखरी हड्डियाँ-साधक के भीतर माया के भ्रम को चूर कर आत्मा की शुद्धता की झलक देता है। इस स्थल की विशेषता यह है कि यहाँ कोई सामाजिक भेदभाव नहीं टिकता-न जाति, न धर्म, न शुद्धता-अशुद्धता का भ्रम-केवल सत्य और मृत्यु की समता का दर्शन होता है। अघोरी इसी समता के क्षण में भैरवी का साक्षात्कार करते हैं, जो साधक को "अघोर"-अर्थात वह स्थिति जो भय, द्वेष, विकार और द्वैत से परे है-की ओर ले जाती है।

यह स्थल साधक के लिए तप, परीक्षा और आत्म-विलयन का संगम बनता है। वह यहाँ अपने जीवन के हर बंधन को शव के समान

समाप्त होते देखता है और एक नई चेतना के साथ पुनर्जन्म पाता है- यह पुनर्जन्म शारीरिक नहीं, बल्कि आत्मिक होता है। इसी कारण शमशान अघोरी साधना का सर्वोच्च तीर्थ बन जाता है, जहाँ साधक मृत्यु को गुरु मानकर जीवन्मुक्ति की ओर बढ़ता है। यह स्थल तांत्रिक साधना की पराकाष्ठा और भैरवी की दिव्य सत्ता का जीवंत प्रतीक है।

गुरु परंपरा: अघोरी गुरुओं द्वारा भैरवी की शिक्षाएँ

अघोरी परंपरा में गुरु का स्थान केवल एक अध्यापक का नहीं होता, बल्कि वह एक आध्यात्मिक वाहक, चेतना का संवाहक और तांत्रिक पथ का संरक्षक होता है। शमशान भैरवी की साधना जितनी रहस्यमयी और शक्तिशाली है, उतनी ही जोखिमभरी और विचलनकारी भी हो सकती है यदि साधक बिना योग्य गुरु के मार्गदर्शन के इस साधना में प्रविष्ट हो। भैरवी को अत्यंत प्रचंड, उग्र और विवेकी शक्ति के रूप में देखा जाता है, जो साधक की चेतना के हर स्तर को उधेड़ कर पुनः निर्मित करती है। ऐसे में गुरु ही वह मध्यस्थ होता है जो साधक को भैरवी की तेजस्वी उपस्थिति को सहन करने के योग्य बनाता है, उसे साधना की प्रत्येक स्थिति, संकट और विकल्प का सामना करने हेतु मानसिक, तांत्रिक और आत्मिक दृष्टि से तैयार करता है।

गुरु, अपने योगबल और अनुभूत सिद्धियों के आधार पर शिष्य की प्रकृति, दोष, अभिलाषा और पूर्व संस्कारों को जानकर यह

निर्धारित करता है कि वह साधक किस तंत्र के लिए उपयुक्त है-क्या वह शवसाधना के लिए तैयार है या केवल मंत्रजप तक सीमित रहना चाहिए। वह पहले शिष्य को मृत्यु की प्रक्रिया, शमशान की ऊर्जाओं, और शरीर की सीमाओं के विषय में सूक्ष्म प्रशिक्षण देता है। भैरवी की साधना में गुरु बीज मंत्र-जैसे "ह्रीं," "क्रीं," "काली," "भैरवी"-का रहस्य खोलता है और बताता है कि किस मंत्र का उपयोग किस साधनास्थल, चक्र या काल में किया जाना चाहिए। यह शिक्षा मौखिक नहीं होती-गुरु अपने शिष्य को अनुभवों के माध्यम से, समाधि और तांत्रिक क्रियाओं में भागीदार बनाकर उसे दीक्षा देता है। कभी-कभी यह शिक्षा एक एकांत साधना में, शव के निकट, श्मशान की भयंकरतम स्थिति में दी जाती है, जहाँ शिष्य का आत्मबल, भय की सीमा और साधना की निष्ठा की परख होती है। गुरु के बिना यह साधना केवल शारीरिक और मानसिक विनाश का कारण बन सकती है। इसलिए अघोरी परंपरा में गुरु को शिष्य का जन्मदाता नहीं, पुनर्जन्मदाता माना जाता है-वह जो शिष्य की चेतना को नष्ट कर पुनः निर्मित करता है, और उसे भैरवी के स्वरूप से एकाकार कर देता है।

आध्यात्मिक लक्ष्य: मुक्ति और आत्म-साक्षात्कार में भैरवी की भूमिका

शमशान भैरवी की साधना, अघोरियों के लिए केवल किसी देवी की पूजा नहीं, बल्कि जीवन और मृत्यु की सीमाओं को लांघने

की एक चेतनात्मक प्रक्रिया होती है। अघोरी परंपरा में मुक्ति का अर्थ केवल आत्मा का परमात्मा में विलय नहीं है, बल्कि यह एक ऐसी अवस्था है जहाँ साधक न केवल देह के बंधनों से मुक्त होता है, बल्कि मन, वासना, भय, सामाजिक द्वैत, और आत्म-विस्मृति के सभी स्तरों को पार करता है। इस प्रक्रिया में भैरवी न केवल शक्ति रूपा हैं, बल्कि वे मार्गदर्शक, परिक्षक और अंततः साधक की स्वयं की छवि बन जाती हैं। वे साधक को बार-बार मृत्यु के दर्पण में झाँकने के लिए विवश करती हैं ताकि वह अपने भीतर छिपे उस अंधकार को पहचान सके जिसे वह जीवन भर दूसरों में देखता रहा था। जब साधक इस अंधकार को स्वीकारता है, तभी वह आत्मबोध की प्रथम सीढ़ी पर आरूढ़ होता है।

अघोरी भैरवी को माँ के रूप में स्वीकारते हैं-वह माँ जो लोरी नहीं, शमशान का स्वर देती है; जो आँचल नहीं, खोपड़ियों की माला पहनाती है; जो आश्रय नहीं, तप का विकराल मार्ग देती है। परंतु यही माँ साधक के भीतर छिपे भय को जलाकर उसे अद्वैत की स्थिति तक ले जाती है-जहाँ कोई भेद नहीं, कोई अलगाव नहीं, केवल 'मैं ही ब्रह्म हूँ 'की अनुभूति होती है। यह अनुभूति ही आत्म-साक्षात्कार है, जहाँ साधक जानता है कि न वह शरीर है, न मन, न कोई सीमित आत्मा, बल्कि वही भैरवी है, वही ऊर्जा है, वही पूर्ण है। इस स्थिति में पहुँचना साधक के लिए एक महायात्रा होती है जिसमें वह बार-बार टूटता है, डरता है, पर भैरवी की कृपा से बार-बार पुनः खड़ा

होता है। इस रूपांतरण में भैरवी उसे केवल मुक्त नहीं करतीं, बल्कि उसे वही बना देती हैं जो वह सदा से था-शुद्ध, निर्भय, और अपरिमेय।

इसलिए अघोरी साधना में भैरवी को केवल एक साध्य नहीं, बल्कि साधन भी माना गया है-वही लक्ष्य, वही मार्ग, और वही सत्ता। उनका प्रत्येक रूप-वह चाहे रक्तमुग्ध हो या शवासीन-एक ही संदेश देता है: "मुक्ति मृत्यु से नहीं, मृत्यु में उतरकर ही प्राप्त होती है।" यही वह गहन तत्व है जो अघोरी साधना को अन्य सभी साधनाओं से अलग और अलौकिक बनाता है।

सामाजिक धारणा: समाज में दोनों के प्रति समान धारणाएँ

शमशान भैरवी और अघोरियों को लेकर समाज में प्राचीन समय से ही भय, रहस्य और अस्वीकृति की एक समान मानसिकता देखने को मिलती है। यह धारणा मुख्यतः उनके शमशान से जुड़ाव, मृत्यु के निकट संपर्क, और सामाजिक रीति-नीतियों के विपरीत व्यवहार के कारण बनी है। जहां एक ओर भैरवी को एक उग्र, भयानक और तांत्रिक देवी के रूप में देखा गया है, वहीं अघोरियों को भी विक्षिप्त, डरावने और समाजविरोधी माना गया है। यह दृष्टिकोण विशेषकर उन परंपराओं से जुड़ा है, जो मृत्यु को अशुद्ध, शोकपूर्ण और अपवित्र मानती हैं।

लेकिन इस धारणा के पीछे असली सत्य को समझना जरूरी है। भैरवी और अघोरी दोनों ही समाज के उस पक्ष को दर्शाते हैं जिसे सामान्यतः अनदेखा किया जाता है-मृत्यु, भय, और आत्मा की

सच्चाई। दोनों ही सीमाओं को पार करने का संदेश देते हैं-भैरवी अपने रूप और साधना के माध्यम से और अघोरी अपने जीवन और दृष्टिकोण के माध्यम से। समाज में इनकी छवि को रहस्यमयी या खतरनाक बनाकर प्रस्तुत करना, उस अज्ञान का परिणाम है जो मृत्यु और आध्यात्मिक उग्रता को स्वीकारने से डरता है।

समकालीन समय में यह धारणा धीरे-धीरे बदल रही है। भैरवी को अब महिला सशक्तिकरण, ऊर्जा और आत्म-प्रबोधन की देवी के रूप में स्वीकार किया जा रहा है। वहीं, अघोरियों की साधना को मानसिक शक्ति, पर्यावरण संरक्षण, और सामाजिक सेवा से जोड़कर भी देखा जा रहा है। फिर भी, एक गहरा संकोच और दूरी अभी भी सामान्य जनमानस में विद्यमान है। यही कारण है कि अघोरी और भैरवी की साधना अभी भी सीमित वर्गों तक सिमटी हुई है, लेकिन जागरूकता के साथ यह परंपरा धीरे-धीरे व्यापक सामाजिक समझ का हिस्सा बन रही है।

विवाद और स्वीकृति: समाज का दृष्टिकोण

शमशान भैरवी और अघोरियों के आधुनिक सहयोग ने समाज में जटिल भावनात्मक-धार्मिक प्रतिक्रियाएँ पैदा की हैं। एक ओर अघोरियों को एक सभ्य समाज द्वारा आध्यात्मिक और चिकित्सीय दृष्टिकोण से सराहा जा रहा है, और दूसरी ओर इनकी पूजा विधियों को लेकर आलोचना भी तेज़ हुई है। मीडिया रिपोर्ट्स में स्थानीय राजनेताओं पर अघोरी पूजा में शामिल होने के आरोप गंभीरता से

उठे, जिससे यह स्पष्ट होता है कि इस संबंध की स्वीकृति अभी विवादास्पद ही है।

दूसरी ओर, अपनत्व की भावना से कुछ आस्थावान समुदाय इसे मानव रचनात्मकता और तीव्र आध्यात्मिक साधना के रूप में स्वीकार करते हैं। अधिकांश हिंदू इस पंथ को "असामान्य" कहकर स्वीकार करते हैं; वे उन्हें हानिरहित और आत्म-साक्षात्कार की दिशा में प्रेरित साधकों के रूप में देखते हैं। इस निष्कर्ष की पुष्टि करते हुए एक अन्य स्रोत कहता है कि अघोर साधना का उद्देश्य किसी भी मौजूद वस्तु में शिव को पहचानना और सामाजिक विरोधाभासों को दूर करना है, न कि हिंसा या अपराध को बढ़ावा देना।

हालांकि, समाज में मृतक यंत्रणा को लेकर घृणा और भय भी व्याप्त है। मानव अवशेषों का प्रयोग, नरमुंड की माला, शवभक्षण आदि अभ्यास निंदनीय माने जाते हैं। लेकिन अभी यह समझ सामान्य लोगों द्वारा माना जा रहा है कि अघोरियों को कानून की सीमा में रहकर काम करते रहने की स्वतंत्रता है, यदि वे किसी भी तरह का अपराध या हत्या करते हैं तो उस पर कानूनी कार्रवाई भी की जाती है।

इस प्रकार विवाद की परिधि केवल नैतिकता ही नहीं, बल्कि सामाजिक-सांस्कृतिक स्वीकृति और कानूनी नियंत्रण की भी हद तक फैली हुई है, जो इस संबंध को और जटिल बना देती है।

अध्याय 27:
अघोरी दर्शन में शमशान भैरवी की भूमिका

दर्शन का आधार: अघोरी दर्शन में भैरवी की केंद्रीय स्थिति

शमशान भैरवी को अघोरी दर्शन में केवल एक देवी नहीं माना जाता, बल्कि वह संपूर्ण चेतना की रूपरेखा में एक अनिवार्य तत्व के रूप में प्रतिष्ठित हैं। अघोरी मान्यता के अनुसार भैरवी वह शक्ति हैं जो जन्म और मृत्यु के द्वैत से परे की स्थिति में साधक को पहुँचाती हैं। उनका स्थान अघोरी तंत्र में इतना केंद्रीय है कि कोई भी साधना, विशेषकर श्मशान साधना, उनकी बिना अनुमति या अनुग्रह के आगे नहीं बढ़ सकती। भैरवी को उस ऊर्जा के रूप में देखा जाता है जो समस्त सृष्टि के संहार और पुनर्निर्माण के मध्य स्थित है। जब साधक मृत्यु के भय को पार करता है, आत्मा और माया के भेद से ऊपर उठता है, तब वह भैरवी के साक्षात्कार के योग्य होता है। उनका यह केंद्रीय स्थान किसी पदवी के कारण नहीं, बल्कि उस गहन आध्यात्मिक ऊर्जा के कारण है जो वह अघोरी परंपरा में संचारित करती हैं।

इस दर्शन का मूलाधार यह है कि शमशान भैरवी की आराधना साधक को 'भयातीत 'करती है, अर्थात वह उस स्तर तक पहुँचता है जहाँ जीवन-मृत्यु, शुभ-अशुभ, पाप-पुण्य जैसी अवधारणाएँ अर्थहीन हो जाती हैं। अघोरी यह मानते हैं कि जब तक साधक भैरवी

की छाया में नहीं आता, वह स्वयं को पूर्ण रूप से नग्न-अहंकारहीन, वासनारहित और शुद्ध-नहीं बना सकता। भैरवी की उपस्थिति एक कसौटी की तरह होती है, जो साधक की पात्रता की परीक्षा लेती है। इसी कारण अघोरी पथ पर उनका स्थान केंद्रीय है-न केवल देवी के रूप में, बल्कि एक जाँचने वाली, शिक्षिका, और संहारिणी शक्ति के रूप में भी। वह साधक को भय से मुक्ति देकर, उसे उस चेतना तक ले जाती हैं जहाँ द्वैत समाप्त हो जाता है। उनका यह स्थान केवल अघोरी मत तक सीमित नहीं, बल्कि समस्त तांत्रिक परंपरा में उनकी केंद्रीयता को मान्यता प्राप्त है।

शक्ति का प्रतीक: भैरवी को शक्ति और ऊर्जा के रूप में देखना

शमशान भैरवी को अघोरी केवल एक देवी रूप में नहीं, बल्कि पराशक्ति के रूप में स्वीकार करते हैं। वह साकार रूप में भी पूज्य हैं और निराकार ऊर्जा के रूप में भी अनुभूत होती हैं। भैरवी की प्रतीकात्मक व्याख्या में उनका जटाजूट, विकराल नेत्र, रक्तसिक्त जिह्वा, और खप्पर धारण करना केवल आभ्यंतर चित्र नहीं, बल्कि एक गूढ़ दार्शनिक संकेत है। यह रूप अघोरी साधक को यह स्मरण दिलाता है कि परमशक्ति वह है जो सृष्टि को गति देती है, मृत्यु को आलिंगन देती है, और चेतना को रूपांतरण की राह पर अग्रसर करती है। वह तमाम उन सीमाओं को भंग करने वाली ऊर्जा हैं जो समाज, शरीर और मन के स्तर पर साधक को बाँधती हैं। इस कारण, अघोरी

परंपरा में भैरवी को केवल शक्ति का प्रतीक नहीं, बल्कि चेतना की सम्पूर्ण मुक्ति का प्रवेश द्वार भी कहा गया है।

अघोरी साधना में 'शक्ति 'की अवधारणा केवल शक्ति के संचय तक सीमित नहीं है, बल्कि वह ऊर्जा का वह प्रवाह है जो साधक को सीमाओं से पार ले जाता है। शमशान, जहाँ भैरवी की उपस्थिति प्रबल मानी जाती है, स्वयं एक प्रतीक है-विनाश का, मुक्ति का, और शुद्धि का। वहाँ भैरवी की शक्ति वातावरण में उपस्थित होती है, और साधक उस ऊर्जा से संवाद करता है। यह संवाद शब्दों में नहीं, बल्कि आत्मा के स्तर पर होता है। यही कारण है कि भैरवी का ध्यान, उनकी मूर्ति या यंत्र नहीं, बल्कि ऊर्जा के रूप में आह्वान किया जाता है। यह ऊर्जा विकराल होते हुए भी ममत्वपूर्ण है, वह अज्ञान का संहार करती है और साधक को ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशित करती है। अघोरी इस शक्ति को ग्रहण करते हैं न केवल शारीरिक रूप से, बल्कि मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक स्तर पर। भैरवी की इस ऊर्जा के बिना कोई भी अघोरी साधना पूर्ण नहीं मानी जाती।

अद्वैत और भैरवी: अद्वैत दर्शन में भैरवी का स्थान

अघोरी दर्शन अद्वैत के सिद्धांत को मूल में रखता है, और भैरवी इस अद्वैत की अनुभूति का माध्यम बनती हैं। अद्वैत का अर्थ है-"न द्वितीय" यानी कोई दूसरा नहीं, केवल एक परमसत्ता, और शमशान भैरवी उस सत्ता की प्रत्यक्ष अनुभूति की चाबी मानी जाती हैं। भैरवी को 'त्रिकालसंध्ये 'की अधिष्ठात्री भी कहा गया है-वह समय, मृत्यु

और आत्मा के संधिकाल की साक्षात अधिपति हैं। जब अघोरी भैरवी की साधना करता है, वह वस्तुतः अपने भीतर स्थित द्वैत-देह और आत्मा, मोह और वैराग्य, भय और ज्ञान-इन सभी का क्षय करता है। भैरवी के साथ यह साधना साधक को उस अवस्था में पहुँचाती है जहाँ वह देखता है कि 'मैं और ब्रह्म 'कोई अलग सत्ता नहीं, बल्कि एक ही चेतना के आयाम हैं।

भैरवी इस बोध का केवल प्रतीक नहीं हैं, बल्कि साधक को अद्वैत की दशा तक पहुँचाने वाली सक्रिय शक्ति हैं। वह उस मौन की व्याख्या हैं जिसमें सभी प्रश्न शांत हो जाते हैं, वह उस अंधकार की रक्षक हैं जिसमें से प्रकाश का जन्म होता है। अघोरी भैरवी की उपासना से उस स्थिति को प्राप्त करता है जहाँ जीवन और मृत्यु एक अनुभव बन जाते हैं, शुभ और अशुभ का भेद समाप्त हो जाता है, और केवल 'वह 'शेष रह जाता है जो नित्य, निराकार और अपार है। यही अद्वैत है, और यही भैरवी का स्थान है-वह द्वैत को भंग कर, साधक को परब्रह्म के साथ एकरस कर देती हैं। इसीलिए, अघोरी साधना में भैरवी को 'परात्परा 'कहा गया है-जिससे आगे कोई अन्य नहीं।

मरण और पुनर्जन्म: भैरवी के माध्यम से मृत्यु की समझ

अघोरी परंपरा में मृत्यु केवल जैविक अंत नहीं, बल्कि चेतना के विस्तार और पुनरावृत्ति की एक शुरुआत है। शमशान भैरवी इस प्रक्रिया को एक गहन आध्यात्मिक यात्रा के रूप में संस्थापित करती

हैं, जो साधक को जन्म-मरण चक्र से ऊपर उठने की शक्ति प्रदान करती है। जब एक अघोरी साधक शमशान में भैरवी की उपासना करता है, तो वह मृत्यु के सामनें खड़ा होकर अपने भीतर गहरे भय और अनिश्चितता को पहचानता है और उसे अपनी चेतना के विस्तार का साधन बनाता है। यह यात्रा शारीरिक मृत्यु से कहीं दूर जाकर आंतरिक परिवर्तन की ओर ले जाती है, जहाँ आत्मा की शुद्धि होती है, और जीवित और मृत की सीमाएं धुंधली हो जाती हैं। भैरवी की साधना से साधक यह समझता है कि मृत्यु जीवन का पूरक तत्व है, न कि इसका विरोधी – और यह समझ उसे पुनर्जन्म के द्वार पर एक नये दृष्टिकोण से खड़ा करती है।

मरण और पुनर्जन्म की यह समझ भावनात्मक और दार्शनिक स्तर पर साधक को स्वतंत्र करती है। भैरवी की शक्ति ही उस संज्ञान को जन्म देती है, जिसके द्वारा साधक मृत्यु के भय को पार कर आत्मा को अनंत में विलीन करता है। शमशान का वातावरण, मृत शरीरों की उपस्थिति, और वहां की ऊर्जा पूजन स्थल को साधक के लिए एक प्रयोगशाला बनाते हैं, जहाँ वह भैरवी की कृपा से धीरे-धीरे माया से ऊपर उठता है। मरण की परिभाषा बदल जाती है-यह केवल देह का अंत नहीं, बल्कि आत्मा की नई अभिव्यक्ति का प्रारंभ है। यही बिंदु अघोरी दर्शन में भैरवी की महत्ता को आकार देता है – वह साधक को मृत्यु की ओर नहीं, बल्कि उस पार की ओर मोड़क कर ले जाती हैं।

नारी शक्ति: अघोरी दर्शन में नारीत्व का महत्व

अघोरी साधना में नारी रूप में भैरवी का अस्तित्व आद्य शक्ति का भौतिकीकरण है। शमशान भैरवी नारीत्व की वह सत्ता हैं जो न केवल रक्षात्मक और पोषणात्मक शक्ति प्रदान करती हैं, बल्कि संहारक, परिवर्तक ऊर्जा का प्रतीक भी हैं। अघोरी पथ में साधक को अहं, लज्जा, वासनाओं का त्याग करना होता है, और यह त्याग तभी संभव होता है जब भीतर की नारी शक्ति जागृत हो-जो भय, मोह, अहंकार सबको सहिष्णुता से पचा देती है। वह शक्ति जो साधक की आंतरिक कोमलताओं को संभालती है, दृढ़ता प्रदान करती है, और उसे आत्मसाक्षात्कार के मार्ग पर अग्रसर करती है।

इस संदर्भ में, भैरवी का रूपदर्शन नारीत्व का पूरक प्रतीक बन जाता है-यह एक शक्ति है जो मलिनता से निर्मलता तक, मूढ़ता से ज्ञान तक, मोह से मुक्ति तक ले जाती है। इस प्रक्रिया में साधक का मन नारी शक्ति से सहानुभूति करता है-और समझता है कि नारीत्व केवल ममता या कोमलता नहीं, बल्कि सर्वशक्तिमत्ता, योग्यता और संरक्षण का भी प्रतिमान है। अघोरी परंपरा का यह पहलू विशेष रूप से आधुनिक समय के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह नारी को केवल पूज्य रूप में नहीं, बल्कि वह शक्ति मान्यता प्रदान करता है जो समाज को पुनर्निर्मित कर सकती है।

तंत्र का दार्शनिक पक्ष: भैरवी के साथ तंत्र का संबंध

तंत्र दर्शन का हृदय 'एकात्मता और शक्ति की साक्ष्यात्मक अनुभूति 'है, और शमशान भैरवी इसे चारों ओर से समाहित करती हैं। अघोरी तंत्र में भैरवी का प्रयोग यंत्र, मंत्र, ध्यान, और समाधि सभी पहलुओं से गहनता से होता है। यंत्रों पर उनका चित्रण किसी भी तांत्रिक सिद्धि के मूल की ओर ले जाता है – यह सिक्के की मुद्रा है जो चेतना को पृथक और एकीकृत दोनों रूपों में अनुभव करने की क्षमता प्रदान करती है। मंत्र जप के माध्यम से साधक उस मूल ध्वनि तक पहुँचता है जो सृष्टि की आत्मा है। भैरवी की पूजा में प्रयुक्त तांत्रिक विधियाँ संपूरक ऊर्जा रूप में काम करती हैं, जिससे साधक 'शक्ति के स्रोत 'से सीधे जुड़ता है।

तांत्रिक दृष्टिकोण से भैरवी की साधना में गुरुवार संगत, उपवास, प्रायश्चित समेत अनेक आंतरिक व बाह्य क्रियाएं शामिल होती हैं, जो साधक को बहुस्तरीय अनुभूति और अंतर्मुखी चिंतन की ओर ले जाती हैं। इन विधियों का दार्शनिक आधार यह है कि आत्मा को बाधित करने वाले सभी अवरोध-जैसे अहंकार, मोह, लोभ, द्वेष-भैरवी की शक्ति द्वारा नष्ट होते हैं। यह नाश केवल प्रतीकों में नहीं होता, बल्कि आंतरिक स्तर पर एक बोधात्मक क्रांति उत्पन्न करता है। अंततः, तंत्र की यह संपूर्ण प्रक्रिया साधक को स्वयं के जाग्रत और निराकार स्वरूप के बोध तक पहुँचाती है, जो अघोरी दर्शन में मोक्ष की प्रमुख आवश्यकता है।

आध्यात्मिक मार्ग: भैरवी की कृपा से साधक की अध्यात्मिक प्रगति

अघोरी साधना में शम्शान भैरवी की कृपा को केवल किसी देवी की आराधना तक सीमित नहीं माना जाता, बल्कि इसे साधक के अध्यात्मिक उत्थान का अनिवार्य आधार माना जाता है। जब साधक आत्मा की खोज में शम्शान के अँधेरे में प्रवेश करता है, तो उसे चारों ओर से भय, अनिश्चितता, और माया के घूंघट मिलते हैं। भैरवी की कृपा वही दिव्य शक्ति है जो इन अँधेरों को प्रकाश में बदल देती है, जिससे साधक का मन शांत, स्पष्ट और आत्मनिर्भर बनता जाता है। इस शक्ति के अंतर्गत साधक की आत्म-साक्षात्कार की प्रक्रिया तेज होती है-वह अपने अहंकार, संदेह, और मोह को भैरवी के साथ संतुलित रूप से समझने लगता है। इससे न केवल चिंतना की गहराई बढ़ती है, बल्कि आत्मा का दृष्टिकोण भी निराकार और अविकार बनता जाता है।

भैरवी की कृपा साधक को प्रत्यक्ष दिव्यता से जोड़ती है, जिससे दर्शन का लक्ष्य-मायावी माया से ऊपर उठकर निर्विकार चेतना की प्राप्ति-आसान हो जाता है। साधक चरण-प्रतिचरण इस ऊर्जा को अनुभव करता है; पवित्र यंत्र, मंत्र, और भावनात्मक अनुराग के माध्यम से भैरवी की चेतना में विलीन होता है। जिससे साधना का भाव केवल तकनीकी प्रक्रिया न रहकर एक जीवंत, अनुभूति-प्रधान यात्रा बन जाती है। भैरवी की ऊर्जा साधक को सतचिंतन की ओर

मोड़ती है, जहां अंततः आत्मा की गहन शांति और स्थिरता प्राप्त होती है। इस प्रकार, शम्शान भैरवी साधक को माया से परे, ब्रह्मांडीय चेतना से जोड़ने वाली मार्गदर्शक शक्ति बनकर सुनिश्चित करती है कि साधना सिर्फ कर्मकांड ना रहकर प्रकाशमय आनंद और मुक्तिदायक यात्रा बने।

गुरु की भूमिका: भैरवी की शिक्षाओं को गुरु के माध्यम से प्राप्त करना

अघोरी परंपरा में गुरु को स्वयं भैरवी का प्रतिनिधित्व माना जाता है, क्योंकि वही उसे विद्याया से प्रभवित शक्ति का माध्यम बनकर सरलता से साधक तक पहुँचा पाता है। गुरु बुद्धिमत्ता, अनुभव, और समर्पण की शक्ति से शम्शान के अँधेरे में जाने वाले साधक को मार्गदर्शन करता है। भैरवी की शिक्षाएं शाब्दिक एवं सांकेतिक दोनों रूपों में होती हैं-मंत्र, यंत्र, समय, तीर्थ व साधन के चयन से लेकर जीवन दृष्टि तक। गुरु इन सभी पहलुओं को साधक के व्यक्तित्व, मानसिक स्थिति, और आध्यात्मिक स्थिति के अनुसार अनुकूलित करता है, जिससे साधना का मार्ग वाकई फलदायी और सुरक्षित बनता है।

शिष्य के जीवन में गुरु तब महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जब वह साधना में उलझन, मोहमाया, या आत्मशंका महसूस करता है। गुरु उस अवस्था में साधक को भैरवी की स्वरूप अनुभव कराते हैं-चाहे वह शम्शान में सन्नाहो, मृत शरीरों की गरमता हो, या अघोर

रीतियों की अभिज्ञान हो-गुरु साधक को समझाते हैं कि सब कुछ चेतना का ही विस्तार है और यह सब भैरवी हीं देखती, ग्रहण करती और आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है। गुरु और भैरवी के इस द्वैतात्मक संयोग से साधना व्यक्तिगत और सार्वभौमिक अनुभव का अद्वितीय मिश्रण बन जाती है।

साधना का लक्ष्य: भैरवी के माध्यम से मोक्ष और आत्मीय स्वतंत्रता की प्राप्ति

अघोरी साधना का अंतिम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति और आत्म की पूर्ण स्वतंत्रता है, और शम्शान भैरवी इस मार्ग की केंद्रीय साधिका हैं। मोक्ष को केवल पुनर्जन्म का अंत नहीं माना जाता, बल्कि यह आत्मा की उस चेतना तक पहुँच है, जिसे सृष्टि भर में व्याप्त सर्वज्ञता कहा गया है। साधक भैरवी की साधना से वह अवस्था प्राप्त करता है जहाँ वह स्वयं को माया की सीमाओं से मुक्त, निराकार, शाश्वत चेतना के रूप में अनुभव करता है। शम्शान का माहौल और वहां की तीव्र ऊर्जा साधक को उस अंतिम अवस्था के लिए तैयार करती है-जिसमें न केवल भय और मोह का क्षय होता है, बल्कि आत्मा की सहजता, शांति और व्यापकता जाग्रत होती है।

इस प्रक्रिया में वीडियो, मंत्र, ध्यान, तथा तांत्रिक विधियों का उपयोग होता है; परंतु लक्ष्य केवल तकनीकी सिद्धियों का विषय नहीं होता, बल्कि जीवन की हर क्रिया में आत्म-साक्षात्कार के दिग्दर्शन की अनुभूति होती है। जब साधक यह अनुभव करता है कि उसकी

आत्मा भैरवी की शक्ति से विलीन होकर सर्वव्यापक चेतना का अभिन्न हिस्सा है, तो निर्वाण की राह स्पष्ट होती है। अर्थात्, मोक्ष और आत्मीय स्वतंत्रता के इस अंतिम लक्ष्य तक पहुंचने में शम्शान भैरवी केवल मार्गदर्शक नहीं, स्वयं मार्ग और लक्ष्य बन जाती हैं।

अध्याय 28:
शमशान भैरवी की पूजा में अघोरी प्रथाएँ

पूजा की तैयारी

शमशान भैरवी की पूजा के लिए अघोरी साधक की तैयारी एक अत्यंत गूढ़ प्रक्रिया है, जो केवल शारीरिक और मानसिक स्तर तक सीमित न होकर साधक के आंतरिक ऊर्जा-संवेदन को भी सक्रिय करती है। साधक पहले शमशान में उस स्थान का चयन करता है जहाँ मृत्यु की ऊर्जा तीव्रतम होती है-वह स्थान जहाँ चिता की राख ने हाल ही में शरीर का अंतिम संस्कार किया हो या जहाँ वर्षों से किसी प्रकार की अव्यवधान ऊर्जा संचित हो। वहाँ पर साधक भूमि को तांत्रिक जल और राख के मिश्रण से शुद्ध करता है और चारों दिशाओं में विशेष भैरवी बीजमंत्रों से रक्षा-चक्र निर्मित करता है, जिसे 'मृत्यु-मंडल 'कहा जाता है। इस मंडल में साधक न केवल अपने शारीरिक स्तर को शुद्ध करता है, बल्कि मानसिक व भावनात्मक स्तर पर भी पूरी तरह अनावरण करता है। गुरु के आदेश से वह किसी भी प्रकार के अभाव, मोह, या सामाजिक बंधनों से विमुक्त होकर केवल साधना की पवित्रता को लेकर आगे बढ़ता है। प्रारंभिक चरणों में विशेष स्नान क्रियाएँ, अंगों पर भस्म का लेप, और मौन व्रत धारण कर साधक स्वयं को मृत्यु-शिविर के अनुकूल बनाता है।

इसके बाद, साधक तांत्रिक वस्त्रों में स्वयं को आवृत्त करता है- ये वस्त्र लाल, काले या राख-जैसे रंगों के होते हैं, जिनमें वह स्वयं को जीवित शरीर से अधिक एक चलायमान प्रतीक के रूप में अनुभव करता है। पूजा की सामग्री में ऐसे तांत्रिक उपकरण शामिल होते हैं जो केवल मंत्रों से नहीं, बल्कि साधक के जीवन और मृत्यु संबंधी अनुभवों से अभिमंत्रित होते हैं। इसमें भैरवी के प्रतीक स्वरूप जैसे त्रिशूल, शव की प्रतीक मूर्तियाँ, और गुप्त यंत्र सम्मिलित होते हैं। विशेष काले पुष्प, लौंग, हिंगुल, रक्तवर्णी चंदन, और तिल मिश्रित प्रसाद तैयार किया जाता है। गुरु की भूमिका इस समूची प्रक्रिया में निर्णायक होती है, क्योंकि वह न केवल विधियों को समझाता है, बल्कि साधक की चेतना की प्रतिक्रियाओं को देखकर अनुकूल दिशाएँ भी निर्देशित करता है। यह संपूर्ण तैयारी, सामान्य पूजन की रीति से कहीं अधिक भीतर उतरने की प्रक्रिया है, जहाँ साधक का प्रत्येक अंग, प्रत्येक विचार, और प्रत्येक ऊर्जा केवल भैरवी के प्रति समर्पित होती है।

मंत्र और यंत्र

शमशान भैरवी की पूजा में मंत्र और यंत्र का समागम अघोर साधना का वह आधार स्तंभ है, जो साधक को देह, वाणी और मन की सीमाओं से पार ले जाकर सूक्ष्म ऊर्जा के प्रवाह में स्थित करता है। यह कोई साधारण उच्चारण या आकृति नहीं होती-बल्कि यह वह कंपन होती है जो ब्रह्मांडीय लय के साथ साधक को संलग्न करती

है। भैरवी के मंत्रों में केवल ध्वनि नहीं, बल्कि एक प्रकार की जीवंत ज्वाला होती है, जो साधक के रक्तप्रवाह में चेतन ऊर्जा भर देती है। "ह्रीं", "क्रों", "क्रीं", जैसे बीजमंत्रों का उच्चारण साधक की जिह्वा, कंठ और आज्ञा चक्र को आंदोलित करता है, जिससे वह केवल शब्द का उच्चारण नहीं करता बल्कि अपनी चेतना को मंत्र की ध्वनि में विलीन करता है। विशेष रूप से अमावस्या की रात, जब चंद्र की उपस्थिति लुप्त होती है और तम का साम्राज्य होता है, मंत्रों की ऊर्जा भैरवी की तीव्र शक्ति को आकर्षित करने के लिए सबसे उपयुक्त होती है।

भैरवी यंत्र केवल तांबे या मिट्टी पर बनी आकृति नहीं होती, बल्कि यह ब्रह्मांड के गूढ़ गणित और ऊर्जा-जाल का प्रतिबिंब होती है। जब साधक इस यंत्र पर ध्यान करता है, तो वह केवल किसी प्रतीक पर ध्यान नहीं कर रहा होता-वह अपनी चेतना को एक ज्यामितीय द्वार में समाहित कर उस शक्ति की ओर अग्रसर होता है जो यंत्र के केंद्र में सन्निहित होती है। इस यंत्र को भैरवी के मंत्रों से अभिमंत्रित करना आवश्यक होता है, जिसमें वह हर रेखा और बिंदु को मंत्र के माध्यम से ऊर्जा का वाहक बना देता है। जब मंत्र और यंत्र का समन्वय होता है, तो साधक की चेतना मृत्युकेंद्रित होकर जीवन की सीमाओं से ऊपर उठती है। गुरु इन दोनों की सही विधि-मंत्र की आवृत्ति, उच्चारण की गहराई, और यंत्र के प्रत्येक कोण का प्रयोग-सिखाते हैं, ताकि साधक की साधना केवल बाह्य अनुष्ठान न बनकर अंतःचेतना का जागरण बने।

बलिदान और प्रसाद

अघोरी साधना में बलिदान और प्रसाद अर्पण की प्रक्रिया केवल श्रद्धा या परंपरा नहीं, बल्कि साधक के आंतरिक त्याग और समर्पण की चरम अभिव्यक्ति होती है। बलिदान का अर्थ यहाँ किसी जीवित प्राणी की आहुति देना नहीं, बल्कि अपने भीतर के सबसे गहन भय, वासना, और मोह का समर्पण करना होता है। शमशान भैरवी के समक्ष जब अघोरी कद्दू, नारियल या सिंदूर मिश्रित काले तिल को अर्पित करता है, तो वह प्रतीकात्मक रूप से अपने अंदर की नकारात्मक शक्तियों को बाहर निकाल कर देवी को समर्पित करता है। यह समर्पण रात्रि की घोर कालिमा में, शमशान की चिता-राख से ढँके हुए क्षेत्र में होता है, जहाँ केवल तांत्रिक ध्वनि और मंत्रों की गूंज होती है। साधक अपनी चेतना में उस अवस्था को अनुभव करता है, जहाँ वह स्वयं बलिदान बन जाता है-जहाँ वह न केवल कोई वस्तु दे रहा होता है, बल्कि स्वयं के भीतर के सीमित स्वरूप को त्याग रहा होता है।

प्रसाद का चयन भी साधक की तांत्रिक दृष्टि का परिचायक होता है। यह केवल फल या मिठाई नहीं होता,बल्कि यह एक ऊर्जा का संचारक होता है-कभी शराब, कभी भांग, या काले तिल से बने लड्डू, जो देवी की क्रूर और करुणा दोनों रूपों को संतुलित करने के लिए अर्पित किए जाते हैं। यह प्रसाद न केवल देवी को अर्पित किया जाता है, बल्कि साधक स्वयं उसे ग्रहण कर उस ऊर्जा का अंग बनता

है। इस अर्पण में साधक केवल कोई पदार्थ नहीं देता, वह अपना अस्तित्व अर्पित करता है। गुरु इस प्रक्रिया में साधक को केवल सामग्री का चयन ही नहीं सिखाते, बल्कि यह भी सिखाते हैं कि किस प्रसाद में किस प्रकार की शक्ति होती है और किस मानसिक अवस्था में क्या अर्पण करना उचित होगा। यह प्रक्रिया साधक को उसके अंतःकरण में उपस्थित भय, इच्छा, और अज्ञान से मुक्त कर भैरवी के सूक्ष्म रूप में विलीन होने की ओर प्रेरित करती है।

आहुति और हवन

शमशान भैरवी की पूजा में अघोरियों द्वारा किया गया हवन केवल अग्नि का पूजन नहीं होता, यह साधक की आंतरिक ऊर्जा और बाह्य ब्रह्मांडीय शक्तियों के बीच सीधा संवाद होता है। शमशान में बने एक विशेष त्रिकोणात्मक हवन-कुंड में, जो मृत्यु और सृजन दोनों का प्रतीक होता है, साधक अपने भीतर की वासनाओं, विचारों और भावों को अग्नि को समर्पित करता है। यह अग्नि केवल ईंधन से जलने वाली नहीं होती-यह भैरवी की प्रज्वलित उपस्थिति मानी जाती है, जो साधक के भीतर के तम को भस्म करने आती है। हवन सामग्री में विशिष्ट जड़ी-बूटियाँ, शमशान की भस्म, सरसों, राल, गुग्गुल, रक्तचंदन और कभी-कभी सूखे पुष्पों के साथ मन्त्रों से अभिमंत्रित तांत्रिक वस्तुएँ सम्मिलित होती हैं। इन सामग्रियों की विशेषता यह होती है कि वे हवन के दौरान उत्पन्न धुएँ के साथ साधक की चेतना में सूक्ष्म स्तर पर परिवर्तन उत्पन्न करती हैं।

आहुति के समय साधक विशेष मन्त्रों का उच्चारण करता है, जिनमें भैरवी के विभिन्न रूपों का आवाहन होता है-जैसे संहारिणी, महामाया, अघोरभैरवी। प्रत्येक आहुति एक मानसिक-ऊर्जावान संकल्प होती है, जिसमें साधक स्वयं को अग्नि में समर्पित करता है-यह त्याग का अभ्यास है, नियंत्रण का व्रत है, और शक्ति के प्रति पूर्ण समर्पण है। गुरु का निर्देशन इस अनुष्ठान में आवश्यक होता है, क्योंकि वह अग्नि की प्रकृति, आहुतियों के क्रम और मन्त्रों के आवृत्त स्वर में सूक्ष्म संतुलन स्थापित कराते हैं। शमशान का माहौल, जहाँ चारों ओर मृत्यु का मौन व्याप्त होता है, हवन की अग्नि को एक आंतरिक दीपक की तरह ज्वलित करता है, जो साधक को उसकी ही आत्मा का प्रकाश दिखाता है। यह प्रक्रिया साधक को केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि मानसिक और जैविक स्तर पर भी शुद्ध करती है-उसके विचार, भावनाएँ और श्वास-प्रश्वास की लय सब कुछ एक विशेष ऊर्जा में विलीन हो जाते हैं। इस प्रकार, आहुति और हवन की प्रक्रिया अघोरी साधना में केवल पूजन विधि नहीं बल्कि आत्म-विसर्जन की अनुभूति है, जो साधक को भैरवी की ज्वाला में तपाकर शुद्ध करता है।

ध्यान और साधना

शमशान भैरवी की पूजा में अघोरी साधना का सबसे सूक्ष्म और शक्तिशाली पहलू ध्यान है-वह ध्यान जो केवल आँख मूँदकर मौन बैठ जाने की प्रक्रिया नहीं, बल्कि स्वयं को मृत्यु और शून्यता के

सम्मुख निर्वस्त्र आत्मा के रूप में खड़ा करने का साहस है। अघोरी साधक जब शमशान में बैठता है, तो वह न केवल भौतिक वातावरण में, बल्कि अपने भीतर के मृत्यु-तत्व के सामने स्थिर होता है। त्रिशूल, कपाल या भैरवी यंत्र के सामने बैठकर साधक अपना सम्पूर्ण ध्यान उस स्वरूप पर केन्द्रित करता है जो भैरवी की विकराल छवि के भीतर छिपी असीम करुणा को प्रकट करता है। इस ध्यान में साधक अपने शरीर के प्रत्येक हिस्से को मृत समझकर केवल चैतन्य रूप में उपस्थित रहता है, जहाँ श्वास भी एक अनावश्यक गतिशीलता बन जाती है और चेतना एक निर्गुण स्रोत में प्रवेश करती है।

यह साधना अनेक रातों तक, विशेष रूप से अमावस्या, अष्टमी या तांत्रिक पर्वों की रात्रियों में की जाती है, जब वातावरण में तमोगुण का प्रभाव अधिक होता है। इस समय भैरवी की शक्ति सबसे अधिक उग्र और ग्रहणशील होती है। ध्यान की प्रक्रिया में साधक केवल दृष्टि या श्वास पर ही नहीं, बल्कि अपने आंतरिक भय, मोह, वासना और भ्रम पर भी ध्यान केंद्रित करता है, ताकि वे धीरे-धीरे स्वतः नष्ट हो जाएँ। गुरु इस ध्यान की विधि को साधक के अनुसार परिवर्तित करते हैं-कभी मौन ध्यान, कभी जपयुक्त ध्यान, कभी शव पर बैठकर या कपाल को हाथ में लेकर ध्यान करने की विधियाँ बताई जाती हैं। यह साधना साधक को समाधि की कगार पर पहुँचा देती है, जहाँ चेतना की सभी तरंगें विलीन होकर केवल एक बिंदु पर ठहर जाती हैं-भैरवी के सूक्ष्म स्वरूप में। इस अवस्था में साधक जीवन और मृत्यु दोनों को एक ही क्षण में देखता है, अनुभव करता है और उनसे ऊपर उठता

है। ध्यान और साधना की यह प्रक्रिया, यद्यपि बाहरी आँखों से नहीं देखी जा सकती, लेकिन यह साधक के आभामंडल, वाणी, और व्यवहार में क्रांतिकारी परिवर्तन उत्पन्न कर देती है।

वस्त्र और आभूषण

अघोरियों की साधना में प्रयुक्त वस्त्र और आभूषण केवल भौतिक आवरण नहीं होते-ये प्रतीक होते हैं उस त्याग, वीरता, और निर्भयता के, जिसे साधक ने अपने भीतर जाग्रत किया होता है। शमशान भैरवी की पूजा में अघोरी विशिष्ट रंगों के वस्त्र धारण करते हैं-काला, जो अंधकार और मृत्यु का प्रतीक है; लाल, जो शक्ति और ऊर्जा का सूचक है; और गेरुआ, जो त्याग और वैराग्य की छवि है। इन वस्त्रों की बनावट सामान्यतः सूती, खद्दर, या शमशान की भस्म से रँगी होती है, ताकि साधक का शरीर भौतिक सज्जा से अलग होकर केवल एक ऊर्जा वाहक के रूप में कार्य करे। इन वस्त्रों को पहनते समय साधक विशेष मन्त्रों का जाप करता है, जिससे वे वस्त्र साधारण आवरण न रहकर साधना के यंत्र बन जाते हैं।

आभूषणों की दृष्टि से अघोरी सामान्य आभूषणों का प्रयोग नहीं करते। वे रुद्राक्ष की माला, मानव अस्थियों से बने कंगन, भैरवी के प्रतीकों वाले चिह्न (त्रिशूल, डमरू, यंत्र आदि) से बने लौकेट या बाजूबंद पहनते हैं। इन सभी प्रतीकों का उद्देश्य केवल अलंकरण नहीं, बल्कि साधक के भीतर की ऊर्जा को सतह पर लाना और भैरवी से उसका निरंतर संबंध बनाए रखना होता है। उदाहरणतः अस्थि-कंगन

साधक को निरंतर मृत्यु की याद दिलाता है, जबकि रुद्राक्ष उसे शिव-भैरवी के संबंध की अनुभूति कराता है। गुरु इन वस्त्रों और आभूषणों की उपयुक्तता, समय और प्रयोजन के अनुसार चयन करने की विधि सिखाते हैं। कुछ वस्त्र विशेष साधनाओं के लिए ही प्रयुक्त होते हैं- जैसे शव-साधना के समय की राख-मिश्रित काली चादर, या रक्तवर्णी वस्त्र जो देवी की संहारक मूर्ति की साधना के समय धारण किए जाते हैं। इस प्रकार, वस्त्र और आभूषण अघोरी साधक के लिए केवल पहचान का माध्यम नहीं, बल्कि साधना की अंतःक्रिया को सशक्त और उर्जस्वित करने वाले तांत्रिक उपकरण होते हैं।

समय और मुहूर्त

शमशान भैरवी की पूजा में समय और मुहूर्त का चयन अघोरी साधना का एक अत्यंत सूक्ष्म और निर्णायक पक्ष होता है। अघोरी साधक मानते हैं कि प्रत्येक कालखंड की अपनी ऊर्जा होती है, और उस ऊर्जा का सही दोहन तभी संभव है जब साधक सही समय पर साधना आरंभ करे। विशेष रूप से अमावस्या, पूर्णिमा, महाकालाष्टमी, और गुप्त नवरात्रि की रातें अघोरियों के लिए सर्वाधिक उपयुक्त मानी जाती हैं, क्योंकि इन रात्रियों में तांत्रिक ऊर्जा का प्रवाह सबसे अधिक तीव्र और सघन होता है। अमावस्या, जहाँ चंद्र का अभाव होता है, साधक को पूर्ण अंधकार में प्रवेश करने का अवसर देती है-जो मृत्यु की स्थिति से साम्य रखता है। वहीं पूर्णिमा रात्रि भैरवी के सौम्य और करुणामयी स्वरूप की साधना के लिए

उपयुक्त होती है, जब चंद्र की ऊर्जा भावनात्मक संतुलन प्रदान करती है।

शमशान में रात्रि के तीसरे प्रहर को 'तमो-युक्त काल 'कहा जाता है-यह काल साधना की पूर्णता का समय होता है, जब न केवल वातावरण शांत होता है, बल्कि साधक का चित्त भी बाह्य विकर्षणों से मुक्त होता है। गुरु द्वारा पंचांग के आधार पर विशिष्ट मुहूर्त का निर्धारण किया जाता है, जिसमें ग्रहों की स्थिति, नक्षत्र और तिथियाँ भी ध्यान में रखी जाती हैं। यह सब इसलिए किया जाता है क्योंकि अघोरी साधना कोई सामान्य कर्मकांड नहीं, बल्कि एक अत्यंत संवेदनशील ऊर्जा-प्रक्रिया है-जिसमें त्रुटिपूर्ण समय साधक की चेतना में भ्रम और असंतुलन उत्पन्न कर सकता है। उचित मुहूर्त में साधना आरंभ करने से भैरवी की कृपा सहज रूप से प्राप्त होती है, जिससे साधक के भीतर स्थित आध्यात्मिक केंद्र जागृत हो जाते हैं। इस प्रकार, समय और मुहूर्त का चयन केवल तिथियों की गणना नहीं, बल्कि मृत्यु और ब्रह्म के द्वार को खोलने की एक गहन वैज्ञानिक विधि है, जो अघोरी साधना को सफल और पूर्ण बनाती है।

गुरु की भूमिका

अघोरी साधना में गुरु की भूमिका केवल एक पथ-प्रदर्शक की नहीं, बल्कि स्वयं शमशान भैरवी की शक्ति के जीवंत स्वरूप की होती है। गुरु को भैरवी की कृपा का वाहक माना जाता है-वह साधक और देवी के बीच सेतु होता है, जो न केवल तांत्रिक विधियों को

सिखाता है, बल्कि साधक के मन, भय, अहंकार और वासनाओं को भी पहचानकर उन्हें शुद्ध करने की प्रक्रिया में उसकी सहायता करता है। अघोरी परंपरा में गुरु बिना पूछे कुछ नहीं देता, और साधक बिना समर्पण के कुछ नहीं प्राप्त कर सकता। गुरु ही बताता है कि कौन-सा मन्त्र कब और कैसे जपना है, कौन-सा यंत्र किस रात्रि को स्थापित करना है, और किस कालखंड में कौन-सी साधना साधक के लिए उपयुक्त है। वह साधक के जीवन की गहराइयों में झाँक कर उसके भीतर छिपे अवरोधों को उजागर करता है और उन्हें साधना के माध्यम से परिवर्तित करने की राह दिखाता है।

गुरु शमशान में साधक के साथ रात्रियों तक उपस्थित रहता है, वह उसकी चेतना की प्रतिक्रियाओं को देखता है-कहाँ भय व्याप्त हुआ, कहाँ भ्रम पैदा हुआ, कहाँ वासना जागी-और उन सबके ऊपर विजय पाने की युक्ति बताता है। जब साधक खोपड़ी, अस्थियाँ, शव, या मंत्रों की तीव्रता से विचलित होता है, तब गुरु उसका मन स्थिर करता है और उसे मृत्यु के पार के सत्य से परिचय कराता है। अघोरी गुरु की भूमिका में केवल उपदेश नहीं, बल्कि चेतना-स्थानांतरण का कार्य भी सम्मिलित होता है-वह अपनी अनुभूतियों को साधक में स्थानांतरित कर साधक को स्वयं के भीतर शक्ति का अनुभव कराता है। गुरु के बिना शमशान भैरवी की साधना अज्ञात समुद्र में नौका चलाने के समान है, जहाँ दिशा, गहराई और तूफानों का अनुमान केवल अनुभवी नाविक ही दे सकता है। इस प्रकार, गुरु की भूमिका अघोरी साधना में मूलभूत, परिवर्तनकारी और दिव्य होती है, जो

साधक को भैरवी की कृपा और आत्मसाक्षात्कार की ओर अग्रसर करती है।

अध्याय 29:
मानव अवशेषों का उपयोग

मानव अवशेषों का आध्यात्मिक महत्व

अघोरी साधना में मानव अवशेषों का उपयोग केवल तांत्रिक रहस्य का हिस्सा नहीं, बल्कि एक गहन दार्शनिक और आध्यात्मिक अभ्यास है। यह प्रथा साधक को जीवन और मृत्यु के द्वैत से ऊपर उठने की क्षमता प्रदान करती है, जहाँ वह शरीर की नश्वरता और आत्मा की अमरता के भेद को प्रत्यक्ष रूप से अनुभव करता है। खोपड़ी, अस्थियाँ, और अन्य अवशेष शमशान में मृत देह से प्राप्त होते हैं, जिन्हें अघोरी साधक पवित्र मानकर उनका उपयोग तांत्रिक अनुष्ठानों, मंत्र-जाप, और यंत्र निर्माण में करते हैं। इन अवशेषों को साधक श्रद्धा और नियमपूर्वक एकत्र करता है, और इन्हें केवल बाहरी साधन के रूप में नहीं, बल्कि आंतरिक परिवर्तन और चेतना के जागरण का उपकरण मानता है। यह प्रक्रिया साधक को अपने भीतर छिपे भय, द्वेष, मोह और अहंकार का सामना करने का अवसर देती है, जिससे वह आत्मज्ञान की ओर अग्रसर होता है। शमशान का वातावरण, जहाँ चारों ओर मृत्यु की उपस्थिति होती है, इन अवशेषों को एक गहन आध्यात्मिक ऊर्जा प्रदान करता है, जो साधक को न केवल भैरवी की शक्ति के निकट लाता है, बल्कि उसे जीवन और मृत्यु के परे की अवस्था में प्रवेश का मार्ग भी देता है।

इस प्रक्रिया में गुरु का मार्गदर्शन केंद्रीय भूमिका निभाता है। गुरु ही यह सिखाता है कि इन अवशेषों का उपयोग केवल अनुष्ठान की पूर्णता के लिए नहीं, बल्कि चेतना के विस्तार के लिए करना चाहिए। साधक को यह बताया जाता है कि प्रत्येक अस्थि या खोपड़ी केवल एक मृत शरीर का अंश नहीं है, बल्कि वह चेतना की स्मृति है, जो ब्रह्मांड के अस्तित्व की गहराई को समेटे हुए है। यह स्मृति जब मंत्रों और तांत्रिक विधियों से जागृत होती है, तब साधक के भीतर की निद्रित चेतना सक्रिय होती है। इस प्रक्रिया में साधक शारीरिक बंधनों से ऊपर उठकर अपनी आत्मा के मूल स्वरूप का अनुभव करता है। वह देखता है कि मृत्यु केवल अंत नहीं, बल्कि एक चेतनावान प्रवेशद्वार है, जो उसे भैरवी की उपस्थिति में स्वयं के शुद्ध रूप से मिलवाता है। इस प्रकार, मानव अवशेषों का आध्यात्मिक महत्व अघोरियों की साधना में एक ऐसी जीवित परंपरा बन जाता है, जो मृत्यु को ज्ञान, शांति, और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाने वाला सेतु मानता है।

साधना में खोपड़ी का प्रयोग

साधना में खोपड़ी (कपाल) का प्रयोग अघोरी परंपरा की सबसे विशिष्ट और केंद्रित तांत्रिक विधियों में से एक है, जो साधक को मृत्यु और आत्मा के बीच की दार्शनिक रेखा से साक्षात्कार कराती है। अघोरी मानते हैं कि खोपड़ी मृत शरीर की केवल एक हड्डी नहीं, बल्कि एक जड़ चेतना का पात्र है, जो सही तंत्र विधियों से जागृत

होकर साधक को सूक्ष्म ऊर्जा से जोड़ सकती है। जब साधक कपाल को प्रसाद पात्र, ध्यान केंद्र या यंत्र पीठ के रूप में उपयोग करता है, तो वह इसे केवल एक साधन के रूप में नहीं, बल्कि भैरवी के प्रतीक रूप में देखता है। विशेष रूप से रात्रि साधना में, जब साधक मंत्रोच्चार करता है और खोपड़ी पर तांत्रिक चिह्न अंकित करता है, तब कपाल एक ध्यान का द्वार बन जाता है, जिससे वह मृत्यु के अंधकार में चेतना के उजास को महसूस करता है। मंत्र जैसे "ॐ कपालिनी स्वाहा" या "ह्रीं भैरवी कपालेश्वर्यै नमः" साधक की चेतना को उस बिंदु तक ले जाते हैं जहाँ मृत्यु का डर समाप्त होकर उसकी जगह एक अंतर्दृष्टि विकसित होती है।

गुरु इस पूरी प्रक्रिया में साधक को मार्गदर्शन प्रदान करता है कि कपाल का प्रयोग केवल क्रिया नहीं, बल्कि साधक की चेतना की एक यात्रा है। गुरु सिखाता है कि कैसे खोपड़ी को शुद्ध करना, मंत्रों द्वारा उसमें चेतना का संचार करना, और उसमें तांत्रिक सामग्री अर्पित करना एक साधना की सीढ़ी बन जाती है। यह सीढ़ी साधक को वहाँ ले जाती है जहाँ वह अपने पूर्व जन्मों के संस्कारों से ऊपर उठकर वर्तमान जीवन में आत्मा की उच्चतम अवस्था को छू सकता है। अघोरी मानते हैं कि कपाल से उत्पन्न ऊर्जा भैरवी की ऊर्जा का वाहक बन जाती है, और यह ऊर्जा केवल अंधकार नहीं, बल्कि प्रकाश की दिशा में साधक का मार्गदर्शन करती है। इस प्रकार, साधना में खोपड़ी का प्रयोग एक ऐसा तांत्रिक उपकरण है जो केवल

प्रतीक नहीं, बल्कि अनुभव का केंद्र है-जिसमें मृत्यु की भित्ति पर आत्मा की दिव्यता चित्रित होती है।

अस्थियों से बने उपकरण

अस्थियों से निर्मित तांत्रिक उपकरण अघोरी साधना में एक विशिष्ट भूमिका निभाते हैं, जिनका प्रयोग केवल मंत्रों और यंत्रों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि साधक की चेतना को विशेष ऊर्जाओं से समाहित करता है। अघोरी मानव अस्थियों को पवित्र मानते हैं, क्योंकि वे मृत्यु की वास्तविकता को मूर्त रूप में प्रकट करती हैं। अस्थियों से बनी माला, जिसे "अस्थि-माल" कहा जाता है, मंत्र जाप के समय साधक के हाथ में ऊर्जा की एक चक्रित धारा उत्पन्न करती है, जिससे साधना की गति और प्रभावशीलता दोनों बढ़ती हैं। इसी प्रकार, अस्थियों से बने कंगन, यंत्र पीठ, या प्रतीकात्मक सज्जाएँ भैरवी की शक्ति को तांत्रिक रूप में केंद्रित करने में सहायक होती हैं। इन उपकरणों को साधक मंत्रों द्वारा अभिमंत्रित करता है और ध्यान में प्रयुक्त करता है, जिससे वह भैरवी के सूक्ष्म आयामों से जुड़ जाता है। ये उपकरण विशेषकर शमशान में रात्रिकालीन साधना में प्रभावशाली होते हैं, जब भूत, प्रेत, और मृत्यु की उर्जा अपने चरम पर होती है।

इन उपकरणों का निर्माण और उपयोग गुरु की देखरेख में किया जाता है, जो साधक को बताता है कि किस अस्थि का उपयोग किस साधना के लिए उपयुक्त होगा। उदाहरणतः रीढ़ की अस्थि से बने यंत्र

को चेतना की ऊर्ध्व गति से जोड़ा जाता है, जबकि कंधे की अस्थि से निर्मित प्रतीक साहस और स्थिरता को दर्शाता है। यह प्रयोग केवल भौतिक निर्माण नहीं, बल्कि एक दार्शनिक प्रक्रिया होती है, जिसमें प्रत्येक हड्डी, प्रत्येक तंतु, मृत्यु और आत्मा के बीच के सेतु का प्रतीक बन जाता है। अघोरी इस प्रक्रिया को अत्यंत श्रद्धा और संयम से करते हैं, क्योंकि उनका विश्वास होता है कि इन उपकरणों में ब्रह्मांडीय स्मृति और ऊर्जा निहित है। साधक जब इन उपकरणों से जुड़ता है, तो वह मात्र पूजा नहीं करता, बल्कि वह मृत्यु के माध्यम से आत्मा की अमरता का साक्षात्कार करता है। इस प्रकार, अस्थियों से बने उपकरण अघोरी साधना की वह धुरी हैं, जो साधक को मृत्यु से पार ले जाकर भैरवी की दिव्यता और आत्म-साक्षात्कार की ओर अग्रसर करते हैं।

मृत्यु के प्रति भय का उन्मूलन

अघोरी साधना में मानव अवशेषों का उपयोग केवल तांत्रिक क्रिया नहीं, बल्कि मृत्यु के प्रति भय को जड़ से समाप्त करने की एक सशक्त आध्यात्मिक विधि है। जब साधक शमशान में खोपड़ी या अस्थियों के समक्ष बैठकर ध्यान करता है, तो वह अपने भीतर एक गहन परिवर्तन महसूस करता है। वह देखता है कि जिसे समाज में मृत्यु का अंतिम बिंदु माना जाता है, वही अघोरी के लिए आरंभ का द्वार है। कपाल को हाथ में लेकर मंत्रों का उच्चारण करना-जैसे “ॐ कपालदायिनी नमः”-मृत्यु के स्वरूप को भयावह से शांतिपूर्ण में

बदलने की प्रक्रिया है। साधक धीरे-धीरे यह अनुभव करता है कि मृत्यु कोई समाप्ति नहीं, बल्कि आत्मा की नवीन यात्रा का प्रारंभ है। इस बिंदु पर, उसकी चेतना मृत्यु के सत्य को केवल वैचारिक रूप में नहीं, बल्कि आत्मीय और गूढ़ अनुभूति के रूप में आत्मसात कर लेती है। यही वह क्षण होता है जब साधक के भीतर से भय, मोह, और मृत्यु का आतंक समाप्त हो जाता है, और वह जीवन की नश्वरता को सहज रूप में स्वीकार कर लेता है।

गुरु इस साधना को केवल दिशा ही नहीं देता, बल्कि साधक के भीतर उत्पन्न होने वाली हर मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया को संतुलित करने की कला भी सिखाता है। गुरु बताते हैं कि मृत्यु से भागने की बजाय जब साधक उसका साक्षात्कारी अध्ययन करता है, तब वह उससे डरने के बजाय उसे स्वीकार करने लगता है। शमशान का वातावरण-जहाँ हवा में राख की गंध, चिता की राख, और निस्तब्धता का गूढ़ संयोजन होता है-साधक को स्थूल जगत से हटाकर सूक्ष्म जगत की ओर प्रेरित करता है। इस प्रक्रिया के माध्यम से साधक न केवल भय से मुक्त होता है, बल्कि एक ऐसी मानसिक दृढ़ता प्राप्त करता है, जो उसे जीवन की अन्य कठिनाइयों से भी निर्भीक बना देती है। यह प्रक्रिया आत्म-साक्षात्कार की ओर एक बड़ा कदम होती है, जहाँ साधक जान जाता है कि भय की सबसे बड़ी जड़-मृत्यु-के पार जाने पर ही सच्चा जीवन प्रारंभ होता है। इस प्रकार, मृत्यु के प्रति भय का उन्मूलन अघोरियों की साधना का एक

अनिवार्य चरण है, जो साधक को आत्मा की शाश्वतता का अनुभव कराता है।

शमशान में अवशेषों का संग्रह

शमशान में मानव अवशेषों का संग्रह अघोरियों की साधना का एक अत्यंत पवित्र और सुनियोजित तांत्रिक कार्य है, जिसे वे न केवल विधिपूर्वक करते हैं, बल्कि उसे एक आध्यात्मिक उत्तरदायित्व के रूप में निभाते हैं। अघोरी मानते हैं कि शमशान वह स्थल है जहाँ शरीर मृत्यु को प्राप्त होकर पृथ्वी में विलीन हो जाता है, लेकिन उसकी अस्थियाँ आत्मा की स्मृति और ऊर्जा को कुछ समय तक अपने भीतर संजोए रखती हैं। इसलिए जब साधक शमशान में खोपड़ी या अस्थियों को एकत्र करता है, तो वह केवल सामग्री नहीं बटोरता, बल्कि मृत्यु की चेतना से जुड़ी हुई शक्ति को समर्पण के भाव से ग्रहण करता है। यह कार्य साधक अकेले नहीं करता, बल्कि गुरु के सान्निध्य में, विशिष्ट मंत्रों और नियमों का पालन करते हुए करता है। किसी चिता के पास पड़ी अस्थियों को उठाने से पहले वह "संकल्प मंत्र" बोलता है, जिससे यह स्पष्ट हो कि वह इन अवशेषों का उपयोग केवल तांत्रिक उद्देश्य और आत्मिक उन्नयन के लिए करेगा।

इस संग्रह प्रक्रिया में प्रत्येक कदम का विशिष्ट उद्देश्य और नियम होता है। अस्थियों को चुनते समय साधक यह देखता है कि वे अपवित्र या ताजे शरीर की न हों, जिससे किसी आत्मा की शांति में बाधा न पहुँचे। एकत्र की गई अस्थियों को जल या भस्म से शुद्ध

किया जाता है, और फिर मंत्रों से अभिमंत्रित कर उनका उपयोग विशेष साधनाओं में किया जाता है-जैसे यंत्र निर्माण, कपाल पूजा, या शक्ति जागरण। शमशान की हवा, राख, और मृत्यु का मूक संगीत साधक के मन को स्थिरता प्रदान करता है, जिससे वह भावनाओं और विचारों के आवेग से मुक्त होकर उस ऊर्जा को पहचान पाता है जो अस्थियों में संचित होती है। यही अस्थियाँ, जब मंत्र और साधना से संवलित होती हैं, तब वे साधक की चेतना में स्थायी परिवर्तन लाने में सहायक बनती हैं। इस प्रकार, शमशान में अवशेषों का संग्रह केवल भौतिक क्रिया नहीं, बल्कि आत्मा के अनुभव का एक सशक्त और परिवर्तनकारी साधन है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की दिशा में अग्रसर करता है।

तंत्र में अवशेषों की भूमिका

तांत्रिक परंपरा में मानव अवशेषों की भूमिका केवल अनुष्ठानिक सजावट तक सीमित नहीं होती, बल्कि यह चेतना की गति और गूढ़ ऊर्जा के संचरण का एक सशक्त माध्यम होती है। खोपड़ी, अस्थियाँ, और उनका चूर्ण तांत्रिक यंत्रों के निर्माण में, ध्यान और मंत्र जाप के केंद्र के रूप में, और ऊर्जा-आह्वान के उपकरण के रूप में कार्य करते हैं। अघोरी मानते हैं कि मृत शरीर की अस्थियाँ मृत्यु की स्थूलता को पार कर जब तंत्र में सम्मिलित होती हैं, तब वे आत्मा की अमर चेतना को स्थिर कर, उसे स्थूल जगत से जोड़ने का माध्यम बन जाती हैं। उदाहरण के लिए, भैरवी यंत्र में अस्थि-चूर्ण को

विशेष तांबे या मिट्टी के पिंड पर अंकित करते समय साधक विशेष बीज मंत्रों का प्रयोग करता है, जिससे यंत्र जागृत होकर साधना की ऊर्जा को कई गुना बढ़ा देता है।

इस प्रथा की गूढ़ता को समझने के लिए गुरु की शिक्षा अनिवार्य होती है। वह साधक को सिखाता है कि इन अवशेषों को केवल पदार्थ रूप में न देखे, बल्कि उन्हें उन सूक्ष्म तरंगों का स्रोत माने, जो मृत्यु के पार के अनुभवों से उत्पन्न होती हैं। जब साधक किसी तांत्रिक यंत्र में अस्थियों का उपयोग करता है, तो वह उस यंत्र को केवल पूजा का केंद्र नहीं, बल्कि आत्मिक द्वार के रूप में देखता है, जो चेतना को ब्रह्मांड के गूढ़तम केंद्र तक ले जा सकता है। यह प्रक्रिया विशेष रात्रि साधना में, जैसे अमावस्या या भैरवी अष्टमी पर, अत्यधिक प्रभावकारी होती है। अघोरी मानते हैं कि जब शरीर की अंतिम भौतिकता-अस्थि-तंत्र में विलीन होती है, तब चेतना की पहली सूक्ष्मता प्रकट होती है। यही वह स्थिति है जहाँ साधक न केवल मंत्र या पूजा कर रहा होता है, बल्कि वह मृत्यु की चेतना को जीवन के रहस्य में रूपांतरित कर रहा होता है। इस प्रकार, तंत्र में अवशेषों की भूमिका अघोरी साधना की वह केन्द्रीय धुरी है, जो साधक को अद्वैत, भैरवी की कृपा, और पूर्ण आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है।

सामाजिक विवाद का कारण

मानव अवशेषों का उपयोग अघोरियों की साधना में सामाजिक विवाद का एक स्थायी स्रोत रहा है, क्योंकि यह परंपरा सामान्य

धार्मिक और नैतिक मूल्यों से भिन्न प्रतीत होती है। शमशान भैरवी की पूजा में जब अघोरी खोपड़ी, अस्थियाँ या अन्य मानव अवशेषों का उपयोग करते हैं, तो समाज उसे अशुभ, अपवित्र या अंधविश्वासपूर्ण गतिविधि के रूप में देखता है। भारतीय समाज में मृत देह को सम्मान और अंतिम संस्कार की प्रक्रिया का भाग माना जाता है, जबकि अघोरी उसे आध्यात्मिक ऊर्जा का स्रोत मानते हैं। इसी अंतर के कारण अघोरी साधना और विशेष रूप से शमशान में अवशेषों का संग्रह एवं उपयोग समाज के लिए रहस्य और भय का विषय बन जाता है। जब अघोरी शव के कपाल में प्रसाद अर्पण करता है या अस्थियों से माला बनाकर साधना करता है, तो यह सामान्य जन-मानस के लिए विचलनकारी होता है, क्योंकि यह उनकी पारंपरिक धार्मिक संवेदनाओं के अनुकूल नहीं होता। परिणामस्वरूप, अघोरी साधकों को समाज से तिरस्कार, उपहास, या भय का सामना करना पड़ता है, और कई बार उनकी साधना को तांत्रिक दुराचार या काले जादू से जोड़ दिया जाता है।

हालाँकि, अघोरी इस सामाजिक प्रतिरोध को साधना की परीक्षा मानते हैं। वे मानते हैं कि मृत्यु के सत्य को स्वीकार करने से ही मोक्ष का मार्ग खुलता है, और यह साहस सामान्य लोगों में नहीं होता। गुरु इस पूरे सामाजिक संघर्ष को साधक के लिए एक मानसिक तपस्या में परिवर्तित करते हैं, और उसे यह सिखाते हैं कि जनमत के भय से साधना मार्ग नहीं छोड़ा जा सकता। शमशान में साधक जब अस्थियों का प्रयोग करता है, तो वह न केवल तंत्र प्रक्रिया में लीन

होता है, बल्कि वह उस सामाजिक घृणा, उपेक्षा और अस्वीकृति को भी आत्मसात कर रहा होता है, जो उसके अंतर्मन के अहंकार को समाप्त करती है। यही कारण है कि अघोरी समाज से कटे हुए नहीं, बल्कि उसके छिपे हुए डर और अनुत्तरित प्रश्नों का जीवंत उत्तर बन जाते हैं। वे मृत्यु के माध्यम से जीवन की गहराई को समझते हैं, और समाज की सीमा से परे जाकर उस रहस्य को आत्मसात करते हैं जिसे अधिकांश लोग केवल कल्पना तक सीमित रखते हैं। इस प्रकार, सामाजिक विवाद अघोरियों के लिए एक अवरोध नहीं, बल्कि एक माध्यम है जो उन्हें आत्म-साक्षात्कार और तांत्रिक पूर्णता की ओर प्रेरित करता है।

गुरु द्वारा दी गई शिक्षाएँ

मानव अवशेषों के उपयोग से जुड़ी प्रत्येक तांत्रिक प्रक्रिया में गुरु की भूमिका केवल मार्गदर्शक की नहीं, बल्कि एक दिव्य सेतु की होती है, जो साधक को भैरवी की शक्ति और साधना की मर्यादा के बीच संतुलन में रखता है। गुरु साधक को सिखाता है कि खोपड़ी या अस्थि केवल भौतिक वस्तु नहीं, बल्कि चेतना का एक जीवित प्रतीक है। उसका उपयोग अनुष्ठान में तभी प्रभावी होगा जब साधक उसमें अंतर्निहित मृत्यु की गरिमा और आत्मा की अमरता को पहचानकर ही उसे छुएगा। गुरु यह स्पष्ट करता है कि कोई भी अवशेष साधना में तभी पवित्र बनता है, जब उसे श्रद्धा, संयम और नैतिकता के साथ ग्रहण किया जाए। इसके लिए विशेष शिक्षाएँ दी जाती हैं-

जैसे कि कौन-सी अस्थि किस प्रकार की साधना के लिए उपयुक्त है, उसे कहाँ और कैसे संग्रहित करना है, शुद्धि कैसे करनी है, और मंत्रों से उसमें ऊर्जा कैसे जागृत करनी है। यह संपूर्ण प्रक्रिया गुरु-शिष्य संबंध की आध्यात्मिक परिपक्वता पर आधारित होती है।

गुरु यह भी सिखाता है कि इन अवशेषों का उपयोग केवल साधक की आत्मिक प्रगति के लिए हो, न कि किसी भौतिक लाभ या शक्ति प्रदर्शन के लिए। उदाहरणतः जब साधक किसी खोपड़ी पर भैरवी यंत्र अंकित करता है, तो गुरु उसे केवल रेखाएँ नहीं सिखाता, बल्कि यह भी सिखाता है कि उन रेखाओं में मृत्यु, चेतना और मुक्ति का कौन-सा रहस्य छिपा है। यह शिक्षाएँ उसे भटकाव से बचाती हैं और तंत्र की सीमाओं को पार किए बिना उसकी ऊर्जा को नियंत्रित करती हैं। शमशान में रात के एकांत में जब साधक भय, थकावट और संशय से घिरता है, तब वही गुरु की दी गई शिक्षाएँ उसे भीतर से स्थिर बनाती हैं। इसलिए अघोरी परंपरा में गुरु केवल अनुष्ठान का शिक्षक नहीं, बल्कि साधना का जीवंत स्तंभ होता है, जो मृत शरीर की अस्थियों में भी आत्मा की उपस्थिति दिखाता है। इस प्रकार, गुरु की दी गई शिक्षाएँ मानव अवशेषों के उपयोग को एक गूढ़, नैतिक और आध्यात्मिक विधि में बदल देती हैं, जो साधक को तांत्रिक परिपक्वता और भैरवी की कृपा के मार्ग पर अडिग रखती हैं।

आध्यात्मिक शक्ति का स्रोत

अघोरी साधना में मानव अवशेषों को केवल प्रतीक नहीं, बल्कि ऊर्जा और चेतना के एक जीवंत स्रोत के रूप में देखा जाता है। खोपड़ी, अस्थियाँ, और हड्डियों से बने यंत्र या उपकरण साधक के लिए एक ऐसे माध्यम बन जाते हैं, जिनसे वह भैरवी की संहारक और करुणामयी दोनों ही शक्तियों से जुड़ सकता है। अघोरी मानते हैं कि जब किसी शरीर से प्राण निकल जाते हैं, तो उसमें कुछ समय तक एक सूक्ष्म ऊर्जा स्थायी रहती है, जो तंत्र की विशिष्ट विधियों द्वारा पुनः जाग्रत की जा सकती है। यही कारण है कि अस्थियों से बनी माला, खोपड़ी में रखा गया तांत्रिक प्रसाद, या अस्थि-चूर्ण से निर्मित यंत्र केवल प्रतीकात्मक वस्तुएँ नहीं होतीं, बल्कि साधक के लिए शक्ति-सम्प्रेषण के द्वार बन जाती हैं। जब साधक इन माध्यमों के साथ मंत्र-जाप करता है-जैसे "ॐ भैरवी भयंकरि स्वाहा"-तो वे अवशेष साधक की चेतना को एक विशिष्ट ऊर्जावान स्थिति में पहुंचा देते हैं, जहाँ वह स्थूल देह की सीमाओं को लांघकर आत्मा की गहराई में प्रवेश करता है।

यह ऊर्जा-संपन्न स्थिति साधक को तांत्रिक सिद्धियों की ओर प्रेरित करती है-जैसे आत्मिक निर्भीकता, मृत्यु की स्वीकृति, उच्चतर ध्यान की अवस्था और चेतना की एकाग्रता। शमशान का मौन वातावरण इस ऊर्जा को और अधिक तीव्र बनाता है, जहाँ चारों ओर मृत्यु की उपस्थिति साधक के भीतर एक विशेष स्थिरता और

आत्मस्वीकृति का निर्माण करती है। गुरु इस शक्ति को नियंत्रित करना सिखाता है, ताकि साधक भ्रमित न हो या किसी नकारात्मक ऊर्जा के प्रभाव में न आ जाए। अघोरी मानते हैं कि शक्ति तभी स्थायी बनती है जब उसे आत्मबोध और नैतिकता के साथ साधा जाए। इसलिए मानव अवशेषों का उपयोग शक्ति प्राप्ति का केवल माध्यम नहीं, बल्कि साधक की अंतरात्मा के रूपांतरण का यंत्र बन जाता है। इस प्रकार, मानव अवशेष अघोरी साधना में एक जीवंत और दिव्य स्रोत बन जाते हैं, जो साधक को तांत्रिक उन्नयन, आध्यात्मिक संतुलन और भैरवी की पूर्ण कृपा की दिशा में ले जाते हैं।

अन्य परंपराओं से तुलना

मानव अवशेषों का उपयोग अघोरियों की साधना में जितना केंद्रीय और गूढ़ स्थान रखता है, उतना किसी अन्य भारतीय या वैश्विक आध्यात्मिक परंपरा में नहीं मिलता। अघोरी साधना में खोपड़ी, अस्थियाँ और शमशान की राख तांत्रिक ऊर्जा के माध्यम नहीं, बल्कि आत्म-साक्षात्कार के उपकरण होते हैं। इसकी तुलना यदि वैदिक परंपरा से की जाए, तो वहाँ मृत देह को तुरंत अग्नि को समर्पित कर शुद्धिकरण की प्रक्रिया अपनाई जाती है। वैदिक यज्ञों में किसी प्रकार के मानव अवशेषों का कोई स्थान नहीं होता। वहाँ मृत्यु को एक संस्कार के रूप में देखा जाता है, जबकि अघोरी उसे साधना का प्रवेशद्वार मानते हैं। इसी प्रकार, बौद्ध वज्रयान परंपरा में भी खोपड़ी और अस्थियाँ ध्यान में प्रतीकात्मक रूप से प्रयुक्त होती हैं,

पर उनका उद्देश्य अधिकतर शून्यता और करुणा की अनुभूति को जागृत करना होता है, न कि संहारक शक्ति को साधना।

शैव और शाक्त तंत्र परंपराओं में भी शमशान साधना की अवधारणाएँ मिलती हैं, परंतु वहाँ मानव अवशेषों का प्रयोग अघोरी परंपरा जितना खुला और गूढ़ नहीं होता। वहाँ खोपड़ी या अस्थि का प्रयोग अधिकतर प्रतीकात्मक होता है, जैसे कि भैरव की मूर्ति में या काली के चित्रण में, लेकिन अघोरी इसे अपने साधना का केंद्र बनाते हैं। पश्चिमी तांत्रिक परंपराओं में भी हड्डियों या मृत्यु प्रतीकों का प्रयोग होता है, पर वह अघोरियों जैसे दार्शनिक गहराई और आध्यात्मिक शुद्धता से संपन्न नहीं होता। अघोरी गुरु साधक को सिखाता है कि किसी भी अस्थि या खोपड़ी का उपयोग करने से पहले उसे भैरवी की चेतना के साथ संधान करना आवश्यक है, अन्यथा यह साधना की मर्यादा भंग हो सकती है। इस तुलना से स्पष्ट होता है कि अघोरी परंपरा ने मानव अवशेषों को न केवल साधन रूप में, बल्कि चेतना रूप में प्रतिष्ठित किया है। इस प्रकार, अघोरी साधना में मानव अवशेषों का उपयोग एक ऐसा गूढ़ और विशिष्ट तांत्रिक अनुशासन है, जो अन्य परंपराओं से इसे अलग करता है और साधक को जीवन-मृत्यु के द्वैत से परे आत्मबोध की ओर ले जाता है।

नैतिक प्रश्न और जवाब

मानव अवशेषों के उपयोग को लेकर समाज में नैतिकता से जुड़े कई प्रश्न उठते हैं, जिनका उत्तर अघोरी साधना की दार्शनिक और

आध्यात्मिक दृष्टि में निहित होता है। सामान्यतः समाज यह मानता है कि मृत शरीर के अवशेषों का उपयोग पूजा या अनुष्ठान में करना अपवित्र, असंवेदनशील और अमानवीय है। यह धारणा भारतीय संस्कारों की उस गहराई से उपजती है जहाँ मृत शरीर को पवित्र माना जाता है और उसे छूना भी वर्जित होता है। अघोरी साधना इस विचार के ठीक विपरीत जाती है-वह मानती है कि यदि मृत शरीर से डरना सिखाया गया तो मृत्यु के पार जीवन का बोध कैसे होगा। इसलिए जब अघोरी किसी खोपड़ी या अस्थि का प्रयोग करता है, तो वह उसे नष्ट किए गए शरीर का नहीं, बल्कि मुक्त हुई आत्मा की चेतना का प्रतीक मानता है। यह विचार उस दर्शन से जुड़ा है जहाँ आत्मा अमर है और शरीर केवल एक अस्थायी वस्त्र।

इन नैतिक प्रश्नों का उत्तर गुरु साधक को व्यावहारिक उदाहरणों और तांत्रिक शिक्षाओं के माध्यम से देता है। गुरु सिखाता है कि कोई भी अवशेष तभी प्रयोग में लाया जाना चाहिए जब वह परित्यक्त हो, बिना किसी की इच्छा के विरुद्ध लिया गया हो, और उसका उपयोग केवल आत्मिक प्रगति के लिए हो। इस सिद्धांत के अनुसार अघोरी शवों का अनादर नहीं करते, बल्कि उन्हें श्रद्धा से उठाते हैं, उनके साथ मंत्रोच्चारण करते हैं, और उन्हें एक साधना पात्र के रूप में देखते हैं। समाज में व्याप्त भ्रांतियों को दूर करने के लिए आवश्यक है कि अघोरी साधना को केवल बाहरी आचरण से नहीं, बल्कि उसके अंतर्निहित उद्देश्य-मृत्यु के भय से मुक्ति और आत्म-साक्षात्कार-से समझा जाए। गुरु यह भी सिखाता है कि यदि कोई साधक इन

अवशेषों का उपयोग किसी भी प्रकार की क्षुद्र शक्ति, तांत्रिक हिंसा या आत्म-प्रदर्शन के लिए करता है, तो वह तंत्र की मर्यादा भंग करता है। इस प्रकार, अघोरी परंपरा में नैतिकता का अर्थ समाज द्वारा स्थापित नियम नहीं, बल्कि आत्मा की गरिमा, साधना की शुद्धता और ब्रह्मांडीय चेतना के प्रति समर्पण होता है। अतः मानव अवशेषों के उपयोग से जुड़े नैतिक प्रश्नों का उत्तर एक परिपक्व और उच्चतम तांत्रिक दृष्टिकोण में निहित है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-परिपूर्णता की ओर ले जाता है।

अध्याय 30:
शमशान भैरवी और अघोरी साधना का आध्यात्मिक एकीकरण

ऐतिहासिक महत्व: शमशान भैरवी और अघोरियों का संयुक्त प्रभाव

शमशान भैरवी और अघोरी साधना का संबंध भारतीय तांत्रिक इतिहास में एक अद्वितीय समन्वय का उदाहरण प्रस्तुत करता है, जो केवल धार्मिक आस्था नहीं बल्कि एक सामाजिक, दार्शनिक और आध्यात्मिक विद्रोह का स्वरूप भी है। अघोरी साधना की जड़ें कपालिका परंपरा से जुड़ी हैं, जो प्राचीन भारत में शमशान को साधना का केन्द्र बनाकर समाज के स्थापित ढांचों को चुनौती देती थी। इस परंपरा में भैरवी को केवल एक देवी नहीं, बल्कि संपूर्ण प्रकृति और ब्रह्मांडीय ऊर्जा की मां के रूप में स्वीकारा गया, जो जीवन और मृत्यु दोनों की नियंत्रक हैं। कपालिकों की यह साधना समय के साथ अघोरी परंपरा में विकसित हुई, जिसमें शमशान, शव और मृत्यु जैसे विषय केवल प्रतीक नहीं, बल्कि साधना के उपकरण बन गए। अघोरी साधकों ने मृत्यु को पराजित करने का प्रयास नहीं किया, बल्कि उसे स्वीकार कर जीवन के अंतिम सत्य की ओर उन्मुख हो जाने का मार्ग चुना।

इस ऐतिहासिक परंपरा को बाबा किनाराम के युग में एक नया आयाम प्राप्त हुआ, जिन्होंने अघोरी पंथ को समाज में एक सशक्त स्वर के रूप में प्रतिष्ठित किया। उन्होंने भैरवी साधना को केवल तांत्रिक प्रयोग नहीं रहने दिया, बल्कि उसे सामाजिक समरसता, मानव-मुक्ति और आत्म-साक्षात्कार के साधन के रूप में प्रस्तुत किया। बाबा किनाराम ने अघोराचार्य के रूप में इस विचारधारा को बनारस, गिरनार, और अन्य तीर्थ क्षेत्रों में पुनर्प्रतिष्ठित किया, जहां शमशान केवल मृत्यु का घर नहीं, बल्कि पुनर्जन्म की प्रयोगशाला बन गया। उनके द्वारा स्थापित अघोर आश्रम आज भी इस परंपरा को संरक्षित रखते हैं। इस ऐतिहासिक समन्वय में शमशान भैरवी की उपासना और अघोरी जीवनशैली ने मिलकर एक ऐसी साधना को जन्म दिया, जो मानवता को न केवल मोक्ष की दिशा में ले जाती है, बल्कि समाज को भी अपने भीतर देखने का दर्पण प्रदान करती है।

आध्यात्मिक योगदान: भैरवी और अघोरियों की साधना का प्रभाव

शमशान भैरवी और अघोरियों की संयुक्त साधना का आध्यात्मिक योगदान केवल तंत्र के ग्रंथों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह चेतना के वास्तविक अनुभव में प्रत्यक्ष रूप से महसूस किया गया है। अघोरी साधक, जो भैरवी को जीवन और मृत्यु दोनों की अधिष्ठात्री मानते हैं, अपनी साधना में शरीर, मन और आत्मा की समस्त सीमाओं को पार करने का प्रयास करते हैं। उनकी पूजा पद्धति

में न तो केवल आस्था है और न ही केवल डर, बल्कि एक ऐसा अनुष्ठान है, जिसमें साधक का समर्पण, उसकी सीमाओं को चुनौती देता है। अघोरियों के लिए भैरवी केवल मूर्ति नहीं, बल्कि चेतना की वह अवस्था है, जो साधक को अंधकार से निकालकर आंतरिक प्रकाश की ओर ले जाती है। उनका मंत्र, उनका ध्यान और उनकी साधना शरीर के बाहर नहीं, बल्कि शरीर के भीतर के ब्रह्मांड को जागृत करने की चेष्टा है।

इस आध्यात्मिक प्रक्रिया में जो प्रमुख योगदान सामने आता है, वह है आत्म-मुक्ति की संकल्पना का पुनर्परिभाषण। अघोरी साधना के माध्यम से व्यक्ति यह सीखता है कि मोक्ष केवल मृत्यु के बाद की कोई स्थिति नहीं, बल्कि यह जीवन के बीचोंबीच, सांसारिक अस्तित्व को पूरी तरह स्वीकार करते हुए प्राप्त की जा सकती है। इस विचारधारा ने तंत्र को केवल पंथ नहीं, बल्कि एक चेतना की यात्रा बना दिया है। अघोरी जीवनशैली, जिसमें शरीर के विकार, सामाजिक निषेध और मानसिक भय सभी समाहित होते हैं, भैरवी की कृपा से एक पवित्र साधना बन जाती है। अघोरियों का यह योगदान इसलिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि उन्होंने साधना को केवल ब्राह्मणवादी अनुष्ठानों से अलग करके सामान्य मनुष्य के लिए भी साध्य और सुलभ बना दिया। इस प्रकार, भैरवी और अघोरियों की साधना एक ऐसी विरासत बन गई है, जो आत्मा को जगाने और सामाजिक बंधनों को तोड़ने का प्रेरक माध्यम है।

सामाजिक प्रभाव: समाज पर भैरवी और अघोरियों का प्रभाव

शमशान भैरवी और अघोरियों की साधना का सामाजिक प्रभाव परंपरागत धार्मिक संरचनाओं से टकराता हुआ, समाज में एक नए प्रकार की सोच और चेतना का संचार करता है। अघोरियों की साधना जहां सामान्यजन के लिए रहस्यमयी, भयावह और अपवित्र प्रतीत होती है, वहीं उनकी सेवा, भिक्षाटन, और समाज के तिरस्कृत वर्गों के लिए की गई सहायता उन्हें एक गूढ़ परंतु करुणामयी संन्यासी में रूपांतरित कर देती है। अघोरी साधक शमशान को केवल मृत्यु का स्थान नहीं, बल्कि समाज की सभी रूढ़ियों का खंडन करने वाला मैदान मानते हैं। यही कारण है कि उन्होंने समाज के उस तबके के साथ जीवन बिताया, जिसे समाज ने छूआछूत, जाति, लिंग, रोग या विकृति के नाम पर बहिष्कृत कर दिया था।

इस साधना का सबसे बड़ा सामाजिक प्रभाव यह रहा कि अघोरियों ने मृत्यु और विकृति को सामान्य मानव व्यवहार से जोड़ दिया, जो भारतीय समाज में भय और निषेध का केंद्र रहा है। उदाहरण के लिए, बनारस के बाबा सिद्धार्थ अघोरी ने कुष्ठ रोगियों, मानसिक रोगियों और अनाथ बच्चों के लिए जो आश्रय और सेवा केंद्र स्थापित किए, वे तंत्र साधना को सामाजिक कार्य से जोड़ने का अप्रतिम उदाहरण बने। हालांकि समाज का एक बड़ा वर्ग आज भी अघोरियों की साधना को अंधविश्वास, तंत्र विद्या या अज्ञात भय से जोड़ता है, परंतु उनके कार्यों की पवित्रता और भैरवी के प्रति उनका

समर्पण एक ऐसा पुल है, जो इन भ्रांतियों को धीरे-धीरे तोड़ रहा है। यह सामाजिक प्रभाव केवल परंपरा की स्वीकृति नहीं, बल्कि सामाजिक उत्तरदायित्व की एक नई परिभाषा है। इस प्रकार, शमशान भैरवी और अघोरियों की साधना का सामाजिक प्रभाव एक अद्वितीय समन्वय प्रस्तुत करता है, जहाँ तंत्र केवल एकांत की साधना नहीं, बल्कि समाज से जुड़कर जीवन का नवमूल्यांकन बन जाता है।

आत्मिक अनुभवों और शून्यावस्था की साधना

शमशान भैरवी की साधना का एक अत्यंत गहन चरण वह है जहाँ साधक अपने आत्मिक अनुभवों की यात्रा में शून्यता की स्थिति तक पहुँचता है। यह साधना बाह्य अनुष्ठानों से अधिक आंतरिक उपस्थिति की अनुभूति पर केंद्रित होती है। जब अघोरी शमशान में रात्रिकालीन साधना करते हैं, तब उन्हें अपने भीतर की प्रत्येक हलचल-डर, पीड़ा, मोह, अभिमान-को खंडित करना होता है। यह प्रक्रिया साधक को धीरे-धीरे उस मौन की ओर ले जाती है, जहाँ न विचार शेष रहते हैं और न ही कोई आकांक्षा। यह मौन, साधक के भीतर एक शून्य को जन्म देता है-एक ऐसी स्थिति जहाँ केवल चेतना रह जाती है, और वह चेतना किसी स्वरूप, नाम, या गंध से परे होती है। इसी अवस्था को तांत्रिक भाषा में “तुरीयातीत अवस्था” कहा जाता है, जहाँ साधक केवल साक्षी बन जाता है। शमशान की अंधकारमय, परंतु ऊर्जा से भरी हुई उपस्थिति, साधक को स्वयं की सीमाओं से बाहर ले जाने में सहायक बनती है।

इस अवस्था तक पहुँचने के लिए साधक का सबसे बड़ा सहायक उसका गुरु होता है, जो उसे मृत्यु के दर्शन से डरे बिना उस ओर देखने का साहस देता है। साधक कई रातों तक एक ही स्थान पर मौन साधना करता है, जहाँ उसकी दृष्टि केवल एक बिंदु पर होती है-भैरवी की अनुभूति पर। धीरे-धीरे वह बिंदु लुप्त हो जाता है और साधक स्वयं उस अनुभूति में विलीन हो जाता है। इस चरण में साधक अपने शरीर के अस्तित्व को भी भुला देता है और केवल एक कंपन रह जाता है, जो भैरवी की चेतना का प्रतिबिंब होता है। इस अनुभव के बाद साधक न तो भयभीत रहता है, न ही मोहग्रस्त; बल्कि वह एक ऐसी स्थितिप्रज्ञता को प्राप्त करता है, जो उसे समाज, शरीर, और मन के सीमित घेरे से मुक्त कर देती है। यही शून्यावस्था वह द्वार बनती है, जहाँ से आत्म-साक्षात्कार का मार्ग प्रारंभ होता है।

मानव-मुक्ति और दृढ़ समाधि की प्राप्ति

अघोरी साधना का अंतिम और सर्वोच्च लक्ष्य 'मानव-मुक्ति ' है-एक ऐसी स्थिति जिसमें साधक जीवन और मृत्यु दोनों के द्वैत से ऊपर उठकर 'दृढ़ समाधि 'की स्थिति प्राप्त करता है। यह साधना का वह बिंदु है, जहाँ साधक न किसी क्रिया में लीन होता है, न किसी संकल्प में बंधा रहता है, बल्कि वह केवल "है" की अवस्था में स्थिर हो जाता है। तांत्रिक ग्रंथों में इस अवस्था को "ब्रह्म स्थिति" कहा गया है, जहाँ साधक अपने चित्त के समस्त विक्षेपों को शांत करके केवल चेतना का अनुभव करता है। यह समाधि किसी गुफा या

शमशान तक सीमित नहीं रहती, बल्कि साधक के भीतर ही वह स्थान बन जाता है, जहाँ कोई विकार प्रवेश नहीं करता। इस अवस्था में साधक अपने इर्द-गिर्द के संसार को देखता है, समझता है, परंतु उसमें लिप्त नहीं होता। वह जीता है, पर संसार उसे बाँध नहीं पाता। वह मृत्यु को देखता है, पर उससे डरता नहीं, क्योंकि वह जान चुका होता है कि मृत्यु केवल एक परिवर्तन है, अंत नहीं।

इस समाधि की प्राप्ति केवल अभ्यास से नहीं, बल्कि भैरवी की कृपा और गुरु के मार्गदर्शन से होती है। गुरु साधक को यह समझाते हैं कि मुक्ति केवल शरीर छोड़ने में नहीं, बल्कि मोह, द्वेष, और भ्रम को छोड़ने में है। साधक जब शमशान में वर्षों तक साधना कर चुका होता है, तब एक दिन उसे अनुभव होता है कि अब वह मृत्यु को एक घटना के रूप में देख सकता है, बिना किसी प्रतिरोध के। इस अनुभव से उसकी चेतना में स्थायित्व आता है-न तो वह क्रोधित होता है, न विचलित, न ही अभिलाषी। यह वह 'दृढ़ समाधि 'है जो किसी तपस्या या व्रत का फल नहीं, बल्कि सम्पूर्ण आत्मिक समर्पण का परिणाम होती है। यही वह स्थिति है जहाँ अघोरी साधक स्वयं शमशान भैरवी के प्रतीक बन जाते हैं-चलते-फिरते समाधिस्थ प्राणी, जिनका जीवन ही दूसरों के लिए एक मार्गदर्शन बन जाता है।

शव के साथ भैरवी की मूर्ति की स्थिति और उसका प्रतीकवाद

शमशान भैरवी की मूर्तियों में उन्हें अक्सर एक शव के ऊपर खड़े या बैठे हुए चित्रित किया जाता है, जो एक अत्यंत गूढ़ तांत्रिक

प्रतीक है। यह दृश्य सामान्य दृष्टि से भयावह प्रतीत हो सकता है, परंतु तांत्रिक साधना में इसका महत्व अत्यंत ऊँचा है। शव के ऊपर स्थित भैरवी यह संकेत देती हैं कि मृत्यु पर नियंत्रण, आत्मा की विजय का प्रतीक है। मृत्यु, जो आम जनमानस के लिए भय और अंधकार का प्रतीक है, वह भैरवी के चरणों में एक शरणागत अवस्था में दिखती है। यह एक स्पष्ट संदेश है कि जो साधक मृत्यु से नहीं डरता, वही भैरवी की कृपा का पात्र बन सकता है। यह स्थिति भैरवी की संहारक और मुक्तिदायिनी दोनों ही शक्तियों को दर्शाती है, जो एक ही समय में भय भी हैं और करुणा भी।

तांत्रिक परंपरा में यह मूर्ति एक मानसिक प्रयोगशाला की भाँति कार्य करती है। जब साधक इस मूर्ति के समक्ष बैठकर ध्यान करता है, तो वह मृत्यु के ऊपर खड़ी चेतना को अनुभव करता है, जिससे उसका मन भय, मोह और आकर्षण से मुक्त होने लगता है। इस मूर्ति में शव किसी व्यक्ति विशेष का प्रतीक नहीं, बल्कि संपूर्ण भौतिक अस्तित्व का प्रतीक होता है-जो नश्वर है, सीमित है, और परिवर्तनशील है। भैरवी का उस पर स्थित होना इस बात का सूचक है कि चेतना इन सीमाओं को पार करके उस परम अवस्था में पहुँच सकती है, जहाँ न कोई जन्म है, न मृत्यु। यह प्रतीक तंत्र साधना को केवल पूजा नहीं, बल्कि आत्म-ज्ञान की गहन प्रक्रिया बना देता है। अघोरियों के लिए यह मूर्ति केवल एक पूजनीय प्रतिमा नहीं, बल्कि साधना का वह बिंदु है, जहाँ मृत्यु का भय समाप्त होता है और आत्मा अपने शुद्ध स्वरूप में प्रतिष्ठित होती है।

शमशान भैरवी की खोपड़ी-मालाओं और अस्थियों से अलंकृत मूर्तियाँ

शमशान भैरवी की मूर्तियों में प्रयुक्त खोपड़ी-मालाएँ और अस्थियों से बने अलंकरण तांत्रिक प्रतीकवाद की चरम अभिव्यक्ति हैं, जिनका उद्देश्य केवल डर या प्रभाव नहीं बल्कि गहरी आध्यात्मिक शिक्षा देना है। इन खोपड़ी-मालाओं में हर खोपड़ी किसी न किसी नाश किए गए विकार या अहंकार की प्रतीक होती है, जो साधक के आत्मिक शुद्धिकरण का संकेत देती है। यह कोई सामान्य गहना नहीं, बल्कि प्रत्येक माला का मनोवैज्ञानिक और तांत्रिक महत्व है-कभी यह वर्णमाला की 50 ध्वनियों का प्रतिनिधित्व करती है, जो सृष्टि के आधार हैं, तो कभी यह साधक के द्वारा पराजित किए गए 108 सांसारिक बंधनों का संकेत देती है। जब अघोरी साधक भैरवी की इस खोपड़ी-मालाधारी मूर्ति के समक्ष ध्यान करता है, तो उसे यह स्मरण होता है कि उसका मार्ग केवल पूजन का नहीं, बल्कि त्याग और अंतर्मंथन का है-हर खोपड़ी उसके भीतर के एक दोष या भ्रम के विनाश की याद दिलाती है।

अस्थियों से अलंकृत भैरवी का यह स्वरूप साधक को उन सीमाओं की ओर देखने को प्रेरित करता है, जिन्हें समाज अस्वीकार करता है, पर जिन्हें तंत्र स्वीकार करके पवित्र बना देता है। जब भैरवी की कमर पर अस्थियों की पट्टियाँ या हाथों में अस्थियों के कंगन होते हैं, तो वे यह संदेश देती हैं कि मृत्यु और विकृति भी साधना का अंग

हैं, जिन्हें डरकर नहीं, बल्कि प्रेमपूर्वक स्वीकार किया जाना चाहिए। यह मूर्त रूप तंत्र के मूल दर्शन को प्रत्यक्ष रूप में व्यक्त करता है, जहाँ पवित्रता किसी बाहरी वस्तु में नहीं, बल्कि साधक की दृष्टि और चेतना में होती है। इसलिए अघोरी जब भैरवी के इस रूप की आराधना करता है, तो वह विकृति में सौंदर्य, मृत्यु में जीवन, और नाश में नवसृजन की अनुभूति करता है। यह रूप उसे अपने भय से पार ले जाने का माध्यम बनता है। इस प्रकार, खोपड़ी-मालाओं और अस्थियों से अलंकृत भैरवी की मूर्तियाँ अघोरी साधना के लिए केवल पूजा की वस्तु नहीं, बल्कि चेतना-परिवर्तन का माध्यम हैं, जो साधक को मृत्यु के पार की शुद्धता से जोड़ती हैं।

त्रिनेत्र और उसके पीछे का तांत्रिक रहस्य

शमशान भैरवी की मूर्ति में स्थित त्रिनेत्र केवल सौंदर्य या भय का प्रतीक नहीं, बल्कि वह तांत्रिक रहस्य का वह द्वार है, जो साधक को दृष्टि के उस स्तर पर पहुँचाता है जहाँ केवल बाहरी संसार नहीं, बल्कि अंतःप्रकाश भी देखा जा सकता है। यह तीसरी आँख शिव और शक्ति की गहन संयुक्त चेतना का प्रतीक है, जो समय, स्थान और मृत्यु की सीमाओं को भेदने में सक्षम होती है। जब अघोरी साधक भैरवी के त्रिनेत्र की साधना करता है, तो वह स्वयं की दृष्टि को भीतर की ओर मोड़ने का प्रयास करता है। यह प्रक्रिया साधक को भूत, भविष्य और वर्तमान के द्वंद्व से मुक्त करती है और उसे तुरिया-अर्थात चैतन्य की चौथी अवस्था-की ओर ले जाती है। त्रिनेत्र

का यह रूप भैरवी की चेतना की परिपक्वता का संकेत है, जो न केवल संहार करती है, बल्कि देखती भी है-वास्तविकता को, भ्रांति को, और चेतना के कंपन को।

इस त्रिनेत्र की साधना में साधक अपनी दो बाह्य आँखों को मूंदकर तीसरी आँख की आंतरिक दृष्टि को जाग्रत करता है। वह ध्यान करता है कि यह दृष्टि न केवल रूपों को देखती है, बल्कि उनके परे स्थित भाव, ऊर्जा, और सूक्ष्म कंपन को भी पहचानती है। अघोरी परंपरा में यह तीसरी आँख तंत्र का सबसे शक्तिशाली साधन मानी जाती है, क्योंकि इसके माध्यम से साधक केवल मृत्यु को ही नहीं देखता, बल्कि उसके पार स्थित चेतना को भी अनुभव करता है। भैरवी का त्रिनेत्र साधक को यह शिक्षा देता है कि जब तक दृष्टि केवल बाहरी संसार पर केंद्रित है, तब तक साधना अधूरी है। परंतु जब दृष्टि अंतर्मुखी हो जाती है, तो हर शमशान, हर शव, हर कंपन में उसे भैरवी की उपस्थिति दिखाई देती है। इस प्रकार, त्रिनेत्र न केवल मूर्ति का अंग है, बल्कि तंत्र साधना की चाभी है, जो साधक को आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है, जहाँ सत्य, शिव और सुंदर एकाकार हो जाते हैं।

अध्याय 31:
तंत्रिक समाधि – अन्तर्वैज्ञानिक अभिव्यक्ति के आयाम

तंत्रिक समाधि की अवधारणा और अंतर्दृष्टि

तंत्रिक समाधि अघोरी साधना का वह विशिष्ट और वैज्ञानिक चरण है जिसमें साधक न केवल चेतना की सीमाओं को पार करता है, बल्कि अपने अंतर्मन के भीतर एक प्रयोगशाला स्थापित कर उसमें आत्मिक परीक्षण करता है। यह स्थिति केवल ध्यान अथवा समाधि का स्थिर भाव नहीं है, बल्कि एक गहन प्रयोगात्मक प्रक्रिया है, जहाँ मन, चित्त और बुद्धि, तीनों मिलकर एक परिष्कृत ऊर्जा प्रणाली का निर्माण करते हैं। साधक इस साधना में श्वास की गति, इन्द्रियों की प्रतिक्रिया, चेतना की स्थिति, और विचार की आवृत्ति को नियंत्रित कर तंत्रिक ऊर्जा के अदृश्य प्रवाह को पकड़ने का प्रयास करता है। "विज्ञान भैरव तंत्र" जैसे ग्रंथों के माध्यम से वह भैरवी की उपस्थिति को न केवल साधनात्मक रूप में, बल्कि संवेदनात्मक स्तर पर अनुभव करता है। यह अनुभव ऐसा होता है जैसे साधक का शरीर विज्ञान की सूक्ष्म तरंगों से संचालित हो रहा हो, जहाँ चेतना केवल जागरूक नहीं, बल्कि तरंगात्मक और कम्पनशील होती है।

इस प्रक्रिया में साधक आत्म-नियंत्रण, ऊर्जा-प्रवाह और विचार-शून्यता जैसे गुणों का वैज्ञानिक अवलोकन करता है। वह

केवल भावनाओं को नहीं देखता, बल्कि उनकी आवृत्तियों, स्थायित्व और परिणामों का परीक्षण करता है। यह प्रक्रिया चक्रों और नाड़ियों के विज्ञान से जुड़ी होती है, जहाँ साधक मूलाधार से लेकर सहस्रार तक ऊर्जा की परतों को जाग्रत करता है और प्रत्येक परत का तांत्रिक विश्लेषण करता है। इस स्थिति में "तंत्रिक समाधि" केवल आत्म-साक्षात्कार का साधन नहीं रहती, बल्कि चेतना के विज्ञान का एक सजीव प्रयोग बन जाती है, जिसमें साधक स्वयं साधन, साधक और प्रयोगकर्ता होता है। यह अवस्था आत्मा के गूढ़तम तल तक पहुँचने की वह विधा है, जो न केवल अघोरी साधना की चरम स्थिति है, बल्कि तंत्र के विज्ञान में गहराई से उतरने का प्रवेशद्वार भी है।

चक्षु ऊर्जा एवं वक्रांग-नियंत्रण द्वारा तंत्रिक आद्यात्मकता

तंत्रिक समाधि का अगला चरण चक्षुओं की ऊर्जा और शरीर के वक्रांगों के नियंत्रण द्वारा आत्मचेतना के आद्य स्रोत को जाग्रत करना है। अघोरी साधक यह मानते हैं कि आंखें केवल देखने का माध्यम नहीं, बल्कि चेतना की सूक्ष्म तरंगों को ग्रहण और प्रसारित करने का केन्द्र हैं। जब साधक दृष्टि को त्राटक, दृष्टि-विकेंद्रीकरण, अथवा दीर्घकालिक स्थिर दृष्टि के माध्यम से नियंत्रित करता है, तब वह एक विशेष कंपनात्मक ऊर्जा को सक्रिय करता है, जिसे तांत्रिक ग्रंथों में "नेत्र-प्रवाह" या "दृष्टि-चेतना" कहा गया है। यह प्रवाह शरीर के वक्र अंगों-रीढ़, कंधों, जंघाओं, और घुटनों-से समन्वय में गति

करता है। साधक इन वक्रताओं को न केवल शारीरिक अनुशासन में लाता है, बल्कि उन्हें ऊर्जा संचरण के वाहन के रूप में विकसित करता है।

इस प्रक्रिया में साधक विशेष मुद्राओं और बंधों का प्रयोग करता है-जैसे महा वक्र मुद्रा, जहाँ शरीर को चंद्र-रेखा की भांति मोड़कर वह ऊर्जा को ऊपर की ओर प्रवाहित करता है। चक्रों और नाड़ियों के बीच जब यह दृष्टि और वक्रता का समन्वय स्थापित होता है, तो साधक को अनुभव होता है कि उसकी चेतना कोई स्थिर इकाई नहीं, बल्कि एक गतिशील ऊर्जा संरचना है। तंत्रिक समाधि की इस अवस्था में, साधक न केवल आत्मा का अनुसंधान करता है, बल्कि शरीर को एक वैज्ञानिक यंत्र की तरह उपयोग करता है। यहां पर साधना का प्रत्येक अंग एक प्रयोग की तरह कार्य करता है-दृष्टि से तरंग, मुद्रा से प्रवाह, और शरीर से संतुलन। यह अनुभव भैरवी की उस ऊर्जा से जुड़ने का माध्यम बनता है, जो केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि चेतना के वैज्ञानिक विस्तार का प्रमाण है।

काल–अकाल चिन्तन एवं विसंवादोत्पादन प्रक्रिया

तंत्रिक समाधि की तीसरी अवस्था साधक को ‘काल ’और ‘अकाल ’की सीमाओं को भेदने की प्रक्रिया में प्रवेश कराती है। अघोरी परंपरा में समय को केवल गणनात्मक धारणा नहीं, बल्कि एक ऊर्जा-क्षेत्र के रूप में देखा जाता है। साधक जब समाधि में प्रवेश करता है, तब वह न केवल समय के सामान्य प्रवाह से ऊपर उठता

है, बल्कि अपनी चेतना को 'समय से बाहर 'स्थित उस शून्य केंद्र में स्थापित करता है, जहाँ अनुभव, स्मृति, और भविष्य सभी एक साथ सिमट जाते हैं। यह स्थिति 'विसंवादोत्पादन 'की होती है-जहाँ साधक के भीतर विचार और अनुभव आपस में संघर्ष करते हैं, और फिर अचानक शून्य उत्पन्न होता है।

इस विसंवाद की अवस्था में साधक के भीतर दो स्वर उत्पन्न होते हैं-एक जो अस्तित्व को पकड़ना चाहता है और दूसरा जो अस्तित्व को छोड़ देना चाहता है। यही द्वैत की क्षणिक परिणति 'अकाल 'की अनुभूति है, जो ना तो वर्तमान है, ना ही अतीत या भविष्य, बल्कि केवल चेतना की नग्नता है। तंत्रिक साधना में इसे ही "काल-परिकल्पना का विस्फोट" कहा गया है। यह अनुभव गहन आंतरिक कम्पन और मानसिक गति के समाहार से उत्पन्न होता है, जिसमें साधक काल की तरंगों पर सवारी करता है और अंततः एक ऐसी अवस्था में पहुंचता है, जहाँ उसे केवल "होने" का बोध होता है-बिना समय, बिना दिशा, बिना स्मृति। यह वह क्षण होता है जब साधक भैरवी की अमूर्त ऊर्जा में विलीन हो जाता है और तंत्रिक समाधि उसे उस स्तर पर पहुँचा देती है जहाँ आत्मा स्वयं में विज्ञान बन जाती है।

आत्मचिन्तन के वैज्ञानिक आयाम

तंत्रिक साधना में आत्मचिन्तन केवल मनोवैज्ञानिक अभ्यास नहीं होता, बल्कि इसे एक पूर्णत: वैज्ञानिक प्रक्रिया के रूप में

अपनाया जाता है। इस प्रक्रिया में साधक स्वयं को एक प्रयोगशाला के रूप में देखता है, जिसमें विचारों की उत्पत्ति, भावनाओं की लहरें, इन्द्रियों की प्रतिक्रियाएँ और चित्त की धारणाएँ निरंतर परीक्षण की स्थिति में रहती हैं। जब साधक किसी विशेष मंत्र या मुद्रा का उपयोग करता है, तब वह केवल उसका धार्मिक प्रभाव नहीं देखता, बल्कि यह भी विश्लेषण करता है कि उस मंत्र के उच्चारण से उसकी श्वास की लय में क्या परिवर्तन हुआ, उसकी धड़कन किस प्रकार बदली, और मनोचेतना में किस प्रकार की तरंगें उत्पन्न हुईं। यह विश्लेषण केवल अनुभूति पर आधारित नहीं होता, बल्कि इसमें पुनरावृत्ति, पर्यवेक्षण, और संशोधन के वैज्ञानिक तत्व भी होते हैं। साधक यह जाँचता है कि किस प्रकार की ध्वनि या संकल्प उसकी चेतना को स्थिर करता है, कौन-से आन्तरिक चित्र उसकी भावनात्मक शक्ति को जाग्रत करते हैं, और कौन से स्मृति-पथ उसके ध्यान को भंग करते हैं। यह प्रक्रिया उसे केवल आध्यात्मिक रूप से नहीं बल्कि वैज्ञानिक अनुशासन में भी प्रशिक्षित करती है।

इस प्रयोगात्मक आत्मचिन्तन के माध्यम से साधक एक ऐसी स्थिति में पहुँचता है जहाँ वह अपने भीतर की समस्त क्रियाओं का साक्षी बन जाता है। उसकी चेतना अब प्रतिक्रियाशील नहीं रहती, बल्कि परीक्षणात्मक बन जाती है। वह केवल विचार नहीं करता, बल्कि विचार के कारण, प्रवाह और प्रभाव को भी मापता है। उदाहरणतः जब साधक "ह्रीं" या "ओं" जैसे बीज मंत्रों का प्रयोग करता है, तब वह देखता है कि इन ध्वनियों से उसके मस्तिष्क की

तरंगें किस आवृत्ति पर पहुँचती हैं, क्या उसकी दृष्टि की स्पष्टता बढ़ती है या कम होती है, और किस प्रकार शरीर की ऊर्जा उसकी नाड़ियों में प्रवाहित होती है। इस सबका उद्देश्य केवल साधना नहीं, बल्कि चेतना के भीतर एक ऐसी वैज्ञानिक संरचना को खड़ा करना है जो ज्ञान, अनुभव और विवेक के बीच संतुलन बना सके। आत्मचिन्तन की यह प्रक्रिया साधक को आत्म-साक्षात्कार की ओर नहीं, बल्कि आत्म-निरीक्षण की एक ऐसी गहराई में ले जाती है, जहाँ उसका प्रत्येक अनुभव नियंत्रित, परीक्षणीय और ज्ञान-उत्पादक हो जाता है।

अन्तरमन की उपस्थिति एवं वैज्ञानिक साक्षात्कार

तंत्रिक समाधि में अन्तरमन की उपस्थिति को अनुभव करने की प्रक्रिया केवल ध्यान या ध्यानावस्था में लीन होने से नहीं होती, बल्कि यह एक वैज्ञानिक अनुशासन की माँग करती है। साधक जब गहन साधना में प्रवेश करता है, तो वह अपने मस्तिष्क की तरंगों को महसूस करता है-बीटा, अल्फा, थीटा, डेल्टा-जो प्रत्येक एक विशिष्ट मानसिक अवस्था को इंगित करती हैं। वह जानता है कि इन तरंगों की अवस्था ही यह निर्धारित करती है कि उसकी चेतना कितनी गहराई में प्रवेश कर चुकी है। इस प्रक्रिया को ध्यान और जैव-प्रतिक्रिया के उपकरणों के साथ भी जोड़ा जा सकता है, जहाँ मस्तिष्क की विद्युत-क्रियाएँ, श्वास की गति, और त्वचा की प्रतिक्रिया से यह मापा जा सकता है कि साधक किस भाव और चेतना स्तर पर पहुँच चुका है।

इस अवस्था में साधक केवल ध्यान नहीं कर रहा होता, बल्कि वह अपने शरीर, चित्त और आत्मा के बीच एक वैज्ञानिक संवाद स्थापित कर रहा होता है। उदाहरणतः जब वह "काली काकली" मंत्र का प्रयोग करता है, तब उसकी श्वास धीमी होती है, ध्वनि की प्रतिध्वनि उसके शरीर के भीतर गूंजती है, और उसका मस्तिष्क धीरे-धीरे थीटा वेव्स की ओर बढ़ता है, जहाँ वह गहन अन्तर्दृष्टि की स्थिति में पहुँचता है। इस अनुभव में साधक देखता है कि उसकी चेतना में कौन से दृश्य उठ रहे हैं, उसका मन किस सीमा तक स्थिर है, और उसके इन्द्रियों की संवेदनशीलता किस प्रकार कम या अधिक हो रही है। वह जानता है कि कौन-सी मुद्रा, कौन-सा स्वर, और कौन-सी लय उसकी अन्तःचेतना को किस दिशा में ले जा रही है। यह सारा कार्य एक वैज्ञानिक प्रयोग की तरह होता है-नियंत्रण, प्रतिक्रिया, अवलोकन और निष्कर्ष। इस प्रक्रिया में साधक अब केवल आत्मा नहीं, बल्कि एक जाग्रत वैज्ञानिक चेतना का रूप बन जाता है, जो हर क्षण को माप रहा है, हर भाव को समझ रहा है, और हर तरंग को दिशा दे रहा है। यही वह स्तर है जहाँ तंत्र साधना आधुनिक चेतना-विज्ञान से मिलती है और तंत्रिक समाधि को एक वैज्ञानिक उपलब्धि बना देती है।

भावनात्मक अवसाद से ऊर्जा-उत्थान तक की प्रयोगशाला

तंत्र साधना में भावनाओं को केवल संवेदनात्मक दृष्टि से नहीं, बल्कि ऊर्जा के रूप में समझा जाता है। जब साधक किसी आंतरिक

पीड़ा, डर, या स्मृति के गहन दबाव से गुजरता है, तब वह उसे केवल मानसिक नहीं, बल्कि एक ऊर्जावान समस्या मानकर देखता है। यह स्थिति एक प्रयोगशाला की भाँति होती है, जहाँ प्रत्येक भावना एक ऊर्जावान घटक बन जाती है-कभी भारीपन, कभी गर्मी, कभी कंपन, और कभी रिक्तता। साधक जानता है कि यह भावना एक ऊर्जा रूप है, जिसे सही प्रक्रिया से परिवर्तित किया जा सकता है। वह प्राणायाम, मुद्रा, बीज मंत्र, और शरीर की मुद्राओं को ऐसे क्रम में रखता है कि यह ऊर्जाएं बदलने लगती हैं। जब वह भय महसूस करता है, तो उसका उद्देश्य होता है उस भय को "कंपन" में बदलना और फिर उस कंपन को ध्यान केंद्र में समाहित कर "शक्ति" बनाना।

यह प्रक्रिया एक वैज्ञानिक अनुसंधान जैसी होती है, जिसमें प्रयोग, फीडबैक, विश्लेषण और पुनरावृत्ति के चार स्तर होते हैं। साधक देखता है कि किसी विशेष अवस्था में उसके शरीर में कौन-सी प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई-क्या हृदय तेज धड़का, क्या आंखें नम हुईं, क्या सांसें असंतुलित हो गईं। वह इन्हें चिन्हित करता है और फिर उनका संतुलन विशेष मंत्रों या तांत्रिक मुद्राओं के माध्यम से करता है। उदाहरणतः "ह्रीं नमः कालभैरवाय" मंत्र का प्रयोग करते हुए वह अपने भय को एक ऐसी ध्वनि-लहर में परिवर्तित करता है जो उसकी रीढ़ की हड्डी से होती हुई ऊपर के चक्रों तक जाती है। वह इस प्रक्रिया को दोहराता है, सुधारता है और अंततः उस ऊर्जा को उस स्तर तक ले आता है, जहाँ भय की भावना समाप्त होकर केवल एक शक्ति–प्रवाह बन जाती है। इस प्रकार साधक अपने भीतर एक

प्रयोगशाला खड़ी करता है, जहाँ भावनाएँ कच्चा पदार्थ होती हैं और साधना उन्हें शुद्ध ऊर्जा में बदलने की वैज्ञानिक प्रक्रिया। यही तंत्रिक समाधि का वह रूप है जो साधक को भीतर से पुनर्निर्मित करता है- न केवल आध्यात्मिक दृष्टि से, बल्कि वैज्ञानिक विधि से भी।

तंत्रिक स्मृति और ऊर्जा-मूल संकेतन की अनुशीलन प्रक्रिया

तंत्रिक समाधि का एक अत्यंत महत्वपूर्ण आयाम है - स्मृति के गूढ़ स्तरों में प्रवेश और ऊर्जा-संकेतों द्वारा उन स्मृतियों का रूपांतरण। साधक इस प्रक्रिया को 'तंत्रिक स्मृति 'के रूप में अनुभव करता है, जिसमें साधारण अनुभवों की मानसिक छवियाँ नहीं बल्कि शरीर में संग्रहित ऊर्जात्मक घटनाएं और जन्मजात संस्कार भी सम्मिलित होते हैं। यह स्मृति न तो केवल भूत की चेतना है और न ही वर्तमान का बोध, बल्कि यह एक अंतर-जैविक संधि है, जहाँ प्रत्येक संस्कार, छाया, संवेदना और अनाहत इच्छा ऊर्जा के रूप में सुरक्षित रहती है। साधक जब गहन समाधि में प्रवेश करता है, तो वह इन ऊर्जा-संकेतों को पहचानने और उन्हें तंत्र-मंत्र, नाद, अथवा चक्र-आधारित संवेगों के माध्यम से पुनः क्रियाशील करने का अभ्यास करता है। उदाहरणतः, जब वह किसी विशेष बीज-मंत्र का उच्चारण करता है- जैसे "ह्रीं"-तो वह देखता है कि कौन सी पूर्वज स्मृति या भावनात्मक ऊर्जा सक्रिय होती है, और वह किस चक्र के साथ सम्बद्ध होती है। यह अभ्यास एक 'ऊर्जा-संकेत-अनुसंधान 'जैसा होता है, जिसमें हर

उच्चारण, ध्वनि, मुद्रा और मनःस्थिति का उद्देश्य उस गूढ़ स्मृति को छेड़ना होता है जिसे साधक जीवन के पिछले मोड़ों पर दबा चुका है।

इस प्रक्रिया में साधक एक वैज्ञानिक की तरह कार्य करता है, जो केवल अनुभव नहीं, बल्कि डेटा रिकॉर्ड करता है-ऊर्जा स्पंदन की आवृत्तियाँ, उनके स्थान, समय और प्रभाव को चिह्नित करता है। वह जानता है कि कौन-सी स्मृति उसे चेतन अवस्था से समाधि की दिशा में ले जाती है, और कौन-सी ऊर्जा उसे बारंबार लौटा लाती है। तंत्रशास्त्र इसे 'गुणनात्मक संकेतन अनुशीलन 'कहते हैं-जहाँ साधक की चेतना विशेष गुणों और आवृत्तियों को पहचानने में सक्षम होती है, और उन्हें प्रयोगशाला की तरह नियंत्रित कर पथ निर्धारित करती है। यह अभ्यास केवल मानसिक नहीं, बल्कि ऊर्जात्मक है; केवल दर्शक नहीं, प्रयोगकर्ता बनकर किया जाता है। इस प्रकार तंत्रिक स्मृति का अनुशीलन केवल अतीत के बोध का माध्यम नहीं है, बल्कि आत्मचेतना को ऊर्जा-आधारित ज्ञान और नियमन में परिवर्तित करने की प्रयोगात्मक प्रणाली है।

मनोग्राही तरंगें और ऊर्जा-संचार की सूक्ष्म लय

तंत्रिक समाधि में 'मनोग्राही तरंगों 'का अनुभव और उनका वैज्ञानिक विश्लेषण एक विशिष्ट अभ्यास है, जिसमें साधक अपने आसपास के सूक्ष्म ऊर्जा-संचार को न केवल महसूस करता है बल्कि उसका नियंत्रित उपयोग भी करता है। जब साधक गहन ध्यान की अवस्था में प्रवेश करता है, तो वह यह देखता है कि उसके चारों ओर

या शरीर के भीतर अलग-अलग प्रकार की सूक्ष्म तरंगें-ध्वनि, प्रकाश, स्पंदन या आभास की-उत्पन्न हो रही हैं। ये तरंगें प्रायः विचारों, भावनाओं, मंत्रों और चक्रों से उत्पन्न होती हैं और साधक की चेतना को विविध दिशाओं में प्रभावित करती हैं। यह प्रक्रिया किसी रेडियो तरंगों के रिसेप्शन और प्रसारण की तरह होती है, जिसमें चेतना एक एंटीना का कार्य करती है और शरीर एक रिसीवर की तरह उस सूचना या ऊर्जा को ग्रहण करता है। साधक इस स्थिति में अपने चित्त को इस प्रकार प्रशिक्षित करता है कि वह केवल एक तरंग को नहीं, बल्कि अनेक तरंगों को एक साथ पहचान सके और उनका वर्गीकरण कर सके-क्या यह तरंग भावात्मक है, विचारात्मक है, चक्र से उत्पन्न है या किसी बाह्य ऊर्जा से।

इसके लिए साधक विशेष मंत्रों, मुद्राओं और दिशात्मक ऊर्जा बिंदुओं (जैसे उत्तर दिशा में विशुद्धि चक्र) का उपयोग करता है, जिससे वह न केवल इन तरंगों को पकड़ सके, बल्कि उनकी तीव्रता, दिशा और प्रभाव को परिवर्तित भी कर सके। यह अभ्यास किसी वैज्ञानिक उपकरण से कम नहीं होता-वह समय, गति, प्रभाव और आवृत्ति का मापन करता है। साधक जानता है कि किस क्षण उसकी चेतना एक ऊर्जा संचार कर रही है, और कब वह केवल ग्रहणशील बनी हुई है। यही मनोग्राही अभ्यास साधक को आत्मा के सूक्ष्मतम स्तर तक ले जाता है, जहाँ विचार तरंग बन जाते हैं, और तरंगें चेतना के रंग। तंत्र में यह अभ्यास 'तरंग लय–सिद्धि 'कहा जाता है, जो साधक को केवल ज्ञाता नहीं, बल्कि ऊर्जा का संप्रेषक और नियंता

बनाता है। यही अभ्यास तंत्रिक समाधि को एक वैज्ञानिक परिपक्वता देता है-जहाँ अध्यात्म और ऊर्जा विज्ञान का गहन संगम होता है।

नाड़ी गणना एवं आत्म-नियंत्रण की तंत्रिक प्रणाली

तंत्रिक समाधि की एक और वैज्ञानिक अभिव्यक्ति है नाड़ी–गणना और आत्म–नियंत्रण की प्रक्रिया, जिसमें साधक अपने शरीर के प्रत्येक भाग में बहती ऊर्जा का अनुभव करते हुए उनका गणनात्मक विश्लेषण करता है। तंत्र ग्रंथों में उल्लेख मिलता है कि शरीर में 72,000 नाड़ियाँ होती हैं, जिनमें प्रमुख रूप से इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना कार्य करती हैं। साधक अपने अनुभव से यह देखता है कि कौन-सी नाड़ी कब सक्रिय होती है-श्वास की गति से, विचार की लहर से, या मंत्र की तरंग से। यह केवल चिकित्सा विज्ञान की तरह धड़कन सुनना नहीं, बल्कि ऊर्जा की ध्वनि, ताप, कंपन और उसकी दिशा को मापने का गूढ़ साधन है। साधक जब विशेष चक्रों-जैसे अनाहत या आज्ञा-पर ध्यान केंद्रित करता है, तो वह देखता है कि किस प्रकार उसकी नाड़ियों में गति आती है, उनकी दिशा बदलती है, या उनकी लय स्थिर होती है।

इस गणना के लिए वह कभी-कभी अपने शरीर पर विशेष बिंदुओं पर उंगलियों से दबाव देता है, या श्वास–गति की गणना करके देखता है कि किस क्षण ऊर्जा अधिक प्रवाहित हो रही है। जैसे ही साधक को यह बोध होता है कि उसकी कोई नाड़ी अति-सक्रिय या निष्क्रिय हो रही है, वह तत्काल उसे संतुलित करने के लिए मंत्र, मुद्रा

या ध्यान का प्रयोग करता है-यह कार्य पूर्णत: वैज्ञानिक दृष्टिकोण से किया जाता है। यह नाड़ी–गणना साधक को आत्म–नियंत्रण में सिद्ध करती है-वह शरीर के अंदर हो रही हर गतिविधि को देख और बदल सकता है, ठीक वैसे ही जैसे कोई वैज्ञानिक अपने उपकरणों के संकेतकों को पढ़ता और समायोजित करता है। इस प्रक्रिया में साधक केवल साधक नहीं रह जाता, वह स्वयं एक 'नाड़ी–यंत्र 'बन जाता है, जिसमें ऊर्जा का संपूर्ण प्रवाह संतुलित, नियंत्रित और रूपांतरित होता है। यह आत्म-नियंत्रण की तंत्रिक प्रणाली उस बिंदु तक साधक को ले जाती है जहाँ शरीर, मन, प्राण और आत्मा एक रेखीय वैज्ञानिक संरचना में विलीन हो जाते हैं। यही

समाधि का वह विज्ञान है, जो केवल ध्यान नहीं, बल्कि स्वयं पर शासन करने की सिद्धि है।

चक्रों का विस्तार और उनके आध्यात्मिक आयाम

तंत्रिक समाधि में चक्रों का विस्तार केवल ऊर्जा प्रवाह की वैज्ञानिक समझ भर नहीं होता, बल्कि यह एक गहन आध्यात्मिक अनुभव की ओर भी साधक को ले जाता है। मूलाधार से सहस्रार तक के सात प्रमुख चक्रों में प्रत्येक का अपना एक विशिष्ट भाव, ऊर्जा आवृत्ति और दार्शनिक महत्व होता है। मूलाधार चक्र पृथ्वी तत्व और स्थिरता का प्रतीक है, तो स्वाधिष्ठान जल तत्व और रचनात्मकता का। मणिपूर चक्र आत्मबल और पाचन ऊर्जा से जुड़ा होता है, वहीं अनाहत चक्र करुणा और प्रेम की तरंगों को वहन करता

है। विशुद्धि चक्र अभिव्यक्ति और अंतर्मुखता का द्वार है, आज्ञा चक्र बुद्धि और अंतर्ज्ञान का केन्द्र है, और सहस्रार चक्र परम चेतना से एकात्मकता का द्वार। जब साधक इन चक्रों पर ध्यान केंद्रित करता है और उनके साथ संबंधित बीज मंत्रों का जाप करता है

यह चक्र-आधारित साधना न केवल एक वैज्ञानिक विधि है, जिसमें ऊर्जा के प्रवाह और संवेगों को विश्लेषित किया जाता है, बल्कि यह साधक के जीवन में ठोस परिवर्तन लाती है। जैसे-जैसे साधक चक्रों को अनुशासित करता है, उसकी चेतना गहरे स्तरों तक विस्तारित होती जाती है। वह देखता है कि किन परिस्थितियों में उसका मणिपूर चक्र असंतुलित होता है या अनाहत चक्र शिथिल हो जाता है, और फिर वह विशेष मंत्र, मुद्रा, ध्यान या तत्व-आधारित साधना के माध्यम से उन्हें पुनः संतुलित करता है। चक्रों का यह समन्वय न केवल साधना को शक्तिशाली बनाता है, बल्कि साधक के व्यवहार, निर्णय-शक्ति, आत्मबल और करुणा जैसे गुणों को भी पुनर्गठित करता है। इस पूरी प्रक्रिया में गुरु का मार्गदर्शन और अनुभवी अवलोकन उसे अत्यंत आवश्यक दिशा देते हैं। इस प्रकार, चक्रों का विस्तार तंत्रिक समाधि का वह आधार बन जाता है, जहाँ से आत्म-साक्षात्कार की यात्रा की स्थायी और वैज्ञानिक नींव रखी जाती है।

कुंडलिनी जागरण: शक्ति का उद्भव और आध्यात्मिक उन्मोचन

तंत्रिक समाधि का सर्वोपरि बिंदु कुंडलिनी का जागरण होता है, जिसे एक विशुद्ध वैज्ञानिक और आत्मिक प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है। कुंडलिनी-जो मूलाधार चक्र में सुप्त सर्पिणी शक्ति के रूप में मानी जाती है-जब सक्रिय होती है, तब वह सूक्ष्म नाड़ियों में प्रवाहित होकर समस्त चक्रों को स्पर्श करती हुई सहस्रार तक पहुँचती है। यह चक्र-दर्शन केवल प्रतीकात्मक नहीं, बल्कि ऊर्जा-वैज्ञानिक स्वरूप में मस्तिष्क, तंत्रिका-तंत्र और ग्रंथियों पर प्रभाव डालता है। साधक इसे केवल शारीरिक कंपन या मानसिक उर्जाओं के रूप में नहीं, बल्कि ब्रह्मांडीय ऊर्जा के प्रवाह के रूप में अनुभव करता है। जैसे-जैसे यह शक्ति चक्रों को पार करती है, साधक को विशिष्ट अनुभूतियाँ होती हैं-गर्मी, कंपन, प्रकाश-दर्शन, ध्वनि-अनुभूति, और चित्त की गहन स्थिरता। इन अनुभूतियों का वैज्ञानिक विश्लेषण करते हुए साधक समझता है कि कौन-सा अनुभव किस चक्र में सक्रिय ऊर्जा का संकेत है।

किंतु कुंडलिनी का जागरण यदि असंतुलित रूप से हो तो मानसिक, भावनात्मक या शारीरिक विघटन भी हो सकता है-जैसे सिरदर्द, अनियंत्रित भावावेग, असंतुलित आचरण या नींद की कमी। इसलिए कुंडलिनी जागरण में गुरु का मार्गदर्शन सर्वोपरि होता है, जो साधक को मृदु गति से ऊर्जा संचरण की विधि सिखाता है, जैसे

विशेष मुद्राएँ, तांत्रिक प्राणायाम, मंत्रों का अनुक्रम, और विशिष्ट आहार व व्यवहार के संयम। तंत्रशास्त्र कुंडलिनी को केवल आध्यात्मिक प्रकाश नहीं, बल्कि संपूर्ण ब्रह्मांडीय चेतना की उस धारा के रूप में देखता है, जिससे साधक की चेतना का पुनर्जन्म होता है। जब यह शक्ति सहस्रार को स्पर्श करती है, तो साधक को समाधि की दिव्य अवस्था प्राप्त होती है-जहाँ न विचार रहते हैं, न समय, न पहचान-सिर्फ एक विशाल, स्थिर और निर्विकल्प ऊर्जा क्षेत्र। यही वह उन्मोचन है, जहाँ साधक केवल साधक नहीं, बल्कि स्वयं ऊर्जा और ब्रह्म का साक्षात रूप बन जाता है।

समाधि और आत्म-साक्षात्कार का पथ

तंत्रिक समाधि की चरम अवस्था उस परम शून्य में प्रवेश है, जहाँ साधक केवल चैतन्य की एकरूपता में विलीन हो जाता है। इस समाधि की प्रक्रिया कुंडलिनी जागरण, चक्र सक्रियता और मंत्रों की उच्चतम लयबद्धता से संचालित होती है। परंतु यह यात्रा एक वैज्ञानिक अनुशासन की मांग करती है-नियमित ध्यान, ऊर्जा संतुलन, आहार संयम, चित्त-नियंत्रण और मानसिक प्रशिक्षण। जैसे-जैसे साधक इन अनुशासनों में प्रवीण होता है, उसका चित्त धीरे-धीरे आकाशवत् हो जाता है-विशाल, निर्विकल्प, संवेग-रहित और पूर्णता से भरा हुआ। यही समाधि की अवस्था है, जहाँ कोई ‘मैं ’नहीं रह जाता, बल्कि केवल ‘होना ’रह जाता है। योग में इसे निर्बीज

समाधि कहा गया है, जबकि तंत्र इसे शिवत्व या ब्रह्म-स्वरूप की स्थिति मानता है।

यह अवस्था केवल एक ध्यान-सत्र का अंत नहीं, बल्कि साधक के संपूर्ण अस्तित्व का पुनःसंयोजन है। समाधि से बाहर निकलने पर साधक अब वैसा नहीं रहता जैसा वह पहले था। उसका दृष्टिकोण, भाव, व्यवहार, क्रिया और विचार सभी शुद्ध हो जाते हैं। वह अब केवल साधक नहीं, बल्कि आध्यात्मिक मार्गदर्शक बन जाता है-जिसके शरीर में तप है, मन में शांति है, और दृष्टि में करुणा। तंत्रिक समाधि के इस अंतिम चरण में वह आत्म-साक्षात्कार को केवल मानसिक अनुभव नहीं मानता, बल्कि एक विज्ञान-समर्थ, पद्धति-आधारित यथार्थ अनुभव के रूप में स्वीकार करता है। इस अवस्था में उसका हृदय गवाही देता है कि समाधि कोई रहस्य नहीं, बल्कि वह यात्रा है-जहाँ से आत्मा संसार में पुनः लौटकर भी बंधनों से परे रह सकती है। यही तंत्रिक समाधि का रहस्य है-अनुभव, अवलोकन और आत्म-रूपांतरण का एक वैज्ञानिक और आध्यात्मिक संगम।

अध्याय 32:
मृत्यु और पुनर्जन्म की अघोरी अवधारणा

मृत्यु को जीवन के भाग के रूप में स्वीकार करना

अघोरी दर्शन में मृत्यु को जीवन की अंतिम परिणति नहीं, बल्कि उसके स्वाभाविक और अपरिहार्य चरण के रूप में देखा जाता है। यह परंपरा मृत्यु को भय या वर्जना के रूप में नहीं, बल्कि एक अनिवार्य और स्वागतयोग्य अनुभव के रूप में स्वीकार करती है। अघोरी मानते हैं कि जैसे जीवन एक अनवरत यात्रा है, वैसे ही मृत्यु उस यात्रा का एक पड़ाव है, जहाँ आत्मा शरीर के बंधनों से मुक्त होकर पुनर्जन्म की ओर अग्रसर होती है। इसलिए अघोरी शमशान में निवास करते हैं, मृत शरीरों के निकट रहते हैं और मृत्यु को प्रत्यक्ष रूप से निहारते हुए उसे आत्मसात करते हैं। उनका विश्वास है कि मृत्यु को निकट से देखना ही उसे जीतना है - और यही विजय उन्हें आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है। अघोरी साधक शमशान में ध्यान, तंत्र क्रियाएं, और शव साधना के माध्यम से मृत्यु की उपस्थिति को स्वीकार करते हुए, उसे एक दिव्य प्रक्रिया के रूप में आत्मसात करते हैं।

दूसरी ओर, अघोरी मृत्यु के पीछे छिपी अध्यात्मिकता को खोजते हैं। वे मानते हैं कि शरीर नश्वर है, पर आत्मा अमर और अनादि है। इसलिए जब शरीर मृत्यु को प्राप्त करता है, तो आत्मा एक

यात्रा पर निकलती है, जो उसके कर्मों और आत्मज्ञान के स्तर के अनुसार अगली देह में पुनर्स्थापित होती है। इस विचारधारा में मृत्यु कोई दुखद अंत नहीं, बल्कि विकास की प्रक्रिया है - जैसे बीज का मिट्टी में गलना नए वृक्ष का जन्म देता है, वैसे ही मृत्यु, आत्मा के उच्चतर स्वरूप के पुनरुत्थान का माध्यम है। अघोरी इस सत्य को केवल मानते नहीं, बल्कि इसे प्रतिदिन अपने जीवन का हिस्सा बनाकर जीते हैं - जिससे उन्हें भय, मोह और लोभ से मुक्ति मिलती है और वे ब्रह्म के साक्षात अनुभव की ओर बढ़ते हैं।

पुनर्जन्म की अवधारणा और उसका आधार

अघोरी परंपरा में पुनर्जन्म की अवधारणा अत्यंत गहन और तात्त्विक है। यह मान्यता केवल धार्मिक आस्था नहीं, बल्कि आत्मा के चक्रबद्ध विकास की प्रक्रिया है। अघोरी मानते हैं कि आत्मा न तो जन्म लेती है, न ही मरती है; वह केवल शरीर रूपी वस्त्र धारण करती है और जब वह वस्त्र जीर्ण हो जाता है, तब वह उसे त्यागकर नया शरीर धारण करती है। यह चक्र तब तक चलता रहता है जब तक आत्मा पूर्ण ज्ञान, आत्म-साक्षात्कार और मुक्ति को प्राप्त नहीं कर लेती। अघोरी इस प्रक्रिया को किसी डर या सजा की भांति नहीं देखते, बल्कि इसे आत्मा की यात्रा के विभिन्न स्तर मानते हैं - जिसमें प्रत्येक जन्म एक अवसर है, एक प्रयोगशाला है, आत्मा के परिष्कार का।

अघोरी दर्शन में पुनर्जन्म केवल इस जीवन के कर्मों का फल नहीं, बल्कि अनगिनत जन्मों से संचित संस्कारों, वासनाओं और अधूरी इच्छाओं का परिणाम होता है। इसीलिए अघोरी साधक अपने वर्तमान जीवन को ही पूर्ण रूप से साधना का माध्यम बनाकर अगली देह के चक्र से मुक्ति का प्रयास करते हैं। उनका यह विश्वास है कि यदि उन्होंने भैरवी की कृपा और तंत्र की साधना द्वारा अपने सभी कर्मबंधनों को भस्म कर दिया, तो वे इस पुनर्जन्म के चक्र से मुक्त होकर ब्रह्म में विलीन हो सकते हैं। उनके लिए पुनर्जन्म न तो आशा है, न ही भय; बल्कि केवल एक माध्यम है, जिसमें आत्मा अपने शुद्धतम रूप को खोजने के लिए बार-बार संसार में प्रवेश करती है।

शमशान का मृत्यु से संबंध

शमशान, अघोरियों के लिए केवल शवों का अंतिम ठिकाना नहीं होता, बल्कि वह वह स्थल होता है जहाँ जीवन, मृत्यु और पुनर्जन्म के रहस्य एकत्र होते हैं। अघोरी साधना में शमशान को विशेष स्थान इसलिए प्राप्त है क्योंकि यही वह जगह है जहाँ मृत्यु अपनी सबसे नग्न, सबसे निष्कलंक और सबसे वास्तविक अवस्था में उपस्थित होती है। यहाँ कोई आडंबर नहीं होता, कोई मोह नहीं, कोई स्तुति नहीं - केवल भस्म, हड्डियाँ और चिता की लपटें होती हैं। अघोरी इसी नग्नता में ब्रह्म की उपस्थिति को खोजते हैं। शमशान उनके लिए वह तीर्थ है जहाँ जीव और शिव का संयोग होता है, जहाँ

आत्मा शरीर के बंधनों से मुक्त होकर अगली यात्रा के लिए निकलती है।

शमशान में अघोरी केवल ध्यान नहीं करते, वे मृत्यु के हर पक्ष को स्पर्श करते हैं - शवों को देखते हैं, उन्हें स्नान कराते हैं, जलाते हैं, उनके भस्म को तिलक रूप में प्रयोग करते हैं और कभी-कभी खोपड़ी को पूजा के पात्र के रूप में उपयोग में लाते हैं। उनका उद्देश्य केवल यह दिखाना नहीं होता कि वे मृत्यु से भयभीत नहीं हैं, बल्कि वे मृत्यु की उस वास्तविकता को आत्मसात करते हैं, जिससे सामान्य समाज दूर भागता है। अघोरी मानते हैं कि जब साधक शमशान की अग्नि में अपने अहंकार, वासना और मोह को जला देता है, तभी वह मृत्यु के पार जाकर पुनर्जन्म के चक्र से मुक्त हो सकता है। इसीलिए शमशान उनके लिए साधना, जागरण और आत्म-विकास का सबसे उपयुक्त स्थल है।

तांत्रिक श्मशान साधना का स्वरूप

तांत्रिक परंपरा में श्मशान को साधना का सबसे उपयुक्त स्थल माना गया है, जहाँ मृत्यु की उपस्थिति साधक को संसार के क्षणभंगुर स्वरूप का साक्षात्कार कराती है। अघोरी साधक शमशान भूमि को शक्ति का केंद्र मानते हैं और मान्यता है कि यहाँ की ऊर्जा किसी भी अन्य स्थान से अधिक तीव्र और परिणामदायी होती है। अघोरी अपनी साधना में शव का उपयोग करते हुए भैरवी या काल भैरव का आह्वान करते हैं। इस प्रक्रिया में वे रात्रि को, विशेषकर अमावस्या या

पूर्णिमा की रात को चुनते हैं, जब ब्रह्मांडीय ऊर्जा अत्यधिक प्रभावी मानी जाती है। साधना की शुरुआत शव के पास आसन लगाकर की जाती है, जिसके चारों ओर रेखा खींची जाती है जिसे 'मरुत मंडल ' कहा जाता है। इसमें साधक अपने मंत्र, यंत्र और भैरवी की मूर्ति या प्रतीक को स्थापित करता है। इस साधना के दौरान साधक को पूर्ण मौन, संकल्प और मानसिक एकाग्रता के साथ ध्यान केंद्रित करना होता है।

इस साधना की अवधि कुछ घंटों से लेकर पूरी रात तक हो सकती है। साधक मृत शरीर के ऊपर बैठकर या उसके निकट बैठकर तांत्रिक मंत्रों का जाप करता है, जिसे 'शव साधना 'कहा जाता है। इस प्रक्रिया में मृत्यु के भय का अतिक्रमण, आत्मा की शुद्धि, और भैरवी की कृपा प्राप्त करने का उद्देश्य होता है। साधना के दौरान कोई भी बाहरी संपर्क या भय प्रदर्शित करना निषिद्ध होता है, क्योंकि इससे साधना भंग हो सकती है। यह प्रक्रिया केवल गुरु द्वारा दीक्षित साधकों को ही अनुमत होती है, अन्यथा इसे करने का प्रयास गंभीर मानसिक और आध्यात्मिक संकट उत्पन्न कर सकता है। श्मशान साधना तांत्रिक परंपरा में अंतिम सीमा मानी जाती है, जिसके माध्यम से साधक मृत्यु के पार जाकर मोक्ष या भैरवी की साक्षात अनुभूति प्राप्त कर सकता है। यह साधना केवल शारीरिक साहस नहीं, बल्कि मानसिक दृढ़ता और आत्मिक समर्पण की चरम परीक्षा होती है।

मृत्यु के प्रतीकों का साधना में प्रयोग

अघोरी साधकों के लिए मृत्यु केवल एक जैविक प्रक्रिया नहीं बल्कि एक उच्च आध्यात्मिक अनुभव है, जिसे वे प्रतीकों और तांत्रिक साधनों के माध्यम से गहराई से आत्मसात करते हैं। खोपड़ी (कपाल), हड्डियाँ, राख, और शव-ये सभी प्रतीक साधकों के लिए न केवल भय का विषय होते हैं, बल्कि साधना के लिए अत्यंत पवित्र और शक्तिशाली माध्यम माने जाते हैं। खोपड़ी का उपयोग अघोरी जल या शराब ग्रहण करने, भैरवी के लिए नैवेद्य अर्पित करने तथा तांत्रिक अनुष्ठानों में यंत्र के रूप में करते हैं। यह प्रतीक यह दर्शाता है कि जीवन और मृत्यु दोनों का केंद्र वही है, और इन्हीं के माध्यम से आत्मज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। शव की राख को 'भस्म 'कहा जाता है और इसे साधक अपने शरीर पर धारण करता है, जिससे वह अहंकार, मोह और माया से परे जाकर मृत्यु के सत्य को आत्मसात करता है।

इन प्रतीकों का प्रयोग साधना की गहराई और साधक की मानसिक स्थिति को दर्शाता है। अघोरी मानते हैं कि जब तक साधक मृत्यु के प्रतीकों से भयभीत रहता है, तब तक वह आध्यात्मिकता की सच्ची ऊँचाई को प्राप्त नहीं कर सकता। इसीलिए, ये प्रतीक साधक को मृत्यु से मित्रता कराने का माध्यम बनते हैं। शव की आंखों में देखकर ध्यान करना, खोपड़ी में जल भरकर उससे देवियों को अभिषेक करना, या शमशान में बैठकर हड्डियों के ढेर के सामने

जप करना-ये सभी प्रक्रियाएँ केवल बाहरी कर्मकांड नहीं, बल्कि आत्मा के संपूर्ण परिवर्तन की प्रक्रिया होती हैं। इन प्रतीकों के माध्यम से साधक धीरे-धीरे मृत्यु के भय से मुक्त होकर स्वयं को ब्रह्म से जोड़ता है, जहाँ केवल शून्यता और अद्वैत का अनुभव होता है।

आत्मिक जागृति के लिए मृत्यु का उपयोग

अघोरी परंपरा में मृत्यु को केवल एक अंत नहीं, बल्कि आत्मिक जागृति का प्रारंभ माना गया है। उनका विश्वास है कि जब तक मनुष्य मृत्यु के यथार्थ को नहीं समझता, तब तक वह जीवन के रहस्यों को नहीं जान सकता। अघोरी साधक मृत्यु को अपनी साधना का केंद्र बनाकर आत्मज्ञान की दिशा में अग्रसर होता है। श्मशान में बैठकर ध्यान करना, शवों के मध्य रात्रि व्यतीत करना, या मरे हुए शरीरों के माध्यम से तांत्रिक साधना करना-ये सभी क्रियाएँ आत्मिक जागृति की प्रक्रिया का हिस्सा हैं। अघोरी मानते हैं कि मृत्यु का भय ही सभी मोह-माया, द्वेष, लोभ, और अहंकार का मूल है, और जब यह भय समाप्त होता है, तभी आत्मा मुक्त होती है।

इस आत्मिक जागृति का अंतिम लक्ष्य है-अद्वैत की अनुभूति, जिसमें साधक स्वयं को ब्रह्म के साथ एकाकार महसूस करता है। जब साधक शव को देखता है, तो वह अपने ही शरीर की अस्थायित्व को पहचानता है। जब वह राख को शरीर पर मलता है, तो वह अपने अहंकार को नष्ट करता है। और जब वह शव की आंखों में झाँकता है, तो वह अपनी आत्मा की गहराई में प्रवेश करता है। मृत्यु का यह

सतत साक्षात्कार साधक को इस जीवन और अगली यात्रा दोनों के लिए तैयार करता है। अघोरी इस प्रयोग को केवल साधना नहीं, बल्कि जीवन की सर्वोच्च साधना मानते हैं, जिसके माध्यम से आत्मा पूर्ण मुक्त हो जाती है और परम सत्य की प्राप्ति होती है।

चेतना-मर्यादा से ऊपर उठना: मृत्यु पर जागरूकता की गहन साधना

शमशान या कब्रिस्तान के माहौल में बैठकर साधक न केवल शारीरिक अवस्था से ऊपर उठता है, बल्कि अपनी चेतना को मृत्यु-चेतना की अगाध गहराई में उतारता है। यहां मृत्यु केवल एक अनिष्ट घटना नहीं बल्कि जीवन की शाश्वतता और आत्मा की अविनाशी प्रकृति का प्रतिबिंब बन जाती है। साधना के इस चरण में साधक शरीर की क्षरणशीलता को मान्यता देकर आगे बढ़ता है। उसने देखा है कि प्रत्येक क्षण मृत्यु की संभावना से भरा हुआ है, और यही अनुभूति उसे वर्तमान में वास्तविकता की पूर्णता की ओर अग्रसर करती है। इस प्रक्रिया में मनोरोग और आत्म-छल के ताने-बाने टूटते हैं; जन्म, मृत्यु, पुनर्जन्म का चक्र केवल एक दैवीय लय प्रतीत होती है। साधक उस अंतहीन लय में स्वयं को विलीन कर लेता है। यह साधना दो भागों में विस्तृत है-पहला भाग मानसिक विक्षेपों का विघटन और आत्मचेतना की निर्मलता की ओर झुकना, जबकि दूसरा भाग ब्रह्म-तत्त्व की सार्थक आसक्ति तथा निर्वाण-मार्ग की ओर गहन एकाग्रता की प्राप्ति का निष्कर्ष दर्शाता है। इस अंतरंग

साधना में साधक मृत्यु से बंधे भय को त्यागकर जीवन के प्रत्येक पल को निर्विकार रूप में अनुभव करने लगता है, जो उसे अंतिम रूप से आत्म-ज्ञान के गर्भ में समाहित कर देता है।

शावसाधना की परिणति: सिद्धियों से मुक्ति की प्राप्ति

तीन हफ्तों तक निर्विकार साधना और शव के ऊपर गहन ध्यान की स्थिरता साधक को केवल ब्रह्म-साक्षात्कार तक नहीं, बल्कि तांत्रिक सिद्धियों की प्राप्ति तक ले जाती है। शावसाधना की परिणति तीन स्तरों में घटती है-प्रथम, आत्म-शासन की अनुभूति; द्वितीय, मृत्यु की भयावहतायों में करुण और प्रभुत्व की अनुभूति; तृतीय, साधक का शरीर क्षय-शून्य होकर ब्रह्म-मानसिकता में विलीन हो जाना। यह चरण अत्यंत संवेदनशील हैं क्योंकि यहां साधक को शारीरिक मर्यादा, मानसिक दुर्बलता, और सामाजिक प्रतिबंधों की सीमाओं से मुक्त होना पड़ता है। साधना के अंत में मृत शरीर को नदी में विसर्जन या गड्ढे में सुरक्षित रूप से समाहित किया जाता है, जिससे ब्रह्म-शक्ति की पूर्ण चेतना साधक के भीतर आसीन होती है। उस अंतिम पल में साधक मृत्यु से भी ऊपर उठकर निर्वाण-स्थिति में जाकर ब्रह्म-संयोग बन लेता है। यह प्रसंग दूसरे पैराग्राफ में गंगा-तट के अंत में गुरुओं और साधकों के सम्मिलित साधन-संस्कार के साथ वर्णित है, जिसमें साधक को आत्म-ज्ञान, अनादि-शुनी्यता और अद्वितीयता के चिरस्थायी अनुभव होते हैं। यह वर्णन दो भागों में विभाजित है-पहला भाग शव विसर्जन एवं गुरुवार्य संस्कार की पवित्र

प्रक्रिया को रेखांकित करता है, दूसरा भाग उस निर्वाण-स्थिति की अमर अनुभूति और मृत्यु-बन्धन की अटल विजय का विस्तार करता है, जिससे साधक पूर्ण रूप से आत्म-मुक्त होता है।

आध्यात्मिक तैयारी मृत्यु के लिए

अघोरी परंपरा में मृत्यु कोई अंत नहीं बल्कि एक रूपांतरण की प्रक्रिया मानी जाती है, जिसके लिए जीवन भर की साधना की जाती है। अघोरी मानते हैं कि जब तक मनुष्य मृत्यु से भयभीत है, वह आध्यात्मिक रूप से मुक्त नहीं हो सकता। इसलिए वे मृत्यु को जीवन का अभिन्न हिस्सा मानते हुए, स्वयं को मानसिक और आत्मिक रूप से उसके लिए तैयार करते हैं। यह तैयारी केवल विचार या विश्वास तक सीमित नहीं होती, बल्कि व्यवहारिक और गहन तांत्रिक साधनाओं के माध्यम से होती है। अघोरी स्वयं को श्मशान में मृत शरीरों के निकट रखकर मृत्यु के भौतिक रूप का साक्षात्कार करते हैं। वे ध्यान, मंत्रजाप, और क्रिया-कर्म के माध्यम से यह समझने का प्रयास करते हैं कि शरीर नश्वर है और आत्मा का अस्तित्व उससे परे है। यह अभ्यास उन्हें मृत्यु के क्षण में भयमुक्त रहने की शक्ति देता है।

इस आध्यात्मिक तैयारी का दूसरा पहलू है-आत्मिक स्वीकार्यता। अघोरी अपने जीवन को ऐसे जीते हैं जैसे वह प्रतिक्षण मृत्यु के निकट हो। वे न तो मोह में बंधते हैं, न ही सांसारिक लालसाओं में उलझते हैं। उनका भोजन, वस्त्र, निवास, और दिनचर्या

– सब कुछ इस बात का संकेत देता है कि वे जीवन की नश्वरता को स्वीकार कर चुके हैं और अब केवल आत्मा की गति और मुक्ति के पथ पर अग्रसर हैं। मृत्यु को साधना का सर्वोच्च क्षण मानते हुए, वे इसे आत्मा के उच्चतम रूपांतरण का अवसर मानते हैं। यही कारण है कि अघोरियों के लिए मृत्यु का कोई शोक नहीं होता, बल्कि वह एक उत्सव का रूप ले लेती है, जिसमें साधक स्वयं को ब्रह्म से एकीकृत मानता है।

मृत शरीरों का उपयोग साधना में

अघोरी साधना की सबसे रहस्यमयी और विवादित विशेषताओं में से एक है मृत शरीरों का प्रयोग, जो न केवल प्रतीकात्मक है बल्कि एक गहन आध्यात्मिक अभ्यास भी है। अघोरी मानते हैं कि मृत्यु के क्षण में जीवन और मृत्यु के बीच का आवरण सबसे पतला होता है, और यही वह समय होता है जब साधक ब्रह्मांडीय शक्तियों से गहरे संपर्क में आता है। इस कारण वे श्मशान भूमि में शवों के समीप ध्यान करते हैं, उन्हें गोद में लेकर तंत्र मंत्र साधना करते हैं और शारीरिक भय से परे जाकर मृत्यु के रहस्य को आत्मसात करते हैं। यह अभ्यास किसी विकृति या मानसिक विचलन का प्रतीक नहीं, बल्कि एक ऐसी प्रक्रिया है जो साधक को मृत्यु की वास्तविकता से साक्षात्कार कराती है। शवों के पास बैठकर ध्यान करना उन्हें यह सिखाता है कि जीवन क्षणिक है और हर सांस मृत्यु की ओर एक कदम है। इस सत्य को स्वीकार कर लेने से साधक

भय, मोह और लोभ से मुक्त हो जाता है और आत्मिक विकास के पथ पर अग्रसर होता है।

साधना में मृत शरीरों के प्रयोग का दूसरा उद्देश्य है – ऊर्जा संचरण और आत्मिक परीक्षण। अघोरी मानते हैं कि शव की ऊर्जा, विशेष रूप से मृत्यु के तुरंत बाद की चेतनात्मक ऊर्जा, साधक के ध्यान और तंत्र प्रयोगों को अधिक प्रभावशाली बनाती है। कई बार अघोरी शव के ऊपर बैठकर विशेष मंत्रों का जाप करते हैं या शव के मुख में विशेष धातु की यंत्र रखकर ध्यान करते हैं ताकि मृत्यु की ऊर्जा को साधना में परिवर्तित किया जा सके। यह प्रक्रिया उन्हें मृत्यु की भयावहता से मुक्त करती है और जीवन तथा आत्मा के बीच के सूक्ष्म भेद को मिटाती है। इस प्रकार अघोरी न केवल बाह्य रूप से मृत्यु को स्वीकार करते हैं, बल्कि आंतरिक रूप से उसे आत्मसात करते हैं, जिससे उनका जीवन किसी सांसारिक बंधन से मुक्त हो जाता है। मृत शरीर उनके लिए मात्र मांस का पिंड नहीं, बल्कि ब्रह्मांडीय रहस्यों की कुंजी बन जाता है।

अध्याय 33: मृत्यु और पुनर्जन्म की अघोरी अवधारणा

मृत्यु को जीवन के भाग के रूप में स्वीकार करना

अघोरी साधना की दृष्टि में मृत्यु कोई अंत नहीं, बल्कि एक शाश्वत यात्रा का आवश्यक पड़ाव है। उनका दर्शन यह मानता है कि जीवन और मृत्यु एक ही चक्र के दो पक्ष हैं, जो एक-दूसरे में विलीन होते रहते हैं। अघोरी साधक मृत्यु को भय या शोक का विषय नहीं मानते, बल्कि उसे ब्रह्मांडीय चक्र की पूर्णता के रूप में स्वीकारते हैं। उनके अनुसार, शरीर केवल एक अस्थायी आवरण है, जिसकी सीमा मृत्यु तक है, पर आत्मा अनश्वर है और वह विभिन्न योनि-आवागमन से गुजरती है। अघोरी साधक शमशान में निवास करके स्वयं को इस सत्य के प्रति बारंबार जागरूक रखते हैं। वे प्रत्यक्ष रूप से मृत्यु से साक्षात्कार करके जीवन की क्षणभंगुरता को समझते हैं, और इसी के माध्यम से मोह, माया, और भौतिक बंधनों से मुक्ति की ओर बढ़ते हैं।

इस दर्शन में यह भी स्पष्ट किया गया है कि मृत्यु का सामना ही वास्तविक जीवन का प्रारंभ है, क्योंकि तभी साधक आत्मा की वास्तविक स्थिति को जान पाता है। अघोरी साधना में मृत्यु के साथ जुड़ाव का उद्देश्य किसी प्रकार की डरावनी कल्पना नहीं, बल्कि अपने आत्मस्वरूप की अनुभूति है। शमशान साधना के माध्यम से

अघोरी यह अभ्यास करता है कि हर दिन की समाप्ति एक सूक्ष्म मृत्यु है, और हर जागरण एक नया जन्म। इस प्रकार मृत्यु का अभ्यास जीवन की गहराइयों को समझने का माध्यम बनता है, जहां हर सांस, हर क्षण एक तीर्थ की तरह पवित्र हो जाता है। मृत्यु के प्रति यह सहज और निर्विकार दृष्टिकोण ही अघोरी मार्ग को आम सामाजिक धारणा से अलग करता है, जो मृत्यु को वर्जित या अशुभ मानती है। अघोरी उसे दिव्य अवसर के रूप में देखते हैं।

पुनर्जन्म की अवधारणा और उसका आधार

अघोरी परंपरा पुनर्जन्म की अवधारणा को आत्मा की विकास यात्रा का केंद्रीय स्तंभ मानती है। उनके अनुसार, आत्मा मृत्यु के उपरांत शरीर का परित्याग करती है, परंतु कर्मों के आधार पर वह किसी अन्य शरीर में पुनः प्रवेश करती है। यह पुनर्जन्म तब तक चलता रहता है जब तक आत्मा पूर्ण रूप से ब्रह्म में विलीन नहीं हो जाती। अघोरी साधना में यह विश्वास दृढ़ है कि जन्म और मृत्यु के मध्य की प्रत्येक अवस्था आत्मा की परिपक्वता की एक सीढ़ी होती है। इस विश्वास के कारण अघोरी मृत देह से विमुख नहीं होते, बल्कि उसे एक ऐसा माध्यम मानते हैं जो आत्मा की यात्रा की साक्षी होती है। उनका लक्ष्य इस चक्र को तोड़कर मोक्ष को प्राप्त करना होता है, जिसके लिए वे मृत्यु के रहस्यों को जानना अनिवार्य समझते हैं।

पुनर्जन्म की यह धारणा केवल धार्मिक नहीं, बल्कि गहन आध्यात्मिक अभ्यास से जुड़ी हुई है। अघोरी अपने जीवन में बारंबार

यह ध्यान करते हैं कि उन्होंने पूर्वजन्म में क्या किया होगा और उससे इस जन्म में उनका उद्देश्य क्या है। वे मानते हैं कि पूर्व जन्म के कर्म ही वर्तमान जीवन की परिस्थितियाँ निर्धारित करते हैं, और यदि इस जन्म में आत्मा पूर्णतः शुद्ध नहीं होती, तो उसे पुनः जन्म लेना पड़ेगा। इसलिए अघोरी साधना का लक्ष्य न केवल वर्तमान जीवन को तपस्या और साधना से पवित्र बनाना होता है, बल्कि पूर्व जन्मों के दोषों का प्रायश्चित करके अगले जन्म की आवश्यकता को समाप्त करना भी होता है। यह पुनर्जन्म और मुक्ति की जटिल प्रक्रिया ही अघोरी साधना की गंभीरता और तप का मूल आधार है।

आत्मा की यात्रा का दर्शन

अघोरी साधना में आत्मा को स्थूल शरीर से परे एक शाश्वत सत्ता माना जाता है, जो जन्म और मृत्यु के चक्र में निरंतर गतिशील रहती है। अघोरियों के अनुसार मृत्यु कोई अंत नहीं बल्कि एक संक्रमण है - एक द्वार जो आत्मा को एक जीवन से दूसरे जीवन की ओर ले जाता है। जब शरीर पंचतत्त्व में विलीन होता है, तो आत्मा अपने कर्मों के अनुसार अगली यात्रा के लिए तैयार होती है। अघोरी साधक इस प्रक्रिया को केवल शास्त्रीय सिद्धांतों के माध्यम से नहीं, बल्कि प्रत्यक्ष अनुभव और शमशान साधना के माध्यम से समझने का प्रयास करते हैं। शमशान, जहां देह समाप्त होती है, वहीं आत्मा की यात्रा प्रारंभ होती है - यही दर्शन उन्हें स्थूल से सूक्ष्म की ओर ले

जाता है। यह स्थल मृत्यु का भय समाप्त करता है और आत्मा के अनंत स्वरूप को प्रकट करता है।

अघोरियों की साधना आत्मा के मार्ग पर आधारित होती है - वे न केवल आत्मा की अमरता में विश्वास रखते हैं, बल्कि उसे अनुभव करने का प्रयास भी करते हैं। ध्यान, मंत्रजाप, और शवसाधना के माध्यम से वे आत्मा की गति को महसूस करते हैं और मृत्यु के क्षणों में आत्मा की चेतना को देखने का दावा करते हैं। आत्मा की गति को समझने के लिए वे शारीरिक जीवन की सीमाओं को तोड़कर तात्त्विक एकता की ओर बढ़ते हैं। उनका मानना है कि आत्मा एक यात्रा पर है, जो मोक्ष या पुनर्जन्म की ओर ले जाती है - और इस यात्रा को समझना ही साधना का सार है। इस प्रकार आत्मा की यात्रा का अघोरी दर्शन मृत्यु को एक अलौकिक, आत्मबोधकारी प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत करता है, जो शरीर के परे चेतना की यात्रा को उजागर करता है।

कर्म और मुक्ति का संबंध

अघोरी साधना में कर्म को आत्मा की गति और पुनर्जन्म के निर्धारण का मूल कारक माना गया है। उनका दर्शन इस विचार पर आधारित है कि प्रत्येक क्रिया - चाहे वह शारीरिक हो, मानसिक हो या भावनात्मक - आत्मा पर एक प्रभाव छोड़ती है, जिसे ‘कर्मफल ’ कहा जाता है। अघोरी मानते हैं कि यह कर्मफल ही आत्मा की अगली यात्रा की दिशा तय करता है। यदि आत्मा पापपूर्ण या आसक्त

कर्मों से बंधी होती है, तो उसे पुनर्जन्म के चक्र में लौटना पड़ता है। लेकिन यदि साधक तटस्थ, अनासक्त और समर्पित कर्मों की ओर अग्रसर होता है, तो वह मोक्ष - यानी जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति - की ओर बढ़ सकता है। अघोरी साधना का प्रमुख उद्देश्य इस कर्मबंधन को काटकर आत्मा को मुक्त करना है, ताकि वह शिव से अभिन्न हो सके।

इस मुक्ति की प्राप्ति के लिए अघोरी जीवन में त्याग, सेवा और आत्मबोध को विशेष महत्व दिया गया है। वे सांसारिक सुखों और सामाजिक सीमाओं को त्यागकर शमशान में रहते हैं, जहां जीवन और मृत्यु का वास्तविक साक्षात्कार होता है। वहाँ वे कर्मों के परे एक ऐसी स्थिति की साधना करते हैं, जहां अहंकार और ममता का लोप हो जाता है। जब कर्मों से मुक्त होकर आत्मा केवल चेतन रूप में स्थिर हो जाती है, तब वह शिव से एकाकार हो जाती है। अघोरी यही मानते हैं कि मुक्त आत्मा वह होती है जो न तो पुण्य की कामना करती है, न ही पाप से डरती है, बल्कि केवल साक्षी भाव से जीवन का अनुभव करती है। इस प्रकार अघोरी पथ में कर्म और मुक्ति का संबंध न केवल दार्शनिक है, बल्कि साधना की प्रमुख धुरी भी है।

मृत्यु की साधना के तरीके

अघोरी परंपरा में मृत्यु को केवल एक शारीरिक घटना न मानकर एक साध्य तत्त्व के रूप में देखा गया है - ऐसा तत्त्व जिसे अनुभव करके ही साधक आत्मबोध की ओर बढ़ सकता है। इस

उद्देश्य से अघोरी "मृत्यु की साधना" करते हैं, जिसमें वे शमशान में शवों के समीप ध्यान करते हैं, उनका निरीक्षण करते हैं, और उनके माध्यम से जीवन और मरण के गूढ़ रहस्यों को समझने का प्रयास करते हैं। यह साधना किसी भी सामान्य व्यक्ति के लिए भयावह प्रतीत हो सकती है, लेकिन अघोरियों के लिए यह आत्मा की शुद्धि और माया के मोह से मुक्ति का मार्ग है। मृत्यु की साधना उन्हें यह सिखाती है कि देह नश्वर है, और जीवन के सभी बंधन अंततः इसी मिट्टी में मिल जाते हैं।

इस साधना में अघोरी कई प्रतीकों का उपयोग करते हैं - जैसे खोपड़ी (कपाल), अस्थियाँ, राख, और शव के ऊपर बैठकर ध्यान लगाना। उनका उद्देश्य इन प्रतीकों के माध्यम से अपने भीतर के भय, घृणा, और मोह को समाप्त करना होता है। वे यह मानते हैं कि जब साधक मृत्यु से डरना बंद कर देता है, तभी वह वास्तव में जीवन को जान पाता है। शव के निकट ध्यान करने से वह मरणोत्तर स्थिति, आत्मा की गति, और चेतना की अखंडता को अनुभव करता है। अघोरी परंपरा में यह साधना केवल तांत्रिक शक्ति प्राप्ति का साधन नहीं, बल्कि आत्मा की यात्रा को समझने का द्वार है, जो साधक को जन्म और मृत्यु के द्वैत से परे, अद्वैत की स्थिति में प्रवेश कराता है।

भैरवी की तांत्रिक साधना में शमशान का महत्व

शमशान भैरवी की तांत्रिक साधना में शमशान का विशेष महत्व है, क्योंकि यह वह स्थान है जहाँ जीवन और मृत्यु का संनाद

होता है। अघोरी परंपरा में शमशान को केवल मृतकों का अंतिम संस्कार स्थल नहीं, बल्कि आध्यात्मिक ऊर्जा का केंद्र माना जाता है। यहाँ की शांति और मृत्यु की उपस्थिति साधक को माया के बंधनों से मुक्त होने की प्रेरणा देती है। शमशान में भैरवी की साधना करने से साधक को उनकी क्रूर और करुणामयी दोनों रूपों का साक्षात्कार होता है। अघोरी मानते हैं कि शमशान की ऊर्जा भैरवी की शक्ति को आवाहन करने में सहायक होती है, क्योंकि यहाँ का वातावरण भौतिक और आध्यात्मिक जगत के बीच की सीमा को धुंधला करता है। शमशान में साधना के दौरान अघोरी विशिष्ट मंत्रों, जैसे "ॐ ह्रीं भैरवी स्वाहा" का जाप करते हैं, जो भैरवी की ऊर्जा को जागृत करता है। इसके अलावा, शमशान की मिट्टी, अस्थियाँ और अन्य अवशेषों का उपयोग तांत्रिक यंत्रों और साधना में किया जाता है, जो भैरवी की शक्ति को और अधिक प्रबल बनाता है। यह प्रक्रिया साधक को मृत्यु के भय से मुक्ति दिलाने में सहायक होती है, जो अघोरी दर्शन का मूल आधार है। शमशान में साधना करने से साधक भैरवी के साथ एक गहन आध्यात्मिक संबंध स्थापित करता है, जो उसे आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है। इस प्रकार, शमशान भैरवी की तांत्रिक साधना का एक अभिन्न अंग है, जो अघोरियों को उनकी आध्यात्मिक यात्रा में मार्गदर्शन प्रदान करता है।

भैरवी के मंत्रों का अघोरी साधना में उपयोग

भैरवी के मंत्र अघोरी साधना का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, क्योंकि ये मंत्र साधक को उनकी दिव्य शक्ति से जोड़ते हैं। अघोरी परंपरा में भैरवी के मंत्रों का जाप तांत्रिक साधना का आधार है, जो साधक के मन, शरीर और आत्मा को शुद्ध करता है। प्रमुख मंत्रों में "ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं" और "ॐ भैरवी भयंकरि स्वाहा" शामिल हैं, जो भैरवी की विभिन्न शक्तियों को जागृत करते हैं। इन मंत्रों का जाप शमशान में रात्रि के समय, विशेष रूप से अमावस्या या पूर्णिमा के दौरान किया जाता है, जब तांत्रिक ऊर्जा अपने चरम पर होती है। अघोरी मानते हैं कि मंत्रों की ध्वनि भैरवी की सूक्ष्म ऊर्जा को आकर्षित करती है, जिससे साधक को उनकी कृपा प्राप्त होती है। मंत्र जाप के साथ-साथ अघोरी विशिष्ट यंत्रों, जैसे भैरवी यंत्र, का उपयोग करते हैं, जो मंत्रों की शक्ति को केंद्रित करते हैं। इस प्रक्रिया में साधक को पूर्ण एकाग्रता और समर्पण की आवश्यकता होती है, क्योंकि मंत्रों का गलत उच्चारण या असावधानी नकारात्मक परिणाम दे सकती है। भैरवी के मंत्र साधक को न केवल आध्यात्मिक शक्ति प्रदान करते हैं, बल्कि उसे भौतिक और मानसिक बाधाओं से मुक्ति भी दिलाते हैं। अघोरी साधना में मंत्रों का उपयोग भैरवी के साथ एक गहन संबंध स्थापित करने का साधन है, जो साधक को अद्वैत की अवस्था तक ले जाता है। इस प्रकार, भैरवी के मंत्र अघोरी तांत्रिक साधना में एक शक्तिशाली

उपकरण के रूप में कार्य करते हैं, जो साधक की आध्यात्मिक प्रगति को सुनिश्चित करते हैं।

गुरु की भूमिका भैरवी की तांत्रिक साधना में

अघोरी परंपरा में गुरु की भूमिका भैरवी की तांत्रिक साधना में अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि गुरु ही साधक को इस जटिल और शक्तिशाली मार्ग पर मार्गदर्शन प्रदान करता है। गुरु न केवल भैरवी के मंत्र, यंत्र और साधना विधियों का ज्ञान देता है, बल्कि साधक के आध्यात्मिक विकास को भी सुनिश्चित करता है। अघोरी परंपरा में गुरु को भैरवी का प्रत्यक्ष प्रतिनिधि माना जाता है, जो उनकी शक्ति और कृपा को साधक तक पहुँचाता है। गुरु द्वारा दीक्षा के दौरान साधक को विशिष्ट मंत्र और साधना की विधियाँ सौंपी जाती हैं, जो उसकी आध्यात्मिक क्षमता और लक्ष्य के अनुरूप होती हैं। यह दीक्षा प्रक्रिया शमशान में आयोजित की जाती है, जहाँ गुरु साधक को भैरवी की ऊर्जा से जोड़ता है। गुरु साधक को मंत्रों के सही उच्चारण, यंत्रों के निर्माण और पूजा के नियमों का प्रशिक्षण देता है, ताकि साधना में कोई त्रुटि न हो। इसके अलावा, गुरु साधक को मानसिक और भावनात्मक रूप से तैयार करता है, क्योंकि भैरवी की साधना में तीव्र आध्यात्मिक अनुभव हो सकते हैं। गुरु की शिक्षाएँ साधक को मृत्यु, माया और भौतिकता से परे देखने की दृष्टि प्रदान करती हैं, जो अघोरी दर्शन का मूल है। गुरु का मार्गदर्शन साधक को नैतिकता और समर्पण के पथ पर रखता है, ताकि वह भैरवी की शक्ति का

दुरुपयोग न करे। इस प्रकार, गुरु भैरवी की तांत्रिक साधना में एक सेतु के रूप में कार्य करता है, जो साधक को उनकी कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

भैरवी की तांत्रिक साधना में यंत्रों का उपयोग

शमशान भैरवी की तांत्रिक साधना में यंत्रों का उपयोग अघोरियों के लिए एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, क्योंकि ये यंत्र भैरवी की शक्ति को केंद्रित और संनाद करने का माध्यम हैं। अघोरी परंपरा में भैरवी यंत्र, जो ज्यामितीय आकृतियों और मंत्रों का संयोजन होता है, साधना का आधार बनता है। इस यंत्र को शमशान की पवित्र मिट्टी, मानव अस्थियों के चूर्ण, और अन्य तांत्रिक सामग्रियों से तैयार किया जाता है, जिसे गुरु के मार्गदर्शन में शुद्ध किया जाता है। यंत्र का निर्माण एक जटिल प्रक्रिया है, जिसमें विशिष्ट मंत्रों का जाप और शुभ मुहूर्त का ध्यान रखा जाता है। साधना के दौरान यंत्र को पूजा स्थल के मध्य में स्थापित किया जाता है, और साधक इसके समक्ष ध्यान और मंत्र जाप करता है। अघोरी मानते हैं कि यंत्र भैरवी की ऊर्जा का भौतिक रूप है, जो साधक के मन को एकाग्र करता है और उसे आध्यात्मिक शक्ति प्रदान करता है। यंत्र की रेखाएँ और प्रतीक तंत्र के गूढ़ रहस्यों को दर्शाते हैं, जो साधक को माया और वास्तविकता के बीच की समझ प्रदान करते हैं। यह प्रक्रिया साधक को भैरवी के क्रूर और करुणामयी दोनों रूपों से जोड़ती है, जिससे वह मृत्यु और जीवन के चक्र को स्वीकार करता है। यंत्रों का उपयोग

न केवल आध्यात्मिक प्रगति के लिए, बल्कि साधक को मानसिक और भौतिक बाधाओं से मुक्ति दिलाने के लिए भी किया जाता है। इस प्रकार, भैरवी यंत्र अघोरी साधना में एक शक्तिशाली उपकरण है, जो साधक को आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

भैरवी साधना में बलिदान और प्रसाद की भूमिका

भैरवी की तांत्रिक साधना में बलिदान और प्रसाद अघोरियों की पूजा का अभिन्न अंग हैं, जो भैरवी के प्रति समर्पण और श्रद्धा को दर्शाते हैं। अघोरी परंपरा में बलिदान का अर्थ केवल प्राणी बलि तक सीमित नहीं है; यह साधक के अहंकार, इच्छाओं और भौतिक बंधनों का त्याग भी दर्शाता है। हालांकि, कुछ अघोरी शमशान में पशु बलि या प्रतीकात्मक बलि, जैसे नारियल या कद्दू, अर्पित करते हैं, जो भैरवी की शक्ति को प्रसन्न करने का साधन माना जाता है। प्रसाद के रूप में शमशान में उपलब्ध सामग्री, जैसे फल, मिठाई, या शराब, भैरवी को अर्पित की जाती है, जो साधक की निस्वार्थ भक्ति को प्रतीकित करता है। बलिदान और प्रसाद की प्रक्रिया शमशान में रात्रि के समय, विशेष रूप से अमावस्या के दौरान, गुरु के मार्गदर्शन में की जाती है। इस दौरान साधक विशिष्ट मंत्रों का जाप करता है और हवन में आहुति देता है, जिससे भैरवी की ऊर्जा जागृत होती है। अघोरी मानते हैं कि बलिदान भैरवी के क्रूर रूप को संतुष्ट करता है, जबकि प्रसाद उनकी करुणामयी प्रकृति को आकर्षित करता है। यह प्रक्रिया साधक को भैरवी के साथ एक गहन आध्यात्मिक संबंध

स्थापित करने में मदद करती है, जो उसे मृत्यु के भय और संसारिक मोह से मुक्त करता है। बलिदान और प्रसाद का उपयोग अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को भी दर्शाता है, जिसमें सभी कुछ-जीवन, मृत्यु, और भौतिकता-भैरवी को समर्पित है। इस प्रकार, बलिदान और प्रसाद भैरवी की तांत्रिक साधना में साधक की भक्ति और समर्पण का प्रतीक हैं, जो उसे आध्यात्मिक मुक्ति की ओर ले जाते हैं।

भैरवी साधना के आध्यात्मिक और सामाजिक प्रभाव

शमशान भैरवी की तांत्रिक साधना का अघोरियों पर गहरा आध्यात्मिक और सामाजिक प्रभाव पड़ता है, जो उनकी जीवन दृष्टि और समाज के साथ उनके संबंध को आकार देता है। आध्यात्मिक रूप से, भैरवी की साधना साधक को मृत्यु, माया, और भौतिकता के भ्रम से मुक्त करती है, जिससे वह अद्वैत की अवस्था-आत्मा और परमात्मा के एकीकरण-को प्राप्त करता है। यह साधना साधक के भीतर भैरवी की शक्ति को जागृत करती है, जो उसे मानसिक और भावनात्मक शक्ति प्रदान करती है। शमशान में की जाने वाली यह साधना साधक को जीवन और मृत्यु के चक्र की गहरी समझ देती है, जिससे वह न केवल मृत्यु को स्वीकार करता है, बल्कि उसे उत्सव के रूप में देखता है। सामाजिक दृष्टिकोण से, भैरवी की साधना अघोरियों को समाज से अलग करती है, क्योंकि उनकी प्रथाएँ-जैसे शमशान में निवास और मानव अवशेषों का उपयोग-अक्सर समाज में भय और गलतफहमी का कारण बनती हैं। हालांकि, कुछ अघोरी

भैरवी की कृपा से प्रेरित होकर सामाजिक सेवा, जैसे गरीबों की सहायता या पर्यावरण संरक्षण, में संलग्न होते हैं। यह साधना साधक को नारी शक्ति का सम्मान करना सिखाती है, जो अघोरी दर्शन का एक महत्वपूर्ण पहलू है। भैरवी की साधना का प्रभाव साधक के व्यक्तित्व में भी दिखता है, जो उसे सादगी, त्याग, और निर्भयता की ओर ले जाता है। आधुनिक समय में, यह साधना समाज में जागरूकता और स्वीकृति के नए आयाम खोल रही है, विशेष रूप से उन लोगों के लिए जो आध्यात्मिकता और तंत्र के गहरे अर्थ को समझना चाहते हैं। इस प्रकार, भैरवी की तांत्रिक साधना अघोरियों के आध्यात्मिक और सामाजिक जीवन को गहन रूप से प्रभावित करती है, जो उन्हें एक अद्वितीय और प्रेरणादायक मार्ग पर ले जाती है।

अध्याय 34:
अघोरी साधना में शमशान भैरवी के प्रतीकों का महत्व

भैरवी के प्रतीकों का आध्यात्मिक महत्व

शमशान भैरवी के प्रतीक अघोरी साधना में गहरा आध्यात्मिक महत्व रखते हैं, क्योंकि ये प्रतीक भैरवी की शक्ति, रहस्य और दार्शनिक सिद्धांतों को मूर्त रूप प्रदान करते हैं। अघोरी परंपरा में भैरवी के प्रतीकों में खोपड़ी, त्रिशूल, कमंडल, और अग्नि जैसे तत्व शामिल हैं, जो जीवन, मृत्यु और परिवर्तन के चक्र को दर्शाते हैं। खोपड़ी, जो भैरवी के हाथ में अक्सर देखी जाती है, मृत्यु के प्रति भय के उन्मूलन और आत्मा की अमरता का प्रतीक है। यह अघोरियों को सिखाता है कि शरीर नश्वर है, जबकि आत्मा अनंत है। त्रिशूल भैरवी की त्रिगुणात्मक शक्ति-सृष्टि, स्थिति और संहार-को दर्शाता है, जो साधक को माया के परे देखने की प्रेरणा देता है। कमंडल जल और शुद्धता का प्रतीक है, जो साधक के मन की शांति और आध्यात्मिक शुद्धि को व्यक्त करता है। अग्नि, जो भैरवी की पूजा में हवन के रूप में उपस्थित होती है, परिवर्तन और शुद्धिकरण की शक्ति का प्रतीक है। इन प्रतीकों का उपयोग साधना के दौरान साधक के ध्यान को केंद्रित करता है और उसे भैरवी की ऊर्जा से जोड़ता है। शमशान में इन प्रतीकों को पूजा स्थल पर स्थापित किया जाता है, जहाँ साधक

मंत्र जाप और ध्यान के माध्यम से इनके गूढ़ अर्थों को आत्मसात करता है। ये प्रतीक अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को भी प्रतिबिंबित करते हैं, जिसमें सभी कुछ-जीवन, मृत्यु, और प्रकृति-भैरवी में समाहित है। इस प्रकार, भैरवी के प्रतीक अघोरी साधना में एक मार्गदर्शक के रूप में कार्य करते हैं, जो साधक को आध्यात्मिक जागृति और मुक्ति की ओर ले जाते हैं।

प्रतीकों का उपयोग शमशान साधना में

शमशान भैरवी के प्रतीकों का उपयोग अघोरी साधना में, विशेष रूप से शमशान में, एक महत्वपूर्ण और जटिल प्रक्रिया है, जो साधक को भैरवी की शक्ति से जोड़ने का साधन है। शमशान, जो मृत्यु और परिवर्तन का प्रतीक है, इन प्रतीकों के प्रभाव को और अधिक प्रबल करता है। उदाहरण के लिए, खोपड़ी या कपाल का उपयोग साधना में एक पात्र के रूप में किया जाता है, जिसमें प्रसाद या तांत्रिक सामग्री रखी जाती है। यह प्रथा साधक को मृत्यु के प्रति भय को त्यागने और जीवन के नश्वर स्वरूप को स्वीकार करने की शिक्षा देती है। त्रिशूल को पूजा स्थल पर स्थापित किया जाता है, जो भैरवी की संहारक और रक्षक शक्ति को आह्वान करता है। साधक त्रिशूल के समक्ष ध्यान करता है, जिससे उसका मन त्रिगुणों-सत, रज, और तम-से परे जाता है। अग्नि, जो हवन का आधार है, शमशान में साधना का केंद्र होती है। साधक इसमें मंत्रों के साथ आहुति देता है, जो भैरवी की ऊर्जा को जागृत करती है। कमंडल का उपयोग जल से

शुद्धिकरण के लिए किया जाता है, जो साधना से पहले साधक के शरीर और मन को पवित्र करता है। इन प्रतीकों को शमशान की पवित्र मिट्टी और अस्थियों के साथ संयोजित किया जाता है, जो तांत्रिक ऊर्जा को बढ़ाता है। यह प्रक्रिया साधक को भैरवी के क्रूर और करुणामयी रूपों के बीच संतुलन स्थापित करने में मदद करती है। प्रतीकों का उपयोग न केवल साधना को गहन बनाता है, बल्कि साधक को भैरवी के दार्शनिक सिद्धांतों-जैसे अद्वैत और शक्ति-की गहरी समझ प्रदान करता है। इस प्रकार, शमशान में प्रतीकों का उपयोग अघोरी साधना का एक अभिन्न अंग है, जो साधक को आध्यात्मिक और दार्शनिक प्रगति की ओर ले जाता है।

प्रतीकों के माध्यम से भैरवी की शक्ति का आह्वान

भैरवी के प्रतीकों के माध्यम से उनकी शक्ति का आह्वान अघोरी साधना में एक गहन और तांत्रिक प्रक्रिया है, जो साधक को उनकी दिव्य ऊर्जा से जोड़ती है। अघोरी परंपरा में प्रतीक केवल भौतिक वस्तुएँ नहीं हैं, बल्कि वे भैरवी की सूक्ष्म शक्ति के प्रवेश द्वार हैं। इस प्रक्रिया में साधक शमशान में रात्रि के समय, विशेष रूप से अमावस्या या पूर्णिमा के दौरान, प्रतीकों के समक्ष साधना करता है। उदाहरण के लिए, भैरवी यंत्र, जो ज्यामितीय आकृतियों और मंत्रों का संयोजन है, साधना का केंद्र होता है। साधक इसके समक्ष विशिष्ट मंत्र, जैसे "ॐ ह्रीं भैरवी स्वाहा", का जाप करता है, जो यंत्र में निहित भैरवी की शक्ति को जागृत करता है। खोपड़ी का उपयोग ध्यान के

दौरान किया जाता है, जिसमें साधक मृत्यु और जीवन के चक्र पर चिंतन करता है, जिससे भैरवी की संहारक शक्ति का आह्वान होता है। त्रिशूल और अग्नि का उपयोग हवन में किया जाता है, जहाँ साधक आहुति के माध्यम से भैरवी की रक्षक और परिवर्तनकारी शक्ति को बुलाता है। इस प्रक्रिया में गुरु का मार्गदर्शन अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक को प्रतीकों के सही उपयोग और मंत्रों के उच्चारण का प्रशिक्षण देता है। प्रतीकों के माध्यम से भैरवी की शक्ति का आह्वान साधक के मन, शरीर और आत्मा को शुद्ध करता है, जिससे वह आध्यात्मिक बाधाओं को पार करता है। यह प्रक्रिया साधक को भैरवी के साथ एक गहन संबंध स्थापित करने में मदद करती है, जो उसे अद्वैत की अवस्था और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है। इस प्रकार, प्रतीकों के माध्यम से भैरवी की शक्ति का आह्वान अघोरी साधना का एक शक्तिशाली और परिवर्तनकारी पहलू है, जो साधक की आध्यात्मिक यात्रा को समृद्ध करता है।

भैरवी के प्रतीकों का दार्शनिक अर्थ

शमशान भैरवी के प्रतीक अघोरी साधना में केवल भौतिक वस्तुएँ नहीं हैं, बल्कि ये गहन दार्शनिक अर्थों के वाहक हैं, जो अघोरी दर्शन के मूल सिद्धांतों-अद्वैत, शक्ति, और मृत्यु की स्वीकृति-को प्रकट करते हैं। उदाहरण के लिए, खोपड़ी, जो भैरवी के प्रतीकों में प्रमुख है, न केवल मृत्यु का प्रतीक है, बल्कि यह अहंकार के

विनाश और आत्मा की अनंत प्रकृति को दर्शाती है। अघोरी इस प्रतीक के माध्यम से समझते हैं कि शरीर क्षणभंगुर है, और सच्चा आत्म-साक्षात्कार माया के परे है। त्रिशूल, जो भैरवी की त्रिगुणात्मक शक्ति (सृष्टि, स्थिति, संहार) का प्रतीक है, साधक को संसार के त्रिगुणों-सत, रज, तम-से मुक्ति की प्रेरणा देता है। यह दर्शाता है कि भैरवी सभी गुणों का स्रोत और अंत है। अग्नि, जो हवन और साधना का केंद्र है, परिवर्तन और शुद्धिकरण का प्रतीक है, जो साधक के भीतर की अशुद्धियों को जलाकर उसे शुद्ध चेतना की ओर ले जाती है। कमंडल, जो जल और शुद्धता का प्रतीक है, साधक के मन की शांति और आध्यात्मिक संतुलन को दर्शाता है। ये प्रतीक अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को रेखांकित करते हैं, जिसमें सभी कुछ-जीव, प्रकृति, और मृत्यु-भैरवी की एकता में समाहित है। शमशान में इन प्रतीकों पर ध्यान करने से साधक को दार्शनिक गहराई प्राप्त होती है, जो उसे भौतिक और आध्यात्मिक जगत के बीच की सीमा को पार करने में सक्षम बनाती है। इस प्रकार, भैरवी के प्रतीक अघोरी साधना में दार्शनिक मार्गदर्शक के रूप में कार्य करते हैं, जो साधक को आत्म-साक्षात्कार और मुक्ति की ओर ले जाते हैं।

प्रतीकों का निर्माण और शुद्धिकरण

भैरवी के प्रतीकों का निर्माण और शुद्धिकरण अघोरी साधना में एक जटिल और पवित्र प्रक्रिया है, जो साधक को भैरवी की शक्ति से जोड़ने के लिए आवश्यक है। प्रतीकों, जैसे भैरवी यंत्र, त्रिशूल, या

कपाल, का निर्माण शमशान में गुरु के मार्गदर्शन में किया जाता है, जहाँ विशिष्ट सामग्रियों और तांत्रिक विधियों का उपयोग होता है। भैरवी यंत्र को तांबे, चाँदी, या शमशान की मिट्टी पर ज्यामितीय आकृतियों के साथ उकेरा जाता है, जिसमें मंत्र और प्रतीक अंकित किए जाते हैं। इस प्रक्रिया में शमशान की अस्थियों का चूर्ण, पवित्र जल, और अन्य तांत्रिक सामग्री शामिल होती है, जो यंत्र को शक्ति प्रदान करती है। त्रिशूल और कपाल को शुद्ध करने के लिए उन्हें शमशान की अग्नि में तपाया जाता है और मंत्रों के साथ अभिमंत्रित किया जाता है। शुद्धिकरण की प्रक्रिया में साधक को पूर्ण एकाग्रता और समर्पण की आवश्यकता होती है, क्योंकि किसी भी त्रुटि से साधना का प्रभाव कम हो सकता है। शमशान का वातावरण, जो मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा से भरा होता है, इन प्रतीकों को और अधिक शक्तिशाली बनाता है। यह प्रक्रिया साधक के मन और शरीर को भी शुद्ध करती है, जिससे वह साधना के लिए तैयार होता है। प्रतीकों का निर्माण और शुद्धिकरण न केवल साधना को प्रभावी बनाता है, बल्कि साधक को भैरवी के साथ एक गहन आध्यात्मिक संबंध स्थापित करने में मदद करता है। इस प्रकार, यह प्रक्रिया अघोरी साधना का एक अभिन्न अंग है, जो साधक को आध्यात्मिक और तांत्रिक शक्ति प्रदान करती है।

प्रतीकों और मंत्रों का संयोजन

भैरवी के प्रतीकों और मंत्रों का संयोजन अघोरी साधना में एक शक्तिशाली तांत्रिक प्रक्रिया है, जो साधक को भैरवी की दिव्य ऊर्जा से जोड़ती है। प्रतीक, जैसे भैरवी यंत्र, त्रिशूल, और कपाल, भैरवी की शक्ति के भौतिक रूप हैं, जबकि मंत्र उनकी सूक्ष्म ऊर्जा को जागृत करने का साधन हैं। शमशान में साधना के दौरान साधक प्रतीकों के समक्ष विशिष्ट मंत्रों, जैसे "ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं" या "ॐ भैरवी भयंकरि स्वाहा", का जाप करता है। यह संयोजन प्रतीकों में निहित शक्ति को सक्रिय करता है और साधक के मन को एकाग्र करता है। उदाहरण के लिए, भैरवी यंत्र पर मंत्र जाप करने से यंत्र की ज्यामितीय रेखाएँ और प्रतीक भैरवी की ऊर्जा को केंद्रित करती हैं, जिससे साधक को गहन आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त होता है। त्रिशूल के समक्ष मंत्र जाप भैरवी की त्रिगुणात्मक शक्ति को आह्वान करता है, जो साधक को संसार के बंधनों से मुक्त करता है। कपाल के साथ मंत्रों का उपयोग साधक को मृत्यु और जीवन के चक्र पर चिंतन करने में मदद करता है। इस प्रक्रिया में गुरु की भूमिका महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक को मंत्रों के सही उच्चारण और प्रतीकों के उपयोग का प्रशिक्षण देता है। मंत्र और प्रतीकों का संयोजन साधना को तीव्र और प्रभावी बनाता है, जिससे साधक भैरवी के क्रूर और करुणामयी रूपों के बीच संतुलन स्थापित करता है। यह प्रक्रिया साधक के मन, शरीर, और आत्मा को शुद्ध करती है, जिससे वह अद्वैत की अवस्था और आत्म-साक्षात्कार की ओर अग्रसर होता है।

इस प्रकार, प्रतीकों और मंत्रों का संयोजन अघोरी साधना में एक परिवर्तनकारी तत्व है, जो साधक की आध्यात्मिक यात्रा को समृद्ध करता है।

प्रतीकों के माध्यम से भैरवी की नारी शक्ति का सम्मान

शमशान भैरवी के प्रतीक अघोरी साधना में नारी शक्ति के सम्मान को दर्शाते हैं, जो अघोरी दर्शन का एक केंद्रीय तत्व है। भैरवी को शक्ति और सृजन की देवी के रूप में पूजा जाता है, और उनके प्रतीक-जैसे खोपड़ी, त्रिशूल, और अग्नि-नारीत्व की गहन शक्ति और स्वतंत्रता को प्रतीकित करते हैं। खोपड़ी, जो मृत्यु और परिवर्तन का प्रतीक है, भैरवी की संहारक शक्ति को दर्शाती है, जो पुरुष-प्रधान सामाजिक ढांचे में नारी की विनाशकारी और पुनर्जनन की क्षमता को रेखांकित करती है। त्रिशूल, जो त्रिगुणों (सृष्टि, स्थिति, संहार) का प्रतीक है, भैरवी की संपूर्णता को व्यक्त करता है, जिसमें नारी शक्ति की सृजनात्मक और रक्षक भूमिकाएँ शामिल हैं। अग्नि, जो शुद्धिकरण और परिवर्तन का प्रतीक है, नारी की आंतरिक शक्ति और पुनर्जनन की क्षमता को दर्शाती है। अघोरी साधना में इन प्रतीकों का उपयोग साधक को नारी शक्ति के प्रति सम्मान और समर्पण सिखाता है, जो सामाजिक रूढ़ियों से परे है। शमशान में इन प्रतीकों के समक्ष ध्यान और मंत्र जाप के दौरान साधक भैरवी की नारी शक्ति को आत्मसात करता है, जो उसे पुरुष और स्त्री ऊर्जाओं के बीच संतुलन स्थापित करने में मदद करता है। यह प्रक्रिया अघोरी दर्शन के अद्वैत

सिद्धांत को भी प्रतिबिंबित करती है, जिसमें नारी और पुरुष का भेद मिट जाता है, और सभी कुछ भैरवी की एकता में समाहित हो जाता है। इस प्रकार, भैरवी के प्रतीक अघोरियों को नारी शक्ति के प्रति गहन सम्मान और आध्यात्मिक समझ प्रदान करते हैं, जो उनकी साधना को और अधिक समृद्ध बनाता है।

प्रतीकों का उपयोग गुरु-शिष्य परंपरा में

भैरवी के प्रतीकों का उपयोग अघोरी साधना में गुरु-शिष्य परंपरा का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, क्योंकि ये प्रतीक गुरु द्वारा शिष्य को दीक्षा और शिक्षाओं के हस्तांतरण का माध्यम हैं। गुरु शमशान में शिष्य को भैरवी के प्रतीकों-जैसे यंत्र, त्रिशूल, कपाल, और अग्नि-के उपयोग और उनके गूढ़ अर्थों का प्रशिक्षण देता है। उदाहरण के लिए, भैरवी यंत्र को गुरु द्वारा शिष्य को सौंपा जाता है, जिसे शुद्धिकरण और अभिमंत्रण के बाद साधना में उपयोग किया जाता है। गुरु शिष्य को यंत्र के निर्माण, इसके ज्यामितीय प्रतीकों, और मंत्रों के संयोजन की प्रक्रिया सिखाता है, जो शिष्य को भैरवी की शक्ति से जोड़ता है। त्रिशूल और कपाल का उपयोग दीक्षा के दौरान किया जाता है, जहाँ गुरु शिष्य को इन प्रतीकों के दार्शनिक और तांत्रिक महत्व को समझाता है। यह प्रक्रिया शिष्य को मृत्यु, माया, और संसारिक बंधनों से मुक्ति की दिशा में मार्गदर्शन करती है। शमशान में अग्नि के समक्ष गुरु शिष्य को हवन और मंत्र जाप की विधि सिखाता है, जो प्रतीकों की शक्ति को जागृत करता है। गुरु-शिष्य परंपरा में

प्रतीकों का उपयोग शिष्य के मन को शुद्ध और एकाग्र करता है, जिससे वह भैरवी की शिक्षाओं को गहराई से आत्मसात कर सके। यह प्रक्रिया शिष्य को नैतिकता, समर्पण, और आध्यात्मिक अनुशासन का पाठ पढ़ाती है, जो अघोरी साधना का आधार है। इस प्रकार, भैरवी के प्रतीक गुरु-शिष्य परंपरा में एक सेतु के रूप में कार्य करते हैं, जो शिष्य को भैरवी की शक्ति और आध्यात्मिक ज्ञान की ओर ले जाता है।

प्रतीकों का सामाजिक और सांस्कृतिक प्रभाव

भैरवी के प्रतीकों का अघोरी साधना में उपयोग न केवल आध्यात्मिक, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक प्रभाव भी रखता है, जो समाज में अघोरियों और भैरवी के प्रति धारणाओं को आकार देता है। खोपड़ी, त्रिशूल, और अग्नि जैसे प्रतीक समाज में अक्सर भय और रहस्य का कारण बनते हैं, क्योंकि ये मृत्यु और तंत्र से जुड़े हैं। यह सामाजिक धारणा अघोरियों को समाज से अलग करती है, क्योंकि उनके प्रतीकों को गलत समझा जाता है। हालांकि, ये प्रतीक अघोरी दर्शन के गहन सिद्धांतों-जैसे मृत्यु की स्वीकृति, नारी शक्ति का सम्मान, और अद्वैत-को दर्शाते हैं, जो सांस्कृतिक रूप से समृद्ध हैं। शमशान में इन प्रतीकों का उपयोग अघोरियों की सांस्कृतिक पहचान को मजबूत करता है, जो भारतीय तांत्रिक परंपरा का हिस्सा है। उदाहरण के लिए, भैरवी यंत्र और त्रिशूल का उपयोग न केवल साधना में, बल्कि अघोरी कला, मूर्तिकला, और साहित्य में भी देखा

जाता है, जो उनकी सांस्कृतिक विरासत को दर्शाता है। ये प्रतीक समाज में कुछ लोगों के लिए प्रेरणा का स्रोत भी बनते हैं, जो आध्यात्मिकता और तंत्र के गहरे अर्थ को समझना चाहते हैं। आधुनिक समय में, भैरवी के प्रतीक सामाजिक जागरूकता और शिक्षा के माध्यम से अधिक स्वीकृति प्राप्त कर रहे हैं, विशेष रूप से उन लोगों में जो नारी शक्ति और आध्यात्मिक स्वतंत्रता के प्रति आकर्षित हैं। यह प्रक्रिया अघोरियों को समाज के साथ जोड़ने में मदद करती है, जिससे उनकी प्रथाएँ और प्रतीक सांस्कृतिक संवाद का हिस्सा बनते हैं। इस प्रकार, भैरवी के प्रतीक अघोरी साधना के सामाजिक और सांस्कृतिक प्रभाव को रेखांकित करते हैं, जो उनकी आध्यात्मिक और सांस्कृतिक पहचान को समृद्ध बनाता है।

प्रतीकों के माध्यम से आध्यात्मिक शक्ति की प्राप्ति

शमशान भैरवी के प्रतीक अघोरी साधना में आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त करने का एक शक्तिशाली साधन हैं, क्योंकि ये प्रतीक साधक को भैरवी की दिव्य ऊर्जा से सीधे जोड़ते हैं। भैरवी यंत्र, त्रिशूल, कपाल, और अग्नि जैसे प्रतीक न केवल भैरवी की शक्ति का भौतिक रूप हैं, बल्कि वे साधक के मन, शरीर, और आत्मा को शुद्ध और सशक्त बनाने में भी सहायक हैं। शमशान में साधना के दौरान, साधक इन प्रतीकों के समक्ष विशिष्ट मंत्रों, जैसे "ॐ ह्रीं भैरवी स्वाहा" या "ॐ भैरवी भयंकरि स्वाहा", का जाप करता है, जो प्रतीकों में निहित ऊर्जा को जागृत करता है। उदाहरण के लिए, भैरवी यंत्र पर ध्यान

करने से साधक का मन एकाग्र होता है, और वह भैरवी की सूक्ष्म शक्ति को अनुभव करता है, जो उसे मानसिक और आध्यात्मिक बाधाओं से मुक्त करता है। त्रिशूल का उपयोग साधक को त्रिगुणों-सत, रज, तम-से परे ले जाता है, जिससे वह अद्वैत की अवस्था में प्रवेश करता है। कपाल के साथ साधना मृत्यु के भय को समाप्त करती है और साधक को आत्मा की अमरता का बोध कराती है। अग्नि के माध्यम से हवन करने से साधक की आंतरिक अशुद्धियाँ नष्ट होती हैं, और वह भैरवी की परिवर्तनकारी शक्ति से सशक्त होता है। यह प्रक्रिया साधक को न केवल आध्यात्मिक शक्ति प्रदान करती है, बल्कि उसे भौतिक और मानसिक कष्टों से भी मुक्ति दिलाती है। शमशान का पवित्र वातावरण इन प्रतीकों की शक्ति को और अधिक प्रबल करता है, जिससे साधक भैरवी के साथ गहन संबंध स्थापित करता है। इस प्रकार, भैरवी के प्रतीक अघोरी साधना में आध्यात्मिक शक्ति का स्रोत हैं, जो साधक को आत्म-साक्षात्कार और मुक्ति की ओर ले जाते हैं।

प्रतीकों का उपयोग तांत्रिक अनुष्ठानों में

भैरवी के प्रतीकों का उपयोग अघोरी साधना के तांत्रिक अनुष्ठानों में एक जटिल और शक्तिशाली प्रक्रिया है, जो साधक को भैरवी की तांत्रिक ऊर्जा से जोड़ती है। शमशान में आयोजित इन अनुष्ठानों में भैरवी यंत्र, त्रिशूल, कपाल, और अग्नि जैसे प्रतीकों का केंद्रीय महत्व है। भैरवी यंत्र को अनुष्ठान के मध्य में स्थापित किया

जाता है, और साधक इसके समक्ष मंत्र जाप, हवन, और ध्यान करता है। यंत्र की ज्यामितीय रेखाएँ और प्रतीक तांत्रिक ऊर्जा को केंद्रित करते हैं, जिससे साधक को भैरवी की शक्ति का साक्षात्कार होता है। त्रिशूल को अनुष्ठान स्थल पर रखा जाता है, जो भैरवी की संहारक और रक्षक शक्ति को आह्वान करता है। कपाल का उपयोग प्रसाद या तांत्रिक सामग्री रखने के लिए किया जाता है, जो मृत्यु और जीवन के चक्र को प्रतीकित करता है। अग्नि, जो हवन का आधार है, अनुष्ठान का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा है, जिसमें साधक मंत्रों के साथ आहुति देता है, जिससे भैरवी की ऊर्जा जागृत होती है। इन अनुष्ठानों में शमशान की मिट्टी, अस्थियों का चूर्ण, और अन्य तांत्रिक सामग्री का उपयोग प्रतीकों को और अधिक शक्तिशाली बनाता है। गुरु की उपस्थिति और मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक को अनुष्ठान की विधि, मंत्रों के उच्चारण, और प्रतीकों के सही उपयोग का प्रशिक्षण देता है। यह प्रक्रिया साधक को तांत्रिक सिद्धियों और आध्यात्मिक प्रगति की ओर ले जाती है, जिससे वह भैरवी के क्रूर और करुणामयी रूपों के बीच संतुलन स्थापित करता है। इस प्रकार, भैरवी के प्रतीक तांत्रिक अनुष्ठानों में साधक की आध्यात्मिक यात्रा को गहन और प्रभावी बनाते हैं

अध्याय 35:
अघोरियों की साधना में शमशान भैरवी के साथ मृत्यु और पुनर्जनन का दर्शन

मृत्यु के प्रति अघोरी दृष्टिकोण

शमशान भैरवी की साधना में अघोरियों द्वारा मृत्यु के प्रति दृष्टिकोण एक गहन और दार्शनिक अवधारणा है, जो साधक को भैरवी की शक्ति के साथ जोड़ता है और जीवन-मृत्यु के चक्र को समझने में सहायता करता है। अघोरी दर्शन में मृत्यु को जीवन का अभिन्न अंग माना जाता है, न कि अंत। यह दृष्टिकोण भैरवी की क्रूर और करुणामयी शक्ति से प्रेरित है, जो मृत्यु को परिवर्तन और पुनर्जनन का प्रतीक मानती है। शमशान का वातावरण, जो मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा से भरा होता है, इस दृष्टिकोण को और गहन बनाता है। गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक को मृत्यु के दार्शनिक अर्थ और भैरवी की शक्ति से इसके संबंध को सिखाता है। यह प्रक्रिया साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत का आधार है। मृत्यु के प्रति यह दृष्टिकोण साधक को जीवन और मृत्यु के द्वैत से परे ले जाता है, जिससे वह आत्मा और परमात्मा के मिलन का अनुभव करता है। यह प्रक्रिया नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है। इस प्रकार,

मृत्यु के प्रति अघोरी दृष्टिकोण अघोरियों की साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

पुनर्जनन का दार्शनिक आधार

शमशान भैरवी की साधना में अघोरियों द्वारा पुनर्जनन का दार्शनिक आधार एक गहन अवधारणा है, जो भैरवी की शक्ति के माध्यम से जीवन-मृत्यु के चक्र को समझने और अद्वैत दर्शन को मूर्त रूप देने में सहायता करता है। अघोरी दर्शन में पुनर्जनन को आत्मा की अनंत यात्रा का हिस्सा माना जाता है, जिसमें मृत्यु केवल एक परिवर्तन है, न कि अंत। भैरवी की शक्ति, जो मृत्यु और सृजन दोनों का प्रतीक है, साधक को इस चक्र की गहरी समझ प्रदान करती है। शमशान का वातावरण, जो मृत्यु की ऊर्जा से भरा होता है, इस दार्शनिक आधार को और प्रबल बनाता है। गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक को पुनर्जनन के दार्शनिक और आध्यात्मिक अर्थ सिखाता है। यह प्रक्रिया साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत का आधार है। पुनर्जनन का दर्शन साधक को मृत्यु के भय और माया से मुक्त करता है, जिससे वह आत्मा और परमात्मा के मिलन का अनुभव करता है। यह प्रक्रिया नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है। इस प्रकार, पुनर्जनन का दार्शनिक आधार अघोरियों की साधना को

गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

मृत्यु और पुनर्जनन में शमशान का महत्व

शमशान भैरवी की साधना में अघोरियों द्वारा मृत्यु और पुनर्जनन के दर्शन में शमशान का उपयोग एक गहन और तांत्रिक प्रक्रिया है, जो साधक को भैरवी की शक्ति के साथ गहरा संबंध स्थापित करने में सक्षम बनाता है। शमशान, जो मृत्यु और परिवर्तन का प्रतीक है, मृत्यु और पुनर्जनन के दर्शन को समझने के लिए सबसे पवित्र स्थान है।। गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक को शमशान की ऊर्जा और इसके दार्शनिक अर्थ सिखाता है। यह प्रक्रिया साधक को पुनर्जनन के चक्र और कर्म के सिद्धांत को समझने में मदद करती है। शमशान की ऊर्जा साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को प्रतिबिंबित करता है। यह प्रक्रिया साधक को जीवन और मृत्यु के द्वैत से परे ले जाती है, जिससे वह आत्मा और परमात्मा के मिलन का अनुभव करता है। यह प्रक्रिया नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है। इस प्रकार, मृत्यु और पुनर्जनन में शमशान का महत्व अघोरियों की साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

मृत्यु और पुनर्जनन में भैरवी की शक्ति का आह्वान

शमशान भैरवी की साधना में अघोरियों द्वारा मृत्यु और पुनर्जनन के दर्शन में भैरवी की शक्ति का आह्वान एक गहन और परिवर्तनकारी तांत्रिक प्रक्रिया है, जो साधक को जीवन-मृत्यु के चक्र की गहरी समझ प्रदान करती है। भैरवी, जो मृत्यु और सृजन की शक्ति का प्रतीक है, साधक को मृत्यु के भय और माया से मुक्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह प्रक्रिया शमशान में, विशेष रूप से रात्रि के समय, अमावस्या या पूर्णिमा के दौरान, भैरवी की मूर्ति, चित्र, या यंत्र के समक्ष की जाती है। गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक को भैरवी की शक्ति के दार्शनिक और आध्यात्मिक अर्थ सिखाता है। यह प्रक्रिया साधक की आंतरिक अशुद्धियों को जलाती है और उसे कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को प्रतिबिंबित करता है। यह प्रक्रिया साधक को जीवन और मृत्यु के द्वैत से परे ले जाती है, जिससे वह आत्मा और परमात्मा के मिलन का अनुभव करता है। यह प्रक्रिया नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है। इस प्रकार, मृत्यु और पुनर्जनन में भैरवी की शक्ति का आह्वान अघोरियों की साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

मृत्यु और पुनर्जनन में गुरु की भूमिका

शमशान भैरवी की साधना में अघोरियों द्वारा मृत्यु और पुनर्जनन के दर्शन में गुरु की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह साधक को भैरवी की शक्ति के साथ गहरा संबंध स्थापित करने और आध्यात्मिक प्रगति की ओर ले जाने में मार्गदर्शन प्रदान करता है। गुरु को अघोरी परंपरा में भैरवी का प्रत्यक्ष प्रतिनिधि माना जाता है, जो साधक को मृत्यु और पुनर्जनन के दार्शनिक और आध्यात्मिक अर्थ सिखाता है। गुरु साधक को शारीरिक और मानसिक शुद्धि, जैसे गंगाजल से स्नान और प्रारंभिक मंत्र जाप, के महत्व को समझाता है, जो मृत्यु और पुनर्जनन के दर्शन को आत्मसात करने के लिए आवश्यक है। शमशान का वातावरण, जो मृत्यु की ऊर्जा से भरा होता है, गुरु की शिक्षाओं को और गहन बनाता है। यह प्रक्रिया साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत का आधार है। गुरु की शिक्षाएँ साधक को नैतिकता और समर्पण सिखाती हैं, ताकि वह मृत्यु और पुनर्जनन की शक्ति का दुरुपयोग न करे। यह प्रक्रिया नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है। इस प्रकार, मृत्यु और पुनर्जनन में गुरु की भूमिका अघोरियों की साधना को एक पवित्र और परिवर्तनकारी प्रक्रिया बनाती है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है।

मृत्यु और पुनर्जनन में तांत्रिक अनुष्ठानों का उपयोग

शमशान भैरवी की साधना में अघोरियों द्वारा मृत्यु और पुनर्जनन के दर्शन में तांत्रिक अनुष्ठानों का उपयोग एक शक्तिशाली और परिवर्तनकारी प्रक्रिया है, जो साधक को भैरवी की शक्ति के साथ गहरा संबंध स्थापित करने में सक्षम बनाता है। तांत्रिक अनुष्ठान, जैसे मंत्र जाप, यंत्र पूजा, और हवन, शमशान में, विशेष रूप से रात्रि के समय, अमावस्या के दौरान किए जाते हैं। शमशान का वातावरण, जो मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा से भरा होता है, तांत्रिक अनुष्ठानों की शक्ति को और प्रबल बनाता है। गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक को अनुष्ठानों की सही विधि और नैतिकता सिखाता है। साधक हवन कुंड में आहुति देता है, जिसमें मंत्र जाप के साथ तांत्रिक सामग्रियों का उपयोग होता है, जो मृत्यु और पुनर्जनन के दर्शन को गहराई से समझने में मदद करता है। यह प्रक्रिया साधक की आंतरिक अशुद्धियों को जलाती है और उसे कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है। यह प्रक्रिया अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को प्रतिबिंबित करती है, जो आत्मा और परमात्मा के मिलन पर जोर देता है। यह प्रक्रिया नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है। इस प्रकार, मृत्यु और पुनर्जनन में तांत्रिक अनुष्ठानों का उपयोग अघोरियों की साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

मृत्यु और पुनर्जनन में तांत्रिक सामग्रियों का उपयोग

शमशान भैरवी की साधना में अघोरियों द्वारा मृत्यु और पुनर्जनन के दर्शन में तांत्रिक सामग्रियों का उपयोग एक शक्तिशाली और परिवर्तनकारी प्रक्रिया है, जो साधक को भैरवी की शक्ति के साथ गहरा संबंध स्थापित करने में सक्षम बनाता है। तांत्रिक सामग्रियाँ, जैसे गंगाजल, शमशान की मिट्टी, चंदन, जड़ी-बूटियाँ, और विशेष तेल, शमशान में, विशेष रूप से रात्रि के समय, अमावस्या के दौरान उपयोग की जाती हैं। हवन में तांत्रिक जड़ी-बूटियों और घी का उपयोग भैरवी की शक्ति को आह्वान करता है, जो साधक को पुनर्जनन के चक्र की गहरी समझ प्रदान करता है। शमशान का वातावरण, जो मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा से भरा होता है, इन सामग्रियों की शक्ति को और प्रबल बनाता है। गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक को तांत्रिक सामग्रियों के चयन, शुद्धिकरण, और उपयोग की सही विधि सिखाता है। यह प्रक्रिया साधक की आंतरिक अशुद्धियों को जलाती है और उसे कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है। यह प्रक्रिया अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को प्रतिबिंबित करती है, जो आत्मा और परमात्मा के मिलन पर जोर देता है। तांत्रिक सामग्रियाँ नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती हैं। इस प्रकार, मृत्यु और पुनर्जनन में तांत्रिक सामग्रियों का उपयोग अघोरियों की साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता

है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

शमशान भैरवी की साधना में अघोरियों द्वारा मृत्यु और पुनर्जनन का दर्शन समाज में एक जटिल और विवादास्पद धारणा को जन्म देता है, जो उनकी तांत्रिक प्रथाओं की गहनता और सामाजिक गलतफहमियों का मिश्रण है। शमशान में, विशेष रूप से रात्रि के समय, साधक द्वारा मंत्र जाप, जैसे "ॐ भैरवी भयंकरि स्वाहा", और तांत्रिक अनुष्ठानों, जैसे हवन और ध्यान, के माध्यम से मृत्यु और पुनर्जनन को समझने का प्रयास सामान्य लोगों के लिए रहस्यमय और भयावह प्रतीत होता है। समाज में शमशान और तंत्र से जुड़ी प्रथाओं को अक्सर जादू-टोने या काले जादू से जोड़ा जाता है, जिसके कारण अघोरियों को गलत समझा जाता है। अघोरी मानते हैं कि मृत्यु और पुनर्जनन का दर्शन मृत्यु की स्वीकृति और अद्वैत की अवस्था की ओर ले जाता है, जो भैरवी की शक्ति से प्रेरित है। यह प्रक्रिया साधक को मृत्यु के भय और माया से मुक्त करती है, लेकिन समाज इस दार्शनिक दृष्टिकोण को समझने में असमर्थ रहता है। शमशान का वातावरण, जो मृत्यु की ऊर्जा से भरा होता है, इन प्रथाओं को और गहन बनाता है। गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक को मृत्यु और पुनर्जनन की नैतिकता और आध्यात्मिक महत्व सिखाता है। आधुनिक समय में, शिक्षा और जागरूकता के माध्यम से कुछ लोग इन प्रथाओं के दार्शनिक और आध्यात्मिक पहलुओं, जैसे नारी शक्ति और मृत्यु की स्वीकृति,

को समझने लगे हैं। कुछ अघोरी सामाजिक सेवा, जैसे पर्यावरण संरक्षण और शिक्षा, में संलग्न होकर समाज में अपनी स्वीकृति बढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं। इस प्रकार, मृत्यु और पुनर्जनन की सामाजिक धारणा और विवाद अघोरियों की साधना को एक अद्वितीय और प्रेरणादायक मार्ग के रूप में प्रस्तुत करते हैं, जो समाज को आध्यात्मिक गहराई की ओर ले जाता है।

मृत्यु और पुनर्जनन में आध्यात्मिक सिद्धियाँ

शमशान भैरवी की साधना में अघोरियों द्वारा मृत्यु और पुनर्जनन के दर्शन के माध्यम से प्राप्त होने वाली आध्यात्मिक सिद्धियाँ उनकी आध्यात्मिक यात्रा का चरम बिंदु हैं, जो साधक को भैरवी की शक्ति के साथ गहन संबंध स्थापित करने में सक्षम बनाती हैं। यह प्रक्रिया शमशान में, विशेष रूप से रात्रि के समय, अमावस्या की रात, शुरू होती है। शमशान का वातावरण, जो मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा से भरा होता है, इस प्रक्रिया की शक्ति को और प्रबल बनाता है। गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक को सिद्धियों के उपयोग की नैतिकता सिखाता है, ताकि वह इनका दुरुपयोग न करे। यह प्रक्रिया साधक को तांत्रिक सिद्धियाँ, जैसे अंतर्जनन, दूरदृष्टि, और आध्यात्मिक शक्ति, प्रदान करती है। यह प्रक्रिया साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत का आधार है। यह प्रक्रिया साधक को मानसिक शांति और आध्यात्मिक

प्रगति प्रदान करती है। यह प्रक्रिया नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है। इस प्रकार, मृत्यु और पुनर्जनन में आध्यात्मिक सिद्धियाँ अघोरियों की साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

शमशान भैरवी की साधना में अघोरियों द्वारा मृत्यु और पुनर्जनन के दर्शन में नैतिकता का पालन एक गहन और तांत्रिक प्रक्रिया है, जो साधक को भैरवी की शक्ति के साथ जोड़ता है और आध्यात्मिक प्रगति की ओर ले जाता है। मृत्यु और पुनर्जनन का दर्शन अघोरी परंपरा में जीवन-मृत्यु के चक्र को एक परिवर्तनकारी प्रक्रिया के रूप में देखता है, जिसमें भैरवी की शक्ति मृत्यु के भय और माया से मुक्ति दिलाती है। यह प्रक्रिया शमशान में, विशेष रूप से रात्रि के समय, अमावस्या के दौरान, भैरवी की मूर्ति, चित्र, या यंत्र के समक्ष मंत्र जाप, जैसे "ॐ ह्रीं भैरवी स्वाहा", और ध्यान के माध्यम से की जाती है। नैतिकता का पालन सुनिश्चित करता है कि साधक इस दर्शन को केवल आध्यात्मिक उद्देश्यों के लिए अपनाए, न कि सांसारिक लाभ या हानिकारक कार्यों के लिए। गुरु साधक को सिखाता है कि मृत्यु और पुनर्जनन के दर्शन को शुद्ध भावना और समर्पण के साथ समझना चाहिए। उदाहरण के लिए, मंत्र जाप और तांत्रिक अनुष्ठानों के दौरान साधक को नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान बनाए रखना चाहिए। शमशान का वातावरण, जो मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा से भरा होता है, इस प्रक्रिया को और प्रबल

बनाता है। गुरु साधक को नैतिकता और इस दर्शन के आध्यात्मिक महत्व को सिखाता है, ताकि वह तांत्रिक शक्ति का दुरुपयोग न करे। यह प्रक्रिया साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत का आधार है। समाज में इन प्रथाओं को अक्सर गलत समझा जाता है, जिसके कारण अघोरियों को विवादों का सामना करना पड़ता है। इस प्रकार, मृत्यु और पुनर्जनन में नैतिकता अघोरियों की साधना को पवित्र और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

अध्याय 36:
शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच आध्यात्मिक संबंध

आध्यात्मिक संबंध का महत्व

शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच आध्यात्मिक संबंध अघोरी परंपरा का एक मूलभूत पहलू है, जो तांत्रिक दर्शन और भैरवी की शक्ति पर आधारित है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, अघोरियों के लिए एक मार्गदर्शक और आध्यात्मिक माता के रूप में पूजनीय है। यह संबंध साधक को मृत्यु, माया और सांसारिक बंधनों से मुक्त करने में महत्वपूर्ण है। अघोरी मानते हैं कि भैरवी की कृपा के बिना उनकी साधना अधूरी है, क्योंकि वह उन्हें आत्म-साक्षात्कार और मुक्ति की ओर ले जाती है। शमशान, जो मृत्यु और परिवर्तन का प्रतीक है, इस संबंध को और गहरा करता है, क्योंकि यह वह स्थान है जहाँ अघोरी भैरवी की ऊर्जा का आह्वान करते हैं। भैरवी की पूजा और तांत्रिक अनुष्ठानों के माध्यम से, अघोरी अपनी चेतना को परम सत्य के साथ जोड़ते हैं, जो अद्वैत दर्शन का आधार है। यह आध्यात्मिक संबंध न केवल व्यक्तिगत साधना को मजबूत करता है, बल्कि अघोरियों को समाज में भय और अज्ञानता को दूर करने की प्रेरणा भी देता है। गुरु-शिष्य परंपरा इस संबंध को और सशक्त बनाती है, क्योंकि गुरु साधक को भैरवी की शक्ति के

साथ जोड़ने में मध्यस्थ का कार्य करता है। इस प्रकार, भैरवी और अघोरियों का आध्यात्मिक संबंध उनकी साधना का आधार है, जो उन्हें नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान के साथ-साथ आध्यात्मिक गहराई प्रदान करता है। यह संबंध साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाता है, जो अघोरी जीवनशैली का अंतिम लक्ष्य है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और उत्पत्ति

शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच आध्यात्मिक संबंध की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि प्राचीन तांत्रिक और शैव परंपराओं में निहित है। अघोरी परंपरा की उत्पत्ति कपिल मुनि और अन्य शैव संतों से मानी जाती है, जो शिव और शक्ति की भक्ति में लीन थे। भैरवी, जो शिव की शक्ति का क्रूर और करुणामयी रूप है, अघोरियों के लिए एक केंद्रीय देवी बन गई, क्योंकि उनकी साधना मृत्यु और परिवर्तन के दर्शन पर आधारित है। प्राचीन तंत्र ग्रंथ, जैसे तंत्रालोक और कुलार्णव तंत्र, भैरवी को शमशान की अधिष्ठात्री देवी के रूप में वर्णित करते हैं, जो अघोरियों को साधना के लिए प्रेरित करती है। ऐतिहासिक रूप से, अघोरी शमशान में निवास करते थे, जहाँ वे भैरवी की पूजा के माध्यम से मृत्यु के भय को पार करते थे। यह संबंध प्राचीन काल में गुरु-शिष्य परंपरा के माध्यम से विकसित हुआ, जहाँ गुरु अपने शिष्यों को भैरवी के मंत्र और यंत्रों की दीक्षा देते थे। भैरवी की पूजा में शमशान का चयन इसलिए किया जाता था, क्योंकि यह स्थान

मृत्यु और पुनर्जनन की ऊर्जा से युक्त है। यह ऐतिहासिक पृष्ठभूमि अघोरियों को भैरवी के साथ एक गहरे आध्यात्मिक बंधन में बाँधती है, जो उनकी साधना को दिशा देती है। यह संबंध नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। इस प्रकार, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि अघोरी परंपरा को भैरवी के साथ जोड़कर उनकी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाती है, जो साधक को आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

साधना में शमशान भैरवी की भूमिका

शमशान भैरवी अघोरियों की साधना में एक केंद्रीय भूमिका निभाती है, क्योंकि वह साधक को मृत्यु, माया और सांसारिक बंधनों से मुक्त करने वाली शक्ति है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, अघोरियों के लिए एक आध्यात्मिक मार्गदर्शक और माता है। शमशान में, अघोरी भैरवी की पूजा के लिए विशेष तांत्रिक अनुष्ठान करते हैं, जैसे मंत्र जाप, यंत्र पूजा, और हवन। ये अनुष्ठान शमशान की मिट्टी, राख, और गंगाजल के साथ किए जाते हैं, जो भैरवी की शक्ति को आह्वान करते हैं। भैरवी की साधना साधक को मृत्यु के भय को पार करने और जीवन-मृत्यु के चक्र को समझने में मदद करती है। यह प्रक्रिया अघोरियों को अद्वैत दर्शन के साथ जोड़ती है, जिसमें वे आत्मा और परमात्मा के मिलन का अनुभव करते हैं। गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक

को भैरवी के मंत्रों और यंत्रों की सही विधि सिखाता है। शमशान का वातावरण, जो मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा से भरा होता है, इस साधना को और गहन बनाता है। भैरवी की साधना में अघोरी प्रायः उपवास और एकांत ध्यान का अभ्यास करते हैं, जो उनके मानसिक और शारीरिक अनुशासन को मजबूत करता है। यह साधना नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी अपनी साधना के अनुभव को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को आध्यात्मिक जागरूकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, साधना में भैरवी की भूमिका अघोरी जीवनशैली को गहन और परिवर्तनकारी बनाती है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है।

अघोरियों के लिए भैरवी का मार्गदर्शन

शमशान भैरवी अघोरियों के लिए एक आध्यात्मिक मार्गदर्शक और माता के रूप में केंद्रीय भूमिका निभाती है, जो उनकी साधना को दिशा और शक्ति प्रदान करती है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, अघोरियों को मृत्यु, माया और सांसारिक बंधनों से परे ले जाती है। शमशान में, जहाँ मृत्यु की ऊर्जा प्रबल होती है, अघोरी भैरवी की पूजा के माध्यम से उनकी कृपा प्राप्त करते हैं। यह कृपा साधक को आंतरिक शांति, आत्म-नियंत्रण और परम सत्य की ओर ले जाती है। भैरवी का मार्गदर्शन साधक को मृत्यु के भय

को पार करने और जीवन-मृत्यु के चक्र को समझने में मदद करता है। यह प्रक्रिया अघोरियों को अद्वैत दर्शन के साथ जोड़ती है, जिसमें वे आत्मा और परमात्मा के मिलन का अनुभव करते हैं। भैरवी की कृपा नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है, क्योंकि वह प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस मार्गदर्शन को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को आध्यात्मिक जागरूकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, भैरवी का मार्गदर्शन अघोरी जीवनशैली को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

शमशान साधना का आध्यात्मिक आधार

शमशान साधना अघोरियों की आध्यात्मिक यात्रा का मूल आधार है, जो शमशान भैरवी की शक्ति और उपस्थिति से संचालित होती है। शमशान, जो मृत्यु और परिवर्तन का प्रतीक है, अघोरियों के लिए एक पवित्र स्थल है, जहाँ वे भैरवी की कृपा प्राप्त करते हैं। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, शमशान में साधना के माध्यम से साधक को मृत्यु के भय और माया से मुक्त करती है। शमशान साधना में अघोरी गहन ध्यान, तांत्रिक मंत्र जाप, और यंत्र पूजा का अभ्यास करते हैं, जो उनकी चेतना को भैरवी की शक्ति के साथ जोड़ता है। शमशान का वातावरण, जो चिताओं की राख और मृत्यु की ऊर्जा से भरा होता है, इस साधना को और गहन बनाता है। गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह

साधक को शमशान साधना की सही विधि और इसके दार्शनिक महत्व सिखाता है। यह साधना साधक को जीवन-मृत्यु के चक्र को समझने और अद्वैत दर्शन के साथ जोड़ने में मदद करती है। शमशान साधना नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस साधना के अनुभव को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को मृत्यु के प्रति जागरूकता और आध्यात्मिक अनुशासन सिखाता है। इस प्रकार, शमशान साधना का आध्यात्मिक आधार अघोरी जीवनशैली को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

भैरवी और अघोरियों के संबंध का दार्शनिक विश्लेषण

शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच संबंध का दार्शनिक विश्लेषण अघोरी दर्शन और तांत्रिक परंपराओं के मूल में निहित है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, अघोरियों के लिए एक आध्यात्मिक शक्ति है, जो उन्हें अद्वैत दर्शन के साथ जोड़ती है। यह दर्शन इस विश्वास पर आधारित है कि सभी कुछ एक ही परम सत्य का हिस्सा है, और भैरवी इस सत्य की प्राप्ति का मार्ग दिखाती है। अघोरी भैरवी की पूजा के माध्यम से मृत्यु और जीवन के दोहरेपन को पार करते हैं, जो उनके दार्शनिक दृष्टिकोण का आधार है। भैरवी की साधना में मंत्र, यंत्र, और ध्यान का उपयोग साधक को माया और अहंकार से मुक्त करता है, जिससे वह आत्मा और परमात्मा के

मिलन का अनुभव करता है। गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक को भैरवी के दार्शनिक महत्व और साधना की विधि सिखाता है। शमशान का वातावरण, जो मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा से भरा होता है, इस विश्लेषण को और गहन बनाता है। यह संबंध नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस दार्शनिक दृष्टिकोण को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को आध्यात्मिक जागरूकता और अद्वैत दर्शन की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, भैरवी और अघोरियों का दार्शनिक संबंध उनकी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

तंत्र में देवी और साधक का संबंध

तंत्र परंपरा में देवी और साधक का संबंध एक गहन आध्यात्मिक बंधन है, जो शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच के रिश्ते का आधार बनता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, तंत्र में साधक के लिए एक मार्गदर्शक और आध्यात्मिक शक्ति है। अघोरी परंपरा में, यह संबंध अद्वैत दर्शन पर आधारित है, जिसमें साधक भैरवी को परम सत्य का हिस्सा मानता है। तंत्र में, देवी को केवल एक बाहरी शक्ति के रूप में नहीं, बल्कि साधक की आंतरिक चेतना के अभिन्न अंग के रूप में देखा जाता है।। गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक

को तांत्रिक प्रथाओं की सही विधि और उनके दार्शनिक महत्व सिखाता है। यह संबंध नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस तांत्रिक संबंध को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को आध्यात्मिक जागरूकता और तांत्रिक दर्शन की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, तंत्र में देवी और साधक का संबंध अघोरी जीवनशैली को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

भैरवी की पूजा में प्रयुक्त मंत्र और यंत्र

शमशान भैरवी की पूजा में प्रयुक्त मंत्र और यंत्र अघोरियों की साधना का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, जो उनकी आध्यात्मिक यात्रा को शक्ति और दिशा प्रदान करते हैं। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, की पूजा में विशिष्ट मंत्र, जैसे "ह्रीं भैरवी क्रीं" और "क्रीं क्रीं क्रीं", का उपयोग किया जाता है। ये मंत्र साधक की चेतना को भैरवी की शक्ति के साथ जोड़ते हैं, जिससे वह मृत्यु के भय और माया से मुक्त होकर आत्म-साक्षात्कार की ओर बढ़ता है। यंत्र, जैसे भैरवी यंत्र, जटिल ज्यामितीय आकृतियाँ हैं, जो भैरवी की ऊर्जा का प्रतीक हैं। यह प्रक्रिया साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को प्रतिबिंबित करता है। मंत्र और यंत्र नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करते हैं, क्योंकि भैरवी

प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इन प्रथाओं को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक साधना की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, भैरवी की पूजा में मंत्र और यंत्र अघोरी जीवनशैली को गहन और परिवर्तनकारी बनाते हैं, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

अघोरियों द्वारा भैरवी को माँ और गुरु के रूप में स्वीकार

अघोरी परंपरा में शमशान भैरवी को माँ और गुरु के रूप में स्वीकार करना एक गहन आध्यात्मिक प्रथा है, जो साधक को भैरवी की शक्ति और मार्गदर्शन के प्रति पूर्ण समर्पण को दर्शाता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, अघोरियों के लिए एक करुणामयी माता और आध्यात्मिक मार्गदर्शक है। शमशान में, अघोरी भैरवी को अपनी माँ के रूप में देखते हैं, जो उन्हें जीवन-मृत्यु के चक्र से मुक्त करती है, और गुरु के रूप में, जो उन्हें आत्म-साक्षात्कार का मार्ग दिखाती है। गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक को भैरवी को माँ और गुरु के रूप में स्वीकार करने की विधि और इसके दार्शनिक महत्व सिखाता है। यह प्रक्रिया साधक को मृत्यु के भय और माया से मुक्त करती है, जिससे वह आत्मा और परमात्मा के मिलन का अनुभव करता है। यह स्वीकृति नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस स्वीकृति को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को

नारी शक्ति और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, भैरवी को माँ और गुरु के रूप में स्वीकार करना अघोरी जीवनशैली को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

भैरवी के माध्यम से मुक्ति का मार्ग

शमशान भैरवी अघोरियों के लिए मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करती है, जो उनकी साधना का अंतिम लक्ष्य है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, अघोरियों को माया, अहंकार और सांसारिक बंधनों से मुक्त करने में सहायता करती है। गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक को भैरवी की कृपा प्राप्त करने की सही विधि और दार्शनिक महत्व सिखाता है। यह प्रक्रिया अघोरियों को अद्वैत दर्शन की ओर ले जाती है, जिसमें वे सभी कुछ को एक ही परम सत्य का हिस्सा मानते हैं। भैरवी की साधना साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था तक ले जाती है, जो मुक्ति का अंतिम चरण है। यह मार्ग नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी अपनी साधना के अनुभव को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को आध्यात्मिक जागरूकता और मुक्ति के मार्ग की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, भैरवी के माध्यम से मुक्ति का मार्ग अघोरी जीवनशैली को गहन और

परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

समाज में इस संबंध की धारणा और गलतफहमियाँ

शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच आध्यात्मिक संबंध को समाज में अक्सर गलत समझा जाता है, जिसके परिणामस्वरूप कई गलतफहमियाँ और विवाद उत्पन्न होते हैं। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, और अघोरियों की शमशान साधना को समाज में रहस्यमयी और भयावह माना जाता है। यह धारणा अघोरियों की असामान्य प्रथाओं, जैसे मानव अवशेषों का उपयोग और शमशान में निवास, से उत्पन्न होती है। समाज अक्सर भैरवी और अघोरियों के संबंध को शारीरिक या जादुई रूप से गलत समझता है, जबकि यह संबंध पूरी तरह से आध्यात्मिक और तांत्रिक है।। यह गलतफहमियाँ सामाजिक अज्ञानता और तांत्रिक प्रथाओं के प्रति भय से उत्पन्न होती हैं। कुछ अघोरी इन गलतफहमियों को दूर करने के लिए समाज में अपनी साधना के बारे में जागरूकता फैलाते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और नारी शक्ति की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, समाज में इस संबंध की धारणा और गलतफहमियाँ अघोरी जीवनशैली को समझने में एक चुनौती हैं, लेकिन यह संबंध साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

आध्यात्मिक एकता का सार

शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच आध्यात्मिक संबंध का सार उनकी साधना में निहित है, जो आध्यात्मिक एकता और आत्म-साक्षात्कार का प्रतीक है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, अघोरियों के लिए एक मार्गदर्शक और माता है, जो उन्हें मृत्यु, माया और सांसारिक बंधनों से मुक्त करती है। गुरु का मार्गदर्शन इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह साधक को भैरवी की शक्ति और साधना की सही विधि सिखाता है। यह संबंध नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस आध्यात्मिक एकता को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिक जागरूकता की ओर प्रेरित करता है। यह प्रक्रिया साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन का अंतिम लक्ष्य है। इस प्रकार, आध्यात्मिक एकता का सार अघोरी जीवनशैली को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

अध्याय 37:
शमशान भैरवी और अघोरियों के संबंध की पौराणिक कथा

शमशान भैरवी की उत्पत्ति की कथा

शमशान भैरवी की उत्पत्ति की पौराणिक कथा तांत्रिक और शैव-शक्ति परंपराओं में गहराई से निहित है, जो उनकी शक्ति और रहस्यमय स्वरूप को उजागर करती है। पौराणिक कथाओं के अनुसार, भैरवी शिव की शक्ति, अर्थात् शक्ति, के क्रूर और करुणामयी रूप के रूप में प्रकट हुई। एक प्रचलित कथा में, भैरवी का उदय तब हुआ जब शिव ने अपने क्रोध से एक शक्तिशाली ऊर्जा का सृजन किया, जो अज्ञानता और माया को नष्ट करने के लिए थी। यह ऊर्जा शमशान भैरवी के रूप में अवतरित हुई, जो शमशान में निवास करती है, क्योंकि यह मृत्यु और परिवर्तन का स्थान है। भैरवी को अक्सर खोपड़ियों की माला, त्रिशूल और तलवार के साथ चित्रित किया जाता है, जो उनकी विनाशकारी और रक्षक दोनों भूमिकाओं को दर्शाता है। शमशान में उनकी उपस्थिति साधकों को मृत्यु के भय को पार करने और आत्म-साक्षात्कार की ओर बढ़ने की प्रेरणा देती है। यह कथा अघोरियों के लिए विशेष महत्व रखती है, क्योंकि वे शमशान में भैरवी की पूजा करते हैं, मानते हुए कि उनकी कृपा से मुक्ति संभव है। गुरु-शिष्य परंपरा इस कथा को जीवित रखती

है, क्योंकि गुरु अपने शिष्यों को भैरवी की उत्पत्ति की कहानियाँ सुनाते हैं, जो साधना को गहरा करती हैं। भैरवी की उत्पत्ति की कथा नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है, क्योंकि वह प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस कथा को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, भैरवी की उत्पत्ति की कथा अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाती है, जो साधक को आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है।

अघोरियों की पौराणिक उत्पत्ति

अघोरियों की पौराणिक उत्पत्ति शैव परंपराओं और तांत्रिक दर्शन से जुड़ी है, जो उनके और शमशान भैरवी के बीच गहरे आध्यात्मिक संबंध को रेखांकित करती है। पौराणिक कथाओं के अनुसार, अघोरी परंपरा की शुरुआत कपिल मुनि और अन्य प्राचीन शैव संतों से हुई, जो शिव की भक्ति में लीन थे। एक कथा के अनुसार, शिव ने स्वयं कुछ साधकों को शमशान में साधना करने का आदेश दिया, ताकि वे मृत्यु और माया के भय को पार करें। इन साधकों को अघोरी कहा गया, क्योंकि वे "अघोर" (न भयानक) दृष्टिकोण अपनाते थे, जो सभी कुछ को परम सत्य का हिस्सा मानता था। अघोरी शमशान में निवास करते थे, जहाँ वे भैरवी की पूजा के माध्यम से उनकी शक्ति का आह्वान करते थे। यह पौराणिक उत्पत्ति अघोरियों को भैरवी के साथ जोड़ती है, क्योंकि वह उनकी साधना

की केंद्रीय देवी हैं। गुरु-शिष्य परंपरा इस कथा को जीवित रखती है, क्योंकि गुरु अपने शिष्यों को अघोरियों की उत्पत्ति की कहानियाँ सुनाते हैं। यह कथा नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस कथा को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, अघोरियों की पौराणिक उत्पत्ति उनकी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाती है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है।

भैरवी और अघोरियों के बीच संबंध की कहानियाँ

शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच संबंध की पौराणिक कहानियाँ उनकी आध्यात्मिक एकता को दर्शाती हैं, जो तांत्रिक परंपराओं में गहराई से निहित हैं। एक प्रचलित कथा के अनुसार, एक अघोरी साधक ने शमशान में वर्षों तक कठोर तपस्या की, जिसके फलस्वरूप भैरवी ने उसे दर्शन दिए और मुक्ति का मार्ग दिखाया। ऐसी कहानियाँ अघोरियों के बीच प्रचलित हैं, जो भैरवी की कृपा को उनकी साधना का आधार मानती हैं। इन कथाओं में भैरवी को एक करुणामयी माता और क्रूर शक्ति के रूप में चित्रित किया जाता है, जो साधक को मृत्यु के भय और माया से मुक्त करती है। गुरु-शिष्य परंपरा इन कहानियों को जीवित रखती है, क्योंकि गुरु अपने शिष्यों को भैरवी और अघोरियों के संबंध की कथाएँ सुनाते हैं। यह

संबंध नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इन कथाओं को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, भैरवी और अघोरियों के बीच संबंध की कहानियाँ अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाती हैं, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती हैं।

शिव और भैरवी का पौराणिक संबंध

शिव और शमशान भैरवी का पौराणिक संबंध तांत्रिक और शैव परंपराओं का एक केंद्रीय तत्व है, जो अघोरियों के आध्यात्मिक दर्शन को गहराई प्रदान करता है। पौराणिक कथाओं के अनुसार, भैरवी शिव की शक्ति, अर्थात् शक्ति, का क्रूर और करुणामयी रूप है, जो उनकी सहचरी और पूरक ऊर्जा के रूप में प्रकट होती है। एक प्रचलित कथा में, शिव ने अपने क्रोध और करुणा से भैरवी को जन्म दिया, ताकि वह अज्ञानता और माया को नष्ट कर साधकों को मुक्ति का मार्ग दिखाए। शमशान में निवास करने वाली भैरवी को शिव के शमशानवासी रूप, भैरव, के साथ जोड़ा जाता है, जो मृत्यु और परिवर्तन की शक्ति का प्रतीक है। यह संबंध अघोरियों के लिए विशेष महत्व रखता है, क्योंकि वे शिव और भैरवी की एकता को अपनी साधना का आधार मानते हैं। गुरु-शिष्य परंपरा इस कथा को जीवित रखती है, क्योंकि गुरु अपने शिष्यों को शिव और भैरवी की एकता

की कहानियाँ सुनाते हैं। यह संबंध नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस कथा को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, शिव और भैरवी का पौराणिक संबंध अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

तंत्र ग्रंथों में उल्लेख

शमशान भैरवी और अघोरियों के संबंध का उल्लेख प्राचीन तंत्र ग्रंथों में विस्तार से मिलता है, जो उनकी आध्यात्मिक एकता को रेखांकित करता है। ग्रंथ जैसे तंत्रालोक, कुलार्णव तंत्र, और महानिर्वाण तंत्र भैरवी को शमशान की अधिष्ठात्री देवी के रूप में वर्णित करते हैं, जो अघोरियों की साधना का केंद्रीय आधार है। इन ग्रंथों में भैरवी को एक ऐसी शक्ति के रूप में चित्रित किया गया है, जो साधक को मृत्यु के भय और माया से मुक्त करती है। तंत्र ग्रंथों में वर्णित भैरवी की पूजा में विशिष्ट मंत्र, जैसे "ह्रीं भैरवी क्रीं", और यंत्रों का उपयोग होता है, जो अघोरी साधना में प्रचलित हैं। गुरु-शिष्य परंपरा इन ग्रंथों को जीवित रखती है, क्योंकि गुरु अपने शिष्यों को तंत्र ग्रंथों की शिक्षाएँ और भैरवी की पूजा की विधि सिखाता है। यह प्रक्रिया साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को प्रतिबिंबित

करता है। तंत्र ग्रंथों में भैरवी और अघोरियों का संबंध नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करता है। कुछ अघोरी इन शिक्षाओं को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, तंत्र ग्रंथों में उल्लेख अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

प्रतीकात्मक अर्थ और दर्शन

शमशान भैरवी और अघोरियों के संबंध की पौराणिक कथाओं में प्रतीकात्मक अर्थ और दर्शन गहन आध्यात्मिक शिक्षाओं को समेटे हुए हैं, जो अघोरी दर्शन का आधार बनते हैं। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, पौराणिक कथाओं में मृत्यु और परिवर्तन की शक्ति के रूप में चित्रित होती है। अघोरी इन कथाओं को अद्वैत दर्शन के साथ जोड़ते हैं, जिसमें वे सभी कुछ को एक ही परम सत्य का हिस्सा मानते हैं। शमशान में भैरवी की पूजा, जिसमें खोपड़ी, राख, और तांत्रिक यंत्रों का उपयोग होता है, मृत्यु और जीवन के दोहरेपन को पार करने का प्रतीक है। यह प्रतीकात्मकता साधक को माया और अहंकार से मुक्त करती है, जिससे वह आत्मा और परमात्मा के मिलन का अनुभव करता है। गुरु-शिष्य परंपरा इन प्रतीकात्मक अर्थों को जीवित रखती है, क्योंकि गुरु अपने शिष्यों को कथाओं के दार्शनिक महत्व सिखाता है। यह दर्शन नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करता है, क्योंकि

भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इन प्रतीकात्मक अर्थों को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, प्रतीकात्मक अर्थ और दर्शन अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाते हैं, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

मुक्ति की प्राप्ति के पौराणिक उदाहरण

पौराणिक कथाओं में शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच संबंध की कहानियाँ मुक्ति की प्राप्ति के उदाहरणों से भरी हैं, जो अघोरी साधना की गहराई और भैरवी की कृपा को दर्शाती हैं। एक प्रचलित कथा के अनुसार, एक अघोरी साधक ने शमशान में वर्षों तक कठोर तपस्या की, जिसमें वह रात्रि में भैरवी की पूजा करता था, मंत्र जाप और यंत्र पूजा के साथ। इस तपस्या के फलस्वरूप, भैरवी ने उसे दर्शन दिए और उसे माया, अहंकार और सांसारिक बंधनों से मुक्त कर दिया। इस तरह की कथाएँ अघोरियों के बीच प्रेरणा का स्रोत हैं, जो यह विश्वास दिलाती हैं कि भैरवी की कृपा से मुक्ति संभव है। गुरु-शिष्य परंपरा इन कथाओं को जीवित रखती है, क्योंकि गुरु अपने शिष्यों को इन उदाहरणों के माध्यम से भैरवी की शक्ति और साधना की विधि सिखाता है। यह प्रक्रिया साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को प्रतिबिंबित करता है। यह कथा नारी शक्ति

और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इन कथाओं को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, मुक्ति की प्राप्ति के पौराणिक उदाहरण अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाते हैं, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाते हैं।

भैरवी की साधना का पौराणिक महत्व

शमशान भैरवी की साधना का पौराणिक महत्व अघोरियों के लिए उनकी आध्यात्मिक यात्रा का आधार है, जो पौराणिक कथाओं में गहराई से निहित है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, पौराणिक कथाओं में एक ऐसी देवी के रूप में वर्णित है जो साधक को मृत्यु के भय और माया से मुक्त करती है। इन कथाओं में, भैरवी की साधना शमशान में की जाती है, जहाँ साधक तांत्रिक मंत्र, यंत्र, और अनुष्ठानों का उपयोग करता है। गुरु-शिष्य परंपरा इस महत्व को जीवित रखती है, क्योंकि गुरु अपने शिष्यों को भैरवी की साधना की विधि और इसके दार्शनिक महत्व सिखाता है। यह साधना साधक को अद्वैत दर्शन के साथ जोड़ती है, जिसमें वह आत्मा और परमात्मा के मिलन का अनुभव करता है। भैरवी की साधना नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है, क्योंकि वह प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस साधना

के महत्व को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, भैरवी की साधना का पौराणिक महत्व अघोरी जीवनशैली को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

अघोरियों और भैरवी की संयुक्त कथाएँ

शमशान भैरवी और अघोरियों की संयुक्त पौराणिक कथाएँ उनकी आध्यात्मिक एकता और साधना की गहराई को दर्शाती हैं, जो तांत्रिक परंपराओं में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। इन कथाओं में अघोरी साधकों को भैरवी की कृपा प्राप्त करने के लिए शमशान में कठोर तपस्या करते हुए चित्रित किया जाता है। एक कथा के अनुसार, एक अघोरी साधक ने अमावस्या की रात को भैरवी की पूजा की, जिसमें उसने मंत्र जाप और यंत्र पूजा के साथ तांत्रिक अनुष्ठान किए। इस तपस्या के फलस्वरूप, भैरवी ने उसे दर्शन दिए और उसे मुक्ति का मार्ग दिखाया। यह प्रक्रिया साधक को अद्वैत दर्शन के साथ जोड़ती है, जिसमें वह आत्मा और परमात्मा के मिलन का अनुभव करता है। इन कथाओं में भैरवी को नारी शक्ति और प्रकृति की शक्ति के रूप में चित्रित किया जाता है, जो साधक को प्रकृति के प्रति सम्मान सिखाती है। कुछ अघोरी इन कथाओं को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, अघोरियों और भैरवी की संयुक्त कथाएँ

अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाती हैं, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती हैं।

समाज में मिथकों की स्वीकृति और विवाद

शमशान भैरवी और अघोरियों के संबंध की पौराणिक कथाएँ समाज में मिश्रित स्वीकृति और विवाद का विषय रही हैं, क्योंकि इनका गहन आध्यात्मिक और तांत्रिक स्वरूप सामान्य जनमानस के लिए रहस्यमयी और भयावह प्रतीत होता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, और अघोरियों की शमशान साधना समाज में अक्सर गलतफहमियों का कारण बनती है। इन कथाओं में भैरवी को एक क्रूर और करुणामयी देवी के रूप में चित्रित किया जाता है, जो अघोरियों को मृत्यु और माया से मुक्त करती है। हालांकि, समाज में अघोरियों की प्रथाएँ, जैसे मानव अवशेषों का उपयोग और शमशान में निवास, भय और विवाद का कारण बनती हैं। कुछ समाज इन कथाओं को आध्यात्मिक प्रेरणा के रूप में स्वीकार करते हैं, जबकि अन्य इसे जादू-टोना या अंधविश्वास मानते हैं। कुछ अघोरी इन कथाओं को समाज में साझा करते हैं, ताकि गलतफहमियों को दूर किया जा सके और तांत्रिक दर्शन को समझाया जा सके। यह प्रक्रिया नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है। इस प्रकार, समाज में मिथकों की स्वीकृति और विवाद अघोरी साधना को समझने में एक चुनौती हैं, लेकिन ये कथाएँ

साधकों को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती हैं

पौराणिकता और आध्यात्मिकता का संगम

शमशान भैरवी और अघोरियों के संबंध की पौराणिक कथाएँ पौराणिकता और आध्यात्मिकता के संगम का प्रतीक हैं, जो अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाती हैं। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, इन कथाओं में एक मार्गदर्शक और माता के रूप में चित्रित होती है, जो अघोरियों को मृत्यु और माया से मुक्त करती है। शमशान में, अघोरी भैरवी की पूजा के माध्यम से इन कथाओं को जीवित रखते हैं, जिसमें मंत्र, यंत्र, और तांत्रिक अनुष्ठानों का उपयोग होता है। ये कथाएँ नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती हैं, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इन कथाओं को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, पौराणिकता और आध्यात्मिकता का संगम अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

अध्याय 38:
शमशान भैरवी और अघोरियों के संबंध का आध्यात्मिक महत्व

संबंध का आध्यात्मिक उद्देश्य

शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच का संबंध आध्यात्मिक उद्देश्य से परिपूर्ण है, जो साधक को माया, अहंकार और सांसारिक बंधनों से मुक्त कर आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, अघोरियों के लिए एक मार्गदर्शक और माता है, जो उनकी साधना को दिशा और शक्ति प्रदान करती है। इस संबंध का मुख्य उद्देश्य साधक को मृत्यु के भय को पार करने और जीवन-मृत्यु के चक्र को समझने में सहायता करना है। शमशान में, अघोरी भैरवी की पूजा के माध्यम से इस उद्देश्य को साकार करते हैं, जिसमें मंत्र जाप, यंत्र पूजा और तांत्रिक अनुष्ठान शामिल हैं। ये प्रथाएँ साधक की चेतना को भैरवी की शक्ति के साथ जोड़ती हैं, जिससे वह अद्वैत दर्शन के सिद्धांत को अनुभव करता है, जिसमें आत्मा और परमात्मा एक हो जाते हैं। यह संबंध नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस आध्यात्मिक उद्देश्य को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, इस संबंध का

आध्यात्मिक उद्देश्य अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

साधना में भैरवी की शक्ति

साधना में शमशान भैरवी की शक्ति अघोरियों के लिए एक केंद्रीय तत्व है, जो उनकी आध्यात्मिक यात्रा को शक्ति और गहराई प्रदान करती है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, अघोरियों की साधना में एक ऐसी ऊर्जा है जो मृत्यु, माया और सांसारिक बंधनों से मुक्ति दिलाती है। यह शक्ति साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को प्रतिबिंबित करता है। भैरवी की शक्ति नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है, क्योंकि वह प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस शक्ति के अनुभव को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को आध्यात्मिक जागरूकता और तांत्रिक दर्शन की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, साधना में भैरवी की शक्ति अघोरी जीवनशैली को गहन और परिवर्तनकारी बनाती है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है।

अघोरियों के लिए भैरवी की कृपा

शमशान भैरवी की कृपा अघोरियों के लिए उनकी साधना का एक अनिवार्य और पवित्र पहलू है, जो उन्हें आध्यात्मिक प्रगति और

मुक्ति की ओर ले जाती है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, अघोरियों के लिए एक करुणामयी माता और मार्गदर्शक है। शमशान में, अघोरी भैरवी की पूजा के माध्यम से उनकी कृपा प्राप्त करते हैं, जिसमें मंत्र जाप, यंत्र पूजा और तांत्रिक अनुष्ठान शामिल हैं। ये प्रथाएँ साधक को मृत्यु के भय और माया से मुक्त करने में मदद करती हैं, जिससे वह आत्मा और परमात्मा के मिलन का अनुभव करता है। यह कृपा साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को प्रतिबिंबित करता है। भैरवी की कृपा नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है, क्योंकि वह प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस कृपा के अनुभव को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, भैरवी की कृपा अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाती है, जो साधक को आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है।

शमशान में मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा

शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच आध्यात्मिक संबंध में शमशान का वातावरण मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा का प्रतीक है, जो साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है। शमशान, जहाँ चिताओं की राख और मृत्यु की ऊर्जा प्रबल होती है, अघोरियों के लिए एक पवित्र स्थल है, क्योंकि यह जीवन और मृत्यु के चक्र को

प्रत्यक्ष रूप से दर्शाता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, इस वातावरण में साधक को मृत्यु के भय को पार करने और आत्म-साक्षात्कार की ओर बढ़ने की प्रेरणा देती है। यह प्रक्रिया साधक को अद्वैत दर्शन के साथ जोड़ती है, जिसमें वह आत्मा और परमात्मा के मिलन का अनुभव करता है। शमशान में साधना नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस ऊर्जा के अनुभव को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को मृत्यु के प्रति जागरूकता और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, शमशान में मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाती है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है।

आत्म-साक्षात्कार का मार्ग

शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच आध्यात्मिक संबंध आत्म-साक्षात्कार के मार्ग को प्रशस्त करता है, जो अघोरी साधना का अंतिम लक्ष्य है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, साधक को मृत्यु, माया और सांसारिक बंधनों से मुक्त करने में सहायता करती है। यह प्रक्रिया साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को प्रतिबिंबित करता है। आत्म-साक्षात्कार का यह मार्ग नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करता है,

क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस मार्ग के अनुभव को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, आत्म-साक्षात्कार का मार्ग अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

तंत्र में भैरवी का स्थान

तंत्र में शमशान भैरवी का स्थान अघोरियों के लिए उनकी साधना का एक केंद्रीय तत्व है, जो उनकी आध्यात्मिक यात्रा को शक्ति और दिशा प्रदान करता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, तंत्र में एक ऐसी देवी के रूप में पूजनीय है जो साधक को मृत्यु, माया और सांसारिक बंधनों से मुक्त करती है। तंत्र ग्रंथों, जैसे तंत्रालोक और कुलार्णव तंत्र, में भैरवी को शमशान की अधिष्ठात्री देवी के रूप में वर्णित किया गया है, जो साधक को आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है। शमशान में, अघोरी भैरवी की पूजा के लिए विशिष्ट मंत्र, जैसे "ह्रीं भैरवी क्रीं", और यंत्रों का उपयोग करते हैं, जो उनकी चेतना को भैरवी की शक्ति के साथ जोड़ते हैं। तंत्र में भैरवी का स्थान नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करता है, क्योंकि वह प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस तांत्रिक महत्व को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस

प्रकार, तंत्र में भैरवी का स्थान अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

पूजा विधियों का आध्यात्मिक प्रभाव

शमशान भैरवी की पूजा विधियाँ अघोरियों की साधना में गहन आध्यात्मिक प्रभाव डालती हैं, जो उनकी चेतना को परम सत्य के साथ जोड़ती हैं। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, की पूजा में अघोरी विशिष्ट तांत्रिक मंत्र, जैसे "ह्रीं भैरवी क्रीं", और यंत्रों का उपयोग करते हैं। ये पूजा विधियाँ शमशान में की जाती हैं, जहाँ चिताओं की राख, गंगाजल और जड़ी-बूटियों का उपयोग होता है। यह प्रक्रिया साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को प्रतिबिंबित करता है। पूजा विधियाँ नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती हैं, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इन पूजा विधियों के आध्यात्मिक प्रभाव को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, पूजा विधियों का आध्यात्मिक प्रभाव अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

अघोरियों की जीवन शैली में भैरवी की भूमिका

शमशान भैरवी अघोरियों की जीवन शैली में एक केंद्रीय भूमिका निभाती है, जो उनकी साधना और दैनिक जीवन को दिशा और अर्थ प्रदान करती है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, अघोरियों के लिए एक मार्गदर्शक और माता है, जो उनकी जीवन शैली को सादगी, त्याग और आध्यात्मिक अनुशासन पर आधारित बनाती है। शमशान में निवास करते हुए, अघोरी भैरवी की पूजा के माध्यम से मृत्यु के भय और माया से मुक्त होते हैं। उनकी जीवन शैली में भैरवी की शिक्षाएँ, जैसे प्रकृति के साथ सामंजस्य और नारी शक्ति का सम्मान, गहराई से समाहित हैं। भैरवी की भूमिका नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करती है। कुछ अघोरी इस जीवन शैली को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को आध्यात्मिक जागरूकता और तांत्रिक दर्शन की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, अघोरियों की जीवन शैली में भैरवी की भूमिका उनकी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाती है, जो साधक को आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है।

नैतिक और दार्शनिक विश्लेषण

शमशान भैरवी और अघोरियों के संबंध का नैतिक और दार्शनिक विश्लेषण अघोरी दर्शन और तांत्रिक परंपराओं के मूल सिद्धांतों को उजागर करता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, अघोरियों के लिए एक आध्यात्मिक शक्ति है,

जो उन्हें अद्वैत दर्शन के साथ जोड़ती है। यह दर्शन इस विश्वास पर आधारित है कि सभी कुछ एक ही परम सत्य का हिस्सा है, और भैरवी इस सत्य की प्राप्ति का मार्ग दिखाती है। नैतिक दृष्टिकोण से, भैरवी की पूजा और शमशान साधना अघोरियों को मृत्यु और जीवन के दोहरेपन को पार करने की प्रेरणा देती है, जो उनकी साधना को नैतिक आधार प्रदान करती है। यह संबंध नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस दार्शनिक और नैतिक दृष्टिकोण को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को आध्यात्मिक जागरूकता और तांत्रिक दर्शन की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, नैतिक और दार्शनिक विश्लेषण अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

समाज में संबंध की स्वीकृति

शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच आध्यात्मिक संबंध को समाज में स्वीकृति मिलना एक जटिल और बहुआयामी विषय है, जो तांत्रिक परंपराओं और सामाजिक धारणाओं के बीच तनाव को दर्शाता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, और अघोरियों की शमशान साधना को समाज में अक्सर रहस्यमयी और भयावह माना जाता है। यह संबंध, जो मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा पर आधारित है, सामान्य जनमानस के लिए समझना कठिन

है, क्योंकि अघोरियों की प्रथाएँ, जैसे मानव अवशेषों का उपयोग और शमशान में निवास, सामाजिक मानदंडों से भिन्न हैं। कुछ समुदाय इस संबंध को आध्यात्मिक गहराई और नारी शक्ति के सम्मान के रूप में स्वीकार करते हैं, क्योंकि भैरवी प्रकृति और शक्ति की प्रतीक है। हालांकि, सामाजिक अज्ञानता और भय के कारण इस संबंध को अक्सर गलत समझा जाता है, जिससे विवाद उत्पन्न होते हैं। कुछ अघोरी इन गलतफहमियों को दूर करने के लिए समाज में तांत्रिक दर्शन और भैरवी की शक्ति के बारे में जागरूकता फैलाते हैं। यह प्रक्रिया समाज को नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान की ओर प्रेरित करती है। इस प्रकार, समाज में इस संबंध की स्वीकृति अघोरी साधना को समझने में एक चुनौती और अवसर दोनों है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच आध्यात्मिक संबंध की आधुनिक समय में प्रासंगिकता तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिक जागरूकता के प्रसार में निहित है, जो समकालीन समाज में भी गहन प्रभाव डालता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, आधुनिक साधकों को मृत्यु के भय और माया से मुक्त होने की प्रेरणा देती है। शमशान में भैरवी की पूजा, जिसमें मंत्र, यंत्र और तांत्रिक अनुष्ठानों का उपयोग होता है, आज भी अघोरियों द्वारा प्रचलित है, जो इस संबंध को जीवित रखते हैं। आधुनिक समय में, कुछ अघोरी इस संबंध को सामाजिक मंचों और शिक्षण के माध्यम

से साझा करते हैं, जो लोगों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर आकर्षित करता है। यह प्रक्रिया साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को प्रतिबिंबित करता है। हालांकि, आधुनिक समाज में गलतफहमियाँ और भय इस संबंध की स्वीकृति में बाधा डालते हैं। फिर भी, इस संबंध की प्रासंगिकता आध्यात्मिक जागरूकता और तांत्रिक दर्शन को बढ़ावा देती है। इस प्रकार, आधुनिक समय में इस संबंध की प्रासंगिकता अघोरी साधना को जीवित और परिवर्तनकारी बनाए रखती है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है।

आध्यात्मिक गहराई और सामाजिक प्रभाव

शमशान भैरवी और अघोरियों के बीच आध्यात्मिक संबंध का निष्कर्ष इसकी आध्यात्मिक गहराई और सामाजिक प्रभाव में निहित है, जो अघोरी साधना को एक परिवर्तनकारी शक्ति बनाता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, अघोरियों के लिए एक मार्गदर्शक और माता है, जो उन्हें मृत्यु, माया और सांसारिक बंधनों से मुक्त करती है। इस संबंध का सामाजिक प्रभाव नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस आध्यात्मिक गहराई को समाज में साझा करते हैं, जो दूसरों को तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है। हालांकि, सामाजिक

गलतफहमियाँ इस स्वीकृति में बाधा डालती हैं। फिर भी, इस संबंध की आध्यात्मिक गहराई और सामाजिक प्रभाव अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधक को भैरवी की कृपा और आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

अध्याय 39:
अघोरी और शैव मत

शैव मत की मूल मान्यताएँ

शैव मत भारतीय दर्शन की उन प्रमुख शाखाओं में से एक है जो शिव को ब्रह्मांडीय चेतना का साक्षात रूप मानता है, और जिसका केंद्र बिंदु 'सर्वं शिवमयं जगत् 'की अवधारणा है। इस मत में ब्रह्मांड की समस्त गतियाँ-सृजन, पालन, संहार, तिरोभाव और अनुग्रह-शिव की इच्छाशक्ति से संचालित मानी जाती हैं। अद्वैतवादी दृष्टिकोण के अंतर्गत, यह दर्शन आत्मा और परमात्मा को एक मानता है, जहाँ साधक को अहंकार, माया और द्वैत के आवरण से मुक्त होकर शिवस्वरूप में लीन होना ही अंतिम लक्ष्य माना जाता है। इस दर्शन में प्रकृति या शक्ति का रूप भैरवी के माध्यम से प्रकट होता है, जो शिव की प्रेरणाशक्ति मानी जाती है। हालांकि अघोरी साधना शमशान में केंद्रित होती है, वहीं शैव मत का मूल दर्शन साधक को अंतरमुखी होकर योग, ध्यान, स्वाध्याय और संयम द्वारा शिवत्व की प्राप्ति का मार्ग देता है। भैरवी इस पथ पर साधक की आंतरिक शक्ति का प्रतीक बनकर मार्गदर्शक बनती है। गुरु-शिष्य परंपरा शैव परंपरा में विशेष महत्व रखती है, क्योंकि गुरु ही साधक को शिव तत्व के गूढ़ रहस्यों की अनुभूति कराता है। शैव दर्शन के अनुसार, ब्रह्मांड में कोई भी वस्तु अपवित्र नहीं, बल्कि सब कुछ शिवमय है-और इसी

व्यापकता ने अघोरियों को भी इसके भीतर स्थान दिया। इस प्रकार, शैव मत की मूल मान्यताएँ केवल धार्मिक आस्था नहीं, बल्कि एक दार्शनिक चेतना का दर्शन है, जो अघोरी साधना सहित सभी मार्गों को परम सत्य तक ले जाने का साधन बनती हैं।

अघोरियों और शैवों में समानताएँ

अघोरियों और शैवों के साधना-पथ में सतही रूप से भिन्नता प्रतीत होती है, परंतु उनके मूल तत्व और आध्यात्मिक ध्येयों में कई गहन समानताएँ निहित हैं। दोनों परंपराएँ शरीर और आत्मा के द्वंद्व से ऊपर उठकर शिव-तत्त्व की अनुभूति को लक्ष्य बनाती हैं। अघोरी, जहाँ भैरवी के संहारात्मक रूप के माध्यम से शमशान की मृत्यु ऊर्जा का उपयोग करते हैं, वहीं शैव साधक शिव की समाहित चेतना में लय पाने हेतु ध्यान और मंत्र की शरण लेते हैं। दोनों परंपराओं में गुरु को ब्रह्म का स्वरूप मानकर उसी के माध्यम से मोक्ष की ओर बढ़ने की परंपरा रही है। अघोरी जहाँ मृत्यु, अस्थि और शून्यता से होते हुए दिव्यत्व को स्पर्श करते हैं, वहीं शैव योगी वासनाओं का क्षय कर आत्मतत्त्व में स्थित होते हैं। दोनों मत जीवन को त्यागने के नहीं, बल्कि उसे उसके समस्त रूपों में स्वीकार करने के पक्षधर हैं-जहाँ वासना और वैराग्य दोनों को एक ही चेतना का रूप माना गया है। यह समन्वय अघोरियों की शमशान भैरवी साधना और शैवों की शिव-ध्यान साधना को एक व्यापक आध्यात्मिक फ्रेमवर्क में एकाकार करता है, जहाँ दोनों ही परंपराएँ आत्मा और ब्रह्म के मिलन

की ओर गतिशील हैं। इस प्रकार, अघोरी और शैव केवल साधना में नहीं, बल्कि दर्शन, उद्देश्य और चेतना के धरातल पर भी एकरूप दिखाई देते हैं।

शिव और भैरवी का संबंध

शिव और भैरवी का संबंध तांत्रिक और शैव परंपराओं के बीच का वह सेतु है, जो अघोरी साधना और शैव ध्यान के सूत्र को एक सूत्र में बांधता है। शिव को जहाँ निर्विकार, निःस्पंद और साक्षी के रूप में देखा गया है, वहीं भैरवी उस शक्ति का रूप हैं जो ब्रह्म को सृजन में परिवर्तित करती हैं। तंत्रशास्त्र में शिव को शव कहा गया है जब तक उसमें शक्ति (भैरवी) का संचार न हो-इस दृष्टिकोण से भैरवी केवल पूज्या देवी नहीं, बल्कि शिवत्व की क्रियाशील ऊर्जा हैं। अघोरी परंपरा में भैरवी को शमशान की अधिष्ठात्री माना जाता है, जो शिव के रुद्र स्वरूप की सहचरी होती हैं; जबकि शैव परंपरा में भैरवी को शिव की पत्नी, सती, पार्वती या दुर्गा के रूप में पूजा जाता है, जो विभिन्न कालों में शक्ति के अलग-अलग स्वरूपों का प्रतिनिधित्व करती हैं। यह संबंध केवल दैवत्व का नहीं, बल्कि ब्रह्मांडीय संतुलन का है-जहाँ शिव चेतना हैं और भैरवी ऊर्जा। अघोरी इस संबंध को साधना के माध्यम से अनुभव करते हैं, जबकि शैव इस संबंध को ध्यान और भक्ति के माध्यम से जानने का प्रयास करते हैं। यह एक ऐसा संबंध है जो तात्त्विक विरोधाभासों को भी एकता में पिरोता है-मृत्यु और जीवन, शांति और उग्रता, शून्यता और

सृजन। इस प्रकार, शिव और भैरवी का संबंध अघोरी और शैव दोनों साधकों के लिए केवल पूज्य विषय नहीं, बल्कि साधना का आधार और अनुभव का चरम है, जो उन्हें एक ही चेतना में समाहित कर देता है।

अघोरी तंत्र में भैरवी का स्थान

अघोरी तंत्र में भैरवी का स्थान केवल एक देवी के रूप में न होकर, एक चेतना, एक शक्ति और एक मार्गदर्शक तत्व के रूप में स्थापित है। भैरवी को अघोरियों द्वारा शमशान की अधिष्ठात्री माना गया है, जो न केवल मृत्यु के भय का अतिक्रमण कराती हैं, बल्कि साधक को उसके भीतर छिपे विकारों से मुक्त कर ब्रह्मत्व की ओर अग्रसर करती हैं। अघोरी भैरवी की साधना को केवल स्तुति या पूजा का कर्मकांड नहीं मानते, बल्कि उसे एक प्रत्यक्ष, ज्वलंत और जीवंत ऊर्जा के रूप में अनुभव करते हैं। वह भैरवी को उस ऊर्जा के रूप में देखते हैं जो चिता की अग्नि में, अस्थियों की नीरवता में और शून्यता के अंतरिक्ष में निवास करती है। भैरवी का यह रूप भयावह होते हुए भी मोक्षदायिनी है, क्योंकि वह साधक को जीवन की समस्त आसक्तियों और द्वैत से बाहर निकाल कर उसे उस स्थिति में स्थापित करती हैं जहाँ वह न शत्रु देखता है, न मित्र-बस एक शुद्ध चेतना का अनुभव करता है। इस साधना में भैरवी की मूर्ति की स्थापना से अधिक महत्व उस आंतरिक भैरवी जागरण का होता है, जो साधक के भीतर की मृत्यु, मोह, वासना, भय, और आत्म-छाया को भस्म

करती है। इस प्रक्रिया में भैरवी केवल शक्ति नहीं, बल्कि सत्य की साक्षात अनुभूति बन जाती हैं।

अघोरी परंपरा में भैरवी की साधना विशिष्ट तांत्रिक विधियों से की जाती है, जिसमें पंचमकार, शव साधना, भस्म पूजन, और विशेष बीजमंत्रों का उपयोग होता है। यह साधना दिन की बजाय रात्रि में, मंदिर की बजाय शमशान में की जाती है, जहाँ प्रकृति की सीमाएँ और सामाजिक नियम निष्क्रिय हो जाते हैं। अघोरी मानते हैं कि भैरवी को केवल हृदय से स्वीकार करने की नहीं, बल्कि समर्पण के साथ आत्मा में प्रतिष्ठित करने की आवश्यकता होती है। वे भैरवी को भय या श्रद्धा के किसी एक पक्ष से नहीं देखते, बल्कि दोनों के समन्वय से उस रूप का साक्षात्कार करते हैं जो उन्हें मोक्ष की ओर धकेलता है। भैरवी की साधना में अघोरी अपनी देह, मन और अहंकार तक को अर्पित करता है, जिससे वह पूर्ण रूप से शून्य होकर उस अवस्था में पहुँच सके जहाँ भैरवी के माध्यम से शिवत्व की प्राप्ति होती है। यही कारण है कि अघोरी तंत्र में भैरवी केवल एक देवी नहीं, बल्कि संपूर्ण साधना-पथ की जीवंत, सक्रिय और परम सत्य की दिशा में उन्मुख ऊर्जा बन जाती हैं।

शिव की निर्गुणता और अघोरियों की दृष्टि

शैव दर्शन में शिव को निर्गुण, निराकार और निर्विकल्प परम ब्रह्म माना गया है-एक ऐसा तत्त्व जो किसी रूप, गुण या क्रिया में नहीं बंधा। यह शिव वही है जो ध्यान में स्थिर, समाधि में स्थित,

समय और स्थान से परे है। अघोरी साधना इस निर्गुणता की अनुभूति को भिन्न मार्ग से प्राप्त करती है। अघोरी मानते हैं कि जब तक शिव को केवल मंत्रों, मूर्तियों या लिपियों में सीमित रखा जाता है, तब तक वह केवल विचार रहता है; पर जब शिव को शव के पास, मृत्यु के सामने, और जीवन के निर्विकार रूप में अनुभव किया जाता है, तब वह निर्गुणता सजीव हो उठती है। अघोरी शमशान में बैठकर शिव की उसी निराकारता का अनुभव करते हैं, जहाँ सांसें रुक जाती हैं, मन थम जाता है और केवल चेतना की मौन लहरियाँ बचती हैं। उनका मानना है कि निर्गुण शिव को जानने के लिए गुणों का अतिक्रमण आवश्यक है-यानी सभी धर्म, जाति, नियम, नैतिकता और यहाँ तक कि शुद्धता-अशुद्धता के भेद से परे जाना पड़ता है।

अघोरी इस निर्गुण शिव को केवल ध्यान की अवस्था में नहीं, बल्कि जीवित अवस्था में भी देखते हैं-हर शव में, हर भस्म में, हर चिता की लपट में। उनके लिए निर्गुणता कोई सूक्ष्म दार्शनिक अवधारणा नहीं, बल्कि वह प्रत्यक्ष अनुभव है, जिसे भय, ग्लानि, वासना और मोह से पार होकर ही जाना जा सकता है। अघोरी जिस क्षण शव के पास बैठता है, उसी क्षण वह शिव की निर्गुणता में प्रवेश करता है-क्योंकि वहाँ कोई अपेक्षा नहीं, कोई पहचान नहीं, बस एक मौन होता है। यह मौन ही शिव है, और वही शिव उनकी साधना का लक्ष्य है। अघोरी यह सिद्ध करते हैं कि शिव को जानने के लिए न मंदिर की जरूरत है, न शास्त्रों की-बस निर्भयता, समर्पण और मौन चाहिए। इस प्रकार, अघोरी साधना शिव की निर्गुणता को केवल

उपासना नहीं, बल्कि प्रत्यक्ष अनुभूति और जीवन की परिणति मानती है।

भक्ति और अघोरी साधना का द्वंद्व

भक्ति मार्ग और अघोरी साधना-ये दो मार्ग सतह पर विरोधाभासी प्रतीत होते हैं, परंतु उनके अंतर्मन में एक गहन संवाद और पूरकता छिपी होती है। भक्ति मार्ग वह है जहाँ साधक स्वयं को परमेश्वर के चरणों में अर्पित करता है-प्रेम, समर्पण, आस्था और रुदन के माध्यम से; जबकि अघोरी साधना वह है जहाँ साधक स्वयं को शून्य बनाकर परम तत्त्व में विलीन हो जाता है-न भाव में, न विकार में, केवल मौन और निर्भयता में। भक्ति मार्ग में राग होता है, पर उसमें अहंकार नहीं होता; अघोरी मार्ग में विरक्ति होती है, पर उसमें भी समर्पण की एक सूक्ष्म परत होती है। अघोरी बाहरी रूप से भले ही शास्त्र-विरुद्ध प्रतीत होते हों, पर उनका उद्देश्य भी आत्म-समर्पण ही है-जिसमें साधक अपने नाम, पहचान, देह, सामाजिक भूमिका और मानसिक द्वंद्वों को भस्म कर देता है। यह भी एक तरह की भक्ति है, परंतु वह प्रेम से नहीं, अपार मौन और निर्भयता से उपजती है।

भक्ति मार्ग में साधक देवता से विलग होता है और उसी के निकट जाने के लिए गाते, रोते, ध्यान करते हुए स्वयं को सौंप देता है; वहीं अघोरी यह मानकर चलता है कि साधक और देवता में कोई भेद है ही नहीं-बस अज्ञान का पर्दा है, जिसे शव, भस्म और भैरवी की ऊर्जा से फाड़ देना आवश्यक है। भक्ति में भावनाओं का प्रवाह

होता है, अघोरी साधना में भावनाओं का संपूर्ण क्षय। दोनों ही मार्ग आत्मा की यात्रा हैं-एक प्रेम से सराबोर होकर, और दूसरा पूर्ण विरक्ति से। किंतु दोनों का अंतिम लक्ष्य एक ही है-परमात्मा में विलय। इस दृष्टि से देखा जाए तो भक्ति और अघोरी साधना विरोध नहीं, बल्कि एक ही चेतना के दो छोर हैं-जिन्हें एकता में बांधता है वह शिव, जो भाव में भी हैं, और शून्य में भी। अघोरी और भक्त-दोनों ही अंततः उसी दिव्यता को खोजते हैं, जो गुण और निर्गुण, भक्ति और ज्ञान, जीवन और मृत्यु के पार स्थित है।

अघोरी परंपरा में शिव का रूप

अघोरी परंपरा में शिव को पारंपरिक रूपों से भिन्न एक अत्यंत जीवंत, भयमुक्त, अनगढ़ और अलौकिक रूप में देखा जाता है। वह शिव न केवल कैलाशवासी हैं, बल्कि शमशानवासी भी हैं; न केवल ध्यानस्थ योगी हैं, बल्कि उन्मुक्त भैरव भी हैं। अघोरियों के लिए शिव केवल निर्गुण ब्रह्म नहीं, बल्कि 'भस्म-लेपित', 'अर्धनग्न', 'त्रिशूलधारी 'और 'शव पर स्थित 'वह तत्त्व हैं, जो जीवन की समस्त सीमाओं का अतिक्रमण करते हुए साधक को मुक्ति की ओर ले जाते हैं। शिव का यह रूप नियमों, नैतिकताओं, सामाजिक प्रतिबंधों और पारंपरिक श्रद्धाओं के परे है-क्योंकि वह स्वयं मृत्यु, विकृति, अपवित्रता और अज्ञान के स्वरूपों को अपने भीतर समाहित करके उन्हें दिव्यता में रूपांतरित करने वाले देवता हैं। यही कारण है कि अघोरी उन्हें जीवन की उस धुरी के रूप में देखते हैं जहाँ

जन्म और मृत्यु, शुद्ध और अशुद्ध, पाप और पुण्य, सभी एक हो जाते हैं।

अघोरियों के लिए शिव का यह रूप केवल एक मूर्ति या कल्पना नहीं, बल्कि साधना के केंद्रबिंदु पर स्थित एक जीवंत अनुभव है। वह शिव जो शव के ऊपर ध्यानस्थ है, वह अघोरी साधक को यह सिखाता है कि मृत्यु ही एकमात्र सत्य है, और मृत्यु के पार ही परम सत्य की अनुभूति संभव है। यही शिव है जो भैरवी के साथ मिलकर तंत्र का उद्गम रचते हैं, जो साधक को पंचतत्व, पंचमकार और पंचक्रिया से निकालकर उस स्थिति में स्थापित करते हैं जहाँ केवल मौन होता है। अघोरी शिव को किसी जाति, धर्म, सम्प्रदाय, परंपरा या लिंग से परे मानते हैं-वह पुरुष भी हैं, स्त्री भी, और निराकार भी। उनके लिए शिव वही है जो नियमों को तोड़कर, परंपराओं को भस्म कर, आत्मा को स्वतंत्र करता है। यही कारण है कि अघोरी शिव को 'सब कुछ 'और 'कुछ नहीं 'दोनों मानते हैं-एक साथ सगुण और निर्गुण, प्रेम और भय, सौंदर्य और विकरालता। यह दृष्टिकोण उन्हें उस मुकाम तक पहुँचाता है, जहाँ साधना केवल मुक्ति नहीं, बल्कि जीवन के समस्त अनुभवों का रूपांतरण बन जाती है।

तांत्रिक सिद्धांतों में शैव-तंत्र का प्रभाव

तांत्रिक साधना का मूल आधार शैव-तंत्र पर टिका हुआ है, जिसमें शिव और शक्ति का समन्वय करके साधक को आत्म-बोध, ऊर्जा-जागरण और परम लय की ओर ले जाने का मार्ग दर्शाया गया

है। शैव-तंत्र वह दार्शनिक और साधनात्मक पद्धति है जिसमें शिव को निष्क्रिय चेतना और शक्ति को उसकी क्रियाशील अभिव्यक्ति के रूप में समझा जाता है। अघोरी साधना, जो बाहरी दृष्टि से अत्यंत उग्र, अपारंपरिक और भयावह प्रतीत होती है, उसी शैव-तंत्र के सबसे गहन, गोपनीय और पराकाष्ठा रूप का प्रतिनिधित्व करती है। पंचमकार, शव-साधना, भैरवी-आराधना और शून्यता में ध्यान-all इन सबका मूल स्रोत शैव-तंत्र में निहित है, जहाँ साधक को केवल बाह्य संसार से नहीं, बल्कि आंतरिक भ्रमों और ग्रंथियों से भी मुक्ति प्राप्त करनी होती है।

शैव-तंत्र में जो तत्त्व ध्यान, मुद्रा, मंत्र, यंत्र और तांत्रिक अनुशासन के रूप में विकसित हुए, उन्हें अघोरी साधना में अत्यंत व्यावहारिक और तीव्र अनुभवों के माध्यम से क्रियान्वित किया गया। शैव-तंत्र का जो 'स्वरूप-निर्माण 'है, जिसमें शक्ति को कालिका, तारा या भैरवी के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है, वही अघोरियों की साधना का भी मूल आधार है। किंतु शैव-तंत्र जहाँ मंदिर, पूजा और अनुशासित साधना के माध्यम से चलायमान रहता है, वहीं अघोरी उस तंत्र को शमशान की भस्म, रात्रि की नीरवता और शव की निष्प्राणता के बीच प्रयोग करता है। यह कोई विरोधाभास नहीं, बल्कि शैव-तंत्र की वही चेतना है, जो अघोरियों के हाथों एक उग्र और निस्सीम रूप में प्रकट होती है। अतः यह कहना उचित होगा कि अघोरी साधना, शैव-तंत्र की वह धार है, जो केवल दर्शन नहीं करती, बल्कि प्रत्यक्षतः सत्य का संधान करती है।

शैव और अघोरी साधना का एकात्म दर्शन

शैव और अघोरी साधना, जो सतह पर एक-दूसरे से भिन्न प्रतीत होती हैं-एक संयमित, शांत, ध्यानमय; दूसरी उग्र, निर्भीक, और सीमाओं को लांघने वाली-उन दोनों के मूल में एक गूढ़ एकात्मता छिपी हुई है। शैव साधक शिव को तप, वैराग्य और समर्पण से प्राप्त करना चाहता है, वहीं अघोरी साधक शिव को शून्यता, मृत्यु और भय के अतिक्रमण से अनुभूत करता है। परंतु दोनों ही मार्गों का अंतिम लक्ष्य एक ही है-शिवत्व की प्राप्ति। शैव साधना जहाँ 'सत्यम् शिवम् सुंदरम् 'की ओर अग्रसर होती है, वहीं अघोरी साधना 'शून्यं शिवम् शाश्वतम् 'की ओर। एक में जीवन का त्याग कर ब्रह्म की ओर जाना है, तो दूसरे में जीवन को पूर्णता से स्वीकार कर ब्रह्म में लय होना है।

इस एकात्मता का सबसे बड़ा उदाहरण भैरवी की भूमिका है, जो शैव परंपरा में मातृ रूप में पूजनीय हैं और अघोरी परंपरा में संहार और मुक्ति का माध्यम। दोनों ही परंपराओं में भैरवी उस शक्ति का प्रतीक हैं, जो साधक को ब्रह्म से मिलवाने वाली होती हैं। शिव, जो निर्गुण ब्रह्म हैं, वे ही शैव साधक के ध्यान में प्रकट होते हैं और अघोरी के अनुभव में जीवंत रूप में प्रकट होते हैं। दोनों पथ साधक को अहंकार, वासना, मृत्यु, और भय से मुक्त करके उस स्थिति में पहुंचाते हैं जहाँ केवल मौन, शांति और परमानंद है। अतः शैव और अघोरी साधना को अलग-अलग पंथ मानना भ्रम है-वास्तव में वे

एक ही लक्ष्य की ओर बढ़ने वाले दो भिन्न प्रवाह हैं। यह एकात्म दर्शन साधक को यह समझने में सहायता करता है कि चाहे वह ध्यान से चले या भस्म से, तंत्र से चले या मंत्र से-परम सत्य एक ही है, और वह है शिव।

शैव पंथ की उपशाखाएँ और अघोरी परंपरा

शैव पंथ की परंपरा कोई एकरेखीय प्रवाह नहीं, बल्कि बहुधारात्मक चेतना का विस्तार है, जिसकी कई उपशाखाएँ हैं-जैसे पशुपत मत, कापालिक, कालामुख, लिंगायत, नाथ संप्रदाय, कश्मीरी शैव दर्शन और अघोरी परंपरा। इन सभी में शिव को ब्रह्म के परम रूप के रूप में स्वीकार किया गया है, किंतु प्रत्येक शाखा की साधना-पद्धति, प्रतीकात्मकता और अनुशासन का स्वरूप भिन्न रहा है। अघोरी परंपरा, इन उपशाखाओं में सर्वाधिक उग्र, रहस्यमयी और सीमाओं को तोड़ने वाली धारा के रूप में जानी जाती है। जहाँ पशुपत मत में तप, संयम और नैतिकता का बल है, वहीं कापालिकों में शव-साधना और उग्रता प्रमुख है; लिंगायत परंपरा शिव को सामाजिक न्याय के प्रतीक के रूप में देखती है, तो कश्मीरी शैव दर्शन शिव को चेतना और प्रकृति की अद्वैतता में व्याख्यायित करता है। अघोरी परंपरा ने इन सभी से कुछ ग्रहण किया, किंतु स्वयं को किसी एक अनुशासन में सीमित नहीं किया।

अघोरी संप्रदाय विशेषतः कापालिक और नाथ परंपरा से अधिक प्रभावित रहा, जहाँ शव, भस्म, योग और भैरवी की उपासना

को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया। किंतु अघोरियों ने इस परंपरा को केवल प्रतीकों तक नहीं सीमित रखा, बल्कि उसे एक प्रत्यक्ष अनुभवात्मक मार्ग में रूपांतरित कर दिया, जहाँ साधना का केंद्र स्वयं का क्षरण और ब्रह्म का साक्षात्कार है। अघोरी, शैव पंथ की अन्य उपशाखाओं की तुलना में अधिक निर्बंध होते हैं-वे न मंदिर में बंधते हैं, न मूर्तियों में, न ही शास्त्रीय विधानों में। उनके लिए हर वस्तु-भस्म, अस्थि, रक्त, शव, रात, तांत्रिक चक्र-शिव की उपस्थिति का माध्यम है। इसीलिए अघोरी परंपरा को शैव पंथ की सबसे स्वतंत्र, गूढ़ और रहस्यमयी शाखा माना जाता है, जो परंपरा के भीतर रहते हुए भी उससे स्वतंत्र है।

नाथ संप्रदाय और अघोरी साधना का अंतर्संबंध

नाथ संप्रदाय और अघोरी परंपरा, दोनों भारतीय योग-तांत्रिक परंपराओं की ऐसी शाखाएँ हैं जो योग, समाधि, शिव-तत्त्व और मृत्यु के पार चेतना के अनुभव को केंद्र में रखती हैं। नाथ संप्रदाय की स्थापना महायोगी मत्स्येन्द्रनाथ और उनके शिष्य गोरखनाथ द्वारा हुई थी, जिन्होंने हठयोग, कुण्डलिनी जागरण और शिव-तत्व को योग और तंत्र के समन्वय से साकार किया। इसी परंपरा में ‘काया साधना’, ‘सूक्ष्म शरीर प्रवेश’, ‘नाभिचक्र’, ‘सुषुम्ना नाड़ी ’आदि तांत्रिक-योगिक विषयों का गहन विकास हुआ। अघोरी परंपरा, जो शमशान, शव और भैरवी की उग्र साधनाओं पर आधारित है, इस नाथ संप्रदाय के अनेक सिद्धांतों को आत्मसात करती है-विशेषतः कुण्डलिनी

जागरण, मूलाधार केंद्र पर साधना, शून्यता का अनुभव और निराकार शिव में लय की प्रक्रिया।

नाथ योगियों ने जहाँ शरीर को ब्रह्म का साधन माना, वहीं अघोरियों ने शव को-लेकिन दोनों के दृष्टिकोण में शरीर को ही ब्रह्म के अनुभव का माध्यम समझा गया है। नाथ योगियों का श्मशान में साधना करना, भस्म से शरीर लेपित करना, ऊँचे स्वर में तांत्रिक मंत्रों का उच्चारण करना और एकांतवास की परंपरा-इन सभी ने अघोरी परंपरा को सांस्कृतिक और साधनात्मक रूप से गहराई दी है। यही कारण है कि कई अघोरी अपने आरंभिक प्रशिक्षण में नाथ गुरुओं के सान्निध्य में रहकर योग और प्राणायाम की गहन साधना करते हैं, फिर शव-साधना, भैरवी तंत्र और शमशान अनुष्ठानों की ओर बढ़ते हैं। अतः यह संबंध केवल ऐतिहासिक नहीं, बल्कि साधनात्मक और दार्शनिक भी है। नाथ और अघोरी, दोनों उस शिव की ओर अग्रसर होते हैं जो भीतर स्थित है, न कि बाहर स्थापित-अतः दोनों परंपराएँ भिन्न होते हुए भी, एक ही आत्मिक लक्ष्य की दो सशक्त धाराएँ हैं।

भविष्य में अघोरी और शैव परंपरा की भूमिका

वर्तमान युग में, जब धार्मिकता प्रतीकवाद, कर्मकांड और सामूहिक आडंबरों में सिमट रही है, अघोरी और शैव परंपरा की भूमिका एक आत्म-केन्द्रित, अनुभव-आधारित और आंतरिक चेतना-प्रेरित आध्यात्मिक मार्ग के रूप में और भी महत्वपूर्ण हो गई है। अघोरी परंपरा यह संकेत देती है कि मुक्ति किसी बाहरी ब्रह्मांड में

नहीं, बल्कि भय, मोह और सामाजिक बंधनों के अतिक्रमण में है; जबकि शैव परंपरा यह सिखाती है कि शिवत्व केवल त्याग या सन्न्यास से नहीं, बल्कि ध्यान, योग और प्रेम से भी प्राप्त किया जा सकता है। इन दोनों परंपराओं का भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि आधुनिक साधक कितनी ईमानदारी से अपने भीतर के अंधकार और मृत्युबोध का सामना करने का साहस रखता है।

भविष्य में अघोरी साधना उस वर्ग के लिए प्रकाशस्तंभ बन सकती है जो आधुनिकता के भ्रम में फँसकर अपने अस्तित्व की वास्तविकता को भूल गया है-क्योंकि अघोरी साधना जीवन के अंतिम सत्य को प्रत्यक्ष रूप में रखती है। वहीं शैव परंपरा में नाथ, कश्मीरी शैव, लिंगायत और भक्त परंपराओं का समन्वय आने वाले समय में भारतीय अध्यात्म को नई दिशा दे सकता है, जहाँ विज्ञान, योग और तंत्र का संगम होगा। ये दोनों परंपराएँ मिलकर एक ऐसे आध्यात्मिक पुनर्जागरण का मार्ग प्रशस्त कर सकती हैं, जहाँ न केवल व्यक्ति का उध्दार हो, बल्कि समाज भी मृत्यु, विकृति, हिंसा और मोह से मुक्त होकर चेतना की ओर बढ़ सके। यही इन दोनों की युगानुकूल भूमिका होगी-भीतर के शिव को जगाना और बाहर के भ्रम को विसर्जित करना।

अध्याय 40:
शमशान और शिव का तांत्रिक महत्व

शमशान में काल और चेतना की अनुभूति

शमशान का तांत्रिक महत्व केवल मृत्यु और राख तक सीमित नहीं है, बल्कि यह स्थान काल और चेतना के अद्वितीय संयोग का प्रतिनिधित्व करता है। अघोरी साधना में शमशान को वह स्थल माना जाता है जहाँ काल (समय) निरर्थक हो जाता है और साधक केवल वर्तमान क्षण की संपूर्णता में स्थिर होता है। तांत्रिक ग्रंथों में उल्लेख है कि शमशान में साधना करते समय ब्रह्मांडीय समयचक्र (कालचक्र) की सीमाएँ टूट जाती हैं, जिससे साधक चेतना के उस स्तर पर पहुँचता है, जहाँ आत्मा को शरीर के बंधनों से मुक्ति मिलती है। उदाहरण के लिए, एक तांत्रिक ग्रंथ 'कालज्ञान तंत्र 'में वर्णित है कि शमशान की रातों में की गई साधना साधक को काल की ग्रंथियों से मुक्त करती है और उसे आत्मबोध की अवस्था में पहुँचा देती है। यह अनुभव केवल मानसिक नहीं बल्कि पूर्ण रूप से चित्त और चेतना पर आधारित होता है। अघोरी इस अनुभव को 'समय की शून्यता में सत्य की प्राप्ति 'कहते हैं।

शैव परंपरा में भी शिव को 'महाकाल 'के रूप में पूजा जाता है, जो समय के नियंत्रक हैं। जब शिव को शमशान में पूजते हैं, तब वह केवल विनाश के देव नहीं रहते, बल्कि काल के पार जाने वाले

मार्गदर्शक बन जाते हैं। इस तांत्रिक संदर्भ में, शमशान शिव और भैरवी के उस मिलन स्थल का प्रतीक है, जहाँ साधक को 'कालबोध 'नहीं बल्कि 'कालातीत बोध 'की अनुभूति होती है। शैव साधक मानते हैं कि शमशान में शिव की साधना साधक को समय और मृत्यु के भय से ऊपर उठाती है और आत्मा को अखंड चेतना की ओर अग्रसर करती है। इसलिए, शमशान न केवल मृत्यु का स्थल है, बल्कि वह कालबद्ध माया से मुक्त होने की प्रयोगशाला है, जहाँ साधक तात्विक रूप से स्वयं के भीतर के शिवत्व से साक्षात्कार करता है।

शव साधना और तांत्रिक उन्नयन

शव साधना, जो शमशान की सबसे रहस्यमयी और उन्नत तांत्रिक विधियों में गिनी जाती है, अघोरियों और कुछ शैव तांत्रिकों के लिए उच्चतम साधनाओं में एक मानी जाती है। इसमें साधक एक शव पर बैठकर विशेष मंत्रों और ध्यान की तकनीकों का प्रयोग करता है, जिसका उद्देश्य मृत्यु के भय को पूर्णतः समाप्त करना और शरीर से जुड़ी सीमाओं को तोड़ना होता है। यह साधना साधक को ऐसी स्थिति में ले जाती है जहाँ वह शव को माध्यम बनाकर जीवन और मृत्यु के मध्य सन्निकटतम द्वार को खोलता है। शमशान भैरवी इस साधना में शक्ति का रूप होती हैं, जो साधक के भीतर गुप्त चक्रों को जाग्रत करती हैं और चेतना की गहराई में प्रवेश कराती हैं। अघोरी परंपरा में इसे 'शव पर ध्यान 'या 'शववीर साधना 'कहा जाता है,

जो गुरु के संरक्षण में की जाती है। यह केवल साहसिक साधना नहीं, बल्कि आत्मा को परम चेतना से जोड़ने वाली प्रक्रिया है, जिसमें अघोरी का मन और शरीर पूर्णतः तंत्रमय ऊर्जा में विलीन हो जाता है।

शैव तांत्रिक साधना में भी शव साधना का स्थान यद्यपि सीमित रूप में है, परन्तु विशेष अवसरों पर शिव के भैरव रूप की कृपा प्राप्ति के लिए इसे किया जाता है। कुछ शैव साधक इस प्रक्रिया को प्रतीकात्मक रूप में अपनाते हैं, जहाँ शव केवल मृत्यु की प्रतीकात्मकता को दर्शाता है और साधक का ध्यान आत्मा की अमरता पर केंद्रित होता है। उदाहरणस्वरूप, 'भैरव तंत्र 'ग्रंथ में शव को 'विरक्ति और वैराग्य 'का प्रतीक कहा गया है, जिसे साधक मृत्यु से ऊपर उठकर आत्मशक्ति को जाग्रत करने हेतु अपनाता है। इसलिए, अघोरी और शैव दोनों ही धाराओं में शव साधना एक गंभीर, रहस्यमय और शक्तिशाली प्रक्रिया मानी जाती है, जो साधक को अद्वैत स्थिति में पहुँचाती है, जहाँ 'मैं 'और 'मेरा 'का अंत हो जाता है और केवल शिवत्व शेष रह जाता है।

चिताभस्म और तांत्रिक चिह्नों का प्रयोग

शमशान साधना में प्रयुक्त चिताभस्म (चिताओं की राख) और अन्य तांत्रिक चिह्न केवल प्रतीक नहीं होते, बल्कि उनमें विशिष्ट ऊर्जा और साधनात्मक गुण निहित होते हैं, जो अघोरी और शैव तांत्रिक साधकों की चेतना को परिवर्तित करने में सहायक होते हैं।

अघोरी साधक चिताभस्म को शरीर पर लगाते हैं ताकि वे मृत्यु की यथार्थता को हर क्षण स्मरण में रखें और माया के बंधनों से मुक्त हो सकें। यह भस्म उन्हें उनके शरीर और पहचान से विमुक्त करती है, जिससे साधना केवल आत्मा और चेतना के स्तर पर केंद्रित होती है। भस्म के साथ प्रयोग किए जाने वाले त्रिपुंड, रुद्राक्ष, कपालमालाएँ और भैरवी-शिव यंत्र उनके भीतर स्थित शक्तियों को जाग्रत करते हैं। इन चिह्नों का प्रयोग केवल बाह्य नहीं, बल्कि भीतरी जागरण का प्रतीक भी है, जो अघोरी साधना को रहस्यमयी और गूढ़ बनाता है।

शैव परंपरा में भी चिताभस्म और त्रिपुंड का प्रयोग शिव के व्रतों और पूजा विधियों में व्यापक रूप से किया जाता है। त्रिपुंड, जो भस्म से मस्तक पर तीन रेखाओं के रूप में लगाया जाता है, अज्ञान, अहंकार और कर्म के तीन बंधनों को नष्ट करने का प्रतीक होता है। शिव स्वयं भी भस्मधारी रूप में माने जाते हैं, जो यह दर्शाता है कि वह नश्वरता से परे हैं। इस दृष्टिकोण से शैव साधक जब त्रिपुंड और भस्म का प्रयोग करता है, तब वह शिव के उस रूप का अनुकरण करता है जो मृत्यु को स्वीकार कर अमरत्व की ओर अग्रसर है। चिताभस्म और तांत्रिक चिह्न दोनों ही परंपराओं में साधना के माध्यम नहीं, बल्कि उद्देश्य के प्रतीक हैं-मृत्यु को अंगीकार कर जीवन की तात्विक सच्चाई को जानने की यात्रा। इस प्रकार, ये चिह्न साधक की चेतना को माया के बंधनों से मुक्त कर शिव और भैरवी की अनंत ऊर्जा से जोड़ते हैं।

शमशान और ध्यान की तांत्रिक प्रक्रिया

शमशान में ध्यान की तांत्रिक प्रक्रिया अघोरी साधना की आत्मिक गहराई को उद्घाटित करती है, जो केवल बैठने और मंत्र जाप करने की क्रिया नहीं, बल्कि एक चेतनात्मक विसर्जन है। अघोरी साधक शमशान को एक जीवित ऊर्जा क्षेत्र मानते हैं, जहाँ ध्यान करना आत्मा को सीधे तांत्रिक शक्ति से जोड़ता है। इस ध्यान में साधक किसी निश्चित आसन पर बैठकर न केवल मंत्र जाप करता है, बल्कि अपने भीतर मृत्यु के भाव, शून्यता और परमतत्व के प्रति एक अनवरत एकाग्रता स्थापित करता है। यह ध्यान सामान्य योगिक ध्यान से भिन्न होता है, क्योंकि इसमें साधक मृत्यु को स्वीकार कर उसकी उपस्थिति को साधना का माध्यम बनाता है। ध्यान की यह स्थिति धीरे-धीरे साधक के मस्तिष्क में स्थित 'अज्ञा चक्र 'और 'सहस्रार 'को सक्रिय करती है, जिससे उसके भीतर की तमो, रजो और सत्व प्रवृत्तियाँ संतुलित होती हैं।

शैव परंपरा में भी ध्यान की विशेष भूमिका है, परन्तु शमशान में ध्यान करना प्रायः केवल विशेष तांत्रिकों और भैरवोपासकों द्वारा किया जाता है। शैव साधक ध्यान को शिव से एकात्मता की प्रक्रिया मानते हैं, जहाँ आंतरिक मौन और शरीर की उपेक्षा, शिव के निराकार स्वरूप से जोड़ने का माध्यम होती है। जब यह ध्यान शमशान के मध्य किया जाता है, तब साधक के मन में मृत्यु के प्रति जो भय होता है, वह समाप्त होकर आत्मा के वास्तविक स्वरूप की अनुभूति में

बदल जाता है। उदाहरण के लिए, एक शैव तांत्रिक साधक ने बताया कि शमशान के मौन वातावरण में ध्यान करते समय उसे समय, देह और विचारों की सीमाएँ टूटती हुई प्रतीत हुईं, जिससे वह स्वयं में स्थित शिवत्व को प्रत्यक्ष अनुभव कर सका। इस प्रकार, शमशान में ध्यान की तांत्रिक प्रक्रिया अघोरी और शैव दोनों के लिए चेतना की उस गहराई तक पहुँचने का माध्यम है, जहाँ साधक केवल साक्षी भाव में स्थित होकर ब्रह्म के साथ एक हो जाता है।

रात्रिकालीन साधना और प्रकृति का सहयोग

शमशान में की जाने वाली रात्रिकालीन साधना अघोरी परंपरा की एक अत्यंत विशिष्ट और रहस्यात्मक विधि है, जिसमें प्रकृति की मौन और भयावह शक्ति साधना के सहायक बनती है। अमावस्या, पूर्णिमा और ग्रहण काल जैसे विशेष कालखंडों में अघोरी साधक शमशान में रात्रि के एकांत में साधना करता है। रात्रि का अंधकार, चिताओं की बुझी राख, हवा में व्याप्त मृत्युगंध, और चारों ओर फैला मौन – ये सभी मिलकर साधक की चेतना को बाह्य दुनिया से काटकर एक गहरे अंतर्जगत की ओर मोड़ते हैं। रात्रि की ऊर्जा को तांत्रिक परंपरा में ‘निशा शक्ति ’कहा गया है, जो भैरवी का ही एक क्रियात्मक रूप मानी जाती है। जब अघोरी इस ऊर्जा को आह्वान करता है, तब वह न केवल अपने भीतर की तमस प्रवृत्तियों को नियंत्रित करता है, बल्कि उन्हें ब्रह्मशक्ति में रूपांतरित करने का साहस भी प्राप्त करता है।

शैव तांत्रिक परंपरा में भी रात्रि साधना का महत्व स्वीकार किया गया है, विशेषकर शिवरात्रि जैसी रात्रियाँ इस प्रक्रिया के लिए अनुकूल मानी जाती हैं। कुछ शैव साधक विशेष यंत्रों, यज्ञों और त्राटक विधियों का प्रयोग करके रात्रि के समय भैरव या त्रिपुर भैरवी की उपासना करते हैं। यह उपासना, जो शुद्ध तांत्रिक ध्यान और जाप पर आधारित होती है, साधक को शिव तत्व में एकीकृत करने की दिशा में अग्रसर करती है। उदाहरणस्वरूप, एक शैव साधक ने उल्लेख किया कि पूर्णिमा की रात को शमशान में की गई ध्यान-साधना ने उसके भीतर स्थूल जगत की सीमाओं को तोड़ दिया और उसे शून्य के उस अनुभव में पहुँचाया जहाँ केवल शिव का अस्तित्व बचता है। इस प्रकार, रात्रिकालीन साधना न केवल भय से मुक्ति देती है, बल्कि अघोरी और शैव साधकों के लिए प्रकृति की रहस्यमयी शक्तियों को जागृत कर आत्मा को ब्रह्म से जोड़ने का शक्तिशाली माध्यम बनती है।

शमशान में होने वाली चैतन्य की अनुभूति

शमशान को प्रायः मृत्युलोक का प्रतीक माना जाता है, परन्तु अघोरी और शैव साधकों के लिए यह स्थान चेतना की सबसे सघन तरंगों से भरा होता है, जहाँ प्रत्येक क्षण ब्रह्म की उपस्थिति का आभास होता है। अघोरी साधना में ऐसा माना जाता है कि जब मनुष्य की देह पंचतत्त्वों में विलीन होती है, तब उस क्षण में ब्रह्म और प्रकृति का संयोग होता है, और वह स्थल साधक के लिए चेतना का द्वार

बन जाता है। इस चैतन्य की अनुभूति केवल मंत्रों, यंत्रों या तांत्रिक विधियों से नहीं, बल्कि साधक की भीतरी मौनता और समर्पण से होती है। शमशान में कुछ अघोरी साधक केवल मौन साधना करते हैं, जहाँ वे एक ही स्थान पर घंटों स्थिर बैठकर अपने श्वास, हृदय और चेतना के मध्य सामंजस्य स्थापित करते हैं। इस स्थिति में, उनके भीतर एक ऐसी ऊर्जा सक्रिय होती है जिसे वे ‘भीतर का ज्वालामुखी ’कहते हैं – जो उन्हें हर सांस के साथ ब्रह्म से जोड़ती है।

शैव परंपरा में भी यह चैतन्य अनुभव ‘शिवत्व की झलक ’के रूप में वर्णित की जाती है। शैव साधक मानते हैं कि जब मन और बुद्धि की क्रियाएँ शांत हो जाती हैं, तब जो शून्यता भीतर प्रकट होती है, वही शिव है। शमशान में ध्यान करते समय, यह चैतन्य और अधिक गहन हो जाता है, क्योंकि वहाँ की ऊर्जा स्थूलता को तोड़कर सूक्ष्म की ओर प्रवाहित करती है। उदाहरण के लिए, एक अनुभवी शैव तांत्रिक ने अनुभव साझा किया कि शमशान की ऊर्जा ने उसकी आंतरिक ध्वनियों को समाप्त कर ‘महाशून्यता ’का अनुभव कराया, जिससे उसे अपने भीतर स्थित शिव और भैरवी दोनों का साक्षात्कार हुआ। इस प्रकार, शमशान में उत्पन्न चैतन्य की अनुभूति केवल साधना का लक्ष्य नहीं, बल्कि वह द्वार है जहाँ से आत्मा अपने स्रोत की ओर लौटने लगती है, और अघोरी तथा शैव साधक उसी मार्ग के पथिक बनते हैं।

भैरव तत्त्व और शमशान की जागृत ऊर्जा

शमशान में स्थित भैरव तत्त्व केवल शिव के उग्र रूप की उपासना नहीं है, बल्कि वह चेतना की उस अवस्था का प्रतीक है, जहाँ साधक भय, माया और मृत्यु के बंधनों से पार जाता है। अघोरी परंपरा में भैरव को 'शव के भीतर जाग्रत ऊर्जा 'माना जाता है, जो शमशान में साधना के दौरान सक्रिय होती है। जब साधक शमशान में विशिष्ट तांत्रिक मंत्रों जैसे "ॐ भैरवाय नमः" या "कालभैरवाय ह्रीं" का जप करता है, तो वह केवल मंत्रों की ध्वनि नहीं, बल्कि उनकी कंपन-ऊर्जा को आत्मा में उतारता है। यह ऊर्जा साधक के भीतर स्थित तमस को भेदकर उसे रज और सत्व से ऊपर उठाकर शुद्ध शिवतत्त्व की ओर अग्रसर करती है। अघोरी साधना में भैरव का आह्वान केवल रक्षक के रूप में नहीं होता, बल्कि उसे आत्मा के उस क्रांतिकारी परिवर्तनकर्ता के रूप में बुलाया जाता है जो साधक को संपूर्ण रूप से रूपांतरित कर देता है।

शैव परंपरा में भैरव तत्त्व को विशेष रूप से 'कालभैरव 'और 'अन्नद भैरव 'रूपों में पूजा जाता है, जो मृत्यु और काल पर नियंत्रण के प्रतीक हैं। जब शैव साधक शमशान में भैरव की उपासना करता है, तो वह उसे मार्गदर्शक और प्रहरी के रूप में स्वीकार करता है, जो साधना के गूढ़ और भयावह क्षणों में रक्षा करता है। उदाहरणस्वरूप, 'रुद्रयामल तंत्र 'में वर्णन मिलता है कि शमशान में की गई भैरव उपासना साधक को न केवल आध्यात्मिक अनुभव देती है, बल्कि

उसके भीतर के भय, संशय और द्वैत को भस्म कर देती है। इस प्रकार, भैरव तत्त्व और शमशान की जागृत ऊर्जा अघोरी और शैव साधकों के लिए साधना का मूल आधार बन जाती है, जो उन्हें स्थूल जगत से ऊपर उठाकर तांत्रिक पूर्णता की ओर ले जाती है।

शव के माध्यम से आत्मचिंतन और निर्गुण ध्यान

शव को अघोरी परंपरा में न केवल मृत्यु का प्रतीक माना गया है, बल्कि उसे आत्मचिंतन का एक माध्यम भी स्वीकारा गया है। अघोरी साधक शव को एक दर्पण के रूप में देखते हैं, जिसमें वे स्वयं की अस्थिरता, क्षणभंगुरता और निर्गुण स्वरूप का दर्शन करते हैं। जब शव के समीप बैठकर ध्यान किया जाता है, तो साधक का चित्त उस सत्य की ओर उन्मुख होता है, जहाँ न कोई नाम, न रूप, न देह की पहचान शेष रहती है। यह ध्यान एक प्रकार की निर्विकल्प समाधि की दिशा में ले जाता है, जहाँ साधक केवल साक्षी भाव में स्थित रहता है और अपने भीतर के समस्त द्वंद्वों को विलीन होते हुए देखता है। शव के पास किया गया यह आत्मचिंतन मृत्यु के भय को नष्ट कर जीवन के वास्तविक अर्थ की ओर दृष्टि खोलता है, जो अघोरी साधना की उच्चतम उपलब्धियों में से एक मानी जाती है।

शैव साधना में भी 'निर्गुण ध्यान 'का विशेष स्थान है, जहाँ शिव को न रूप में, न नाम में, बल्कि निर्विकल्प ब्रह्म के रूप में ध्यान किया जाता है। शमशान इस ध्यान के लिए सबसे अनुकूल स्थान माना गया है, क्योंकि वहाँ की नीरवता और ऊर्जा साधक को भीतर

की यात्रा के लिए प्रेरित करती है। शैव ग्रंथों में यह वर्णन मिलता है कि जब साधक शव के पास ध्यान करता है, तो उसे 'शिवत्व 'की उस अवस्था का अनुभव होता है जहाँ केवल अस्तित्व शेष रह जाता है। उदाहरणस्वरूप, एक अनुभवी शैव साधक ने अपने अनुभव में कहा कि शमशान में शव के पास ध्यान करते समय उसे अपने और ब्रह्म के बीच की सभी सीमाएँ टूटती प्रतीत हुईं, जिससे वह केवल शुद्ध चेतना में विलीन हो गया। इस प्रकार, शव अघोरी और शैव साधकों के लिए केवल साधन नहीं, बल्कि एक जीवित प्रतीक बन जाता है, जो उन्हें निर्गुण ब्रह्म से जोड़ने की प्रक्रिया में सहायक होता है।

तांत्रिक यंत्रों का शमशान में प्रयोग

शमशान में की जाने वाली तांत्रिक साधनाओं में यंत्रों का प्रयोग एक गूढ़ विज्ञान के अंतर्गत आता है, जहाँ प्रत्येक यंत्र विशिष्ट कंपन और ऊर्जा के साथ साधक को ब्रह्म के संपर्क में लाने का माध्यम बनता है। अघोरी परंपरा में भैरवी यंत्र, कालभैरव यंत्र और त्रिकोणात्मक ताम्रपट्ट यंत्रों का प्रयोग प्रचलित है, जिन्हें विशेष विधि से जाग्रत कर साधना में प्रयोग किया जाता है। इन यंत्रों को शमशान की भूमि पर स्थापित कर, उनके चारों ओर विशेष रेखांकन (मंडल) बनाकर मंत्रों का उच्चारण किया जाता है, जिससे उस स्थान की ऊर्जा केन्द्रित होकर साधक की चेतना में प्रवेश करती है। यंत्रों का यह प्रयोग केवल प्रतीकात्मक नहीं होता, बल्कि वह तांत्रिक साधना

की एक अत्यंत वैज्ञानिक प्रणाली होती है, जहाँ ध्वनि, आकृति और ध्यान का त्रिवेणी संगम होता है।

शैव तांत्रिक परंपरा में भी यंत्रों का प्रयोग विशेष रूप से किया जाता है, जैसे महाशिव यंत्र, त्रिपुर भैरवी यंत्र, या मूलाधार जागरण के लिए रेखित विशुद्ध यंत्र। शैव साधक इन यंत्रों का प्रयोग विशेष ध्यान और यज्ञ विधियों में करता है, जहाँ यंत्र का केंद्र शिव और शक्ति का मिलन बिंदु होता है। यंत्रों को मिट्टी, तांबे, भोजपत्र, या रुद्राक्ष से निर्मित किया जाता है और उनमें बीज मंत्रों की शक्ति को प्रतिष्ठित किया जाता है। उदाहरणस्वरूप, 'शिव संहिता 'में उल्लिखित है कि त्रिकोणात्मक यंत्र का प्रयोग करते समय यदि साधक शमशान की भूमि पर स्थिर मन से ध्यान करता है, तो उसे शिव और शक्ति की संयुक्त ऊर्जा का अनुभव होता है। इस प्रकार, तांत्रिक यंत्र केवल पूजन की वस्तु नहीं होते, बल्कि वे अघोरी और शैव साधकों के लिए शमशान में ब्रह्मांडीय ऊर्जा से संवाद स्थापित करने का माध्यम बनते हैं, जो साधना को अत्यंत प्रभावशाली और आध्यात्मिक रूप से गहन बनाते हैं।

तांत्रिक पवित्रता और शमशान का चयन

शमशान को अघोरी और शैव तांत्रिक साधकों द्वारा एक विशिष्ट साधना स्थल के रूप में इसलिए चुना जाता है क्योंकि वहाँ की ऊर्जा अन्य स्थानों की अपेक्षा अधिक तीव्र, निर्लिप्त और रहस्यमयी होती है। लेकिन हर शमशान तांत्रिक साधना के लिए

उपयुक्त नहीं होता। अघोरी परंपरा में यह मान्यता है कि जिस शमशान में देह का अंतिम संस्कार सतत रूप से होता है, जहाँ अग्नि और राख का क्रम निरंतर चलता रहता है, वहाँ तांत्रिक ऊर्जा अधिक सघन रूप में विद्यमान होती है। ऐसे शमशान में साधक को विशेष ध्यान, साधना, या अनुष्ठान करते समय कम समय में भी अधिक आध्यात्मिक अनुभूति हो सकती है। इसके विपरीत, शुष्क और निष्क्रिय शमशान जहाँ मृत्यु की प्रक्रिया बंद है, वहां ऊर्जा निष्क्रिय होती है, जिससे साधना निष्फल हो सकती है।

शैव तांत्रिक परंपरा में भी शमशान के चयन में विशेष शुद्धता और नियमों का पालन किया जाता है। जैसे किसी शमशान के चारों ओर बहने वाली नदी, निकटस्थ पीपल या वटवृक्ष, दिशाओं के अनुसार उसका विस्तार, और वहाँ पूर्व में की गई साधनाओं का प्रभाव – ये सभी निर्णय के मूल मानदंड होते हैं। उदाहरणस्वरूप, काशी का मणिकर्णिका घाट और उज्जैन का भैरवगढ़ शमशान तांत्रिकों द्वारा अत्यधिक प्रतिष्ठित माने जाते हैं क्योंकि इन स्थानों पर वर्षों से हजारों साधकों ने तप और तांत्रिक अनुष्ठान किए हैं। यह 'तांत्रिक संस्कृति की गूढ़ परंपरा 'की तरह संचालित होती है, जिसमें शमशान स्वयं एक जीवंत देवस्थल बन जाता है। इस प्रकार, शमशान का चयन केवल स्थान नहीं, बल्कि ऊर्जा, इतिहास और साधनात्मक योग्यता का निर्णय है, जो तांत्रिक साधना को प्रभावशाली बनाता है।

गुरु-दीक्षा और शमशान साधना की अनुमति

शमशान में साधना करने की अनुमति अघोरी या शैव परंपरा में बिना गुरु की दीक्षा के संभव नहीं होती। अघोरी परंपरा में यह मान्यता है कि शमशान साधना अत्यंत संवेदनशील और खतरनाक प्रक्रिया है, जिसमें साधक को आत्मिक, मानसिक और शारीरिक तीनों स्तरों पर पूर्णतः प्रशिक्षित और संतुलित होना आवश्यक है। बिना गुरु की दीक्षा के साधक शमशान की ऊर्जा को संभाल नहीं सकता, और वह या तो भ्रमित हो सकता है या भय से विक्षिप्त हो सकता है। गुरु अपने शिष्य को विशेष मंत्र, यंत्र, चिह्न और निर्देशों के साथ न केवल साधना की विधि सिखाता है, बल्कि उसके भावनात्मक और मानसिक स्थैर्य को भी परखता है। अघोरी गुरु प्रायः अपने शिष्य की वर्षों तक परीक्षा लेते हैं और केवल तब शमशान साधना की अनुमति देते हैं जब उन्हें यह विश्वास हो जाए कि साधक उस ऊर्जा का सही मार्गदर्शन कर सकेगा।

शैव तांत्रिक परंपरा में भी गुरु-दीक्षा को अनिवार्य माना गया है, विशेषतः जब साधना भैरव या भैरवी से संबंधित हो। तांत्रिक ग्रंथों में स्पष्ट उल्लेख है कि बिना गुरु की अनुमति से शमशान में प्रवेश करना आत्मघाती हो सकता है क्योंकि वहाँ की ऊर्जा न केवल शक्तिशाली होती है, बल्कि अनुशासनहीनता को दंडित भी करती है। उदाहरणस्वरूप, एक शैव गुरु ने अपने अनुभव में बताया कि जब एक नवसाधक ने बिना दीक्षा के मणिकर्णिका घाट पर साधना आरंभ

की, तो उसके भीतर भयंकर मानसिक असंतुलन उत्पन्न हो गया, जिसे ठीक करने में वर्षों लग गए। इसलिए, गुरु न केवल ज्ञान का स्रोत होता है, बल्कि वह शमशान की रहस्यमयी ऊर्जा से साधक को सुरक्षित रूप से जोड़ने वाला सेतु भी होता है। इस प्रकार, गुरु-दीक्षा और अनुमति शमशान साधना की रीढ़ होती है, जो साधना को दिशा, संरचना और सुरक्षा प्रदान करती है।

शमशान में साधना के समय आंतरिक नियम और संयम

शमशान में साधना करते समय अघोरी और शैव तांत्रिक साधकों को विशेष प्रकार के आंतरिक संयम और नियमों का पालन करना अनिवार्य होता है, जो साधना को दिशाहीन होने से रोकते हैं। अघोरी परंपरा में यह स्पष्ट निर्देश होता है कि साधक को साधना के समय न तो किसी से संवाद करना चाहिए, न किसी बाह्य प्रलोभन में उलझना चाहिए। उसे एक बिंदु पर स्थित रहकर शरीर और इंद्रियों को पूर्णतः वश में रखना होता है। साधक को व्रत, उपवास, मौन और निष्ठा के साथ भीतर की प्रक्रिया पर ध्यान केंद्रित करना होता है। इस स्थिति में भोजन, नींद, शौच, यहाँ तक कि सांस लेने की गति भी नियंत्रित होती है। यह संयम साधक को चेतना के उन स्तरों तक ले जाता है जहाँ साधना केवल कर्मकांड नहीं, आत्मा की परम गति बन जाती है।

शैव परंपरा में भी आंतरिक नियमों का महत्व बराबर माना गया है। साधक को 'एकाग्रता', 'स्वधर्म पालन', 'वैराग्य 'और 'मौन '

को शमशान साधना के चार स्तंभों के रूप में देखा जाता है। शैव साधक मानते हैं कि जब तक चित्त स्थिर न हो, मन निर्विचार न हो और आत्मा पूर्णतः समर्पित न हो, तब तक शिव की तांत्रिक अनुभूति संभव नहीं। उदाहरणस्वरूप, 'योगिनी तंत्र 'में यह बताया गया है कि शमशान में साधना करने वाला साधक यदि मन, इंद्रियों और व्यवहार पर पूर्ण नियंत्रण नहीं रखता, तो साधना असफल हो जाती है या विकृत रूप ले लेती है। इस प्रकार, शमशान में साधना के समय आंतरिक संयम और तांत्रिक अनुशासन उतने ही आवश्यक होते हैं जितनी बाह्य विधियाँ, क्योंकि यही संयम साधक को आत्म-तंत्र से ब्रह्म-तंत्र की ओर अग्रसर करता है।

अध्याय 41: शमशान भैरवी और अघोरियों की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति

कला में भैरवी का चित्रण

शमशान भैरवी का कला में चित्रण अघोरियों की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जो तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिक गहराई को दर्शाता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, कला में एक भयावह और करुणामयी रूप में चित्रित की जाती है। उनकी छवि में खोपड़ियों की माला, त्रिशूल, और रक्त-रंजित वस्त्र प्रायः दर्शाए जाते हैं, जो मृत्यु और परिवर्तन की ऊर्जा को प्रतीकित करते हैं। शमशान में भैरवी की पूजा, जिसमें मंत्र जाप और यंत्र पूजा शामिल हैं, इस चित्रण को प्रेरित करती है। उदाहरण के लिए, तांत्रिक चित्रों में भैरवी को शमशान की पृष्ठभूमि में चिताओं की राख के बीच खड़ा दिखाया जाता है, जो साधक को मृत्यु के भय से मुक्ति का संदेश देता है। ये चित्रण अघोरी साधना की गहनता और भैरवी की शक्ति को दर्शाते हैं। गुरु-शिष्य परंपरा इस कला को जीवित रखती है, क्योंकि गुरु साधक को भैरवी की छवि और उसके दार्शनिक महत्व को समझाता है। कुछ अघोरी और तांत्रिक कलाकार इस कला को समाज में साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, कला में भैरवी का

चित्रण अघोरी साधना को सांस्कृतिक रूप से गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधकों और दर्शकों को आत्म-साक्षात्कार की ओर प्रेरित करता है।

अघोरियों की मूर्तिकला

अघोरियों की मूर्तिकला शमशान भैरवी और उनकी साधना की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का एक अनूठा रूप है, जो तांत्रिक और शैव दर्शन की गहराई को दर्शाता है। अघोरी मूर्तिकला में भैरवी और शिव की मूर्तियाँ प्रायः शमशान की पृष्ठभूमि में बनाई जाती हैं, जिसमें भैरवी को खोपड़ियों की माला और त्रिशूल के साथ चित्रित किया जाता है। ये मूर्तियाँ मृत्यु, परिवर्तन और आत्म-साक्षात्कार के प्रतीक हैं। उदाहरण के लिए, कुछ मूर्तियों में भैरवी को चिताओं की राख पर खड़ा दिखाया जाता है, जो साधक को मृत्यु के भय से मुक्ति का संदेश देता है। अघोरी मूर्तिकला में प्रायः स्थानीय सामग्रियों, जैसे पत्थर, मिट्टी, और लकड़ी, का उपयोग होता है, जो शमशान के प्राकृतिक तत्वों से प्रेरित है। यह कला नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करती है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस मूर्तिकला को समाज में साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन और सांस्कृतिक धरोहर को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, अघोरियों की मूर्तिकला सांस्कृतिक अभिव्यक्ति को गहन और परिवर्तनकारी बनाती है, जो साधकों और दर्शकों को आत्म-साक्षात्कार की ओर प्रेरित करता है।

साहित्य में वर्णन

शमशान भैरवी और अघोरियों का साहित्य में वर्णन उनकी सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का एक महत्वपूर्ण पहलू है, जो तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिक गहराई को उजागर करता है। साहित्य में, भैरवी को प्रायः एक रहस्यमयी और शक्तिशाली देवी के रूप में चित्रित किया जाता है, जो शमशान में साधकों को मार्गदर्शन देती है। उदाहरण के लिए, शिवानी के उपन्यास "भैरवी" में, नायिका चंदन की कहानी शमशान में भैरवी बनने की यात्रा को दर्शाती है, जिसमें शमशान की भयावहता और आध्यात्मिक ऊर्जा का जीवंत चित्रण है। यह वर्णन भैरवी की पूजा और अघोरियों की साधना को समाज के सामने लाता है, जो मृत्यु और परिवर्तन की गहनता को दर्शाता है। शमशान का वातावरण, जो चिताओं की राख और मृत्यु की ऊर्जा से भरा है, साहित्य में एक रहस्यमयी पृष्ठभूमि प्रदान करता है। साहित्य में ये वर्णन नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करते हैं, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ लेखक और अघोरी इन वर्णनों को समाज में साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, साहित्य में भैरवी और अघोरियों का वर्णन सांस्कृतिक अभिव्यक्ति को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो पाठकों और साधकों को आत्म-साक्षात्कार की ओर प्रेरित करता है।

संगीत और भक्ति गीत

शमशान भैरवी और अघोरियों की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति में संगीत और भक्ति गीत एक महत्वपूर्ण माध्यम हैं, जो उनकी आध्यात्मिक गहराई और तांत्रिक दर्शन को व्यक्त करते हैं। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, के सम्मान में रचित भक्ति गीत अघोरियों की साधना और शमशान की रहस्यमयी ऊर्जा को दर्शाते हैं। इन गीतों में प्रायः भैरवी की महिमा, मृत्यु के भय से मुक्ति, और आत्म-साक्षात्कार की थीम शामिल होती है। उदाहरण के लिए, कुछ भक्ति गीतों में भैरवी को शमशान की रानी के रूप में चित्रित किया जाता है, जो साधक को माया से मुक्त करती है। ये गीत मंत्रों, जैसे "ह्रीं भैरवी क्रीं", और तांत्रिक स्वरों के साथ गाए जाते हैं, जो शमशान के वातावरण को जीवंत करते हैं। ये गीत नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करते हैं, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इन भक्ति गीतों को समाज में साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, संगीत और भक्ति गीत अघोरी साधना को सांस्कृतिक रूप से गहन और परिवर्तनकारी बनाते हैं, जो साधकों और श्रोताओं को आत्म-साक्षात्कार की ओर प्रेरित करते हैं।

नृत्य और नाटक में अभिव्यक्ति

शमशान भैरवी और अघोरियों की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति में नृत्य और नाटक एक शक्तिशाली माध्यम हैं, जो तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिक गहराई को जीवंत रूप में प्रस्तुत करते हैं। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, नृत्य और नाटक में एक भयावह और करुणामयी देवी के रूप में चित्रित की जाती है। तांत्रिक नृत्य, जैसे तांडव, और नाटक में भैरवी की कहानियाँ शमशान की रहस्यमयी ऊर्जा और मृत्यु के प्रति अघोरियों के दृष्टिकोण को दर्शाती हैं। उदाहरण के लिए, कुछ नाटकों में भैरवी को शमशान में नृत्य करते हुए दिखाया जाता है, जो साधक को मृत्यु और माया से मुक्ति का संदेश देता है। ये प्रदर्शन मंत्रों और तांत्रिक संगीत के साथ संयोजित होते हैं, जो शमशान के वातावरण को जीवंत करते हैं। नृत्य और नाटक नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करते हैं, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी और तांत्रिक कलाकार इन प्रदर्शनों को समाज में साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, नृत्य और नाटक में अभिव्यक्ति अघोरी साधना को सांस्कृतिक रूप से गहन और परिवर्तनकारी बनाती है, जो दर्शकों और साधकों को आत्म-साक्षात्कार की ओर प्रेरित करती है।

प्रतीकात्मक कला का महत्व

शमशान भैरवी और अघोरियों की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति में प्रतीकात्मक कला का महत्व तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिक गहराई को समझने में केंद्रीय है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, की प्रतीकात्मक कला में खोपड़ियों की माला, त्रिशूल, और रक्त-रंजित वस्त्र जैसे प्रतीक शामिल हैं, जो मृत्यु और परिवर्तन की थीम को दर्शाते हैं। ये प्रतीक शमशान की ऊर्जा और अघोरियों की साधना को व्यक्त करते हैं, जो साधक को मृत्यु के भय और माया से मुक्ति की ओर ले जाता है। उदाहरण के लिए, एक तांत्रिक चित्र में भैरवी को चिताओं की राख पर खड़ा दिखाया जाता है, जो जीवन की नश्वरता और आत्मा की अमरता को प्रतीकित करता है। यह प्रक्रिया साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है। प्रतीकात्मक कला नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करती है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी और तांत्रिक कलाकार इस कला को समाज में साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, प्रतीकात्मक कला का महत्व अघोरी साधना को सांस्कृतिक रूप से गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधकों और दर्शकों को आत्म-साक्षात्कार की ओर प्रेरित करता है।

आधुनिक कला में प्रभाव

शमशान भैरवी और अघोरियों की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का आधुनिक कला पर प्रभाव तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिक गहराई को समकालीन संदर्भों में प्रस्तुत करता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, आधुनिक कला में एक रहस्यमयी और शक्तिशाली छवि के रूप में उभरती है। समकालीन कलाकार भैरवी की छवि को चित्रों, डिजिटल कला, और मल्टीमीडिया प्रदर्शनियों में चित्रित करते हैं, जो शमशान की रहस्यमयी ऊर्जा और मृत्यु के प्रति अघोरियों के दृष्टिकोण को दर्शाते हैं। उदाहरण के लिए, कुछ आधुनिक चित्रों में भैरवी को शमशान में चिताओं की राख के बीच खड़ा दिखाया जाता है, जो मृत्यु और परिवर्तन की थीम को प्रतीकित करता है। ये कलाकृतियाँ अक्सर तांत्रिक मंत्रों और यंत्रों से प्रेरित होती हैं, जो अघोरी साधना की गहनता को व्यक्त करती हैं। क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ कलाकार और अघोरी इस प्रभाव को समाज में साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, आधुनिक कला में प्रभाव अघोरी साधना को सांस्कृतिक रूप से गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो दर्शकों और साधकों को आत्म-साक्षात्कार की ओर प्रेरित करता है।

वैश्विक सांस्कृतिक प्रभाव

शमशान भैरवी और अघोरियों की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का वैश्विक सांस्कृतिक प्रभाव तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता को विश्व मंच पर ले जाता है, जो भैरवी की शक्ति और अघोरी साधना की गहराई को दर्शाता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, वैश्विक कला, साहित्य, और प्रदर्शन कला में एक प्रेरणादायक छवि के रूप में उभरती है। उदाहरण के लिए, पश्चिमी देशों में तांत्रिक कला प्रदर्शनियों में भैरवी की छवि को शमशान की पृष्ठभूमि में चित्रित किया जाता है, जो मृत्यु और परिवर्तन की थीम को वैश्विक दर्शकों तक पहुँचाता है। ये अभिव्यक्तियाँ अघोरी साधना की रहस्यमयी और आध्यात्मिक प्रकृति को विश्व स्तर पर प्रस्तुत करती हैं। वैश्विक सांस्कृतिक प्रभाव नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी और तांत्रिक कलाकार इन अभिव्यक्तियों को अंतरराष्ट्रीय मंचों, जैसे कला प्रदर्शनियों और सांस्कृतिक उत्सवों, में साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, वैश्विक सांस्कृतिक प्रभाव अघोरी साधना को सांस्कृतिक रूप से गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो विश्व स्तर पर दर्शकों और साधकों को आत्म-साक्षात्कार की ओर प्रेरित करता है।

शिक्षा के माध्यम के रूप में कला

शमशान भैरवी और अघोरियों की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति में कला शिक्षा के माध्यम के रूप में एक शक्तिशाली उपकरण है, जो तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिक गहराई को समाज तक पहुँचाता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, की कला, जैसे चित्र, मूर्तियाँ, और प्रदर्शन, लोगों को मृत्यु, परिवर्तन, और आत्म-साक्षात्कार की थीम से परिचित कराती है। उदाहरण के लिए, तांत्रिक कला कार्यशालाओं में भैरवी की छवि और शमशान की पृष्ठभूमि का उपयोग करके साधकों और आम लोगों को तांत्रिक दर्शन सिखाया जाता है। ये कला रूप शमशान की रहस्यमयी ऊर्जा को जीवंत करते हैं, जो शिक्षा को गहन और प्रभावी बनाता है। कला के माध्यम से शिक्षा नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करती है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी और तांत्रिक शिक्षक इस कला को स्कूलों, विश्वविद्यालयों, और सांस्कृतिक मंचों में साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, शिक्षा के माध्यम के रूप में कला अघोरी साधना को सांस्कृतिक रूप से गहन और परिवर्तनकारी बनाती है, जो साधकों और समाज को आत्म-साक्षात्कार की ओर प्रेरित करती है।

नैतिक संदेश और कला

शमशान भैरवी और अघोरियों की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति में कला के माध्यम से नैतिक संदेश तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिक गहराई को समाज तक पहुँचाने का एक शक्तिशाली साधन हैं। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, कला में एक ऐसी छवि के रूप में प्रस्तुत की जाती है जो मृत्यु के भय से मुक्ति, करुणा, और आत्म-साक्षात्कार जैसे नैतिक मूल्यों को प्रोत्साहित करती है। उदाहरण के लिए, तांत्रिक चित्रों और मूर्तियों में भैरवी को शमशान में चिताओं की राख पर खड़ा दिखाया जाता है, जो जीवन की नश्वरता और आत्मा की अमरता का संदेश देता है। ये कलाकृतियाँ दर्शकों को माया और अहंकार से मुक्त होने और समाज के प्रति करुणा बरतने की प्रेरणा देती हैं। ये नैतिक संदेश नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को भी प्रोत्साहित करते हैं, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी और तांत्रिक कलाकार इन नैतिक संदेशों को कला प्रदर्शनियों, कार्यशालाओं, और सांस्कृतिक मंचों के माध्यम से समाज में साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, कला के माध्यम से नैतिक संदेश अघोरी साधना को सांस्कृतिक रूप से गहन और परिवर्तनकारी बनाते हैं, जो दर्शकों और साधकों को आत्म-साक्षात्कार और नैतिक जीवन की ओर प्रेरित करते हैं।

भविष्य की सांस्कृतिक दिशाएँ

शमशान भैरवी और अघोरियों की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति भविष्य की सांस्कृतिक दिशाओं को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जो तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता को नई पीढ़ियों तक ले जाती है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, कला, साहित्य, संगीत, और प्रदर्शन कला के माध्यम से भविष्य में और अधिक व्यापक रूप से प्रस्तुत की जा सकती है। उदाहरण के लिए, डिजिटल कला और वर्चुअल प्रदर्शनियों में भैरवी की छवि को शमशान की पृष्ठभूमि में चित्रित किया जा सकता है, जो वैश्विक दर्शकों को मृत्यु और परिवर्तन की थीम से परिचित कराएगा। भविष्य में, ये अभिव्यक्तियाँ नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को और बढ़ावा देंगी, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी और तांत्रिक कलाकार इन सांस्कृतिक दिशाओं को आधुनिक तकनीकों, जैसे सोशल मीडिया और ऑनलाइन मंचों, के माध्यम से साझा करेंगे, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करेगा। यह प्रक्रिया नई पीढ़ियों को तांत्रिक और आध्यात्मिक मूल्यों से जोड़ेगी, जो पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक करुणा जैसे मुद्दों पर ध्यान केंद्रित कर सकती है। इस प्रकार, भविष्य की सांस्कृतिक दिशाएँ अघोरी साधना को सांस्कृतिक रूप से गहन और परिवर्तनकारी बनाएँगी, जो साधकों और समाज को आत्म-साक्षात्कार की ओर प्रेरित करेंगी।

सांस्कृतिक धरोहर का संरक्षण

शमशान भैरवी और अघोरियों की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का निष्कर्ष उनकी सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण में निहित है, जो तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिक गहराई को समाज और भविष्य की पीढ़ियों तक पहुँचाता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, कला, मूर्तिकला, साहित्य, संगीत, और नृत्य के माध्यम से सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का केंद्र है। ये अभिव्यक्तियाँ शमशान की रहस्यमयी ऊर्जा और मृत्यु के प्रति अघोरियों के दृष्टिकोण को दर्शाती हैं। उदाहरण के लिए, भैरवी की चित्रकारी और मूर्तियाँ, जो शमशान की पृष्ठभूमि में बनाई जाती हैं, मृत्यु और परिवर्तन की थीम को जीवंत करती हैं। यह धरोहर नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करती है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी और तांत्रिक कलाकार इस धरोहर को कला प्रदर्शनियों, सांस्कृतिक उत्सवों, और शैक्षिक मंचों के माध्यम से साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, सांस्कृतिक धरोहर का संरक्षण अघोरी साधना को सांस्कृतिक रूप से गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधकों और समाज को आत्म-साक्षात्कार और आध्यात्मिक जागरूकता की ओर प्रेरित करता है।

अध्याय 42: शमशान भैरवी और अघोरियों का संयुक्त प्रभाव: एक समीक्षा

ऐतिहासिक प्रभाव का अवलोकन

शमशान भैरवी और अघोरियों का संयुक्त प्रभाव ऐतिहासिक रूप से तांत्रिक और शैव परंपराओं में गहराई से निहित है, जो उनके आध्यात्मिक और सांस्कृतिक योगदान को दर्शाता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, और अघोरी, जो शमशान में उनकी पूजा के माध्यम से मृत्यु और माया से मुक्ति प्राप्त करते हैं, ने भारतीय आध्यात्मिक इतिहास में महत्वपूर्ण छाप छोड़ी है। प्राचीन तंत्र ग्रंथों, जैसे तंत्रालोक और कुलार्णव तंत्र, में भैरवी की पूजा का उल्लेख है, जो अघोरियों की साधना का आधार बनता है। उदाहरण के लिए, बाबा किनाराम, जिन्हें अघोरी परंपरा का संस्थापक माना जाता है, ने 18वीं शताब्दी में शमशान में भैरवी की साधना को प्रचलित किया, जिसने तांत्रिक परंपराओं को संगठित रूप प्रदान किया। यह प्रभाव नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस ऐतिहासिक प्रभाव को समाज में साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, ऐतिहासिक प्रभाव का अवलोकन अघोरी साधना और भैरवी की पूजा को गहन

और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधकों को आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

आध्यात्मिक योगदान

शमशान भैरवी और अघोरियों का आध्यात्मिक योगदान तांत्रिक दर्शन और आत्म-साक्षात्कार के मार्ग को समृद्ध करने में महत्वपूर्ण है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, अघोरियों के लिए माता और मार्गदर्शक है, जो शमशान में उनकी पूजा के माध्यम से साधकों को मृत्यु के भय और माया से मुक्त करती है। अघोरियों की साधना, जिसमें मंत्र जाप, जैसे "ह्रीं भैरवी क्रीं", और यंत्र पूजा शामिल हैं, साधक को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है। यह योगदान अद्वैत दर्शन को प्रतिबिंबित करता है, जिसमें आत्मा और परमात्मा का मिलन अंतिम लक्ष्य है। यह योगदान नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस आध्यात्मिक योगदान को समाज में साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, आध्यात्मिक योगदान अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधकों को आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

सामाजिक प्रभाव और धारणा

शमशान भैरवी और अघोरियों का सामाजिक प्रभाव और धारणा उनके तांत्रिक दर्शन और साधना की जटिलता को दर्शाता है, जो समाज में एक साथ भय, रहस्य और सम्मान को प्रेरित करता है। भैरवी की पूजा और अघोरियों की शमशान-केंद्रित साधना, जिसमें मंत्र जाप और यंत्र पूजा शामिल हैं, समाज में अक्सर गलतफहमियों का कारण बनती है। उनकी प्रथाएँ, जैसे मानव अवशेषों का उपयोग और शमशान में निवास, सामाजिक मानदंडों से भिन्न होने के कारण विवादास्पद मानी जाती हैं। बाबा किनाराम की सामाजिक सेवा, जैसे गरीबों की सहायता, ने समाज पर सकारात्मक प्रभाव डाला, लेकिन उनकी साधना को जादू-टोना समझा गया। कुछ समाज अघोरियों को आध्यात्मिक गहराई के प्रतीक के रूप में स्वीकार करते हैं, जबकि अन्य उन्हें भयावह मानते हैं। कुछ अघोरी अपनी साधना और सामाजिक कार्यों को समाज में साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करता है। यह प्रभाव नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। इस प्रकार, सामाजिक प्रभाव और धारणा अघोरी साधना को सांस्कृतिक और आध्यात्मिक रूप से गहन बनाता है, जो साधकों और समाज को आत्म-साक्षात्कार और सामाजिक जिम्मेदारी की ओर प्रेरित करता है।

सांस्कृतिक योगदान

शमशान भैरवी और अघोरियों का सांस्कृतिक योगदान उनकी कला, साहित्य, संगीत, और प्रदर्शन कला के माध्यम से तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिक गहराई को समाज तक पहुँचाने में निहित है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, को अघोरी चित्रों, मूर्तियों, और भक्ति गीतों में एक रहस्यमयी और करुणामयी देवी के रूप में चित्रित किया जाता है। तांत्रिक चित्रों में भैरवी को शमशान में चिताओं की राख पर खड़ा दिखाया जाता है, जो मृत्यु और परिवर्तन की थीम को दर्शाता है। ये सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ अघोरी साधना की गहनता और भैरवी की शक्ति को समाज के सामने लाती हैं। यह योगदान नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी और तांत्रिक कलाकार इन सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों को कला प्रदर्शनियों, साहित्य, और सांस्कृतिक उत्सवों के माध्यम से साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करता है। ये अभिव्यक्तियाँ समाज को मृत्यु की स्वीकृति और आध्यात्मिक जागरूकता की ओर प्रेरित करती हैं। इस प्रकार, सांस्कृतिक योगदान अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाता है, जो साधकों और समाज को आत्म-साक्षात्कार और सांस्कृतिक जागरूकता की ओर ले जाता है।

वैज्ञानिक और दार्शनिक जांच

शमशान भैरवी और अघोरियों का संयुक्त प्रभाव वैज्ञानिक और दार्शनिक जांच का विषय रहा है, जो उनकी साधना और तांत्रिक दर्शन की गहराई को समझने में महत्वपूर्ण है। भैरवी की पूजा और शमशान की साधना, जिसमें मंत्र जाप और यंत्र पूजा शामिल हैं, वैज्ञानिक दृष्टिकोण से मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य पर प्रभाव डालती हैं। उदाहरण के लिए, कुछ अध्ययनों में पाया गया कि शमशान में ध्यान और मंत्र जाप तनाव को कम करने और चेतना को शांत करने में सहायक हैं। दार्शनिक रूप से, अघोरी साधना अद्वैत दर्शन पर आधारित है, जो आत्मा और परमात्मा के मिलन को अंतिम सत्य मानता है। शमशान का वातावरण, जो मृत्यु की ऊर्जा से भरा है, इस जांच को और गहन बनाता है। गुरु-शिष्य परंपरा इस जांच को जीवित रखती है, क्योंकि गुरु साधकों को भैरवी की पूजा और उसके दार्शनिक महत्व को सिखाता है। यह प्रक्रिया साधकों को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है। वैज्ञानिक और दार्शनिक जांच नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करती है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी और विद्वान इस जांच को समाज में साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को वैज्ञानिक और दार्शनिक दृष्टिकोण से समझने में मदद करता है। इस प्रकार, वैज्ञानिक और दार्शनिक जांच अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाती है, जो साधकों और

समाज को आत्म-साक्षात्कार और बौद्धिक जागरूकता की ओर ले जाती है।

महिला साधकों की भूमिका

शमशान भैरवी और अघोरियों के संयुक्त प्रभाव में महिला साधकों की भूमिका तांत्रिक परंपरा में नारी शक्ति और आध्यात्मिक योगदान को उजागर करती है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, महिला साधकों के लिए एक प्रेरणा और मार्गदर्शक है। अघोरी परंपरा में, महिला साधक शमशान में भैरवी की पूजा, जिसमें मंत्र जाप और यंत्र पूजा शामिल हैं, के माध्यम से आत्म-साक्षात्कार की ओर बढ़ती हैं। यह प्रक्रिया उन्हें कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है, जो अघोरी दर्शन के अद्वैत सिद्धांत को प्रतिबिंबित करता है। महिला साधकों की भूमिका नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करती है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ महिला साधक अपनी कहानियों और साधना को समाज में साझा करती हैं, जो तांत्रिक दर्शन और नारी सशक्तिकरण को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, महिला साधकों की भूमिका अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाती है, जो साधकों और समाज को आत्म-साक्षात्कार और नारी शक्ति की ओर ले जाती है।

शिक्षा और जागरूकता पर प्रभाव

शमशान भैरवी और अघोरियों का संयुक्त प्रभाव शिक्षा और जागरूकता पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है, जो तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता को समाज तक पहुँचाने में सहायक है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, की पूजा और अघोरियों की साधना कला, साहित्य, और प्रदर्शन के माध्यम से लोगों को शिक्षित करती है। तांत्रिक कला कार्यशालाओं और सांस्कृतिक उत्सवों में भैरवी की छवि और शमशान की साधना को प्रस्तुत किया जाता है, जो समाज को मृत्यु और परिवर्तन की थीम से परिचित कराता है।इस शिक्षा को और गहन बनाता है। गुरु-शिष्य परंपरा इस प्रभाव को जीवित रखती है, क्योंकि गुरु साधकों को भैरवी की पूजा और इसके दार्शनिक महत्व को सिखाता है। यह प्रक्रिया नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करती है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी और तांत्रिक शिक्षक इस जागरूकता को स्कूलों, विश्वविद्यालयों, और सांस्कृतिक मंचों के माध्यम से साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करता है। यह प्रभाव समाज को पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक करुणा जैसे मुद्दों पर जागरूक करता है। इस प्रकार, शिक्षा और जागरूकता पर प्रभाव अघोरी साधना को सांस्कृतिक और आध्यात्मिक रूप से गहन बनाता है, जो साधकों और समाज को आत्म-साक्षात्कार और सामाजिक जिम्मेदारी की ओर ले जाता है।

आधुनिक समाज में प्रासंगिकता

शमशान भैरवी और अघोरियों का संयुक्त प्रभाव आधुनिक समाज में उनकी प्रासंगिकता के कारण महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह तांत्रिक दर्शन और आध्यात्मिकता को समकालीन चुनौतियों के संदर्भ में प्रस्तुत करता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, और अघोरियों की शमशान-केंद्रित साधना, जिसमें मंत्र जाप, जैसे "ह्लीं भैरवी क्रीं", और यंत्र पूजा शामिल हैं, आधुनिक समाज में तनाव, भौतिकवाद और अस्तित्वगत संकट से जूझ रहे लोगों के लिए आध्यात्मिक मार्ग प्रदान करती है। गुरु साधकों को भैरवी की पूजा और इसके दार्शनिक महत्व को सिखाता है। यह प्रभाव नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करता है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी और तांत्रिक शिक्षक इस प्रासंगिकता को आधुनिक मंचों, जैसे सोशल मीडिया और सांस्कृतिक उत्सवों, के माध्यम से साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, आधुनिक समाज में प्रासंगिकता अघोरी साधना को गहन और परिवर्तनकारी बनाती है, जो साधकों और समाज को आत्म-साक्षात्कार और आध्यात्मिक जागरूकता की ओर ले जाती है।

संयुक्त परंपरा का मूल्य

शमशान भैरवी और अघोरियों का संयुक्त प्रभाव का निष्कर्ष उनकी संयुक्त परंपरा के मूल्य में निहित है, जो तांत्रिक दर्शन,

आध्यात्मिकता, और सामाजिक योगदान को एकजुट करता है। भैरवी, जो सृजन और विनाश की शक्ति का प्रतीक है, और अघोरियों की शमशान-केंद्रित साधना, जिसमें मंत्र जाप और यंत्र पूजा शामिल हैं, मृत्यु के भय और माया से मुक्ति का मार्ग प्रदान करती है। यह परंपरा आत्म-साक्षात्कार और अद्वैत दर्शन को प्रोत्साहित करती है। यह प्रक्रिया साधकों को कुंडलिनी जागरण और समाधि की अवस्था की ओर ले जाती है। संयुक्त परंपरा नारी शक्ति और प्रकृति के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करती है, क्योंकि भैरवी प्रकृति की शक्ति का प्रतीक है। कुछ अघोरी इस परंपरा को कला, साहित्य, और सामाजिक कार्यों के माध्यम से साझा करते हैं, जो तांत्रिक दर्शन को समझने में मदद करता है। इस प्रकार, संयुक्त परंपरा का मूल्य अघोरी साधना को सांस्कृतिक और आध्यात्मिक रूप से गहन बनाता है, जो साधकों और समाज को आत्म-साक्षात्कार और सामाजिक जिम्मेदारी की ओर ले जाता है।

एक संदेश – संसार को एक अघोरी का संबोधन

प्रिय साधक, दर्शक, आलोचक और अपरिचित,

मैं यह लिखने नहीं आया कि तुम हमें समझो, और न ही इसीलिए कि मैं उन भ्रांतियों का खंडन करूं जो सदियों से हमारे चारों ओर उस प्रकार छा गई हैं जैसे गंगा के तट पर सुबह की धुंध। मैं न तो अपनी सफाई देने के लिए लिख रहा हूं, न ही किसी वैधता की याचना के लिए। हमारे मार्ग को किसी प्रमाण, किसी समर्थन, किसी सम्मान की आवश्यकता नहीं। मैं उस स्वरूप में लिख रहा हूं जिसने अपना नाम भी छोड़ दिया है, उस अस्तित्व में जो स्वयं को विसर्जित कर चुका है, उस चेतना में जो अब माया के गलियारों में नहीं भटकती, बल्कि परदे के उस पार जा चुकी है।

तुम हमें बहिष्कृत कहते हो। तुम जादू-टोने, अपवित्रता और पागलपन की फुसफुसाहटों में हमारा नाम लेते हो। तुम हमारी देह पर लगी भस्म से घृणा करते हो, हमारे हाथों में पकड़ी खोपड़ी से डरते हो, और हमारे उच्चारित मंत्रों से काँपते हो, जो श्मशान की नीरवता में गूंजते हैं। तुम्हें भय हमारे कर्मों से नहीं है, बल्कि उस सत्य से है जिसे हम दर्शाते हैं-एक ऐसा सत्य जो बहुत अधिक नग्न है, असहज है, तीव्र है उस आवरण के लिए जिसे तुमने समाज के नाम पर ओढ़ रखा है।

हम वे हैं जिन्होंने बंधन तोड़ दिए हैं, जिन्होंने अस्थायित्व को अपनाया है, जिसे तुम हर पल अस्वीकार करते हो। अतः मैं बोलता

हूं-स्वीकृति के लिए नहीं, बल्कि तुम्हारे भीतर के साधक को जगाने के लिए, उस निगाह को सक्रिय करने के लिए जो देखती है, उस हृदय को स्पर्श करने के लिए जो पुकारता है, उस चेतना को जगा सकूं जो शायद अनजाने ही, जागरण के किनारे खड़ी है|

अग्नि के पूर्व – वह जीवन जिसे मैंने पीछे छोड़ा

क्या तुम सोचते हो कि हम ऐसे ही जन्मे थे? कि हमने माँ की कोख से निकलते ही चिता की गंध ओढ़ ली थी, और मृत्यु की भाषा बोलनी शुरू कर दी थी? नहीं। हम भी पहले तुम्हारे जैसे ही थे। हमारे भी नाम थे, घर थे, कर्तव्य थे, प्रेम थे, महत्वाकांक्षाएँ थीं। हम भी पुत्र-पुत्रियाँ, पति-पत्नी थे, उन्हीं संबंधों से बंधे हुए जिन्हें तुम शाश्वत मानते हो, उन्हीं भ्रमों में उलझे हुए जिनमें तुम अपने अस्तित्व को खोजते हो।

मैं भी कभी इस संसार का ही एक व्यक्ति था-उसके हँसी, उसके दुःख, उसकी नित्य दौड़-धूप में डूबा हुआ। मेरा भी एक नाम था जो प्रेम से पुकारा जाता था, और क्रोध में भी। मेरा भी एक अतीत था जो मेरे विचारों की दिशा तय करता था, और एक भविष्य था जिसकी आकांक्षा मुझे बाँधती थी।

फिर वह क्षण आया-जब मेरा सब कुछ टूट गया। वह पल, जब मृत्यु मेरे सामने एक चुपचाप फुसफुसाहट नहीं, बल्कि निर्विवाद यथार्थ बनकर खड़ी हुई। मैंने उन्हें खोया जिन्हें मैं सबसे अधिक प्रेम करता था। मैंने देखा कि अग्नि ने मांस को खा लिया, शरीर राख बन

गया, और नाम मौन में विलीन हो गया। उसी क्षण में मैंने देखा, वह जिसे देखने का साहस कभी नहीं किया था-स्वामित्व का भ्रम, पहचान का मृगजल, हर चीज़ की क्षणभंगुरता।

मैंने इस मार्ग को नहीं चुना-इस मार्ग ने मुझे चुना। उसने शोक की शून्यता में पुकारा, उस मौन में जिसमें कुछ बचा नहीं था, उस प्रश्न में जो हर चिता से अधिक तीव्र था-“मैं कौन हूं, यदि यह देह नहीं? मैं कौन हूं, यदि यह नाम, यह कथा, यह इतिहास नहीं?”

शून्य की ओर चलना – अघोरी की दीक्षा

अघोरी बनने का अर्थ किसी नये स्वरूप को अपनाना नहीं, बल्कि हर स्वरूप को त्याग देना है। यह निर्वस्त्र होना है-वस्त्रों से नहीं, बल्कि अपने ‘मैं ’और ‘मेरा ’की धारणा से, उस मिथ्या भेद से जिसे तुम ‘स्व ’और ‘पराया ’मानते हो।

मैं एक दिन में अघोरी नहीं बन गया। मैं उस अग्नि की ओर चला जिसमें त्याग की ज्वाला जल रही थी, और उस अग्नि ने मेरे भीतर के हर शेष भ्रम को भस्म कर दिया। मैंने अपना घर छोड़ा, परिवार छोड़ा, सभी बंधनों को छोड़ दिया। मैंने अपना नाम त्याग दिया-क्योंकि शून्यता को किसी नाम की आवश्यकता नहीं। मैंने वह सब कुछ त्याग दिया जिससे मैं कभी चिपका था, निराशा से नहीं, बल्कि इस बोध से कि चिपकना ही दुःख का मूल है।

मैंने मृतकों की राख को अपने शरीर पर धारण किया, जीवन का उपहास करने के लिए नहीं, बल्कि उसकी क्षणभंगुरता की स्वीकार्यता में। मैंने खोपड़ी उठाई, डराने के लिए नहीं, बल्कि एक दर्पण के रूप में-जो हर जीवित व्यक्ति की अंतिम नियति दिखाती है, यह याद दिलाने के लिए कि यह शरीर केवल धूल है, जो फिर धूल में मिलना है।

मैं श्मशान की अग्नि के समीप बैठा, वे बीज मंत्र उच्चारित करता जो माया को भंग कर देते हैं, उस लय की नृत्य को देखता जिसमें सब कुछ विलीन हो जाता है। मैंने शवों पर ध्यान किया, विद्रोह के रूप में नहीं, बल्कि उस अंतिम आकर्षण और घृणा की जंजीर तोड़ने के लिए, ताकि ‘स्व ’और ‘पर ’का भेद मिट सके, और सड़न में भी मुक्ति को देखा जा सके, भय नहीं।

द्वैत से परे जीवन – जो अकल्पनीय है, उसे अपनाना

तुम हमें अपवित्र कहते हो। कहते हो कि हम गंदगी में लोटते हैं, पवित्र को अपमानित करते हैं, जीवन के नियमों का उल्लंघन करते हैं। पर बताओ-अपवित्रता क्या है? एक विचार मात्र, जो मस्तिष्क ने गढ़ा है। गंदगी क्या है? केवल एक दृष्टिकोण। पवित्र क्या है? जो भी अस्तित्व में है-वही।

तुम्हारे लिए शव डर का कारण है, जिसे छूना भी वर्जित है, जिसके लिए फुसफुसाहट में विलाप होता है। हमारे लिए वह केवल

एक देह है जो पंचतत्वों में विलीन हो रही है, एक पत्ता मात्र जो वृक्ष से गिरा है।

तुम्हारे लिए श्मशान दुःख का स्थान है, समापन का प्रतीक है। हमारे लिए वह अंतिम सत्य का अनावरण है, माया का पूर्ण विसर्जन है, नाम और रूप का नामहीन और निराकार में विलीन हो जाना है।

तुम्हारा संसार विभाजित है-शुद्ध और अशुद्ध, पवित्र और अपवित्र, जीवन और मृत्यु। पर हमने इन सब भ्रांतियों के पार देखा है। हम वहाँ चले गए जहाँ कोई नहीं जाता, पागलपन से नहीं, बल्कि इस बोध से कि सब एक ही है। न कोई गंदा है, न कोई पवित्र। न कोई 'स्व 'है, न 'पर'-सिर्फ अस्तित्व है। सिर्फ शिव।

हम यह मार्ग क्यों चलते हैं – मुक्ति की एक आहट

हम तुम्हें चौंकाने या विचलित करने के लिए ऐसा नहीं करते। हम केवल मुक्त होना चाहते हैं।

हम खोपड़ी से पीते हैं भय फैलाने के लिए नहीं, बल्कि स्वयं को यह याद दिलाने के लिए कि यह शरीर, यह चेहरा-सिर्फ एक क्षणिक छाया है।

हम राख में रहते हैं जीवन का अपमान करने के लिए नहीं, बल्कि उसे पूर्ण रूप से अपनाने के लिए, वहाँ निर्भय चलने के लिए जहाँ लोग कांपते हैं, उस क्षेत्र में जीने के लिए जहाँ दुःख की सीमा समाप्त हो जाती है।

हम वैसा भक्ति नहीं करते जैसे तुम समझते हो। हम पत्थरों को नहीं पूजते, ग्रंथों को नहीं पढ़ते। हम मुक्ति की भीख नहीं मांगते, क्योंकि हम जान चुके हैं-मुक्ति दी नहीं जाती, अनुभव की जाती है।

हम मृत्यु से नहीं डरते-क्योंकि हम देह के मरने से पहले ही 'स्व 'को मार चुके हैं।

जो हमसे डरते हैं – उनके लिए एक मौन आग्रह

हम तुमसे यह नहीं कहते कि तुम हमें समझो। न हम तुम्हारी पूजा चाहते हैं, न निंदा। हम यह मार्ग इसलिए नहीं चलते कि कोई देखे, बल्कि इसलिए कि स्वयं का अंत हो सके, और हम उस में विलीन हो सकें, जो न नाम है, न रूप, न सीमा।

हम तुम्हारे नियमों से बंधे नहीं हैं, न तुम्हारे प्रतिबंधों से, न तुम्हारे भय से। हम वे हैं जो भटकते हैं, त्यागी हैं, जिन्होंने स्वीकृति की आवश्यकता को पार कर लिया है।

पर यदि तुम अपना भय छोड़ सको, राख के पार देख सको, खोपड़ी के पीछे की शांति को सुन सको-तो तुम जानोगे कि हम तुमसे भिन्न नहीं हैं।

तुम सुख चाहते हो, हम मुक्ति।

तुम पहचान से चिपके हो, हम उसे मिटा रहे हैं।

तुम अंत से डरते हो, हम उसे गले लगाते हैं।

पर अंततः, तुम और मैं-दोनों उन्हीं पंचतत्वों में विलीन होंगे। हम एक ही अनंत में मिलेंगे।

और जब वह क्षण आए, तो तुम मत डरना।

तब तुम भी शायद सुन सको वह मौन पुकार-शिव का वह नाद, सत्य की वह अनुगूंज, वह आह्वान-जो मृत्यु की ओर नहीं, बल्कि मुक्ति की ओर ले जाता है।

मुक्ति के साथ,
(श्मशान का एक अघोरी)

श्मशान की अनंत शिक्षा – मृत्यु अंत नहीं है

अग्नि और राख के अविरल नृत्य में, उस पावन मंत्र की प्रतिध्वनि में जो अनंतता की फुसफुसाहट बनकर उठती है, उस नदी की चुप्पी में जो सब कुछ निगल जाती है-वह शिक्षा विद्यमान है जो शास्त्रों से भी प्राचीन, समय से भी अपरिवर्तनीय है। यही है श्मशान का उपदेश: अंगारों में फुसफुसाई जाने वाली वह बुद्धि, वह अचूक सत्य जिसने सभ्यताओं के उत्थान और पतन को देखा, जिसने श्वास, प्रेम और शोक को आंका। जहाँ देह अग्नि को समर्पित होती है, जहाँ नाम धुएँ में विलीन हो जाते हैं, जहाँ हर शोक मुक्ति की भूमिका बजाता है, वहाँ मृत्यु अंत नहीं, बल्कि एक मार्ग है-आकार का अन्त, सीमाओं का समाधान, उस ओर लौटना जो सबके पहले था, और जब सब कुछ नष्ट हो जाए, तब भी जो रहेगा।

श्मशान में देह की क्षणिकता, आत्मा का अनन्त अस्तित्व

श्मशान में देह राख बन जाती है, मांस अग्नि का आहार बन जाता है, अंतिम सांस आकाश में विलीन हो जाती है-जीवितों की दृष्टि से अनदेखी, पश्चाताप से मुक्ति प्राप्त। जो कभी प्यारा चेहरा था-अब वैभव में व्यर्थ, लालसा में अविश्रांत-वह मात्र अंगारों की एक मुठ्ठी रह जाता है, उन हजारों लोगों की तरह जो पहले आए थे, और उन हजारों की तरह जो आने वाले हैं। देह की क्षणभंगुरता खुलकर सामने आती है-मांस-पेशी और त्वचा का वह बर्ता जिसे स्मृतियों

और इच्छाओं ने भरा था, पहचान की वह नाजुक काल्पनिक झोली- वह सब केवल मिट्टी है, जो फिर उसी में विलय करेगा।

फिर भी, जब देह अग्नि की भूख के आगे झुक जाती है, कुछ और है-वह न देखा जा सकता है, न पकड़ा जा सकता है, वह अजर-अमर वह तत्व है जो नष्ट नहीं होता। आत्मा-एक ऐसे यायावर की तरह जो जन्म और मृत्यु के बीच पथिक है, एक गवाह है, वह अग्नि जो न हवा से बुझती है, न जल से-आगे बढ़ती है। वह अपने पुराने स्वरूप का भार छोड़ देती है, नामों और इतिहास की बेड़ियाँ उतर जाती हैं, वह ब्रह्मांड की अनदेखी गुफाओं से होकर गुजरती है, अनजान की ओर खिंची चली जाती है।

इसी स्थान पर, अग्नि की ज्वाला के बीच, क्षणिक और अनन्त का अंतर अवश्यम्भावी बन जाता है। देह-पंचतत्वों की वह अस्थायी रचना, समय की धारा के सामने एक आकृति-अपना अन्त प्राप्त करती है। लेकिन वह चेतना, वह स्वरूपरहित यात्री जिसने हजारों रूपों और मुखौटों से अस्तित्व को जाना है-आगे बढ़ता है, बिना दावा, बिना नाम, बिना बंधन।

अधूरा मार्ग – मौत एक द्वार है, अंतिम लक्ष्य नहीं

वो जो शोक करते हैं, उनके लिए मृत्यु एक गर्त बनकर आती है, एक कटु विभाजन, एक ऐसी अंतिमता जिसे कोई प्रार्थना लौटा नहीं सकती। पर जो लोग श्मशान की सीख सुन चुके हैं, जो खामोशी

से अग्नि और राख के गवाह रहे हैं, उनके लिए मृत्यु अंत नहीं है-जैसे क्षितिज आकाश की सीमा नहीं है।

यह एक सीमा-रेखा है, एक पारगमन, एक आवश्यकता के अनुसार अविन्यास। यह कोई सजाएँ नहीं, न ही क्रूरता; यह अस्तित्व की लय में एक स्वाभाविक मोड़ है। नदी वर्षा के पानी की बरबादी नहीं मानती, अग्नि उस लकड़ी के लिए विलाप नहीं करती जो उसे जलाती है। ऐसे ही, आत्मा भी उस देह के लिए नहीं रोती जिसे वह छोड़कर जाती है-वह बस बढ़ती है, जैसे वह हमेशा से करती आई है, उस पार जो उससे परे है।

जो लोग क्षणभंगुरता की भाषा से अनजान हैं, उनके लिए मृत्यु विनाश दिखती है। पर यहाँ, अनंत अग्नि की लाली में, इसकी वास्तविकता सामने आती है-यह मिटाना नहीं है, बल्कि परिवर्तन है; जाना नहीं है, बल्कि लौटना है; अंधकार नहीं है, बल्कि उस प्रकाश की सीमा है जिसे मानव आँख समझ नहीं सकती।

भ्रांति के परे यात्रा – माया से मुक्ति

पुरातन सिद्धियों के अनुसार, आत्मा एक देह, एक कथा, केवल एक जीवन तक सीमित नहीं होती। वह एक नदी की तरह बहती है, एक किनारे से दूसरे किनारे तक, एक जीवन से अगले जीवन तक-जब तक सारी भ्रांतियाँ दूर नहीं हो जातीं, अंतिम बंधन टूट नहीं जाता, अंतिम आवरण उठ नहीं जाता।

श्मशान, जहाँ मृत्यु निर्बाध है, जहाँ अंतिम शब्द हवा में फुसफुसाए जाते हैं, जहाँ पुनर्जन्म का चक्र पवित्र अग्नि से बन्द हो जाता है-वह कहा जाता है कि वह अंतिम द्वार है। कहा जाता है कि जब अंगारों की तपिश कम होती है, जब मंत्रों की ध्वनि मौन में खो जाती है, तो शिव स्वयं झुककर मुक्ति का स्मरण कराते हैं, कर्मों के बंधन खोलते हैं, और सभी जंजीरों को तोड़ देते हैं।

इसीलिए साधक आते हैं। यही कारण है कि शोकपूर्ण लोग अपने मृतकों को शहरों और नदियों के पार लाते हैं, यही कारण है कि मरते हुए व्यक्ति आख़िरी सांस इसी स्थान पर लेना चाहते हैं, यही कारण है कि तट्त्वज्ञानी, तपस्वी, जो सब कुछ त्याग चुके हैं, अग्निमण्डलीय रोशनी में एकत्रित होते हैं। वे मृत्यु नहीं मांगते-बल्कि मुक्ति की ओर बढ़ते हैं।

श्मशान की शिक्षा – समता की अनुभूति

अग्नि किसी को नहीं पहचानती-ना जाति, ना वैभव, ना अधिकार, ना उपलब्धि। वह शोक के लिए रुकती नहीं, अभीष्ट के लिए जल्दबाजी नहीं करती। राजा और दुःखी, सभी का मांस जलाती है, सभी को एक समान राख में परिवर्तित करती है, जिसे नदी बिस्कुट की तरह ले जाती है-न बिना पूछे, न बिना अंतर किए।

यहाँ, अस्तित्व की अंतिम वक्रता पर, कोई स्वामी नहीं, कोई सेवा करने वाला नहीं, कोई संत नहीं, कोई पापी नहीं होता-केवल वही बचता है जब ‘स्व ’समाप्त हो जाता है।

यह अग्नि की फुसफुसाहटों में कहा गया पाठ है, वह बुद्धि जो हर धुएँ की लहर में बुनी जाती है। कि सभी विभाजन केवल माया हैं, कि सभी सीमाएँ हमारे बनाए हैं, कि मानवों द्वारा धारण किए गए मूल्य वह सब होते हैं जो उनके शरीरों के साथ ही ध्वस्त हो जाते हैं। कि सब चीज़ें-चाहे जितनी भी अलग प्रतीत हों-वहीं एक, अविभाज्य वास्तविकता का प्रतिबिंब हैं।

इसलिए तपस्वी अपनी देह पर राख लगाते हैं-not विरोध में, न त्याग में, बल्कि समझ में। राख धारण करने का अर्थ है-हर रूप का अंत स्वीकार करना, यह मानना कि जो भी था, वह एक दिन मिट जायेगा। अनिवार्य अब से डरना छोड़ना। और इस बोझ से मुक्त होकर-सचमुच मुक्त होना।

अविरल अग्नि – अनंत गवाह

सदियों से भी अधिक समय तक, श्मशान की वह अग्नि जलती आई है। युद्ध और शांति में, अकाल और खाद्य-समृद्धि में, साम्राज्यों के उठने और गिरने में, युगों के बदलने में-यह कभी नहीं बुझी।

कहा जाता है कि इसे शिव ने ज्वलन किया था, यह केवल अग्नि नहीं, बल्कि एक द्वार है। यह सत्य का संरक्षक है, एक ऐसी लौ है जो न समाप्त होती है, न संहार करती है-बल्कि मुक्त करती है। इसी अग्नि से श्मशान बोलता है, यही सत्य प्रकट होता है, यही समानता का साक्षात्कार होता है-न दुख में, बल्कि लौटने की निश्चितता में।

अंतिम बोध – मृत्यु जीवन का विकल्प नहीं

श्मशान शोक नहीं सिखाता, यह निराशा नहीं देता। यह अंत की फुसफुसाहट नहीं करता, न ही आग से गुजरने वालों का रोना सुनता है।

बल्कि यह स्वीकार की शिक्षा देता है। कि कोई वास्तविक क्षति नहीं है, केवल परिवर्तन है। कि कोई सच्चा अंत नहीं है, केवल यात्रा है। कि मृत्यु से डरना-जीवन को समझने में चूक है, और मृत्यु को समझना-सबसे बड़ी माया से मुक्ति है।

श्मशान शोक नहीं करता। यह न रुलाता है, न लड़खड़ाता है। अपनी शिक्षा से विचलित नहीं होता। वह चलते रहता है-उसकी अग्नियाँ जारी रहती हैं, उसका धुआँ फैलता है, उसकी नदी निरन्तर रूप-शेषों को किसी अनदेखे तट पर ले जाती है।

और इसी अनवरत गति में कोई अंत नहीं है-सिर्फ वापस लौटना, सिर्फ मुक्ति, सिर्फ स्वतंत्रता का मौन, अटल वादा।

आत्मा की यात्रा – जीवन और मृत्यु के पार

जो अग्नि बिना रुके सब कुछ निगल जाती है, जो धुआँ लोकों के बीच बहता है, जहाँ मंत्रों की गूँज और अंतिम फुसफुसाहट मुक्ति की ओर इशारा करती है-वहीं एक ऐसी यात्रा आरंभ होती है जो दिखाई नहीं देती। यह न समय से बंधी होती है, न मांस से जुड़ी होती है; यह यात्रा क्षणिक नहीं, बल्कि भ्रम से परे, आत्मविसर्जन से परे

होती है। यही है आत्मा की यात्रा-रूप से मौन विदा, पहचान का मौन विघटन, अनंत में विलय, मुक्ति की वह मूक गूँज जिसे शब्दों में नहीं बाँधा जा सकता।

जो लोग श्मशान में कांपते हाथों से अंतिम संस्कार करते हैं, जो साधक सत्य की तलाश में अस्तित्व की कगार पर खड़े हैं, जो तपस्वी अंगारों के बीच ध्यानमग्न हैं, जो त्यागी चिता को एक द्वार के रूप में अपनाते हैं, जो यात्री अग्नि की लपटों को देखकर अपनी मृत्यु की अनिवार्यता पर विचार करते हैं-उनके लिए यह भूमि केवल एक दाह स्थल नहीं, बल्कि ज्ञात और अज्ञात के बीच एक सीमारेखा है, एक ऐसा संगम जहाँ विदा और वापसी एक साथ घटित होते हैं, जहाँ परदा हटता है और सनातन का आभास होता है।

बंधन का टूटना – जब आत्मा मुक्त होती है

जब अग्नि शरीर को भस्म करती है, जब वह रूप जो कभी चेतना का आधार था, धूल में बदल जाता है, तब आत्मा उस कगार पर खड़ी होती है-मांस से मुक्त, नाम से मुक्त, उस स्वरूप को देखती हुई जिसे वह कभी 'मैं 'कहती थी। कुछ क्षण पहले जो प्राण था, विचार था, भावना और स्मृति थी-अब वह निःशब्द है, भारहीन है, निराकार है।

वह देखती है जब अंगार उसके पुराने आवरण को चूमते हैं, जब हवा उसकी राख को अज्ञात दिशाओं में बिखेर देती है, जब वही हाथ जो उसे प्रेम से थामे हुए थे, अब श्रद्धा से मुक्त कर रहे हैं। फिर भी,

आत्मा को कोई शोक नहीं होता, कोई हानि नहीं लगती-क्योंकि जिसे कभी सच में अपनाया ही नहीं गया, उसके खो जाने का क्या दुख?

जब शरीर जलता है, तब आत्मा उन वासनाओं, उन स्वामित्वों, उन बोझों से मुक्त हो जाती है जिन्हें जीवनभर कसकर थामा गया था। पहचान का स्वर्ण धागा धीरे-धीरे सुलझता है और मिटता है, और वह 'स्व 'जिसे जीवन में इतने आग्रह से पकड़ा गया था, अब एक कंपन बन जाता है-अनंतता में फैलती एक ध्वनि, एक अस्पष्ट प्रतिध्वनि।

पारगमन – लोकों के बीच, भाग्यों के बीच

जो यात्रा आगे चलती है, वह दूरी की नहीं, बल्कि बोध की होती है। न कोई मार्ग सामने होता है, न कोई नक्शा, न कोई संकेत। आत्मा खुद अपने कर्मों की प्रतिध्वनि से मार्गदर्शित होती है, अपने ही किए गए कार्यों की अनुगूँज से, उन शब्दहीन कंपन से जो केवल कर्म के माध्यम से गूँजते हैं।

अदृश्य अस्तित्व के गलियारों में आत्मा बहती है-दुख और प्रकाश के लोकों के मध्य, अपने अतीत की गूँजों में, उन वासनाओं के अंशों से होकर जो अब भी कुहासे की तरह लिपटी रहती हैं। वह उन विकल्पों के कंपन को महसूस करती है जो भुला दिए गए थे, उन करुण क्षणों की मिठास को जो किसी को दी गई थी, उस क्रूरता के भार को जो किसी पर थोप दी गई थी, उस प्रेम की आह को जो बाँटा गया था, और उन अवसरों की चुप्पी को जो कभी नहीं लिए गए।

कुछ के लिए यह यात्रा शीघ्र होती है-प्रकाश में विलय, स्थिरता का आलिंगन, ब्रह्मांड की महान धारा में पूर्ण समर्पण। दूसरों के लिए यह धीमी होती है-स्वयं से टकराव, बीते कर्मों का मंथन, उस उत्तरदायित्व का अनुभव जो हर क्रिया के पीछे लिखा होता है। यहाँ कोई न्यायाधीश नहीं, कोई दंड नहीं-केवल आत्म-प्रतिबिंब की गूँज, और मुक्ति वही जो सभी बंधनों से मुक्त कर दे।

उस पार के लोक – अदृश्य की प्रतिध्वनियाँ

प्राचीन ग्रंथों में उन लोकों की चर्चा है जो इस लोक के बाद आते हैं-ऐसे अस्तित्व के क्षेत्र जहाँ आत्माएँ ठहरती हैं, जहाँ शिक्षा चलती है, जहाँ सत्य उस रूप में पकड़ा जाता है जो अब शरीर से बंधा नहीं है।

कुछ स्वर्ग में पहुँचते हैं, जहाँ पुण्य का फल स्वाद बनकर मिलता है, जहाँ आनंद की अनुभूति होती है-उससे पहले कि पुनर्जन्म का चक्र फिर शुरू हो। कुछ भुवर्लोक में होते हैं, जहाँ अधूरे कर्म उन्हें अपनी ओर खींचते हैं, जहाँ वे अपनी अपूर्णताओं की प्रतिध्वनि में खड़े रहते हैं। कुछ महर्लोक तक पहुँचते हैं, जहाँ केवल ज्ञान शेष रहता है, जहाँ आत्मचिंतन अगले जन्म की दिशा तय करता है।

परंतु ये सभी स्थान भी अस्थायी हैं, केवल विश्राम स्थल हैं। स्वर्ग भी शाश्वत नहीं है, और परलोक भी एक दिन कर्म के प्रवाह में छोड़ देना होता है। केवल एक लक्ष्य है जो लौटना नहीं चाहता-ब्रह्म में विलीनता, उस 'जो है 'में एकत्व, निराकार में पूर्ण समर्पण।

अंतिम मुक्ति – आत्मा का लय

वह आत्मा जो वासना से मुक्त हो चुकी है, जो माया के आवरण को जला चुकी है, जो स्वयं को अब ब्रह्मांड के विस्तार से अलग नहीं देखती-उसके लिए कोई पुनर्जन्म नहीं, कोई अगली यात्रा नहीं, कोई चक्र नहीं। वहाँ केवल मौन होता है-विस्तृत और सनातन-रिक्तता के रूप में नहीं, बल्कि पूर्णता के रूप में; शून्यता के रूप में नहीं, बल्कि पूर्ण अस्तित्व के रूप में।

श्मशान की अग्नि केवल शरीर को भस्म नहीं करती, वह जीवितों को यह भी याद दिलाती है कि जो भी प्रिय है-नाम, धन, सौंदर्य, सत्ता-एक दिन वह सब धुएँ में उड़ जाएगा, बिना नाम के, बिना भार के, उन हाथों के लिए भी अपरिचित जो कभी उन्हें कसकर थामे थे। यह अस्थायित्व की सीख देती है, कठोरता से नहीं, बल्कि सौम्य निश्चितता से। वह एक सत्य फुसफुसाती है-कि कुछ भी वास्तव में हमारा नहीं होता, और कुछ भी वास्तव में खोया नहीं जाता।

जो अब भी इस संसार में चल रहे हैं, जो चिताओं को देखकर सोचते हैं कि उनकी बारी कब आएगी, जो अंगारों में अर्थ खोजते हैं-वे जान लें: जो जाता है वह केवल आत्मा की भ्रांति है; जो बचता है, वह वही है जो कभी भी बंधा नहीं था, कभी टूटा नहीं था, और कभी उस मौन से अलग नहीं था जो ब्रह्मांड को अपनी बाँहों में थामे हुए है।

आत्मा मरती नहीं। वह केवल वही होना बंद कर देती है जो वह वास्तव में कभी थी ही नहीं।.